Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ओ३म्
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

1600

मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे"

हीरक-जयन्ती अंक

साप्ताहिक

२७ दिसम्बर १९५९.
मू० २·५०

सम्पादक
उमेश-चन्द्र सत्यार्थक
एम.ए.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वैदिक शिक्षा का स्वरूप

भारतीय आचार्य का स्नातक को दीक्षान्तोपदेश

वेदमनूच्याचार्योऽन्तेवासिनमनुशास्ति ।

सत्यं वद । धर्मं चर । स्वाध्यायान्मा प्रमदः आचार्याय प्रियंधनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेत्सीः । सत्यान्न प्रमदितव्यम् । कुशलान्न प्रमदितव्यम् । धर्मान्न प्रमदितव्यम् । भूत्यै न प्रमदितव्यम् । देवपितृकार्याभ्यां न प्रमदितव्यम् । मातृदेवो भव । आचार्यदेवो भव । अतिथिदेवो भव । यान्यनवद्यानि कर्माणि तानि सेवितव्यानि नो इतराणि । ये के चास्मच्छ्रेयांसो ब्राह्मणास्तेषां त्वयासनेन प्रश्वसितव्यम् ।

श्रद्धया देयम् । अश्रद्धयादेयम् । श्रिया देयम् । ह्रिया देयम् । भिया देयम् । संविदा देयम् । अथ यदि ते कर्म विचिकित्सा वृत्ती विचिकित्सा वा स्यात् । ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनो युक्ता अयुक्ता अलूक्षा धर्मकामाः स्युर्यथा ते तत्र वर्तेरन् । तथा तत्र वर्तेथाः ।

एष आदेश, एष उपदेश, एषा वेदोपनिषत्, एतदनुशासनम् । एवमुपासितव्यम् । एवम्चैतदुपास्यम् ॥ — तैत्तिरीयोपनिषद् अ० ७ । अनु० १ । का० १, २, ३, ४

सच बोलो, धर्म का आचरण करो । स्वाध्याय में आलस न करो ।

आचार्य की धन से सेवा करते रहो और उत्तरोत्तर परम्परा को मत टूटने दो ।

सत्य, धर्म, कौशल, स्वास्थ्य के नियम, ऐश्वर्य प्राप्ति के साधन करने और पढ़ने पढ़ाने में आलस्य न करो ।

धार्मिक, पारिवारिक, और सामाजिक कर्मों को करने में आलस्य न करो ।

माता की पूजा करो, पिता की पूजा करो, आचार्य की पूजा करो । अतिथि का सत्कार करो ।

भले कर्म करो, बुरे कर्मों से बचो ।

हमारे कर्मों में जो अच्छे हैं, उनका अनुकरण करो, दूसरों का नहीं ।

दान श्रद्धा से देना चाहिये । श्रद्धा न हो तो भी देना चाहिए ।

दान खुले हाथ से देना चाहिए । अधिक न हो तो थोड़ा देना चाहिए ।

भय (लोक लज्जा) से भी दान देना चाहिए । और इस प्रकार से भी कि जिस काम के लिए दान माँगा जाता है, वह भला काम है ।

यदि तुम्हें किसी काम में सन्देह हो कि वह अच्छा है या बुरा, तो देखो कि तुम्हारे आस पास कोई ऐसे कर्मण्य और विरक्त तथा ब्राह्मण हैं, जो विचारशील, कोमल स्वभाव वाले हैं । ऐसे अवसर पर जैसा उनका व्यवहार हो वैसा तुम करो ।

इसी प्रकार यदि दुष्ट पुरुषों के सम्बन्ध में संदेह हो, कि उसके साथ वैसा व्यवहार करना चाहिए, तो समझदार, नेक, कोमल स्वभाव वाले, धर्म को प्यार करने वाले ब्राह्मण उनसे जैसा व्यवहार करते हों या करें वैसा ही तुम भी करो ।

यह मेरा आदेश है, यह मेरा उपदेश है, यह वेद की शिक्षा का सार है, यह वेद शास्त्र की आज्ञा है । इसी प्रकार धर्म का जीवन पर्यन्त पालन करना चाहिए ।

155
128
27

आवरण तथा इस पृष्ठ के प्रकाशन का व्यय

श्री रघूमल चैरिटी ट्रस्ट 'कलकत्ता' ने प्रदान किया ।

CC-0. Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi.

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

* विषय-सूची *

वैदिक दीक्षोपदेश		आवरण द्वितीय पृष्ठ
—वैदिक राष्ट्रगान	श्री पं० द्विजेन्द्रनाथ जी शास्त्री, सि. शि.	१
—सम्पादकीय		२
—कृतज्ञता ज्ञापन		३
—आर्यमित्रका संक्षिप्त इतिहास		४-७
—आर्यमित्र के प्रति शुभ कामनायें		९
—आर्यमित्र के सम्बन्ध में तीन सुझाव	श्री पं० हरिशङ्कर शर्मा	
—सच्चा स्मारक	श्री सेठ किशनलाल पोद्दार कलकत्ता	
—आर्यमित्र के प्रति शुभ कामनायें		१३
—सम्मानोपाधि पत्रम्		१४
—आत्म-स्वतन्त्रता	श्री सर्वपल्ली डा० राधाकृष्णन	१७-१८
—हम अपने महान् दायित्व को पूरा करें	श्री नरेन्द्र हैदराबाद	१९-२०
—वैजयन्ती जयन्ती	श्री गङ्गाप्रसाद उपाध्याय	२१
—युगों बाद ध्रुवतारा धरती पर उतरा था	श्री भगवान सहाय पचौरी	२२
—सम्पादकाचार्य श्री पं० रुद्रदत्त जी शर्मा	श्री बनारसीदास चतुर्वेदी एम० पी०	२३-१५
—दयानन्द का काम पूरा करेंगे	श्री रघुवीरसिंह शास्त्री	२५
—दो मुक्तक	श्री नीरज	२६
—मथुरा में महर्षि के सहायक	श्री नरदेवस्नातक एम० पी०	२७-२८
—वैचारिक क्रान्ति हमारालक्ष्य है	श्री प्रेमचन्द्र शर्मा एम० एल० सी०	२९-३०
—मथुरा में स्वामी दयानन्द का प्रभाव	श्री शिवचरनलाल शर्मा 'पत्रकार'	३१-३२
—आर्यमित्र का महान् कार्य	श्री विश्वम्भर सहाय 'प्रेमी' मेरठ	३३-३४

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

		३५
—आर्यमित्र से पथ प्रदर्शन की आशा	श्री अलगूराय शास्त्री	३६-३८
—आर्यसमाज और आर्यमित्र	श्री सुरेशचन्द्र वेदालङ्कार एम० ए० एल० टी०	३८
—वह है सच्चा साहित्यकार (कविता)	श्री पं० हरिशङ्कर जी शर्मा	३९-४०
—स्वतन्त्रता संग्राम का जागरूक प्रहरी आर्यमित्र	श्री पं० सत्यमित्र शास्त्री वेदतीर्थ विद्यावारिधि	४१-४२
—मित्र के संस्मरण	डा० सूर्यदेवशर्मा साहित्यालङ्कार एम० ए० एल० टी० डी० लिट	४३-४४
—प्रत्रकारिता एक सेवा है	आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री	४५-४६
—वेदप्रचार का कार्य	डा० मङ्गलदेव जी शास्त्री, बनारस	४७
—वैदिक-विनय (कविता)	श्री० डा० मुंशीराम शर्मा एम० ए०, सी एच० डी०	४९-५२
—विश्वराज्य का संविधानवेद	श्री० पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर	५३-५४
—दयानन्द की देन	श्री० विश्वबन्धु शास्त्री एम ए०, एम० ओ० एल०,	५५-५६
—महर्षि दयानन्द की दूरदर्शिता	श्री० कृष्णदत्त जी एम० ए०, बी० एड०	५७-५९
—राष्ट्र में गौ का स्थान	श्री पं० अवधविहारीलाल एम० ए० बी० एल०	५९
—आर्यमित्र के प्रति (अविता)	श्री वैद्य राजवहादुर आर्य 'सरस'	६०-६०
—धर्म निरपेक्ष भारत में आर्यसमाज का उत्तरदायित्व	श्री सत्यार्थी जी जालन्धर	६२
—दयानन्द ने जगायान होता (कविता)	श्री जगदीश पाण्डेय	६३-६४
—आर्यसमाज और सभ्यताओं का संघर्ष	श्री भीमसेन विद्यालङ्कार	६५-६७
—महर्षि दयानन्द और डा० माण्टेसरी	श्री सूर्यभानसिंह गौत्तम	६८-७२
—वैदिक धर्म में स्त्रियों की स्थिति	श्री सुशीलादेवी विद्यालंकृता हैदराबाद	७३
—स्वामी दयानन्द आये (कविता)	श्री धर्मदत्त आनन्द	७४-७५
—हम आत्मपरीक्षण करें	श्री आनन्दप्रिय पण्डित बड़ौदा	७६-७८
—आर्यपत्रकारों का संक्षिप्त इतिहास	आचार्य श्री पं० नर व शास्त्री वेदतीर्थ	७८
—ऋषि की याद (कविता)	श्री हरिश्चन्द्र एम० ए० साहित्यरत्न	७९-८०
—शिक्षा कैसी हो	श्री डा० हरिद ा जी शास्त्री एकादशतीर्थ एम० ए०	८१-८४
—सुख और दुःख	श्री बा० पूर्णचन्द्र जी एडवोकेट प्रधानसार्वदेशिक सभा	८४
—संस्कृति सप्तक (कविता)	श्री कविवर ओंकार प्रणवाह्वी	८५-८७
—राष्ट्र की आत्मा आज मूर्च्छित है	श्री रामनाथ सुमन	८७
—गीत—(कविता)	श्री कुसुमाकर	८८
—आर्यमित्र प्रशद्धि (कविता) आयुर्वेदाचार्य	कविराज हरिनन्दन मिश्र बी० आई० एम० एस०	८९-९०
—श्री पं० भीमसेनजी का पश्चात्ताप	श्री दिगम्वरदेव	९०
—आर्यमित्र के प्रति (कविता)	श्री शिवचरनलाल गर्ग	

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—आर्यसमाज की विचारधारा	श्री पं० गङ्गाप्रसाद उपाध्याय	९१-९४
—कर्त्तव्य-निष्ठा	श्री सत्यनारायण मिश्र	९४
—वैदिक वृष्टि-विज्ञान	श्री पं० वीरसेन वेद शर्मा	९५-९७
—आर्यसमाज का आदर्श संगठन	श्री पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति	९८-१००
—शारीरक उपनिषद्	स्वर्गीय पं० रामदत्त शुक्ल एम० ए०	१०१-१००
—ऋषिऋण कैसे उतरे	सुश्री सुशीलादेवी जौहरी एम० ए० टी० डी०	१०३-१०५
—मानवता (कविता)	श्री लखनसिंह भदौरिया साहित्यरत्न	१०६
—विज्ञान की आदि उपलब्धि अग्नि	श्री डा० वासुदेवशरण अग्रवाल काशीविश्वविद्यालय	१०७-१११
—योगद्वारा परमानन्द की प्राप्ति	श्री कन्हैयालाल 'मुमुक्षु'	११२
—प्रज्ञाचक्षु विरजानन्दजी के प्रति (कविता)	श्री भारतभूषण त्यागी एम० ए० साहित्यरत्न	११३
—हिन्दी और आर्यसमाज	श्री प्रकाशवीर शास्त्री संसदसदस्य	११४-११५
—व्रत प्रधान भारतीय शिक्षा	श्री पं० बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार	११६-१७
—दिव्यद्रष्टा दयानन्द	श्री अलगूराय शास्त्री	११८-११९
—बुझते समय प्रातः दीपिकी वर्णी (कविता)	श्री हरिश्चन्द्र 'चातक' कविरत्न	१२०
—उपस्थान	श्री अज्ञात	१२१-१२३
—श्री पं० घासीरामजी के संबंध में मेरे संस्मरण	श्री पं० गङ्गाप्रसाद एम० ए० चीफजज	१२४-१२७
—आर्यसमाज का सर्वप्रथम मासिकपत्र भारतसुदशा प्रवर्तक	श्री पं० भवानीलाल भारतीय एम० ए०	१२८-१३२
—आर्यसमाज से प्रेरणा लें	श्री फतहचन्द्र शर्मा आराधक दिल्ली	१३३-१३४
—विज्ञान की दृष्टि-आध्यात्मिकता के अनुभव	अनेकवैज्ञानिक	१३५
—महर्षि सन्देशः (संस्कृत कविता)	धर्मदेवोविद्यामार्तण्डः	१३६
—वैदिक समाज व्यवस्था	श्री पं० शिवदयालु मेरठ	१३७-१३९
—आर्यसमाज और शिक्षाप्रसार	श्री आचार्य वीरेन्द्र शास्त्री एम० ए०	१४०-१४३
—नयासमाज (कविता)	श्री गणेशलाल शर्मा 'प्राणेष' एम० ए० साहित्यरत्न	१४४
—अमेरिका में आध्यात्मिक वातावरण	श्री प्रेमसागर वर्मा	१४५-१४७
—जिओ और को भी जीने दो (कविता)	श्री प्रकाशचन्द्र कविरत्न	१४८
—संन्यासी (कविता)	श्रीनाथशरण 'कसक'	१४९-१५०
—गुरुदक्षिणा (एकांकी)	श्री शर्ननलाल एम० ए०	१५१-५५३
—संस्कृति और शिक्षा	श्री ईश्वरदयाल आर्य	१५४-१५५
—आराम हराम है	श्री विनायकराव विद्यालङ्कार संसदसदस्य	१५६-१६०
श्री गजानन्दजी भारतीय	श्री शान्तिप्रकाश प्रेम	१६१

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—पञ्चकोष	श्री मदनमोहन विद्यासागर टांगानिका पूर्वीय अफ्रीका	१६२-१६५
—श्री दण्डीजी का धातु पाठ	श्री युधिष्ठर मीमांसक, टंकारा	१६६-१६७
—आर्यों का सांस्कृतिक दिग्विजय	श्री विश्वबन्धु वेदालङ्कार एम० ए०	
—आर्यसमाज का सेवाकार्य	श्री विश्वनाथसिंह वर्मा विहार	१७०-१७१
—पावन वैदिकज्ञान चाहिये (कविता)	श्री कु० जोरावरसिंह आर्य	१७२
—विज्ञान और अध्यात्म	श्री रामधारीसिंह दिनकर एम० पी०	१७३-१७४
—शान्ति और क्रान्ति का अग्रदूत आर्यमित्र	श्री हरप्रसाद आर्य	१७५-१७६
—ऋषि दयानन्द की राजनैतिक विचारधारा	श्री पं० विहारीलाल शास्त्री	१७७-१७९
—वैदिक एवं ऋषि साहित्य	संकलन	१८०
—श्री पं० पद्मसिंह जी शर्मा	श्री रामस्वरूप शास्त्री	१८१-१८२
—दीक्षा समारोह का संदेश	श्री पं० भूदेव शास्त्री सि० शि० एम० ए०	१८३-१७४
—आर्यसमाज एक सार्वभौम संस्था है	श्री आचार्य विश्वश्रवा	१८५-१८६

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

❀ ओ३म् ❀

आर्यमित्र

हीरक जयन्ती-अङ्क

"मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे"

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का मुख पत्र

वर्ष ६१-६२ | लखनऊ-रविवार, पौष कृष्णा १२ सं० २०१६ वि०, २७ दिसम्बर १९५९ ई० व ३ जनवरी १९६०, दयानन्दाब्द १३५ | अङ्क ४९-१

* वैदिक राष्ट्र गीत *

★

ओ३म् आ ब्रह्मन् ब्राह्मणोब्रह्मवर्चसी जायताम् आ राष्ट्रे राजन्यः शूर इष व्योऽति व्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढानड् वान् आशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णूरथेष्ठा सभेयो युवाऽस्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फल वत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पाताम् ॥

—(यजु०)

हे ब्रह्मन् हो राष्ट्र हमारा, विश्व शिरोमणि भारत प्यारा ।
हों बुध ब्रह्मवर्चसी ब्राह्मण, महारथी राजन्य विचक्षण ॥
साध्वी वीर-प्रसू महिलागण, विजयी वीर सभेय युवकगण ।
हो सब सभ्य समाज हमारा, हे ब्रह्मन् हो राष्ट्र हमारा ॥
शूर इषव्य रथेष्ठ सुलभ हों, दोग्ध्री धेनु वलिष्ठ वृषभ हों ।
द्रुतगति अश्व वायु सन्निभ हों, समय समय पर घनयुत नभ हो ॥
नीरद मधुमय दे जल धारा, हे ब्रह्मन् हो राष्ट्र हमारा ।
अन्नौषधि वैभव अनन्त हों, द्रुम दल विलसित दिग्दिगन्त हो ॥
नर नारी जन तेजवन्त हों, दिव्य भावदिशि दिशि ज्वलन्त हों ।
हो शुभ योग क्षेम हमारा, हे ब्रह्मन् हो राष्ट्र हमारा ॥

—श्री पं० द्विजेन्द्रनाथ जी शास्त्री, सिद्धान्त शिरोमणि

इस पृष्ठ के प्रकाशन का व्यय "श्री रघूमल चैरिटी ट्रस्ट, कलकत्ता" ने प्रदान किया ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सम्पादकीय—

आर्य समाज क्रान्ति के लिये हम प्रतिबद्ध !

आर्य मित्र का आरम्भ मानवता की सर्वश्रेष्ठ भावनाओं के निर्माण, प्रचार और प्रसार द्वारा एक आदर्श मानव समाज का निर्माण करने के लिये हुआ था, मित्र की विचार भूमि में आर्य समाज के सिद्धान्त रहे हैं और रहेंगे। महर्षि दयानन्द दीक्षा-शताब्दी की सफलता की कामनायें करते हुए हम मित्र की ओर से आर्य-बन्धुओं के सम्मुख निवेदन करना चाहते हैं, आज आर्य समाज क्रान्ति के चतुष्पथ पर खड़ा है। विश्व की वर्तमान प्रगति का आकर्षण हमें अपनी ओर खींच रहा है और हम अपने विचारों के प्रति उतने दृढ़ दिखाई नहीं देते जितना कि हमें होना चाहिये। दीक्षा शताब्दी हमारे लिये यही सन्देश और प्रेरणा लेकर आई है कि हम अपने अतीत का सिंहावलोकन करें, वर्तमान का आत्म-निरीक्षण करें और भविष्य के लिये दीक्षा को स्वीकार करें।

आर्य समाज के सर्वाङ्गीण विकास के लिये तीन दिशाओं में हमें सचेष्ट और सावधान रहना चाहिये। हवा की गति से बढ़ने वाले इस युग में आर्य समाज को अपने विचारों, प्रचार तथा संसारिक साधनों का सही गति निर्देश करना होगा। आज हमारे विचारों को लोग स्वीकार करते हैं, पर शुद्ध रूप में नहीं, उसे ठीक करना होगा तथा विचारकों की श्रेणी और साहित्य को प्रोत्साहन देना पड़ेगा। हमारे प्रचार साधन उपदेशक प्रचारक, पत्र-पत्रिकायें शिक्षणालय आदि जितने और जिस प्रकार के चाहियें सक्रिय नहीं हैं। हमारे साधन भी पुराने हैं अब हारमोनियम तबला से ही काम नहीं चलेगा, हमें संसार साधनों के नवीकरण पर विशेष ध्यान देना होगा विचार, प्रचार और सञ्चार के त्रिपाद पर आर्य समाज की स्थिति निर्भर है। आशा आर्य जगत् इस अवसर पर अपने भावी जीवन लिये इनकी उपेक्षा न करेगा और गम्भीर पूर्वक विचार किया जायगा और आर्यजन ग्रहण कर नवीन क्रान्ति के लिये नवीन बढ़ायेंगे।

आभार प्रदर्शन

'मित्र' अपने जीवन के साठ वर्ष पूर्ण हीरक जयन्ती महोन्सव मना रहा है। यह सफल मित्र परिवार के प्रेम और आर्य विचारों के श्रद्धा के कारण ही प्राप्त हो सकी है। मित्र प्रति आप सब का सहयोग और आशीर्वाद प्रकार बना रहे और मित्र अपने मित्र भावना सन्देश का प्रचार करने में सफल हो इस हार्द अभिलाषा के साथ मित्र आप सबके प्रति आ प्रदर्शन करता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हीरक जयन्ती विशेषाङ्क पाठकों के हाथ में है। कार्य की अत्यधिकता, साधनों की स्वल्पता, कागज की कमी महार्घता और प्राप्ति में होने वाली कठिनाइयों के होते हुए भी यथा सम्भव अङ्क को सुरुचिपूर्ण पठनीय सामग्री से युक्त करने का प्रयत्न किया गया। विशेषाङ्क की सफलता का श्रेय मित्र के लेखकों, पाठकों, हितैषियों और सहयोगी बन्धुओं को है और जो कमियां रह गई हैं उनके लिये हम उत्तरदायी हैं, क्षमा प्रार्थी हैं।

विशेषांक के प्रकाशन और सामग्री चयन तथा अन्य प्रबन्धों में जिन व्यक्तियों ने सहयोग दिया है उनके लिये 'मित्र' उनका सदैव आभारी रहेगा।

श्री पं० रामस्वरूप जी शास्त्री काव्यतीर्थ (मित्र के पूर्व सम्पादक) का इस अवसर पर विशेष सहयोग बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुआ है। श्री प्रेमनाथ जी शाण्डिल्य, अजीतमल, श्री लक्ष्मण प्रसाद चतुर्वेदी, मथुरा, श्री शर्मनलाल जी वकील, श्री वाचस्पति शास्त्री आदि ने विशेष सहयोग प्रदान किया इसके लिये 'मित्र' उनका विशेष आभारी रहेगा।

अंक आपके सामने है, कैसा है यह निर्णय पाठकों पर है।

— सम्पादक

पाँच यमः

"तत्राहिंसा सत्यास्तेय ब्रह्मचर्या परिग्रहाः यमाः"

१—अहिंसा—मन, वचन, कर्म से किसी को दुःख न देना।

२—सत्य—मन वचन कर्म से सत्य का व्यवहार करना।

३—अस्तेय—मन वचन कर्म से चोरी का त्याग करना।

४—ब्रह्मचर्य—अष्ट मैथुन से बचना, ऋतुचर्या का पालन करना।

५—अपरिग्रह—न्याय पूर्वक भोग, लोलुपता व अन्याय से किसी वस्तु की इच्छा न करना।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

'आर्य मित्र' का संक्षिप्त इतिहास

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश को अपनी स्थापना के पश्चात् एक ऐसे पत्र की आवश्यकता प्रतीत हुई जो उसकी सूचनाओं और विज्ञप्तियों को प्रकाशित करता रहे और आर्य सिद्धान्त का प्रचार करता हुआ वैदिक धर्म विरोधी लेखों तथा पुस्तकों के उत्तर भी देता रहे। इस प्रकार का पत्र १८९८ ई० में 'मुहर्रिक' नाम से उर्दू में सभा कार्यालय की ओर से प्रकाशित किया गया। उस समय सभा का कार्यालय मुरादाबाद में था। सभा के प्रधान मंत्री श्री नारायण प्रसाद जी (महात्मा नारायण स्वामी जी) उस समय मुरादाबाद में ही रहते थे। वे ही मुहर्रिक के जन्म दाता और आदि संपादक रहे। सन् १८९९ में सभा का यह मुखपत्र हिन्दी में कर दिया गया और उसका नाम 'आर्यमित्र' रखा गया। सन् १९०४ ई० में सभा के आदेशानुसार श्री भगवानदीन जी मिश्र द्वारा प्रदत्त आर्य भास्कर प्रेस मुरादाबाद से आगरा स्थानान्तरित हो गया और फिर वहीं से सन् १९४० ई० तक प्रकाशित होता रहा। आरंभ में श्री मुंशी प्राणसुख जी और बाबू भोलानाथ जी मित्र प्रबन्धक की अवैतनिक अच्छी सेवा करते रहे। जब पत्र आगरा आया तब ग्राहक संख्या ३३५ थी। सभा का कार्य अधिक बढ़ जाने पर पत्र के संपादक का कार्य श्री पं० बदरीदत्त जी जोशी ने सम्हाल लिया। कुछ समय के पश्चात् सम्पादकों की नामावली इस प्रकार परिवर्तित होती रही :—

१—श्री पं० सूर्य प्रसाद जी शर्मा, २-श्री कुंवर हुकुम सिंह जी "अवैतनिक" ३—श्री पं० रुद्रदत्त जी सम्पादकाचार्य (तीनवार) ४—श्री पं० नन्दकुमार देव जी शर्मा, ५—श्री ठाकुर सूर्य कुमार सिंह जी, ६—श्री पं० भवदत्त जी शास्त्री, ७-श्री पं० बाबूराम जी शर्मा, ८—श्री पं शिवशङ्कर जी काव्यतीर्थ। उपर्युक्त सभी महानुभावों की सेवाएँ मित्र के लिये गौरव का कारण रही हैं। विशेष कर पं० रुद्रदत्त जी के सम्पादन कार्य से मित्र का स्थान हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ पत्रों में गिना जाने लगा। उनके पश्चात् मित्र के सम्पादक हिन्दी के सुप्रसिद्ध लेखक श्री पं० लक्ष्मीधर जी वाजपेयी "श्री सर्वानन्द जी" ने सन् १९१५ ई० तक पत्र की ख्याति को बनाये रखने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

सभा के प्रचार मिशन और आर्थिक प्रश्नों के कारण मित्र सदैव संकट से ही गुजरता रहा। प्रभु ने मित्र की रक्षा और उन्नति के लिये ऐसे समय में ऐसे सबल सहायक मित्र को प्रदान किया। श्री पं० घासीराम जी व श्री सेठ मदन मोहन जी के विशेष आग्रह पर श्री पं० हरिशङ्कर जी शर्मा ने प्रथम वार आगरा मित्र का सम्पादक पद स्वीकार किया और सन् १९१९ तक इस पद पर रहे।

सन् १९१९ ई० में गुरुकुल विश्व विद्यालय वृन्दावन के प्रथम स्नातक श्री पं० धर्मेन्द्र नाथजी तर्कशिरोमणि सम्पादक बने। उन्होंने मित्र की उन्नति में पर्याप्त योगदान दिया। उनके शिक्षा विभाग में चले जाने पर मित्र के सम्पादन के लिये योग्य व्यक्ति की खोज आरम्भ हुई, सभा के अधिकारियों की दृष्टि फिर श्री पं० हरिशङ्कर जी की ओर हुई। इस समय वे श्री शिवप्रसाद जी बनारस निवासीके साथ आर्य विश्व यात्रा की पूर्ण तैयारी कर चुके थे। जब श्री के परिवार को मित्र के संकट की सूचना श्री पं० घासीराम जी व श्री सेठ मदन मोहन जी ने दी तब आपके प्राण श्रद्धास्पद श्री पं० नाथूराम शंकर शर्मा ने मित्र के संकट को धार्मिक संकट समझ कर श्री शर्मा जी को विश्वयात्रा से रोककर मित्र की सेवा करने को कह दिया। सन् १९२३ के युग में विश्व यात्रा का विचार छोड़कर हिन्दी और आर्यसमाजकी सेवाका व्रत लेकर शर्मा जी मित्र के सम्पादक बन पुनः आगरा पधारे

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ये और निरन्तर १२ वर्ष तक मित्र की सेवा में लग्न रहे। आपके सम्पादकत्व में सन् २५ में जन्म ताब्दी के अवसर पर मित्र कुछ दिन के लिये दैनिक प में भी निकला। मित्र को हिन्दी में उच्च स्थान ुलाने तथा सामाजिक, धार्मिक एवं राजनैतिक तथा ाहित्यिक सभी क्षेत्रों में मित्र की महत्ता स्थापित रने में शर्मा जी की लेखनी ने जादू का सा कमाल दिखाया। उपन्यास सम्राट श्री प्रेमचन्द्र जी व नागरी चारिणी सभा आदि ने आपके सम्पादकत्व में काशित आर्यमित्र को हिन्दी का श्रेष्ठतम पत्र घोषित केया।

इस काल में आर्य विद्वानों और नेताओं के अतिरिक्त सर्व श्री राष्ट्रकवि मैथिली शरण गुप्त, अयोध्या सिंह जी उपाध्याय, प्रेमचन्द्र, कविवर सनेही, बालकृष्ण शर्मा नवीन, गणेश शंकर विद्यार्थी, रत्नाकर, अम्बिका प्रसाद वाजपेयी, पीर मुहम्मद मूनिस, अध्यापक जहूरबख्श, चकवस्त, वासुदेव शरण अग्रवाल, आदि केलेख तथा रचनाएँभी मित्रमें छपती रहीं, इस युग में मित्र की विशेषांक परम्परा ने विशेष ख्याति प्राप्त की। ऋष्यंक बोधरात्रि अंक, जन्म शताब्दी अंक स्मरणीय साहित्य के रूप में प्रसिद्ध हैं। बाद में भी वेदांक, ईसाई मत समीक्षांक, शिक्षांक आदि निकलते रहे हैं।

तत्कालीन अधिष्ठाता का आर्य मित्र से मतभेद होने के कारण सन् १९३४ में शर्मा जी ने सम्पादक पद से त्याग पत्र दे दिया। यह घड़ी मित्र के जीवन की सबसे अधिक अशुभ घड़ी थी। सभा को उनकी सेवाओं से वंचित होना पड़ा परन्तु मित्र के प्रति उनका स्नेह और आशीर्वाद सदैव बना रहा और आज भी बना हुआ है। सुप्रसिद्ध साहित्यकार सम्पादकाचार्य श्री पण्डित बनारसी दास जी चतुर्वेदी एम. पी. एवं डाक्टर सत्येन्द्र जी एम. ए. हिन्दी विद्यापीठ आगरा विश्व विद्यालय आगरा आदि समय समय पर सम्पादन में महत्वपूर्ण योग देते रहे। श्री पण्डित रामस्वरूप जी शास्त्री काव्यतीर्थ, श्री जगनलाल जी गुप्त, श्री पं० मङ्गलदेव जी शर्मा, श्री रामचन्द्र जी श्रीवास्तव एम. ए. आदि सज्जन भी सहायक संपादक रूप में मित्र की उन्नति में योग देते रहे। श्री हरि शङ्कर जी के त्यागपत्र ने मित्र को संकट में डाल दिया। उस समय श्री मधुसूदन जी, चतुर्वेदी एम. ए. वर्तमान संपादक कल्पना हैदराबाद, श्री प्रोफेसर बाबूराम जी गुप्त एम. ए. 'आगरा कालेज' तथा पं० ब्रह्मानन्द जी आयुर्वेदाचार्य आदि ने संपादक पद पर कार्य किया।

सभा ने इस बीच आर्य भास्कर प्रेस और मित्र को आर्य साहित्य लिमीटेड को ठेके पर दे दिया और मण्डल के अधिकारियों की प्रार्थना पर श्री पं० हरिशंकर जी शर्मा ने पुनः सम्पादन किया। परन्तु थोड़े समय पश्चात् उनको सेवाओं से मित्र को वंचित होना पड़ा। ऐसे समय में मण्डल ने मित्र के लिये श्री जयदेव शर्मा वेदालंकर "वेदभास्कर" की सेवायें प्राप्त कीं और वे सम्पादन करते रहे। उनके समय में वेद संबन्धी शास्त्रीय लेखों की विशेष चर्चा रही।

सन् ४१ में प्रेस और मित्र सभा कार्यालय केसाथ नारायण स्वामी भवन, ५ मीराबाई मार्ग, लखनऊ में चला गया। वहाँ श्री ऋषिदेव जी विद्यालंकार, श्री पं० आर्येन्द्र जी वेदशिरोमणि एम. ए, श्री प्रो० भगवान् प्रसाद जी एम. ए., श्री पं० नरेन्द्र नाथ जी शास्त्री आ० शिरोमणि एम. ए., श्री कायेन्द्र जी शास्त्री आदि ने सम्पादक रहकर मित्र की उन्नति में योग दिया। सन् ४३ की जनवरी में मुझे मित्र के संपादक के रूप में प्रथम वार सेवा करने का अवसर मिला।

हम सभी इस बात के लिये सचेष्ट थे कि श्री पं० हरिशंकर जी शर्मा मित्र के साथ अपने अभिन्न सम्बन्ध को बनाये रक्खें। श्री सेठ मदन मोहन जी व श्री प्रिन्सीपल महेन्द्र प्रताप जी शास्त्री एम.ए. तथा मेरे विशेष आग्रह पर शर्मा जी ने मित्र का अवैतनिक सम्पादक बनना स्वीकार कर लिया और मित्र का सम्पादकीय विभाग आगरा पहुँच गया। मैं तथा श्री पं० बाबूराम जी एम. ए. "भू० पू० सम्पादक" और श्री पं० प्रबोधचन्द्र जी शास्त्री आ० शि० शर्मा जी को सम्पादन में विशेष सहयोग देते रहे। बाद में

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्यावर्त इन्दौर के सम्पादक पद पर जाने के कारण मित्र से मुझे दूर होना पड़ा।

इस बीच आर्य मित्र को बलशाली और स्थायी बनाने के लिये एक आर्य मित्र प्रकाशन लिमीटेड का निर्माण आरम्भ हुआ और मित्र का सम्पादन लखनऊ से ही होने की व्यवस्था की गयी। श्री पं० धर्मपाल जी विद्यालंकार ने अवैतनिक सम्पादक के रूप में कार्य को सम्हाला और मित्र को उन्नत बनाने तथा कम्पनी को स्थापित करने में सहयोग दिया। श्री पं० रामदत्त जी शुक्ल ने भी सम्पादकीय सहयोग देकर मित्र को प्रगति दी।

इस समय सन् '५० तक कम्पनी की स्थापना हो चुकी थी, और सभा ने अपने प्रेस की सम्पत्ति व मित्र की गुडविल को कम्पनी के स्थायित्व के लिये सम्बद्ध कर दिया था। सभा कम्पनी की भागीदार बन गयी थी। और मित्र कम्पनी की ओर से प्रकाशित होने लगा। मुख्य समस्या सम्पादन की थी। एकबार फिर सभा और कम्पनी के आग्रह पर श्रीपं० हरिशंकर जी शर्मा ने मित्र का सम्पादक पद स्वीकार कर लिया। इस समय स्व० श्री पं० यज्ञदत्त शर्मा और दूसरी बार मुझे मित्र की सेवा का अवसर प्राप्त हुआ। पर कम्पनी की गाड़ी बीच में ही अटक गयी और सन् ५३ में उसका काम शिथिल पड़ गया। श्री शर्मा जी ने कार्य से मुक्त होने की प्रार्थना कम्पनी से की। कम्पनी ने सखेद मित्र का सम्पादकीय विभाग लखनऊ बुला लिया और वहाँ श्री पं०गोपाल दत्त जी शास्त्री, विद्याभास्कर सम्पादक पद पर कार्य करते रहे।

कम्पनी ने प्रेस और मित्र को सभा को ही वापिस कर दिया। इस समय मित्र को एक गहरा आघात पहुँचा पर आर्य बन्धुओं के उत्साह और सहयोग ने मित्र के इतिहास में एक नवीन मोड़ उत्पन्न कर दिया। इस समय श्री भारतेन्द्रनाथ जी आर्यमित्र के सम्पादक नियुक्त हुए तथा सभा की ओर श्री बाबू कालीचरण जी आर्य तत्कालीन अधिष्ठाता आर्य मित्र व मन्त्री सभा के प्रयत्नों से मित्र दैनिक करने का आन्दोलन आरम्भ हुआ। सर्व, निश्चयानुसार साप्ताहिक के साथ साथ दैनिक भी निकला। आर्यजगत् में धूम मच गयी और की माँग और प्रतिष्ठा बढ़ी। दस मास तक मित्र एक परीक्षण की स्थिति में रहा। पर खेद यह परीक्षण आर्थिक दृष्टि से बहुत महँगा पड़ा दैनिक का प्रकाशन बन्द करना पड़ा।

इस परीक्षण ने मित्र को गहरे आर्थिक सङ्क डाल दिया जिससे अभीतक मित्र मुक्त नहीं हो है। फिर भी इस सङ्कट काल में श्री पं० शिवदत्त जी सभा मन्त्री ने बड़ी योग्यता पूर्वक सम्पादक कार्य सम्हाला और मित्र के मिशन को आगे बढ़ा

सन् ५८ में मई मास में श्रद्धेय श्री पं० हरिश जी शर्मा के सभाप्रधान निर्वाचित होने पर मित्र प्रति स्नेह तथा अपने साथ आत्मीय सम्बन्धों कारण उनके आदेशानुसार तीसरी बार मित्र सेवा मुझे स्वीकार करनी पड़ी और अवैतनिक से जैसा भी बन पड़ा, मित्र द्वारा आर्य समाज सेवा में संलग्न हूँ।

समय समय पर मित्र के प्रबन्धकर्ता 'अधिष्ठा अनेक महानुभाव रहे जिनके प्रति मित्र परि सदैव आभारी रहेगा उनमें से कुछ इस प्रकार है बाबू शालिग्राम जी, श्री बाबू नाथमल जी, श्रीधर्म नाथ जी शास्त्री, श्री बाबू पूर्णचन्द्र जी प्रधान सा देशिक सभा, श्री बाबू शोभाराम जी, श्री डा० मि लाल जी, श्री बाबू श्रीराम जी, श्री मथुरा प्रसाद शिवहरे, श्री रतनलाल जी, श्री पं० रासबिहारी तिवारी, श्री पं० भृगुदत्तजी तिवारी, श्री पं०रामद जी शुक्ल, एम. ए., श्री बाबू कालीचरण जी आ श्री बाबू मोहन लाल जी आर्य श्री रामजी प्रसाद गुप्त, श्री ठा० फूलन सिंह जी, श्री पं० प्रेमचन्द्र शर्मा एम. एल. सी. वर्तमान अधिष्ठाता व मन्त्री सभा उनके विशेष प्रयत्न से मित्र हीरक जयन्ती महोत्सव मनाने में समर्थ हुआ है। आगरा के लाल

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मित्रानलाल जी की सेवायें प्रबन्ध में बड़ी सहायक
सभा, श्री नारायण गोस्वामी जी के मित्र के साथ
निकट लीस वर्ष से सम्बन्ध चले आ रहे हैं। और संपूर्ण
और वस्था को सम्हाले हुए हैं।

आर्य मित्र आर्य प्रतिनिधि सभा का ही नहीं
र्य समाज मात्र का सच्चा सेवक है। सैकड़ों उप-
देशकों तथा प्रचारकों द्वारा भी जो कार्य सम्भव नहीं
वे मित्र प्रति सप्ताह करता रहता है। आर्य सिद्धांतों
सङ्क मण्डन और वेद विरोधी विचारों के खण्डन पर
ही सका सदैव लक्ष्य रहा है। आर्य समाज संबन्धी
वदश नेक २ आन्दोलनों के सफल बनाने में आर्य मित्र
ादक दैव अग्रणी रहा है। भारतीय संस्कृति के समुद्धार
बढ़ा मर्थन और संवर्द्धन में आर्य मित्र अपना गौरव-
र्ण स्थान रखता है।

हरिश
मित्र आर्यमित्र की साठ वर्षीय सेवाओं के उपलक्ष्य में
बन्धो भा के निश्चयानुसार आज 'आर्यमित्र' हीरकजयंती
मित्र मारोह मनाया जा रहा है। मित्र आर्य समाज का
क न्देश वाहक, हिन्दी का मौन सेवक और सामाजिक
धार्मिक क्रांति का सूत्रधार रहा है उसके इस यश को बनाने और स्थिर रखने में जिन सम्पादकों का अमूल्य सहयोग रहा है। हीरक जयन्ती के इस शुभावसर पर उनकी सेवाओं की चर्चा और प्रशंसा करना हम अपना कर्त्तव्य समझते हैं। उन सबके सहयोग से ही मित्र वर्तमान जीवन पा सका और आगे सेवा का व्रत लेने का साहस कर रहा है। सभी सहयोगियों के लिये कृतज्ञता प्रकाशित करते हुए मित्र आर्य विद्वानों, साहित्य सेवियों और धर्म प्रचारकों की शुभ कामनाओं की इच्छा करता है। आर्य मित्र की ग्राहक संख्या बढ़ाने में सहयोग देकर प्रत्येक आर्य मित्र की सच्ची सहायता कर सकता है, हीरक जयंती पर मित्र की यही माँग है।

आशा है मित्र के सब शुभ चिन्तकों का वरदहस्त मित्र पर बराबर बना रहेगा।

प्रभु मित्र को बल दे आप सब सहयोग दें यही प्रार्थना है।

—उमेशचन्द्र स्नातक, एम. ए.

पाँच नियम

"शौच सन्तोषतपः स्वाध्यायेश्वर प्रणिधानानि नियमाः।"

१—*शौच*—शरीर, मन, आत्मा तथा बुद्धि शुद्ध रखना।

२—*सन्तोष*—धर्म और परिश्रम से प्राप्त में प्रसन्न रहना।

३—*तप*—धर्माचरण में सङ्कट भी सहन करना, नित्य कर्मों का नियमपूर्वक पालन करना।

४—*स्वाध्याय*—वेद, उपनिषदादि आर्ष ग्रन्थों का अध्ययन व मनन करना।

५—*ईश्वर प्रणिधान*—ईश्वर-भक्ति (सर्वस्व ईश्वर के अर्पण) करना।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

GRAMS : "Steelquip" Liluah

TELEPHONE : 66-2

DHIMAN BROTHERS

Steel Equipment & Construction Private Ltd.,

22, Grand Trunk Road, P. o. Liluah, Distt. Howrah.

Mechanical & Structural Engineers, Sheet Metal Worke Galvanizes, Re-Rollers of Rods & Sections, Fabbricato of Locomotive & Wagan Components, Signal Posts, Standards, Towers, Mining Equipment, Coal Tubs & Tipping Wagons, Aluminium & Galvanized Carriage, Roof Tanks, Travelling Cash Safes, Trucks and Trollies for all Purposes, Skips for Earth and Minerals Handling Lead Linen and Stainless Steel Equipment, Ovens and Furnaces, Petrol Tankers and Tractors, Trailers, Tanks, Foundry Equipment, Cupolas and Ladles, Trailers for Heavy Road Hulage.

Registered with :

Director General Supplies & Disposals, Mining and Railway Boards, Director of Industries.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्यमित्र के प्रति शुभकामनायें

य महोदय,

श्री पन्तजी को यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आर्यमित्र साप्ताहिक का हीरक जयन्ती समाह मनाने का निश्चय किया गया है। हीरक जयन्ती समारोह की सफलता के लिए वे अपनी शुभामनाऐं भेजते हैं।

आपका

सत्यसागर कुलश्रेष्ठ

कृते निजी ससिव.

ग्रह मन्त्रालय

नई दिल्ली

× × × ×

"आर्य मित्र" का तो मैं आर्य समाज की एक संस्था मानता हूँ, उसका स्थान तो केवल एक माचार पत्र से अधिक ऊंचा है, "आर्यमित्र" ने आर्य समाज की जो सेवा की है वह किसी भी आर्य माजी से छिपी नहीं है, आर्य समाज की सेवा तथा देश की सेवा के लिए और विशेषकर विशाल हिन्दू मुदाय की सेवा के लिए आज भी बहुत काम बाकी है, विदेशी ईसाई पादरियों द्वारा जो अनीति पूर्ण ाक्रमण धर्म परिवर्तन के रूप में किया जा रहा है, उसका प्रतिकार करना आर्य समाज के लिए ावश्यक है, आर्यमित्र के इस हीरक जयन्ती समारोह अवसर के उपलक्ष में परमात्मा से प्रार्थना है कि दिक धर्म तथा भारतीय परम्परा की रक्षा के लिये आर्यमित्र सदा जीवित रहे।

घनश्यामसिंह गुप्त

दुर्ग (म० प्र०)

× × × ×

आर्यमित्र आर्य समाज का एक गजट है, विना किसी भेद भाव के यह आर्य जगत् की सेवा ापने जन्म काल से करता हुआ आरहा है, यही उसकी विशेषता है, अनेकानेक उत्थान और पतन के झंझट बातों का सामना करते हुए वह अडिग खड़ा है, इसकी यही दृढ़ता आकर्षक है, उपादेय है, मेरी दृष्टि ा इसे सर्वतोभावेन आर्य जगत् का प्यार सहायता और सहयोग अनिवार्य रूप से मिलना चाहिए। ीरक जयंती पूर्ण सफल हो ऐसी मेरी आन्तरिक कामना है, आर्य प्रतिनिधि सभा एवं आर्य मित्र ारिवार की हीरक जयन्ती और आर्य जगत के विद्वद्वरेराय श्री पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय और श्री ं० गंगाप्रसाद जी जज को अभिनन्दन ग्रंथ प्रदान के आयोजन को महत्त्वपूर्ण मानता हूँ।

अभेदानन्द

भू० पू० प्रधान सार्वदेशिक सभा

पटना

× × × ×

यह प्रसन्नता की बात है कि "आर्यमित्र" अपनी ६० वर्ष की सेवाओं के उपरान्त अपनी "हीरक जयन्ती" मनाने जा रहा है, आर्य समाज जगत् में "आर्यमित्र" की सेवाऐं सबको विदित हैं, विद्यार्थी जीवन में जब मैं "आर्यमित्र" को बराबर पढता रहता था, मैंने बहुत कुछ उस पत्र से ग्रहण किया है, बहुत से मेरे विचार "आर्यमित्र" ने बनाये हैं, मैं ऐसे पत्र की हीरक जयन्ती के अवसर पर अपनी शुभकामनायें भेजता हूँ।

चन्द्रभानु गुप्त.

लखनऊ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

"आर्य मित्र" हीरक जयन्ती मना रहा है, निश्चय ही यह हर्ष और अभिमान की बा साठ वर्ष किसी राष्ट्र के जीवन में चाहे साधारण बात हों, परन्तु एक संस्था विशेषकर एक पत्रि लिये यह गौरव और महत्त्व का विषय है कि इतनी लम्बी यात्रा उसने सफलता पूर्वक तय करली।

"आर्यमित्र" केवल एक साप्ताहिक मात्र ही नहीं अपितु यह एक प्रगतिशील आन्दोल प्रतीक रहा है, मुझे विश्वास है कि वर्तमान संकीर्ण और साम्प्रदायिक संकटो के आघात से बचता "आर्य मित्र" अपनी परम्पराओं को निभाने में सफल रहेगा, कार्य कठिन अवश्य है परन्तु जब भा और लक्ष्य सही हो तो कठिनाईयाँ राह नहीं रोक सकती।

आर्य समाज ने देश के लिए सदा प्रगति और उदारता का मार्ग प्रस्तुत लिया है, इनका महर्षि दयानन्द की है। दिव्य दृष्टि को जिसने सौ वर्ष पहले सौ वर्ष बाद की आवश्यकताओं को रखकर एक प्रगति शील कार्यक्रम निर्धारित कर दिया।

सिंहावलोकन से प्रेरणा अवश्य मिलती है, परन्तु भविष्य तभी सुरक्षित हो सकता है आगामी कार्यक्रम में भी आने वाले सौ वर्षों की झांकी हो "आर्य मित्र झाँकी देख भी सकता है आर्य भाइयों को इसके दर्शन भी करा सकता है, यह मेरा विश्वास है। सधन्यबाद

यशपाल
सम्पादक—हिन्दी मिल
जालन्धर

× × × ×

यह जानकर हर्ष हुआ कि सुप्रसिद्ध हिन्दी साप्ताहिक "आर्य मित्र" का हीरक जयन्ती रोह मनाया जारहा है, "आर्यमित्र" अपने जन्म से ही सामाजिक पुनर्जागरण का मंत्र वाहक रह तथा आर्य समाज के युगान्तरकारी संदेश को जनजीवन में प्रसारित करने के महान् उत्तरदायित्व को उसने भलीभांति वहन किया है, मुझे पूर्ण आशा है कि भविष्य में भी बर्तमान समय की भांति वि परिस्थितियों को देखते हुए "आर्यमित्र" नव जागरण तथा सामाजिक समन्वय के उद्देश्य को पू प्रदान करने में सफल सहायक सिद्ध होगा। अभिबादन साहत

नारायण दत्त तिवारी एम० एल० ए०

× × × ×

प्रिय भाई!

पत्र के लिए धन्यवाद, आर्य मित्र की हीरक जयन्ती की बधाई, मेरी शुभकामना आर्यमित्र देश एवं समाज की सेवा करता हुआ हिन्दी के प्रचार और प्रसार में योग दे।

स्मरण के लिए धन्यवाद।

विदेश मन्त्रालय
नई दिल्ली

भवदीय
बच्चन

× × × ×

प्रिय संपादक जी,

"आर्यमित्र" की हीरक जयन्ती के उल्लास भरे उत्सब कोलाहल में मेरी भी एक हर्ष मिला लीजिये, अनेक दृढ़ कंठों के जय जयकार घोष में एक जयकार और सम्मलित कर लीजिये।

आशा है सब आनन्द ही आनन्द होगा।

मऊनाथ भंजन

श्यामनारायण पांडेय

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

"आर्य मित्र" की हीरक जयन्ती पर हार्दिक बधा स्वीकार करें, विश्वास है कि आप भविष्य में भी हिन्दू समाज की सेवा करते रहेंगे, और हिन्दुओं में आधुनिक विचारधारा संकुचित मनोवृत्ति और अपने भूत वर्तमान और भविष्य को ठीक रूप से समझने की यथार्थ बुद्धि का प्रचार करेंगे, ताकि हम एक आधुनिक, उज्वल, सुखी व सम्पन्न समाज की रचना कर सकें।

सम्पादक
सरिता

× × × —

"आर्यमित्र साप्ताहिक" के हीरक जयन्ती विशेषांक निकालने की योजना संबंधी सूचना प्राप्त हुई, अनेक धन्यवाद सचमुच ही यह आपका कार्य बड़ा अभिनन्दनीय है, मेरी शुभकामनाऐं हैं कि आपका यह पत्र उत्तरोत्तर उन्नति करे। हीरक जयन्ती विशेषांक की सफलता के लिये मैं शुभकामना करता हूँ।

विश्वविद्यालय लखनऊ — दीनदयाल गुप्त

× × × ×

आर्यमित्र ने ६० वर्षों तक मित्र की आंख से आर्यमात्र को देखा है, और देखता आया है, अब ऐसा अवसर प्राप्त है कि मित्र की आंख से आर्य मात्र उसको देखे और उसके लिये धन की इतनी पुष्कल राशि संचित कर दे, कि वह "यावच्चन्द्र दिवाकरौ" आर्य संसार की अथक सेवा करता रहे यदि ऐसा शुभ कार्य किया गया तो आर्यों को उसकी अनेक जयन्तियाँ मनाने का अवसर प्राप्त होगा इस कार्य को पूर्ण करने के लिए भगवान आर्यों को सद्विचार और साधन प्रदान करे यही मेरी कामना है।

कलकत्ता — रामावतार तीर्थ चतुष्टय

× × × ×

आर्य मित्र अपने जीवन के साठ वर्ष पूरे करके आज अपनी हीरक जयन्ती मना रहा है यह जानकर मुझे हृदय से प्रसन्नता है, अनेकों चढ़ाव उतार की परिस्थितियों को पार करते हुये वेद आर्य समाज राष्ट्र साहित्य एवं हिन्दी भाषा की जो महती सेवा इस पत्र ने की है, वह सर्वथा प्रशंसनीय रहेगी, मुझे वे दिन स्मरण हैं, जब श्री मान कविवर महान् साहित्यकार श्री पं० हरिशंकर जी शर्मा कविरत्न के संपादक काल में इस पत्र ने एक अग्रिम ख्याति प्राप्त की थी, आर्य मित्र की सेवायें चतुर्मुखी और ठोस रही हैं, हिन्दी पत्रों के इतिहास में सन्देह नहीं कि इसका स्थान अमर है, पत्र दिनानुदिन अधिक लोक सेवा करे मेरी यही कामना है, और इसकी सफलता के लिये मैं कार्य कर्त्ताओं को बधाई प्रस्तुत करता हूँ।

नासिक — वैद्यनाथ शास्त्री

× × × ×

मानवता का प्रतिनिधि "मित्र"

आर्यमित्र आर्यसमाज का सच्चा प्रतिनिधि है। मानवता के समुद्धार की भावना की जाग्रत करना, मित्रता के विश्व बंधुत्व सन्देश का प्रसार, विश्व से अज्ञान, अन्याय, अभाव के विनाश के लिए सतत अनथक प्रयत्न ही मित्र का मिशन रहा है उसके हीरक जयन्ती महोत्सव की सफलता पर हम सबको गर्व है प्रभु मित्र को चिरायु और सफल करें।

बड़ौत — महेन्द्र प्रताप शास्त्री एम० ए०

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि आर्य समाज के सुप्रसिद्ध और राष्ट्र भाषा हिन्दी के पुराने साप्ताहिक पत्र "आर्यमित्र" की साठ वर्ष व्यापी बहुमूल्य सेवाओं के उपलक्ष्य में "आर्यमित्र" हीरक जयन्ती मनाने का निश्चय किया है, इतने दीर्घकाल तक किसी विरल पत्र पत्रिका को ही जीवित यह सेवा का सौभाग्य प्राप्त होता है, इसलिये "आर्य मित्र" इस हीरक जयन्ती समारोह द्वारा सम्मा किए जाने का सच्चा अधिकारी है।

आर्यमित्र ने आर्य समाज और वैदिक धर्म की जो अनुपम सेवा की है, वह सर्व विदित है यह बड़े सौभाग्य की बात है कि इसे आरम्भ से ही समर्थ संपादक मिलते रहे हैं, इसलिए "आर्यमित्र" रुद्र घोष करके असत्य का खंडन और सत्य समर्थन विचारों का प्रतिपादन करता रहा है, इसने प्रदेश जैसे पौराणिक विचारों के गढ़ में विपरीत विपक्षियों को आह्वान देकर और वेद के सत्य ज्ञान निर्मल ज्योति फैलाकर झूठे मत मतान्तरों के अविद्यान्धकार को दूर करने से भगीरथ प्रयास किया आज से साठ वर्ष पहले "आर्य मित्र" ने जिस धैर्य और उत्साह के साथ और जिन उच्चतम और उज्ज्वल वैदिक आदर्शों को लेकर मानव सेवा का आरम्भ किया था, उन्हीं भावनाओं और आदर्शों को लेकर आज भी कार्य क्षेत्र में डटा है, "आर्य मित्र" के वर्तमान संपादक उसी अभिजात लक्ष्य के उच्चतम को बराबर सुरक्षित रखे हुए हैं।

इस हीरक जयन्ती के अवसर पर मैं उसके लिए अपनी शुभकामनाएँ अर्पित करता सुदीर्घ जीवन के लिये मनुष्य जीवन की वेद वर्णित "शरदः शतम्" की मर्यादा के अर्थ में नहीं, पुण्याह वाचन समारोह में पढ़े जाने वाले मंत्रों के अर्थ में।

दीर्घानागा नद्यो गिरयस्त्रीणि विष्णु पदानि च,
तेनायुः प्रमाणेन पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु...

अर्थात् तुम्हारा जीवन दीर्घ नागों, नदियों, पर्वतों और श्री विष्णु के तीन पदों में व्याप्त तिभुवन के समान सुदीर्घ बने।

सन्तराम
सम्पादक विश्वज्योति

होशियारपुर

\+ × × —

पूज्य भ्राताजी,

सप्रेम नमस्ते,

आपका कृपा पत्र प्राप्त हुआ यह जानकर प्रसन्नता हुई कि "आर्यमि की हीरक जयन्ती मनाई जा रही है, वैसे तो "आर्यमित्र बहुत वर्षों से देखता चला आया हूँ पर सत्याग्रह के दिनों में तो आर्यमित्र के लेखों तथा समाचारों से मनको बहुत प्रसन्नता तथा उत्साह मि रहा। आर्य जाति तथा भारत देश की निष्पन्न तथा निर्भीक सेवायें करने का श्रेय "आर्यमित्र" को जाता है, तथा हमें इस पर गौरव पूर्ण अभिमान है। ईश्वर से प्रार्थना है कि 'आर्यमित्र' दिनों दिन उन्न शीलता की ओर बढ़े।

आपको तथा आर्यमित्र के मित्रों को मेरी हार्दिक बधाई तथा शुभकामना है।

चण्डीगढ़।

भगवान्दास
प्रिंसीपल डी० ए० वी० कालेज

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मित्र के साथ मेरा घनिष्ट परिचय और प्रेम रहा हैं। इसी नाते मित्र ने मेरा भी खूब आदर किया है। समाज की सेवा में हम दोनों एक दूसरे से घुले मिले रहे हैं। आज भी जब मैं वृद्धावस्था के कारण प्रचार- नहीं बन सकता। मित्र मेरी लेखनी का आदर कर मुझे दूर दूर के आर्य बन्धुओं तक अपनी बात पहुँचाने का वसर प्रदान करता रहता है। बड़े होने के नाते मित्र के प्रमि शुभ कामनायें और आशीर्वाद देता हूँ और आशा ता हूँ मित्र आर्य समाज के यश को बढ़ाने में सर्वागुणी रहेगा।

× × × × ×

—गंगा प्रसाद एम० ए० रि० ची० जज

आर्यमित्र आर्य समाज का सच्चा सेवक और हितैषी है। जीवन के लम्बे उतार चढ़ाव में मित्र अपने आदर्शों से कभी नहीं डिगा। मित्र ने आर्य समाज के लिये अनेक विद्वान् लेखक, साहित्यकार उपदेशक, रक और नेता ही नहीं दिये स्वयं प्रति सप्ताह हजारों व्यक्तियों को आर्य समाज का सन्देश सुना। वह रचनात्मक धना भी और कर रहा हैं जिसका हमारे इतिहास में कोई सानी नहीं ?। मेरे जीवन निर्माण में मित्र का बड़ा थ रहा है। मित्र के हकत्सव पर मेरी शुभकामनायें हैं।

—आचार्य भद्रसेन, अजमेर।

नारी जाति का उपकारक मित्र

नारी जाति के अधिकारों की रक्षार्थ मित्र ने अपने जन्मकाल से जो संघर्ष किया उसके लिये प्रत्येक भार- य नारी को ऋण मानना चाहिये। न केवल अधिकार दिलाने में ही अपितु कर्तव्य का पाठ पढ़ाने में भी मित्र ने हिला समाज की महान् सेवा की है। बाल विवाह, बृद्ध विवाह और दहेज पर्दा आदि कुप्रथाओं के प्रति जनमत का र्माण कर मित्र ने वैचारिक क्रान्ति कर दी और साथ ही प्राचीन जीवन की परम्पराओं के आधार पर नारी को ह लक्ष्मी के उच्चासच पर बैठाया और फिर नारी के शील और चरित्र की शिक्षा देकर मित्र ने सभी बहनों का ौहार्द प्राप्त किया। आज प्रत्येक नारी मित्र के हीरक जयन्ती समारोह को अपने परिवार का उत्सव समझती है और मित्र के दीर्घ जीवन की कामना करती हैं।

—लक्ष्मी देवी आचार्या

× × × ×

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आर्यमित्र अपना हीरक जयन्ती विशेषांक प्रकाशित कर रहा है। इस शुभावसर पर मैं मित्र के सम्पादक उनके सहकारियों को बधाई देता हूँ. आर्यमित्र ने आर्यसमाज की जो सेवा की वह चिरस्मरणीय रहेगी। आर्यसमाज के अच्छे साहित्य की कमी को सदा ही अनुभव किया जाता रहा है। इस कमी को आर्यमित्र ने बहुत सीमा तक पूरा करने यत्न किया है। उत्तर प्रदेश में तो विशेष रूप जो धार्मिक और सामाजिक जागृति उत्पन्न हुई है। वह आर्यमित्र के प्रयत्नों का ही फल है। आज भी जब कि आर्यसमाज के शिथिलता व्याप्त है, आर्यमित्र जैसे निर्भीक पत्र की अत्यन्त आवश्यकता है, जो आर्य सदस्यों का मार्ग प्रदर्शन कर सके। मुझे पूर्ण विश्वास है कि आर्यमित्र ऋषि दयानन्द की जगाई हुई अमर ज्योति को कभी भी बुझने न देगा।

बीरेन्द्र
सम्पादक वीरभारत

बीर प्रताप
जालन्धर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भारत गणतन्त्राद्यक्षाणां

श्री डा० राजेन्द्रप्रसाद-महाभागानां

सेवायां

सम्मानोपाधिपत्रम्

★ ★ ★

दयानन्द दीक्षायाः प्रारम्भे शतकोत्सवे ।
स्नातकानाम् च दीक्षान्त-समारोहे समागते ॥१॥
पौष मासेऽसिते पक्षे दशम्यां शुक्रवासरे ।
द्वि सहस्रोत्तरे चाब्दे षोडशे वैक्रमे (२०१६) शुभे ॥२॥
विश्व विद्यालयेनात्र वृन्दावन—सुशोभिना ।
गुरुकुलेन सौभाग्यात् सम्प्राप्तावसरेण वै ॥३॥
विद्यया क्रियया चैव शीलादाचारतस्तथा ।
शिरोमणिः स्वदेशस्य योऽयं राष्ट्रपतिर्मतः ॥४॥
तस्मै विद्वद्वरेण्याय देश रत्नाय धीमते ।
व्रतिने कृतिने चैव सर्व—भूतानुकम्पिने ॥५॥
श्री—राजेन्द्रप्रसाद—राष्ट्राध्यक्षाय सादरम् ।
विद्यावारिधिरित्येष — सम्मानोपाधिरर्प्यते ॥६॥
पादार्पणेन संस्थायां गौरवं नूनमाहितम् ।
सम्मान स्वीकृतिस्त्वैषा भूयाद्भूति-विवर्धिनी ॥७॥

पौष कृ० १० सं० २०१६
२५ दिसम्बरम्, १९५९
अधिवृन्दावनम् ।

वृन्दावनस्य-कुलगुरु विश्वविद्यालयस्य
कुलपतिः—
डा० हरिशङ्कर शर्मा डी. लिट्

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्यमित्र के सम्बन्ध में तीन सुझाव

[श्री पं० हरिशंकर शर्मा डी. लिट् प्रधान आ० प्र० नि० सभा उत्तर प्रदेश]

उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा का मुख-पत्र 'आर्यमित्र' गत साठ वर्षों से वैदिक आर्य और आर्य समाज की प्रशंसनीय सेवा कर रहा है आर्य-समाज ही नहीं देश तथा समाज सम्बन्धी अन्य अनेक क्षेत्रों में भी उसकी अमूल्य सेवाएँ हैं। कहने को आर्यमित्र उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि का मुख पत्र है परन्तु उसने बिना किसी प्रान्तीय भेद-भावना के आर्य जगत् की कीमती सेवाएँ बड़ी दृढ़ता और संलग्नता से की हैं। 'आर्यमित्र' हिन्दी जगत् के जीवित पत्रों में एक आध को छोड़ कर सब से पुराना है सन १९२५ ई० में ऋषि दयानन्द जन्म शताब्दी के समय इसने कुछ दिनों के लिए दैनिक रूप भी धारण किया था। कई वर्ष पूर्व भी आर्य मित्र कुछ महीनों तक दैनिक दर्शन देता रहा।

आज ऐसे उपयोगी और प्राचीन पत्र की "हीरक जयन्ती" मनायी जा रही है, यह बड़ी प्रसन्नता की बात है। समस्त आर्य जनता को इस समारोह से हर्ष एवं सन्तोष है। इस अवसर पर मैं तीन सुझाव आर्य मित्र के संचालकों सहायकों अनुग्राहक ग्राहकों और प्रेमी पाठकों के सामने रखना चाहता हूँ—

१—साप्ताहिक आर्य मित्र आन्तरिक और बाह्य दोनों दृष्टियों से उच्च कोटि का साप्ताहिक बनाया जाए अर्थात् उसके लिए वे सब उपकरण एवं साधन एकत्र किये जाएँ जो एक प्रथम श्रेणी के साप्ताहिक के शरीर और आत्मा दोनों को उच्च एवं उत्कृष्ट बनाने के लिए आवश्यक हैं।

२—आर्यमित्र का मासिक संस्करण प्रकाशित किया जाए। इस संस्करण का नाम कुछ और रहे। इसमें विविध विषयों पर गम्भीर लेख प्रकाशित हों।

३—'आर्यमित्र' से सम्बन्ध रखने वाला एक प्रकाशन मंदिर भी स्थापित किया जाए। इस प्रकाशन गृह से आर्यसमाजोपयोगी उच्च कोटि का सुलभ सस्ता साहित्य प्रकाशित किया जाए। विद्वान् लेखकों से उपयोगी और उत्कृष्ट पुस्तकें लिखा कर सब साधारण में प्रचारित की जाएँ।

मेरे ये तीन सुझाव हैं, आशा है, आर्य जनता उन पर गम्भीरता पूर्वक विचार करेगी। आर्यमित्र हीरक जयन्ती मनाने का सबसे मुख्य उद्देश्य और लाभ यह होना चाहिए कि उसकी स्थायी अभिवृद्धि और उन्नति के लिए भी क्रियात्मक कार्य किया जाए और इस अवसर से लाभ उठा कर उपर्युक्त तीनों सुझावों को शीघ्र से शीघ्र कार्यान्वित किया जाए। यही मेरी विनीत विनती और सविनय प्रार्थना है।

आत्मा के भूषण

सन्तानों को उत्तम विद्या, शिक्षा, गुण, कर्म और स्वभाव रूप आभूषणों का धारण कराना माता, पिता, आचार्य और सम्बन्धियों का मुख्य कर्तव्य है। सोने, चांदी, माणिक, मोती, मूँगा आदि रत्नों से युक्त आभूषणों के धारण कराने से मनुष्य का आत्मा सुभूषित कभी नहीं हो सकता। —ऋषि दयानन्द

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

"सच्चा स्मारक"

[श्री सेठ किशनलालजी पोद्दार कलकत्ता]

बड़े हर्ष का विषय है कि आज स्वामी हम महर्षि दयानन्दजी का दीक्षा शताब्दी समारोह मना रहे हैं। और पूज्य पाद स्वामी विरजानन्द जी महाराज जिस स्थान पर स्वामजी को शिक्षा देते थे। उसका स्मारक बनाने जा रहे हैं।

महर्षि का जीवन ही हमें आज इस समारोह के मनाने एवं इस स्मारक के बनाने में उत्साहित कर रहा है श्री स्वामी विरजानन्द जी के उपदेश को ग्रहण करके और अपने जीवन को उस उपदेश के अनुकूल बनाकर तथा उस पर आचरण करके स्वामी जी के जीवन को सफल बनाया है। आज उनका जीवन ही हमारी जीवन ज्योति को जगा रहा है। आइये आज हम विचार करें कि हम उनका सच्चा स्मारक किस प्रकार बनावें जिससे कि यह स्थान केवल स्मारक ही नहीं किन्तु पुनः दीक्षा दाता गुरु का स्थान ग्रहण करे। यदि हम इस स्थान को विशेषता देना चाहते हैं। तो उस स्थान को पवित्र और सुन्दर बनावें एवं उस स्थान से योग्य व्यक्तियों द्वारा वेदों के पठन-पाठन की व्यवस्था करें।

उपर्युक्त भावनाओं को लक्ष्य में रखते हुये मेरा नम्र निवेदन है कि अधिकारी निम्नांकित कार्य-क्रम पर विचार करें।

१. प्राचीन स्थान के किसी विशेष भाग को सुरक्षित रखते हुये उस स्थान को सुन्दर अनुसन्धान मंदिर का रूप दिया जाय।

२. निकटवर्ती स्थान को प्राप्त करने का किया जाय।

३. नव निर्मित स्थान में एक यज्ञ वेदी हो उपदेष्टा के बैठने का स्थान हो।

४. मंदिर में बैठकर वेद-पाठ किया जावे बहाँ उत्तम माईक्रो फोन का प्रबन्ध हो जिससे सांय वेद ध्वनि एवं संध्योपासना के मंत्रों का किया जावे एवं समय२पर उस स्थान से धर्मोपदेश करें। ऐसे पाठ उपदेशों से चारों ओर के रहने जनता को लाभ होगा।

५. स्मारक को स्थिर रूप देने के लिये वेदों अनुसन्धान कार्य हो और उसके आधार पर भाषा में वेदों के उपदेश को प्रतिपादन करने साहित्य आम जनता के उपयुक्त निकाला जाय।

६. निकटवर्ती स्थान के प्राप्त होने पर उसे वाटिका का रूप दिया जाय उसके बैठने का अच्छा हो और एक वैदिक पुस्तकालय हो द्वारा वेद विद्या के प्रेमियों को स्वाध्यापकी प्राप्त हो सके।

आशा है कि इस प्रकार के बने हुए स्मारक हम महर्षि का सन्देश सर्व साधरण में प्रसारित योग्य हो सकेंगे।

महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित आर्य समाज अपनी अनेक संस्थाओं द्वारा समाज की बहुमुखी सेवा में खासकर समाज-कल्याण के कार्य में संलग्न है और उसका कार्य प्रशंसनीय है।

—आचार्य जुगल किशोर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आत्म-स्वतन्त्रता

[उपराष्ट्रपति सर्वपल्ली डा० राधाकृष्णन्

कुछ लोगों का ख्याल है कि विचार इतिहास को
वित नहीं करते, वेद कहते हैं कि चेतना अस्तित्व
प्रभावित नहीं करती प्रत्युत अस्तित्व चेतना को
ावित करता है, पर यह ठीक नहीं है। आरम्भ में
ल शब्द था और वही शब्द भाषा बन गया। कार्य
पहले विचार, इतिहास के पहले दर्शन, सभ्यता के
संस्कृति की सत्ता आवश्यक है। हमें सभ्यता
आन्ति राजनीतिक व्यवस्थाओं, आर्थिक संस्थाओं
शिल्प विषयक उपकरणों में नहीं करनी चाहिए।
तो उन सबमें एक व्यापक दृष्टि रखने का नाम
उन सिद्धान्तों एवं आदर्शों का नाम है जो इन
ाओं को जीवित रखते हैं। सभ्यता तो वास्तव
आत्मा की चेष्टा अथवा गति है। भारतीय सभ्यता
आधार भारतीय विद्या है।

इतिहास के लम्बे काल में भारत ने आभ्य-
क एवं बाह्य आक्रमणों का सफलता पूर्वक सामना
ा है। इसने ग्रीक, मंगोल, तथा यूरोप निवासियों
मराहवान का सहर्ष स्वागत किया है। इसने
, ईरान, ग्रीस, रोम तथा कुछ अन्य सभ्यताओं
अस्त होते देखा है। पर स्वयं अब भी जीवित
सक्रिय है। इससे पता चलता है कि इसकी कुछ
विशेषतायें हैं जो देश तथा काल से परिच्छिन्न
। एक विनाशहीन, नित्य, सनातन शक्ति इसे
स्त आक्रमणों से बचा कर रक्खे हुए है। इसमें
ुञ्जयता का गुण है।

हम किसी सभ्यता को जीवित क्यों कहते हैं।
यता को सक्रिय कब कहा जाता है। सभ्यता तब
वेत कही जाती है। जब ऐसे विवेकशील मनुष्यों
उत्पन्न करने में समर्थ हो जो परम्परा प्राप्त
कृति को अपने व्यक्तिगत अनुभव से त्रुटिहीन,
क्त सम्पन्न एवं समृद्ध बना सके। यह तो स्पष्ट ही
है कि इस देश ने इतिहास के प्रत्येक युग में, कैलाश पर्वत से कुमारी अन्तरीप तक, पुरी से द्वारका तक देश के प्रत्येक भाग में, उन अनुपम विशिष्ट गुणशाली महात्माओं को उत्पन्न किया है जो केवल अपने कार्यों के ही अनुरोध से महान् नहीं हैं वरन् जो अपने में ही महान् हैं। जिन्होंने देश के जीवन तथा विचारों पर अपनी अमिट छाप लगादी है। उनका अद्वितीय ज्ञान, उनका अपूर्व आत्म-संयम, उनका आध्यात्मिक उत्कर्ष सब प्रकट करता है कि मनुष्य जीवन का चरम उद्देश्य आत्मोपलब्धि में तथा विश्व प्रेम का अभिन्न अवयव बन कर आचरण करने में है।

'मनुष्य क्या है ?' यह एक बहुत प्राचीन प्रश्न है, क्या यह केवल जीवधारी है। क्या वह आर्थिक संघर्ष में संलग्न केवल आर्थिक मनुष्य है। क्या वह ऐसा राजनैतिक प्राणी है जिसका मस्तिष्क उन अधकचरे अतिपूर्ण राजनीतिक सिद्धान्तों से भरा है जो विद्या, ज्ञान धर्म आदि सबको दबा बैठे हैं। क्या उसका कोई दूसरा आध्यात्मिक पक्ष भी है जो सांसारिक साधनों से सन्तुष्ट नहीं हो सकता ?

हम सब लोगों के जीवन में कभी-कभी ऐसे क्षण भी आ जाते हैं। जिनका सम्बन्ध किसी दूसरे लोक से होता है और जिनमें हमें अपने सामान्य जीवन का मेल कर लेना होता है। यदाकदा हममें से प्रत्येक कदाचित् इस निरपेक्ष परमोत्कृष्ट आनन्द की अनुभूति भी करता है। जब वह किसी अतीन्द्रिय जगत् में विचरण करता हुआ सा अपने को पाता है, जब उसका मस्तिष्क दिव्य प्रकाश से उद्भासित तथा हृदय अक्षय आनन्द से पूरित हो उठता है, जब वह देश काल तथा जीवन को मृत्यु को सी गम्भीर शान्ति में पहुँचा हुआ पाता। जब वह अनन्त सौन्दर्य क स्पर्श करता है और उस आध्यात्मिक तथ्य के

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

साक्षात्कार से आनन्द विभोर हो जाता है। जिसकी प्रतिच्छाया अमरता एवं मृत्यु है। 'यस्यच्छाया अमृतम् तस्य मृत्युश' जिसकी छाया अमृत है, मृत्यु है, यदि मनुष्य की रुचि में आध्यात्मिकता का अंश मौजूद है, तो जीवन तथा सभ्यता का उद्देश्य उस अंश का पता लगाना है प्लेटो के शब्दों में, शिक्षा का अर्थ इस प्रकार आत्मा को चक्रवत् संचालित करना है कि उसके नानारूपों में एकत्व की, एक रूपत्व की, उपलब्धि हो सके, भिन्न-भिन्न -अभिव्यक्तियों का पृथक-पृथक ज्ञान न हो। इसी को भारतीय भावना में 'साविद्या या विमुक्तये' कहा गया है।

वास्तविक स्वतन्त्रता तो आध्यात्मिक स्वतन्त्रता है। सच्चास्वराज्य तो मनुष्य की आत्मा का स्वराज्य है। व्यक्ति ही संसार का केन्द्र है। जीवन की अभिव्यक्ति शक्ति में होती है, सत्य का दर्शन व्यक्ति को होता है। जीवन की अनुभूति व्यक्ति को हो प्रत्येक व्यक्ति को स्वप्न देखने, स्नेह करने तथ धरने की आजादी होनी चाहिये आप व्य स्वप्न देखने, स्नेह करने तथा ध्यान धरने की होनी चाहिये। आप व्यक्तियों को समूहयुक्त हैं। उन्हें भेद विहीन एकत्व नहीं दे सकते इतिहास में जब कभी जो भी उन्नति हुई सबका श्रेय मनुष्य की आत्मा को ही है।

यह अजेय आत्मा जो विविध नाम आधार है। जो मनुष्यों के अनवरत प्रयासों कांक्षाओं तथा सिद्धियों का मूल है आशायुक्त निरत, असफल होकर भी प्रगतिशील कुछ अधिक पाने को आगे बढ़ने वाली मनुष्य आत्मा मानव इतिहास का केन्द्र विन्दु है। हानि पहुँचाना, इसका दमन करना, मनुष्य को वर बना देना है।

मित्र चिरायु हो

आर्यमित्र के साथ मेरा घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है मैंने जो भी लिखा मित्र ने उसे खूब प्र किया और मैंने भी मित्र ने जो मांगा वही लिखकर लेखनी का कर्त्तव्य पूरा किया। मित्र के मंगल पर हृदय से शुभ कामनाओं और बधाई का आजस्रात झर रहा है प्रभु मित्र को चिरायु और शक्ति बनायें।

—बिहारीलाल

—बिहारीलाल शास्त्री

मानव सेवा का अनथकव्रती-मित्र

मित्र ने एक नहीं हजारों लाखों व्यक्तियों के निर्माण का कार्य किया है। व्यक्ति के सुन्दर वि पर ही राष्ट्र और धर्म स्थिर हुआ करते हैं इस दिशा में मित्र ने सच्चे राष्ट्र मित्र और धर्ममित्र का पूरा किया है मानव-सेवा के अनथक व्रती आर्यमित्र की 'हीरक जयन्ती' पर हम आर्यबन्धु हर्ष विभो और उनके चिरायुष्य की कामना करते हैं।

—रामगोपाल शाल वाले

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हम अपने महान् दायित्व को परा कर

[श्री नरेन्द्र हैदराबाद]

विश्व एक पहेली है उसको समझने और समझाने का प्रयत्न मानव-बुद्धि द्वारा सदैव होता रहता है, कुछ उस पहेली को सुलझा पाते हैं। और कुछ उस गोरख धन्धे में फँस अपने अस्तित्व को भी समाप्त कर देते हैं। इस पहेली का वास्तविक हल क्या और कैसे हो यह प्रश्न जितना ही गम्भीर है उतना ही सरल भी है। पाठक आश्चर्य करेंगे परन्तु वास्तविकता यही है।

प्रभु ने इस संसार को समझने के लिये मनुष्य को बुद्धि प्रदान की है मनुष्य और पशु में यही अन्तर है। मनुष्य उस बुद्धि को यदि सही मार्ग पर ले चले तो जीवन सुखमय अन्यथा दुःख का जाल तो व्याप्त है ही। सुख दुःख का वास्तविक रहस्य समझना ही आरम्भ में कठिन होता है। रेगिस्तान की मृगमरीचिका की भाँति भौतिक आकर्षण अपनी ओर आकृष्ट करते हैं वे भी उपभोग के लिये हैं परन्तु अमर्यादित उपभोग दुःख और उचित उपभोग सुख का कारण है।

आज विश्व में जो अशान्ति और हाहाकार मचा हुआ है उसके मूल में मानव सुलभ कमजोरियाँ हैं। जिनके कारण मनुष्य स्वार्थ के संघर्ष में रत है। और स्वार्थ पूर्ति के लिये युद्ध, अन्याय और अत्याचार हो रहे हैं

वेद ने गायत्री मन्त्र द्वारा बुद्धि को पवित्रता का जो सन्देश दिया हैं उसका यही अभिप्राय है। इस पवित्रता से युक्त व्यक्ति ही सच्चा आर्य हो सकता है। हम आर्य जन 'कृण्वन्तो विश्व मार्यम्' का स्वप्न लेते हैं र हमारा यह लक्ष्य दूसरों के द्वारा नहीं हमारे अपने द्वारा ही पूर्ण हो सकता है। हमें सतत प्रतिक्षण अपने जीवन दृष्टिकोण की परीक्षा करनी होगी और अपने को संयमित, मर्यादित नागरिक के रूप में विश्व के सम्मुख खड़े होने की क्षमता बनाये रखनी होगी। दैवी-आसुरी प्रवृत्तियों के संघर्ष में हमें दैवी पक्ष को बलिष्ठ बनाकर समाज का नेतृत्व करना होगा। यह ठीक है कि कोई भी सेना सदैव एक समान सतर्क और बलिष्ठ नहीं बनी रह सकती उसे भी विश्राम चाहिये पर समाज को विश्राम देना अपने कर्तव्य से विमुख होना होगा। हमको विश्व की पहेली को सुलझाने के लिये 'संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है" यह अपना लक्ष्य निर्धारित किया है। महर्षि दयानन्द ने इसी महान् आदर्श के लिये अपना जीवन न्यौछावर कर दिया। हम तो उनके सम्मुख कुछ भी नहीं हैं। पर यदि हम में उनके प्रति थोड़ी बहुत भी श्रद्धा है तो मानव को संसार की समस्याओं को सुलझाने से पूर्व अपनी आन्तरिक दैवी-आसुरी भावनाओं के संघर्ष को समाप्त करना होगा। आज आर्यसमाज समष्टिगत रूप से आसुरी भावनाओं की व्याधि से पीड़ित है। सच्चे हितैषी, शुभ चिन्तक आगे आयें ग्राम के एकता और आर्यत्व के सन्देश को व्यावहारिक रूप देने का महान प्रयत्न करें यही आज के युग की इस घड़ी मांग और पुकार है। महर्षि की दीक्षा स्मृति हमारे कर्तव्य को पुकार रही है, मित्र का हीरक जयन्ती समारोह हमें कर्तव्य निष्ठा का पाठ पढ़ा रहा है क्या आर्य जनता और आर्य कर्णधार कर्तव्य की पुकार को सुनेंगे और कर्तव्य निष्ठा का पाठ जीवन में पढ़ना आरम्भ कर आर्य जगत् में एक नया जीवन लाने का सफल प्रयास करेंगे। प्रभु हमारी बुद्धियों को पवित्र करें।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्य मित्र ज्ञान का सन्देश वाहक

[पटेल गणेशचन्द्र देवजीभाई सिद्धान्त शिरोमणि दयानन्दोपदेशक महा विद्यालय यमुना नगर

दीर्घप्रतीक्षा के बाद जब "साप्ताहिक आर्य मित्र" आता है, तो ऐसा प्रतीत होता है मानों शरद् पूर्णिमा का ज्वार भाटा आया। जिस प्रकार पूर्णिमा के पूर्ण चन्द्र के आकर्षण से गरजता हुआ विशाल सिन्धु नव यौवन में उमड़ घुमड़ कर नये ओज के साथ अपने किनारों को लांघता हुआ, संसार की ओर आगे बढ़ता है। और देखते ही देखते संसार के छोरों पर की समस्त बुराइयों को पाद तले रौंदता हुआ सा चंद घण्टों में ही। गगन एवं भूमि को स्वच्छ, सुन्दर, और कला पूर्ण बनाकर संसार के लिये सादर समर्पित कर जाता है।

ठीक आमूलचूल उसी प्रकार आर्य मित्र भी विद्वत्ता पूर्ण सम्पादन शक्ति के आकर्षण से उत्तर-प्रदेश को लांघ कर अवान्तर प्रान्तों को पार करता हुआ विशाल समुद्र की छाती पर द्वीपद्वीपान्तर पहुँचता है, तो अपनी नव्य योजनायें, भविष्य गर्भ में छिपे हुए नये कार्य-क्रम, वेद तथा वी[illegible] सदी पूज्य महर्षि की माननीय बातें. नारी उत्थान राष्ट्र और चरित्र निर्माण, अद्वितीय उच्च कोटिय साहित्य और सुप्त सङ्गीत शास्त्रीय स्वरों को [illegible] हुआ सा राष्ट्र भाषा हिन्दी के प्रतीक के रूप में [illegible] मारता हुआ सम्मुख उपस्थित होता है। [illegible] पत्रिकाओं की तरह उपस्थित होकर ही अपने कर्तव्य की इति नहीं करता। प्रत्युत मानव समाज [illegible] मन सदन की सदियों पुरानी रूढ़ियों, कुरीतियों और कलंकों को धोता हुआ हिय थाल से ज्ञानामृत [illegible] ान भी पिला जाता है। हीरक जयन्ती पर हम मित्र का अभिनन्दन करते हैं।

मानव मैत्री का प्रचारक मित्र

मित्र ने आर्यसमाज के प्रचार और वैदिक साहित्य के मन्थन में जो मूक सहयोग दिया है वैसा कोइ वर्ग (विद्वान् उपदेशक वर्ग) नहीं दे सका है। मित्र की इस सफलता के पीछे एक एक सदुद्देश और तपस्या छिपी हुई है। संसार के उपकार का सर्वश्रेष्ठ मार्ग मित्र बन कर शिक्षा देना है। मित्र ने स्वयं के जीवन को सदैव कष्ट में रख कर मानव मैत्री के धर्म का पालन किया है। मित्र अधिकाधिक फले फूले और मानव कल्याण में तत्पर रहे हीरक जयन्ती के अवसर पर मेरी उसके प्रति यही शुभ कामना और बधाई है।

—ब्रह्मदत्त जिज्ञासु

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हीरक जयन्ती जयन्ती

[गंगाप्रसाद उपाध्याय]

आर्यों और आर्य समाज के मित्रों के लिये यह हर्ष और उत्साह का विषय है कि 'आर्यमित्र' साप्ताहिक का साठ वर्षीय हीरक जयन्ती महोत्सव मनाया जा रहा है। यों तो 'आर्यमित्र' उत्तरप्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा का मुख पत्र है और इस नाते उत्तर प्रदेशीय आर्यसमाजों को कर्त्तव्यपरायणता का शुभ भावनाओं का प्रतिनिधित्व प्राप्त है। किन्तु हर प्रकार से आर्यमित्र का कार्यक्षेत्र और विचारक्षेत्र समस्त आर्य जगत् रहा है। भारतवर्ष और इसके बाहर देशदेशान्तरों में आर्यमित्र द्वारा महर्षि दयानन्द की शिक्षाओं का संचार होता रहा है। आर्यमित्र की जीवन-दृढ़ता का एकमात्र प्रमाण यह है कि यही एक पत्र है जिसने साठ वर्ष की दीर्घायु प्राप्त की है। आर्यसमाज के अन्तर्गत कई पत्र जन्मे और अतीत के गाल में कवलित हो गये। आर्यमित्र में कुछ तो विशेषता रही होगी जो उसको विकराल काल में भी नष्ट होने से बचा सकी। इसका श्रेय संपादक मण्डल को भी है और प्रदेश की जनता को भी। किसको कितना श्रेय है इसका अनुपात पक्ष-विपक्ष के स्थान में ईश्वर को धन्यवाद देना ही पर्याप्त होगा।

आर्यसमाज के जीवन के लगभग आठ दशकों में से पूरे छः दशकों में आर्यमित्र आर्यसमाज का सहयोगी रहा यह कुछ कम आश्चर्य नहीं है। मुझे भी स्मरण होता है कि मैं ने आर्यमित्र को सबसे पहला लेख १९०२ ई० में भेजा था जिसको पूरे ५६ वर्ष होते हैं। तब से मैं आर्यमित्र की प्रगतियों और प्रवृत्तियों का निरीक्षण करता रहा हूँ। इन ५६ या ५७ वर्षों में मैंने कितने लेख दिये किस विषय पर दिये यह कहना कठिन है। परन्तु मैंने आर्यमित्र से जितना प्रोत्साहन प्राप्त किया इसको मुझको बहुत कुछ याद है। और मैं कह सकता हूं कि इन छः दशकों में आर्यमित्र ने आर्यसमाज की भावनाओं का प्रसार बड़ी उत्तम रीति से किया है। इन छः दशकों में लगभग ६ युग व्यतीत हो गये। जिनमें से हर युग एक विशेषता रखता है, आर्यसमाज के जीवन में भारतवर्ष के जीवन में भी और भूमण्डल के जीवन में भी। इतिहास पर दृष्टि डालने से ज्ञात होता है कि कितने उतार चढ़ाव आये। संसार कहाँ था कहाँ पहुँचगया। भारत कहाँ था कहाँ आगया आर्यसमाज भी कहाँ था कहाँ आगया? इस सब का आर्यमित्र पर और आर्यमित्र का इस सब पर प्रभाव पड़ा। वह आर्यमित्र के पुराने अङ्क देखने से ही पता चल सकता है। बीस पच्चीस वर्ष हुये एक उत्साही मित्र ने आर्यमित्र के मुख्य मुख्य कार्टून्स उसका एक भारी भारी पुलन्दा मेरे पास भेजा था। मैं समयाभाव के कारण उसका कुछ उपयोग न कर सका। मुझे स्मरण है कि जब पायनियर इलाहाबाद से निकलता था उस समय उसमें एक शीर्षक हुआ करता था 'पचास वर्ष पूर्व'। उसमें वह पचास वर्ष पूर्व के अङ्क से कोई प्रसिद्ध लेख उद्धृत किया करता था। यदि आर्यमित्र भी ऐसा ही करना प्रारम्भ करदे तो हम अतीत और वर्तमान में एक सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं। और हमारे नवयुवकों को पता चल सकता है कि उनके पूर्वजों के क्या विचार थे।

आर्यमित्र में भविष्य-निर्माण की कितनी बीज-शक्ति है इसका अनुमान लगाना कठिन है। और यह अधिकतर तो आर्यसमाज की बीज-शक्ति के आश्रित है। आर्यसमाज का उपक्रम तो महती काङ्क्षाओं को लेकर हुआ है। उपकार, संसार का उपकार और विश्वतोमुखी उपकार। इस कार्यक्रम में शेष ही क्या रहता है। इसके लिये दीर्घ दृष्टि, विशाल हृदय और

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दीर्घ समय चाहिये। ऋषि दयानन्द ने जिस उच्च शिखिर पर खड़े होकर इतना विशाल कार्यक्रम बनाया उस स्थान को हम अभी प्राप्त नहीं कर सके ऐसा करना हमारे लिये संभव भी नहीं था। ऋषियों की दृष्टि और उनके सहयोगियों या उत्तराधिकारियों की दृष्टि में बड़ा अन्तर होता है। गुरु शिष्यों को अपनी दृष्ट से देखता है और शिष्य गुरु को अपनी दृष्टि से। इसी करण बड़े आचार्यों के पश्चात् उनके कार्यों में कुछ संकुचन उत्पन्न हो जाता है। यह है तो स्वाभाविक परन्तु यदि उन आचार्यों के धिकारी उन आचार्यों के आदर्शों का मिल रहें तो संस्थायें ह्रास के दलदल से बच स यह बात आर्यसमाज के लिये भी आव आशा रखनी चाहिये कि आर्यमित्र इस आर्यसमाज के समक्ष रखता रहेगा। आ ज्योतिर्मय दीर्घकालीन भविष्य की कामन वाला।

—गंगाप्रसाद उपा

युगों बाद ध्रुवतारा धरती पर उतरा था

[श्री भगवान् सहाय पचौरी 'भवेश' एम. ए. साहित्यालंकार,]

जब कभी संस्कृति को घटा-टोप छलता है,
तब युगों बाद कहीं एक दीप जलता है,
ऐसा ध्रुव दीप जिसकी शिखा गगन चूमती है
बांटने प्रकाश पुंज घर घर में घूमती है।
ऐसा अनुपमेय दीप
ऐसा एक युग-दीप
(कोटिनभ दीप जिसकी क्षमता से छोटे थे
शत शत सूर्य जिसकी समता में हेटे थे)
सौ वर्ष पूर्व एक दंडी ने बाला था
आर्य प्रजा ने जिसे लाड़ों से पाला था।
मथुरा नगरी की एक छोटी सी कुटिया में
बढ़ कर के जिसकी शिखा स्वर्ग तक पहुँची थी।
प्रजाचक्षु तुमने जो अखण्ड यज्ञ रोपा था
आज की प्रचंड अग्नि उसकी प्रज्वलित है।
पुष्पित पल्लवित है
विरजानन्द-विरवा वह निष्कम्प निर्झर।

युगों बाद ध्रुवतारा धरती पर उतरा था,
जिस धरती ही क्या अम्बर भी सुधरा था।
द्वापर में दीप एक सांदीपनि जला गये
भारत को एक नव पाठ थे पढ़ा गये।
आधुनिक सान्दीपनि धन्य ऋषि विरजानन्द,
एक ध्रुवतारा, एक शौर्य दीप दयानन्द,
जिनको कृष्ण तुल्य शिष्य,
रक्षित जिनसे भविष्य,
जिनकी दया ने जीता संस्कृतिक महाभारत।
ओ महर्षि वर्चस्वी मन्त्र तुम दे गये जो
धमनियों में आज भी प्रवाहित है चिरनवीन
आज भी है झंकृत वह जन-जन में
कण कण में।
सांस्कृतिक सूर्य मैं प्रणाम करता तुम्हें

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सम्पादकाचार्य श्री पं० रुद्रदत्तजी शर्मा

[श्री पं० बनारसीदास चतुर्वेदी एम. पी.]

'आर्यमित्र' के सम्पादन का भार जिस समय श्री पं० रुद्रदत्त जी शर्मा सम्पादकाचार्य ने सम्हाला उस समय आर्य मित्र को समाचार पत्रों की प्रथम श्रेणी में लाकर उन्होंने उसे एक नया जामा पहना दिया था। श्री पं० रुद्रदेव जी शर्मा केवल सफल पत्रकार नहीं थे वे सफल वक्ता और सफल शास्त्रार्थ महारथी भी थे। वे संस्कृत साहित्य के उभ्दट विद्वान् दर्शन शास्त्रों के मर्मज्ञ तथा पुराणों के प्रद्भुत ज्ञाता थे। प्रसिद्ध पौराणिक महा पण्डित श्री अम्बिका दत्तजी व्यास के साथ शास्त्रार्थ करने की यदि किसी में क्षमता थी तो वे श्री पं० रुद्रदत्त जी ही थे। इस प्रकार उन्होंने शास्त्रार्थों व्याख्यानों और लेखों द्वारा जीवन भर आर्य समाज की सेवा की। 'आर्यमित्र' में आने से पूर्व वह अन्य कई प्रसिद्ध समाचार पत्रों का सम्पादन कर चुके थे। सम्भवतः सबसे पहले सन् १८८५ ई० में मुरादाबाद से प्रकाशित होने वाले 'आर्य विनय' के वे प्रथम सम्पादक थे। उसके बाद उन्होंने जिन पत्रों का सम्पादन किया उनकी नामावलि इस प्रकार है:—

१—आर्य विनय (मुरादाबाद) २—इन्द्रप्रस्थ प्रकाश (दिल्ली) ३—भारत मित्र साप्ताहिक व दैनिक (कलकत्ता)५—हिन्दी वङ्गावासी (कलकत्ता) ६—भारत रत्न (पटना) ७—श्री वेङ्कटेश्वर समाचार (बम्बई) ८—आर्यमित्र (आगरा) ९—सत्यवादी (हरद्वार) १०—हितवार्ता (कलकत्ता) ११—प्रेम (वृन्दावन) १२—मारवाड़ी (नागपुर)

कहने की आवश्यकता नहीं कि इन सभी समाचार पत्र का सम्पादन उन्होंने बड़ी योग्यता से किया बल्कि यह कहा जा सकता है कि हिन्दी पत्र कार कला को विकसित करने वालों में उनका प्रमुख स्थान है, वह केवल सफल पत्रकार ही नहीं थे प्रत्युत ऊँचे दर्जे के साहित्यकार भी थे उनकी लिखी पुस्तकों के कुछ नाम इस प्रकार हैं:—

१—योगशास्त्र के व्यासभाष्य और भोजवृत्ति का हिन्दी अनुवाद। २—वीरसिंह दारोगा उपन्यास ३—मनोरञ्जनी नाटक। ४—स्वर्ग में सब्जेक्ट कमेटी (प्रहसन)। ५—स्वर्ग में महासभा (प्रहसन)। ६—ध्यान विधि योग। ७—शिक्षाविज्ञान। ८—जर्मन जासूस। इत्यादि।

यह हैं श्री सम्पादकाचचर्य जी की कृतियाँ जिनसे विदित होता है कि वे कितने अध्ययनशील साहित्यसेवी और हिन्दी पत्रकार कला के विषय जन्मदाताओं में से एक थे। श्री पं० रुद्रदत्त जी का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है:—

उनका जन्म धामपुर जिला बिजनौर में मार्ग शीर्ष त्रयोदशी संवत् १८११ सन् १८५४ ई० को हुआ था। उनके पूज्य पिता पं० शशिनाथ जी संस्कृत के महाविद्वान और ज्योतिष के पूर्ण पण्डित थे।

रुद्रदत्त जी की प्रारम्भिक संस्कृत शिक्ष घर पर हा हुई तत्पश्चात् अपने चाचाजी के साथ वे वृन्दाबन, मथुरा और काशी आदि स्थानों में विद्योपार्जनार्थ गये। २१ वर्ष की अवस्था में विद्या समाप्त करके वे घर लौटे, उसके बाद वे मुरादाबाद तथा सहारनपुर में आर्योपदेशक होकर वैदिक धर्म के प्रचार में लग गये। उसके अनन्तर उनका सम्पादन कार्य प्रारम्भ हुआ और सबसे अधिक काल उन्होंने आर्यमित्र के सम्भवतः तीन बार सम्पादक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हुए। वे केवल मित्र का सम्पादन ही नहीं करते थे बल्कि जगह जगह जाकर व्याख्यान भी देते थे और शास्त्रार्थों में तो उन्हें विशेष रूप से बुलाया जाता था। आर्यमित्र में जब वे अन्तिमवार सम्पादन थे उस समय आगरा आर्यसमाज को कविरत्न अखिलानन्द के साथ शास्त्रार्थ करने में श्री सम्पादकाचार्य जी की ही शरण लेनी पड़ी किन्तु बड़े दुःख के साथ लिखना पड़ता है कि आगरा आर्यसमाज ने उनसे सेवा तो ली परन्तु उनकी सेवा समाज से नहीं बन पड़ी। अन्तिमवार उनकी गरीबी का अनुचित लाभ उठाकर उन्हें न्यूनातिन्यून वेतन दिया गया और जब वे बीमार पड़े तब उनके पास न तो डाक्टर को देने के लिये फीस थी और न दवा के लिये दाम। आर्यभास्कर प्रेस का प्रेस मैनेजर जिसका कि नाम परमा था वही उनका परम भक्त बनकर उनकी सेवा में लग गया। खाने के लिये भोजन सामग्री तथा अन्य आवश्यक वस्तुओं का वही प्रबन्ध करता रहा।

इस प्रकार चालीस-पैंतालीस वर्ष तक सा सेवा तथा हिन्दी पत्रों का सम्पादन करने के ओषधि; पथ्य तथा भोजन के लिये तरस तरस प्राण गँवाया, यह अकथनीय दुर्भाग्य था संस्कृ उस महान् विद्वान्, आर्यसमाज के महोपदेशक शास्त्रार्थ कर्त्ता और हिन्दी के उच्चकोटि के तथा पत्रकार का, जिसका सम्पूर्ण जीवन जनता को शिक्षित बनाने में बीता था। वे सप्ताँ भूखे मर गये और उनकी इस दुर्दशामय मृत्यु लिये आर्यसमाज तथा हिन्दी जगत् समान रूप दोषी हैं।

सम्पादकाचार्य सच्ची सेवाओं का बदला नहीं चुकाया जा सकता उनकी भांति निष्ठा पत्रकारिता के मिशन के लिये कष्ट सहन स्वाभिमान की रक्षा का प्रयत्न करना चाहिये उस महान् सम्पादक की कृतियों का स जगत् का दायित्व है।

दयानन्द-दीक्षा समारोह

(वीर छन्द)

[पं० पारब्रह्म शर्मा परमार्थी]

द मन, शमन कर इन्द्रिय गण का चित्तवृत्ति का कर सु निरोध,
या यावर कामादि सुवश कर प्राप्त किया आनन्द सुबोध।
नं दन वन का मार्ग दिखाया शंकरत्व को कर स्थायित्व,
द लित, पतित भारत को फिर से बतला दिया अमर दायित्व।
दी न जनों का प्रतिपालक हो भारत भू का त्राण किया,
वा त्र धर्म का परिचय देकर ब्रह्म कर्म को मान दिया।
स दियों के गुलाम भारत में पुनि स्वराज्य का हुआ विकाश,
मा तृ भूमि के मोह तिमिर में वैदिक रवि का हुआ प्रकाश।
रो म रोम में रमा हुआ है कण कण में तेरा बलिदान,
ह म श्रद्धाञ्जलि आंपत करते दयानन्द ऋषि, दयानिधान।

—:०:—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दयानन्द का काम पूरा करेंगे [श्रीरघुवीर सिंह शास्त्री, मंत्री सार्वदेशिक सभा]

महर्षि दयानन्द जब गुरुवर विरजानन्द जी के आदेश पर लोकोद्धार के क्षेत्र में उतरे तो उन्होंने अखण्ड ब्रह्मचर्य तथा अगाध पांडित्य के बल पर चहुँमुखी क्रान्ति का शंख बजा दिया। जाति-पाँति, संप्रदाय तथा ऊंच-नीच के रोग से गलित समाज को स्वस्थ करने एवं अन्ध विश्वास तथा अज्ञान के आवरण में दबे प्राचीन वैदिक धर्म के स्वरूप को परिष्कृत करके प्रतिष्ठापित करने का उनका सारा ही कार्यक्रम क्रान्तिकारी था। सुधारक महापुरुष या सन्त तो इस देश में अन्य भी अनेक समय-समय पर पैदा हुए और उन सभी की कुछ-न-कुछ देन रही, परन्तु महर्षि दयानन्द जैसी सर्वतोमुखी प्रतिभा, गति, सूझ-बूझ साहस तथा संकल्प किसी में न था। यही कारण है कि वे इस प्रकार हमारे सुप्त एवं अचेत समाज तथा जीवन को न झंझोड़ सके। महर्षि की विद्या, तपः पूत ओजस्वी वाणी, लेखनी तथा कृति के लक्ष्य की परिधि से कोई भी समस्या, कुप्रथा, कुसंस्कार, दुर्विचार बच न पाया। उन्होंने सब का विश्लेषण करके क्रियात्मक एवं मौलिक समाधान प्रस्तुत किये।

आर्य समाज महर्षि का उत्तराधिकारी है। गुरु विरजानन्द के एक शिष्य दयानन्द थे। दयानन्द के पीछे उनके शिष्य कहलाने में गौरव अनुभव करने वालों की संख्या लाखों है। परन्तु देखना यह है कि क्या ऋषि का क्रान्तिकारी कार्य-क्रम आगे बढ़ रहा है? इसमें कोई सन्देह नहीं कि अपने प्रवर्तक आचार्य के पीछे आर्य समाज ने भारी सफलतायें प्राप्त कीं। शिक्षा के क्षेत्र में उसने सर्वथा नया कार्यक्रम राष्ट्र के सामने रखा। छूआछूत, बाल-विवाह, तथा वैधव्य के अभिशाप से समाज को मुक्ति दिलाने में प्रशंसनीय प्रगति की। स्वतन्त्रता के संघर्ष में भी सब प्रकार का बलिदान एवं त्याग करने में आर्य जन अग्रसर रहे। इन सब कार्य कलापों की छाप एवं धूम भी मची रही। परन्तु आज कुछ ऐसा प्रतीत होता है मानों हम भी अपने क्रान्तिकारी कार्य-क्रम को छोड़कर रूढ़िवादी से बनते जा रहे हैं। वास्तविकता तो यह है कि अभी तो आर्य समाज के लिये बहुत कुछ करने को पड़ा है स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व हमारे कुछ कार्यक्रमों की पूर्ति में राष्ट्रीय कांग्रेस ने भी हाथ बटाया, परन्तु आज वह संस्था शासना-रूढ़ होकर अपना क्रान्तिकारी स्वरूप गँवा बैठी है। ऐसी दशा में केवल आर्य समाज खड़ा है जिससे राष्ट्र तथा विश्व कुछ आशायें कर रहा है। आज तो स्वराज्य प्राप्ति से पहिले की अपेक्षा भी देश की कुछ अधिक शोचनीय दशा बन गयी है। शिक्षा के क्षेत्र में आर्य समाज के क्रान्तिनाद की आवाज सर्वथा मन्द हो चुकी है। जो गुरुकुल, विद्यालय तथा कालिज हमने वैदिक धर्म, संस्कृति तथा साहित्य के प्रचार-केन्द्र के रूप में स्थापित किये थे, वे सब हतप्रभ एवं निष्क्रिय हो रहे हैं। हम ही उनकी ओर से उदासीन हैं तो फिर अन्यों का क्या दोष? नैतिकता तथा सदाचार हमारे सामाजिक जीवन से कथावशेष होते जा रहे हैं, भारतीयता मानों अनैतिकता की पर्यायवाचिनी बन रही है। जाति-पाँति का भेद भाव तो पुनः उग्र हो ही रहा है, उसके साथ-साथ राजनीतिक स्वार्थ की वेदी पर प्रान्तीयता तथा भाषा सम्बन्धी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

विभाजन रेखायें अधिक काली होती जा रही हैं। राष्ट्र की एकता चकनाचूर हो रही है। विदेशी धन राशि के बल पर प्रतिदिन हजारों भूखे-नंगे भारतीय ईसाययत के कुचक्र में फंसाये जा रहे हैं। गोमाता का आर्त स्वर सुनने की ओर किसी का ध्यान तक नहीं जाता। उलटा हमारे शास्त्रों में गोमांस भक्षण के विधान का प्रतिपादन करके हमारे बौद्धिक दिवालियापन की घोषणा की जा रही है।

इन सब परिस्थितियों को आर्यसमाज उदासीन बन कर देखता रहे, यह बड़ा ही आश्चर्य है। आज हम ऋषि भक्त हजारों की संख्या में मथुरा की इस पवित्र स्थली पर इकट्ठे हो रहे है, जहां गुरुवर विरजानन्द ने हमारे आचार्य को क्रान्तिकारिणी दीक्षा दी थी। भारत के राष्ट्र के हाथों उस छोटी सी कुटिया के स्थान उस दीक्षा का एक भव्य स्मारक बनाने के पहली शिला का न्यास हो रहा है। प्रत्येक आ नारी आत्म-विभोर होकर महामहिम आचार्य कृति एवं उपकारों के संस्मरण के प्रवाह में लगाता हुआ यह पुराना गीत गाये:—

"दयानन्द के वीर सैनिक बनेंगे'
दयानन्द का काम पूरा करेंगे"

और संकल्प करे कि किस प्रकार यह घोष मूर्त्तरूप धारण कर सकती है।

मुक्तक

(नीरज)

(१)

हर आंख यहाँ यूँ तो बहुत रोती हैं,
हर बूँद मगर अश्क नहीं होती हैं,
पर देख के रो दे जो जमाने का गम,
उस आँख से आँसू जो गिरे मोती हैं।

× × × ×

(२)

कफन बढ़ा तो किस लिये नजर तू डबडबा गई,
सिंगार क्यों सहम गया, बहार क्यों लजा गई,
न जन्म कुछ, न मृत्यु कुछ, बस इतनी सिर्फ बात है,
किसी की आंख खुल गई, किसी को नींद आ गई।

× × × ×

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मथुरा में महर्षि दयानन्द के सहायक :

श्री ज्यो० अमरलाल जी द्विवेदी [श्री नरदेव स्नातकजी, ससंद सदस्य]

महर्षि दयानन्द जी के जीवन चरित्र के लेखक श्री देवेन्द्र नाथ मुकर्जी तथा पं० घासीराम जी एम० ए०, एल० एल० बी०, मेरठ के भूतपूर्व प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा, संयुक्त प्रांत ने महर्षि दयानन्द के जीवन चरित्र भाग १ पृष्ठ ६१-६२ पर लिखा है। दयानन्द पाठशाला से निकले और आहार और निवास स्थान के स्थिर प्रबन्ध के विषय में चिंतित हो गये। मथुरा में कोई उनका परिचित न था कोई बन्धु न कोई मित्र। सहायता के लिये किस के आगे हाथ फैलावें, और यह किस से आशा करें जो उनके स्थिर रूप से रहने और खान पान का भार अपने ऊपर ले ले। यदि यह प्रबन्ध नहीं होता है तो उनकी जन्म भर की आशाओं पर जिनके सहारे वह इतने कष्ट और क्लेशों को सहन करते आये हैं पानी फिर जाता है। दयानन्द के हृदय पर नैराश्य की घटा छाने लगी और "किंकरोमि क गच्छामि"—कह कर चिंता से व्याकुल हो गये। इतने में हो आशा की किरण दिखाई दी, नैराश्य की घटा घट गई।

उस समय मथुरा में एक परोपकारी और उदारचित गुजराती ब्राह्मण रहते थे। उनका नाम अमरलाल ज्योतिषी था। मथुरा में कभी उनका कोई पूर्व पुरुष आया था और यहीं बस गया था। उन्हें लोग 'ज्योतिषी बाबा' कहा करते थे। वह औदीच्य ब्राह्मण थे। "महर्षि दयानन्द जी भी औदीच्य ब्राह्मण थे।" घटना वश उनसे दयानंद का परिचय हो गया। दयानंद ने अपनी विषाद कहानी उन्हें कह सुनाई और उन्होंने दयानंद के भोजन का भार सहर्ष अपने ऊपर ले लिया और उनके भोजन का स्थिर प्रबंध हो गया।

अमरलाल के विषय में दयानंद ने लिखा है। आहार और गृह आदि की मुक्त हस्त से सहायता करने के कारण मैं अमरलाल का नितान्त आभारी हूँ। भोजन के सम्बन्ध में वह इतने यत्न पर रहते थे कि जब तक मेरे भोजन का प्रबन्ध नहीं हो जाता था तब तक वह स्वयं भोजन नहीं करते थे। वस्तुतः अमरलाल एक महदन्तःकरण के पुरुष थे। इसमें कोई भी सन्देह नहीं।"

"अमरलाल ने इस नि.सहाय संन्यासी की सहायता करके अपने को अमर कर लिया था। कौन जानता था कि वह संन्यासी एक दिन वैदिक धर्म का पुनरुद्धारक और आर्य जाति का उन्नायक होगा। अमरलाल को क्या खबर थी कि वह उक्त अपरिचित संन्यासी का पालन पोषण करके भारत के ही नहीं, प्रत्युत सारी पृथ्वी के, धर्म बुभुक्षुओं को अन्न दे रहा है। अमरलाल तुझे धन्य है! दयानन्द दिवाकर में जो तेज पुंज था, उसके संचय में तेरा भी भाग है और जिन्होंने उस दिवाकर के प्रकाश से अपने हृदयाविष्ट तिमिर राशि को छिन्न भिन्न किया है। तू भी उनको श्रद्धांजलि का अधिकारी है।"

उक्त शब्द महर्षि दयानन्द जी ने तथा उनके

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जीवन चरित्र लेखकों ने अमरलाल जी के लिये लिखे हैं, ये महान् व्यक्ति मथुरा के प्रसिद्ध ज्यो० वा० अमरलाल जी थे। इनका जन्म संवत् १८९७ वि० में हुआ था और जब महर्षि की उनसे प्रथम भेंट हुई उस समय उनकी अवस्था केवल २० वर्ष की थी। उनकी हवेली मथुरा स्वामी घाट पर आज भी विद्यमान है। उनके पूर्वज ज्यो० बाबा कृपाशंकर जी होलकर और सिंधियाओं के राज्य ज्यौतिषी थे। लगभग २०० वर्ष पूर्व ये मथुरा में आकर वसे थे। होलकर और सिंधियाओं ने उनके ज्योतिष विद्या के चमत्कारों से प्रभावित होकर इन्हें अनेक ग्राम दान दिये थे। उसी समय से इनके यहाँ १००-१२५ औदीच्य ब्राह्मण और डंडी संन्यासी प्रतिदिन भोजन करते थे। यह नियम ज्योतिषी बाबा अमरलाल जी के समय में भी था। इसी भोजन मंडली में स्वामी दयानन्द जी भी भोजन करते थे। अमरलाल जी का और स्वामी जी की इतनी घनिष्ठता और सद्भाव हो गये थे कि जब तक स्वामी जी नहीं खाते थे अमरलालजी भोजन नहीं करते थे। क्योंकि कभी कभी तो स्वामी जी को दंडीजी की सेवा में २-३ बज जाते थे। भोजन के पश्चात् स्वामी जी अमरलाल जी के साथ शास्त्र चर्चा और उनके सुखनिवास नामक कमरे में विश्राम किया करते थे। ज्यो अमरलाल जी विद्वान्, श्रीमान् और दयावान् वे इतने धर्म सहिष्णु थे कि मूर्ति पूजा श्राद्ध विषयों में स्वामी जी से मतभेद होने पर घनिष्ठता थो। अपने धर की आन के लिये उ १९१७-१८ में भयङ्कर अकाल पड़ने पर नि ब्राह्मण भोजन चालू रखने के लिये अपना गांव भी बेच दिया था। नरसी मेहता के के अनुसार "वैष्णव जन तो तैनें कहिये जे पराई जाने रे" के अनुसार वे सच्चे अर्थों में थे। उनकी मृत्यु संवत् १९४१ वि० में हुई

नाहरसिंहजी शाहपुराधीश जब कभी मथुरा ज्योतिषी बाबा की हवेली में श्रद्धांजलि देने करते थे। ज्योतिषी बाबा के प्रपौत्र ज्योति राधेश्यामजी द्विवेदी उस परिवार की परम्प विद्यमान हैं और वे भी ऋषि के प्रति अपार रखते है। महर्षि के गुरु विरजानन्द जी के स अनुसन्धान भवन के लिये उन्होंने अपनी प्र १०० पुस्तकें भेंट करने की सूचना दी है। ने परिवार ने ऋषि को सहायता देकर मानवता जो उपकार किया है उसके लिये हम सब आभ रहेंगे।

किसी रिवाज के इतने कट्टर पक्षपाती न बनो कि सत्य का बलिदान करके उसे पूजने लगो।

—जिमस्टन

× × × ×

थोड़ा-सा भी झूठ मनुष्य को बरबाद कर देता है जैसे दूध को एक बूंद जहर।

—गांधी

× × × ×

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वैचारिक क्रान्ति हमारा लक्ष्य है

[श्री प्रेमचन्द्र शर्मा एम. एल. सी.
मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा उ० प्र०]

विश्व इतिहास में आर्य समाज आन्दोलन एक क्रान्तिकारी आन्दोलन के रूप में सदैव णीय रहेगा। वैचारिक क्रान्ति की दृष्टि से समाज ने जो सफलता प्राप्त की और मान- को अन्धकार से प्रकाश की ओर ले जाने का न किया वह सदैव अनुकरणीय और प्रेरणा स्रोत रहेगा।

आर्य समाज में दृष्टिकोण की मुख्य भावना मानवता अर्थात् सार्व भौम मानव-धर्म के ज्योतिविक रूप की खोज करना ही रही है।

भौतिक संसार मैं मानव प्राकृतिक बन्धनों में फंस जाय तो वह प्रकृति का दास बन जाता और इसी भाँति यदि मानव प्रकृति को मिथ्या भ उसके उचित उपयोग की ओर से उपेक्षा ने लगता है तो दोनों ही अवस्थाओं में मानव याण-मार्ग से भटक जाता है। महर्षि दयानन्द मानवता के इसी रहस्य की खोज की थी और के इस मन्तव्य की घोषणा की कि मानव वन के चरम लक्ष्य धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष का मार्ग पने स्वतन्त्र अस्तित्व को बनाये रख कर प्रकृति संयमित एवं उचित प्रकार से उपभोग करते जीवात्मा को सच्चिदानन्द परमात्मा की ओर ना चाहिये। यह लक्ष्य इतना सरल नहीं जितना बनी से लिक्ष सकना सरल है। इस प्रश्न की भीरता. को महर्षि दयानंद ने त्रैतवाद के वहारिक रूप से सुलझाने का प्रयत्न किया, आर्य ाज की मान्यता है कि ईश्वर जीव प्रकृति तीनों शक्तियाँ अनादि हैं और तीनों का स्वतन्त्रता अस्तित्व है। इस तथ्य को भाषा के इन शब्दों में व्यक्त किया जा सकता है "यह-वह-मैं" "यह" प्रकृति है जिसे हम देखते और उपभोग करते हैं "वह" परम पिता परमात्मा की दिव्ये शक्ति है जो प्रकृति का उपभोग करती और विश्व नियन्ता के द्वारा प्रदत्त कर्मफल को प्राप्त करती है।

विश्व के इस रहस्य की व्याख्या कर महर्षि ने मानवता का जो उपकार किया है उसे चाहे संसार अभी न समझ के पर एक दिन ऐसा अवश्य आयगा कि जब इसके तथ्य की स्वीकृति में ही विश्व सुख और शान्ति का अनुभव कर सकेगा। मानव इतिहास के रक्त रञ्जित पृष्ठों के दो पहलू सर्व विदित हैं। प्रथम धर्म के नाम पर संघर्ष और द्वितीय भौतिक राज्य सम्पत्ति के लिये संघर्ष, मानवता इन दोनों दाड़ों के बीच में सदैव कराहती रही है धर्म के वास्तविक स्वरूप को न समझ कर प्रकृति के प्रति वैराग्य उत्पन्न करने और केवल ज्ञान मार्ग का सन्देश देने वालों ने अपने से भिन्न विचार वालों को नष्ट करने की प्रक्रिया जारी रक्खी। इसी प्रकार प्रकृति वादियों ने नैतिक भावनाओं को समाप्त कर राज्य ऐश्वर्य के लिये, भौतिक सुख के लिये धार्मिक जनता के साथ तथा स्वयं आपस में संघर्ष किया परन्तु इस तथ्य को दोनों पक्षों ने भुला दिया कि ज्ञान-मार्ग और प्रकृति माता के समन्वय का वास्तविक महत्त्व है। यदि इस रहस्य को समझने और तदनुसार आचरण करने का आन्दोलन धार्मिक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

एवं लौकिक नेतृत्व द्वारा किया जाता तो मानवता का इतिहास ही भिन्न प्रकार का और सुखद होता।

आज सम्प्रदायवाद के नाम पर जो सैकड़ों हजारों मान्यतायें प्रचलित हैं और कर्मवाद का आग्रह किये विना ही नाम और जप मात्र से ही पाप मुक्ति और सुफल प्राप्ति की जिस मृग मरीचिका मानवता भटक रही है, आर्य समाज को आज भी उसके विरुद्ध संघर्ष करना है। महर्षि का पाखण्ड-खण्डन अभी अधूरा है और उसे पूर्ण करने का दायित्व वर्तमान पीढ़ी के हम सभी आर्यों पर है। यदि हम चाहते हैं कि ईश्वर के सही रूप को समझने और जानने का लोग प्रयत्न करें तो हमें नियतिवाद और क्षमावाद के विरुद्ध अपना संघर्ष जारी रखना होगा आज के गिरे हुए राष्ट्रीय एवं मानवीय चरित्र की पृष्ठ भूमि में गंगा में गोता लगानेसे पाप मुक्ति और भाग्यवाद जैसी मिथ्या धारणायें ही काम कर रही हैं। साथ ही दूसरी ओर भौतिकवाद की चमक मानव के संलय को समाप्त कर रही है! इन सबके विरुद्ध वैचारिक एवं रचनात्मक क्रांति करने का हमें प्रयत्न करना होगा।

संसार का उपकार करना इस (आर्य स समाज का मुख्य उद्देश्य है। हम अपनी सारी का उपयोग इसी आदर्श की पूर्ति के लिये रहें आज हमें इस व्रत को पुनः दोहराना दया दान सेवा के लौकिक एवं नैतिक उप तो हम प्रयोग करते ही हैं। अब उपर्युक्त वै क्रान्ति पर भी विशेष बल देना होगा। आ आर्य समाज का सन्देह वाहक है उसकी वर्षीय जीवन की सफलता पर आज सभी प्रस यह और भी अधिक सौभाग्य की बात है कि जयन्ती आचार्य गुरु वर दयानन्द की दीक्षा के साथ मनायी जा रही है। इस अवसर प सबकी शुभ कामना है कि मित्र अधिकाधिक हो और आर्य समाज की वैचारिक क्रा सहायक बन मानवता को युग युगों तक शान्ति मार्ग दिखलाता है।

असत्य की कोई शक्ति नहीं होती उसे अपने अस्तित्व के लिये सत्य का आश्रय लेना पड़ता है। —विनोवा

× × × ×

एक क्षण या पल भर की आयु करोड़ों अशर्फियों के बदले में कभी नहीं मिल सकती। यदि ऐसी आयुएं बरबाद होयँगी तो इससे बढ़ कर हानि और क्या हो सकती है।

—शङ्कराचार्य

× × × ×

उत्साह अत्यन्त बलवान है, उत्साह सरीखा कोई बल नहीं। उत्साही पुरुष को इस संसार में कुछ भी दुर्लभ नहीं। —वाल्मीकि

× × × ×

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

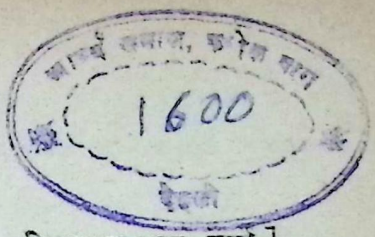

मथुरा पर स्वामी दयानन्द का प्रभाव

[पं० शिवचरण लाल शर्मा]

मथुरा एक प्राचीन नगरी है, यहाँ के कण-कण में धार्मिक और राजनैतिक इतिहास की छाप पाई पड़ती है। ब्रज प्रदेश का कोना कोना धार्मिक इतिहास से परिपूर्ण है। समय ने इस इतिहास का विकृत अवश्य किया, परन्तु समझने वालों के उसकी सच्चाई छिपी नहीं रह सकती और इसी उसका महत्व भी है। अनेक धर्मों के धर्माचार्यों अपने धर्म का प्रचार केन्द्र इसी स्थान को या और आज भी ब्रजमें जितने ही सम्प्रदायों के हैं, उतने अन्यत्र एक शहर में कहीं भी नहीं गे। विधि का विधान को देखिये, स्वामी नन्द को दण्डी विरजानन्द ने यहीं पर वैदिक की शिक्षा दी और उनसे प्रतिज्ञा कराई कि वह एड खण्डिनी पताका लेकर देश में घूमेंगे और क धर्म का प्रचार करेंगे।

मेरे बचपन की बात है। मेरी अवस्था मुश्किल १-१२ वर्ष की रही होगी। अर्थात् आज से भग ५० वर्ष पूर्व की बात है, मैं गुरुकुल वृन्दावन ार्षिकोत्सव में सम्मिलित होने के लिये अपने वारिक जनों के साथ आया था। उस समय मैंने रा और वृन्दावन के मन्दिरों पर टंगी हुई तख-ाँ देखीं थीं। जिन पर लिखा था कि कोई भी ई समाजी इस मन्दिर में प्रवेश नहीं कर सकता। न ज्यों ज्यों समय बीतता गया, आर्य समाज विरोध कम होता गया। जिन आर्य समाजियों लोग अछूत समझते थे और गर्मियों के दिनों में क पर हरिजनों को पिलाये जाने वाली पानी की से नन्हें पानी पिलाते थे, उनके लिये भेद-भाव ात्रा कम हुई और उन्हें अछूत नहीं समझा जाने । आर्य समाज ने मुसलमानों और ईसाइयों से जाति की जो रक्षा की और उस रक्षा के लिये साहस, बलिदान और त्याग का परिचय दिया उसके प्रति हिन्दू जाति आँख मूँद नहीं रह सकी। परिणाम यह हुआ कि आज हिन्दू और सनातन-धर्मी में किसी प्रकार का कोई अन्तर नहीं रहा।

अब से कुछ वर्ष पूर्व की बात है। महात्मा गाँधी जेल में थे। उन्होंने ब्रिटेन के प्रधान मन्त्री द्वारा दिये गये साम्प्रदायिक निर्णय को बदलने के लिये आमरण अनशन किया था। सारे देश में उनके उप-वास से एक बड़ी विचित्र लहर पैदा हो गई थी। मथुरा में भी मथुरा की आर्य समाज ने इस अवसर पर एक विराट् सहभोज का आयोजन किया था। इस सहभोज का संयोजक इन पंक्तियों का लेखक ही था। उस समय जबकि सभी जाति के लोग एकत्र हो गये, जिनकी संख्या ५०० से कम नहीं थी, उस समय यह अनुभव हुआ कि अनेक आर्य समाजी ऐसे थे जिन्हें इस बात का परहेज था कि वह जाटवों और हरिजनों के हाथ का परोसा हुआ भोजन करें। कुछ आर्य समाजी ऐसे भी थे जो हरिजनों के साथ पंक्ति में बैठकर भोजन करना नहीं चाहते थे। बड़ी परेशानी हुई और बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। इसके बाद एक लहर और चली। और वह इस उपवास के तुरन्त बाद ही। वह थी आर्य कन्या पाठशाला में हरिजन लड़कियों को पढ़ने के लिये प्रवेश कराना। इसके लिये अनेक आर्य समाजी, जिन्होंने आर्य कन्या पाठशाला का निर्माण किया था, विरोध का झण्डा लेकर खड़े हो गये। बड़ी खींचातानी हुई। अन्य कई संस्थाओं में भी हरिजन छात्रों को प्रवेश कराने का प्रयत्न किया गया उनमें भी बड़ा संघर्ष हुआ। लेकिन आज वह दिन है कि मथुरा में कोई भी स्कूल और कालेज, चाहे वह लड़कियों का हो या लड़कों का, ऐसा नहीं है जिनमें बिना किसी भेदभाव के हरिजन तथा दलित वर्ग के छात्र छात्रायें सवर्ण कहे जाने वाले छात्र छात्राओं के साथ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

न पढ़ रहे हैं। आज का वातावरण ऐसा है, जिसमें समाज में आर्य समाजी और सनातनी सवर्ण का कोई भेद भाव नहीं है। इस सब का श्रेय महर्षि दयानन्द के मिशन को है और उन आर्य समाजी कार्यकर्त्ताओं को है जिन्होंने अनेक कठिनाइयों का सामना करते हुए अपने को महर्षि के सिद्धांत पर दृढ़ रखा और कदापि इधर से उधर नहीं हिले आर्य समाजियों द्वारा हिन्दू जातिकी की गई निःस्पृह सेवा का परिणाम यह है कि आज आर्य समाज के प्रत्येक कार्य में सनातनी हिन्दू मुक्तहस्त हो कर दान देते हैं और अपना पूर्ण सहयोग प्रदान करते हैं। सनातन धर्मावलम्बियों पर आर्य समाज का यही प्रभाव पड़ा है कि वह अपने धर्म में प्रचलित बुराइयों को समझने लगे हैं उनके उन्मूलन के लिये सचेष्ट हैं। मथुरा वृन्दावन और ब्रज के मन्दिरों में जो वातावरण आज से १०० वर्ष पूर्व था, वह अब देखने को भी नहीं हैं। हम केवल उसकी कल्पना ही कर सकते हैं।

संक्षेप में आर्य समाज के सिद्धान्तों का प्रभाव हिन्दू जाति पर व्यापक रूप से हुआ और आर्य समाज द्वारा समाज सुधार की लगभग सभी बातों को समस्त हिन्दू समाज ने अपना लिया है। अब हिन्दू समाज के अन्दर सुधार का प्रश्न इतना व्यापक हो गया है कि उसमें आर्य समाजी और सनातन धर्मी के भेद की गुंजाइश नहीं रही। इसे हम स्वामी दयानन्द की विजय कहें तो अनुचित न होगा। वास्तव में स्वामी दयानन्द हिन्दू समाज और धर्म में बुराइयाँ दूर करने के लिये ही अवतरित थे। उनका मिशन पूर्णतः सफल हो गया। इसके लिये जहाँ आर्य समाजी भाई बधाई के पात्र हैं सनातनी भी कम बधाई के पात्र नहीं हैं। उन्होंने बुराइयों को समझा और उनका सामूहिक रूप से प्रतिकार करने की कोशिश की। इसलिये आज हिन्दू जाति आज महर्षि दयानन्द की ऋणी है।

अब से कुछ वर्ष पूर्व की बात है। हैदराबाद में सत्याग्रह का बिगुल बजा था वह सत्याग्रह आर्य समाज ने आरम्भ किया। परन्तु उसमें मथुरामें ही नहीं सारे देश में सत्याग्रह को सहायता मिली। यदि सारे देश से, सारी हिन्दू जाति से सहायता न मिली होती तो सत्याग्रह इतना विराट रूप धारण न कर सकता कि हैदराबाद की सरकार एक दम काँप उठी और उसने घुटने टेक दिये। हिन्दू समाज ने धन ही नहीं बल्कि तन-मन-धन से उसमें पूर्णतः योग दिया किया। इसमें हिन्दू और आर्य समाजी इस तरह मिले कि भेद भाव की रही सही दीवार भी ढह हो गई। अतः मथुरा और ब्रज प्रदेश में नहीं, सारे भारत में, धर्म और समाज दोनों पर, आर्य समाज की गहरी छाप पड़ी है। लेकिन ब्रज में वह कुछ अधिक दिखाई पड़ती है कि ब्रज तो हिन्दू जाति के लिये धर्म और संस्कृति का केन्द्र-स्थान आज पीढ़ियों से रहा है।

किसी सिद्धात्मा की प्रवृत्ति के विषय में सही धारणा बनाने के लिये यह आवश्यक है कि हम उसके संस्थापक का नहीं उसके अनुयायियों का निरीक्षण करें क्योंकि संस्थापक ने तो सिर्फ सिद्धान्त बनाया है जब कि अनुयायी उस सिद्धान्त द्वारा बने होते हैं।

—जे० सी० हेयर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्य मित्र का महान् कार्य

[श्री विश्वम्भर सहाय 'प्रेमी']

चालीस वर्षों से अधिक की बात है कि मैं प्रति सप्ताह रविवार के साप्ताहिक सत्संग में आर्य मित्र का कोई न कोई लेख सुनाता था। उन दिनों मैं आर्य कुमार सभा मेरठ शहर का मन्त्री था। ला० घासीराम जी आर्य समाज के एक मात्र नेता थे। कभी कभी वे भी आर्य कुमारों के सम्मुख भाषण देने के लिये आ जाते थे। मुझे स्मरण है कि उन दिनों आर्य मित्र में मनुष्य जीवन को उन्नत बनाने की प्रेरणा देने वाले लेखों का बाहुल्य रहता था या ईश्वर की सत्ता और वेदों की महत्ता से संबंधित लेखों की अधिकता रहती थी। उन दिनों आर्य समाज के साथ सनातन धर्मी, इस्लामी एवं ईसाई विद्वान् शास्त्रार्थ भी करते रहते थे। आर्य मित्र में उनके सम्बन्ध में भी समाचार एवं लेख प्रकाशित होते थे।

तीन चार वर्ष के उपरान्त सन् १९२१ में मेरठ में स्व० भाई परमानन्द जी के सभापतित्व में अखिल भारतवर्षीय आर्य कुमार सम्मेलन हुआ। मुझे स्मरण है कि उस सम्मेलन के संबंध में आर्य मित्र में प्रचुर सामग्री प्रकाशित हुई थी। भाई परमानन्द जी कालापानी कारावास से मुक्त होने पर सर्वप्रथम सार्वजनिक रूप में मेरठ ही आकर बोले थे। आर्य मित्र ने उनके भाषण के अंशों को बड़े विस्तार के साथ प्रकाशित किया था।

इसके उपरान्त आर्यसमाज मेरठ शहर के साप्ताहिक सत्सङ्ग में भी मुझे आर्य मित्र के लेख एवं विचारणीय सम्पादकीय टिप्पणियों को सुनाने का अवसर मिलता रहा। साथ ही मैंने आर्य मित्र को कुछ सामग्री भेजने का भी प्रयत्न किया।

यह तो रही मेरे साथ आर्य मित्र के सम्बन्ध की बात। मैं गत चालीस वर्षों से आर्य मित्र का पाठक रहा हूँ। गत पन्द्रह-बीस वर्षों से तो अपने विचार भी लेखों के रूप में आर्य मित्र में प्रकाशनार्थ भेजता रहा हूँ। मेरा विश्वास है कि आर्य मित्र ने न केवल उत्तर प्रदेश में किन्तु अन्य प्रान्तों में भी ख्याति प्राप्त की। शिवरात्रि ऋषि बोध—पर्व पर प्रकाशित होने वाले आर्य मित्र के विशेषाङ्क न केवल आर्य जगत् में किन्तु अन्य क्षेत्रों में भी लोकप्रिय होते रहे हैं। उन विशेषाङ्कों में आर्य समाज के विद्वानों एवं लेखकों के लेख ही नहीं छपते थे किन्तु अन्य विद्वान् व्यक्ति भी अपने लेख भेजकर आर्य मित्र का गौरव बढ़ाते थे।

सुलझा हुआ सम्पादन :—

आर्य मित्र के सम्पादन को सम्पादकीय जगत् में बड़ा गौरव प्राप्त था। आर्य मित्र का सुलझा हुआ संपादन इसकी विशेषता थी। मुझे आर्य मित्र के अनेक सम्पादकों के साथ विचार विनिमय का अवसर प्राप्त होता रहा। पं० हरि शङ्कर जी शर्मा तो आर्य मित्र सम्पादक के रूप में ही मेरे स्नेही बने। मुझे स्मरण है कि शिवरात्रि या दीपमालिका के अवसर पर वे मुझे पत्र लिख कर स्मरण कराते थे कि मेरठ के विद्वानों से आर्य मित्र के लेख भिजवाइये।

मैं बात कह रहा था आर्य मित्र के कुशल सम्पादन की। इसके लिये मुझे यहाँ एक उदाहरण भी देना है। अगस्त १९१९ में 'न्यूरिव्यु' पत्र में लोकमान्य तिलक के संबन्ध में एक समाचार प्रकाशित हुआ था। इसमें प्रकट किया गया था कि लोकमान्य तिलक ने लन्दन में व्याख्यान देते हुए कहा कि मैं भारत में प्रचलित जाति बन्धन के विरुद्ध हूँ।

उनके इस विचार पर आर्य मित्र ने जो सम्पादकीय लेख लिखा था, वह सभी क्षेत्रों में आदर की दृष्टि से पढ़ा गया। उन दिनों मेरठ से 'ललिता' नाम

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

की मासिक पत्रिका प्रकाशित होती थी। पत्रिका का सम्पादन उस समय की 'सरस्वती' मासिक पत्रिका से टक्कर लेता था। ललिता के सम्पादक ने लोकमान्य तिलक से सम्बन्धित आर्य मित्र के सम्पादकीय लेख को अपनी पत्रिका में स्थान दिया। इसका कुछ अंश हम यहाँ उद्धृत कर रहे हैं क्योंकि आर्य मित्र के विचारों का महत्व आज भी ज्यों का त्यों बना हुआ हैं। वह अंश इस प्रकार हैं :-

हम बहुत दिन तक इस जाति बन्धन के झगड़े में पड़े रहे हैं प्रत्येक जानता है कि यह जाति बन्धन इस समय मक्कारी और कपट की संस्था बन गया है। इसके नियमों और बन्धनों को कट्टर से कट्टर तोड़ते हैं परन्तु उनको प्रकट रूप में तोड़ना पाप समझा जाता है। किसी समाज का मूल सच्चाई पर होना चहिये। हम कपट और मक्कारी के आधार पर कभी समुन्नत नहीं हो सकते।

यदि भारत का शिक्षित समुदाय इस जाति बंधन के विरुद्ध जैसा कि यह भारत में प्रचलित है, आवाज, उठावेगा, तो सारे मूर्खता भरे भाव, जो इस विषय में पुराने कट्टर विचार रखने वालों के हैं, मिट जायेंगे। हमें वर्तमान अवस्था पर विचार करना है और वे लोग जो वर्तमान में, जाति बंधन के विरोध की आवश्यकता को अनुभव कर रहे हैं सब व्यावहारिक दृष्टियों से जाति बंधन के विरुद्ध इस जिहाद के साथ है। हम देखते हैं कि बहुत सी छोटी जातियाँ अपने को ब्राह्मण सिद्ध करने में अपनी शक्ति का नाश कर रही हैं। क्या ही विचित्र तमाशा है पुराने समय के ब्राह्मण और क्षत्रिय अब नहीं रहे। वर्तमान में हम सब शूद्र हैं-परन्तु ब्राह्मण स्वयं ही कहें कि जाति बंधन एक बुराई है-मि० तिलक कहते हैं कि जाति बंधन की उपयोगिता अब नहीं रही है। फिर क्यों न इस जाति बंधन को पुराने इतिहास के अजायब घर में पहुँचा दिया जावे। हम यह नहीं कहते हैं कि कार्य सरल है। जो इस विषय में कुछ भी जानता है वह यह कह सकता है कि यह अत्यन्त कठिनतर कार्य है परन्तु फिर भी यह कार्य करना (जाति-बंधन को तोड़ना) चाहिये। जो इस विषय में प्रयत्न कर रहे हैं उन्हें सहारा देना चाहिये। कम से कम उनके कार्य में बाधा न डालनी चाहिये। मि० तिलक कम से कम दूसरा कार्य (इस आन्दोलन में बाधक न होने का) उठा सकते हैं। वे इस प्रकार देश की बड़ी सेवा करेंगे जब कि उन्हें इस सेवा को देश को इतनी बड़ी आवश्यकता है।"

आर्यमित्र का राजनैतिक, साहित्यिक एवं सामाजिक जगत् में बड़ा सम्मान रहा। धार्मिक रूप में आर्य मित्र वैदिक धर्म का पोषक ही माना जाता है। आर्य मित्र ने सामाजिक क्षेत्र में बड़ा काम किया। शिक्षा के प्रचार में भी आर्य मित्र को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ। पराधीनता के समय में आर्य मित्र ने सदैव राष्ट्रीय शिक्षा का पक्ष समर्थन किया। गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के संबन्ध में जो लेख आर्य मित्र में प्रकाशित होते थे, उनमें राष्ट्रीय भावना की पूरी पुट रहती थी।

राष्ट्र भाषा के पोषण की दृष्टि से आर्यमित्र हिन्दी का प्रबल समर्थक रहा। आर्य मित्र के सम्पादकों से कई विद्वानों ने आर्यभाषा हिन्दी साहित्य सम्मेलन के कार्य को विस्तार देने का यत्न किया। स्व० पं० पद्मसिंह शर्मा का नाम उनमें उल्लेखनीय है। स्व० हरिशङ्कर शर्मा की साहित्यिक सेवायें एवं हिन्दी के लिये किये गये कार्य कभी भुलाये न जा सकेंगे। आर्य मित्र के पाठकों ने जहाँ स्वयं उसे पढ़कर लाभ उठाया वहाँ उन्होंने हिन्दी न जानने वालों को भी कर लेख सुना सुनाकर हिन्दी सीखने की प्रेरणा दी।

आर्य मित्रों के लेखों को पढ़कर आर्य समाज के बाहर के व्यक्ति भी बराबर लाभ उठाते रहे। शिक्षा के समर्थक आज से चालीस वर्ष पूर्व आर्य मित्र के लेखों से प्रेरणा लेकर शिक्षा के विस्तार का काम कार्य करते रहे। उस समय आर्य समाज द्वारा

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ष्य रूप से आर्य कन्या पाठशालायें चलाई ती थीं।

आर्य मित्र द्वारा आर्य समाज के कार्यकर्ताओं समाज का कार्य करते रहने का बराबर प्रोत्साहन ला। धार्मिक विचारों में क्रान्ति लाने के लिये आर्य त्र समय २ पर ऐसे लेख भी प्रकाशित करता रहा नका किसी धर्म विशेष से संबन्ध न होकर मानवता संबन्ध था। चरित्र निर्माण के लिये आर्य मित्र ने २ विचार दिये। स्व. लाला लाजपत राय, महात्मा राज, स्वामी श्रद्धानन्द, महात्मा नारायण ामी जैसे विद्वानों के लेखों ने भी आर्य मित्र के गौरव को बढ़ाया।

कविता जगत् में भी आर्य मित्र में प्रकाशित कविताओं का बराबर सम्मान होता रहा। वैदिक मंत्रों के पद्यानुवाद में आर्य मित्र की विशेषता रही। पं० हरिशङ्कर जी के पूज्य पिता पण्डित नाथूराम शङ्करजी शर्मा कविसम्राट् की रचनाओं ने भी उस समय आर्य मत्र को गौरव प्रदान किया। आर्य मित्र में प्रकाशित अनेक रचनायें दूसरे समाचार पत्रों में भी उद्धृत की जाती रहीं।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि आर्य मित्र ने साहित्य, धर्म प्रचार, राष्ट्रभाषा हिन्दी प्रचार तथा सामाजिक चेतना लाने में जो महत्व पूर्ण कार्य किया, वह कभी विस्मरण नहीं किया जायगा।

आर्य मित्र से पथ-प्रदर्शन की आशा

य सम्पादक जी,

नमस्ते,

"आर्य मित्र" के हीरक जयन्ती उपलक्ष्य में आपने विशेषाङ्क निकालने का आयोजन किया है। हम उसका स्वागत करते हैं।

६० वर्ष की आयु में एक बार पुनः यौवन के सम्मेलन होते हैं-सेकेण्ड प्यूबर्टी आती है! आज ६० वर्ष की उपरान्त सेवा के पश्चात् "आर्य मित्र" को तन यौवन प्राप्त होगा, यह दुराशा न होकर सदाशा सिद्ध होगी, कारण कि हरिशङ्कर जी के नेतृत्व वार्धक्य कैसा? न हरि बूढ़े-न शङ्कर!!

स्थतु आर्य समाज को नयी दिशा में प्रवेश करना होगा-उनके कर्म क्षेत्र को धार्मिक कार्यकलापों क सीमित नहीं रखना होगा। आर्य समाज एक र्वांगीण संगठन है। उसे आर्थिक, सामाजिक, ार्मिक, शारीरिक, शिक्षा सम्बन्धी एवं सर्वोपरि राजनीतिक दिशाओं का निदर्शन करना है।

आर्यसमाज एक धर्म संस्थान मात्र नहीं है। यह तो एक स्वावलम्बी स्वयं सेवक संगठन है जो वैदिक परम्पराओं और दिशाओं का पोषक, समर्थक तथा प्रचारक है।

पराधीनता के युग में इसके सदस्य देश की स्वतंत्रता के संग्राम में पड़े-उसके मीठे कड़वे फल भोगे। अब स्वाधीनता का युग है। इसमें आर्य समाज को अग्रसर बन कर राजनीतिक कार्य क्रमों का संचालन करना चाहिये। यह नहीं कि दुकदुक दीदम दम न कसीदम! की पद्धतिका अनुसरण किया जाय! क्या हो—क्या किया जाय, कब किया जाय, कैसे किया जाय जिससे सम्मानित एवं उपयोगी जीवन जिया जाय, यह आर्यसमाज को सोचना है। यदि ६० वर्ष के उपरान्त एक बार पुनः यौवन प्राप्त कर "आर्य मित्र" एक सक्रिय निर्भीक पथ प्रदर्शन दे सके तो यह हीरक जयन्ती चरितार्थ होगी-ऐसा ही होगा, इस आशा से आशान्वित। —*अलगूराय शास्त्री*

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्य समाज और आर्य मित्र

[श्री सुरेशचन्द्र वेदालंकार एम.ए. एल.

'आर्य मित्र' की हीरक जयन्ती समाचारपत्रों के इतिहास में एक महत्व पूर्ण घटना है। घटना इसलिये कि आजसे पूर्व किसी भी समाचार पत्र की हीरक जयन्ती इस रूप में और जनता द्वारा इतने उत्साह से नहीं मनाई गई। ऐसा क्यों? हम आर्य मित्र को केवल एक समाचार पत्र ही नहीं मानते। हम तो इसे एक आन्दोलन समझते हैं। आर्य समाज भी आन्दोलन ही है। यह वह आन्दोलन है जिसने देश को बुराइयों, अन्धविश्वासों, रूढ़ियों एवं निद्रा की अवस्था से हटा कर अच्छाइयों बौद्धिक विचारों और जाग्रत अवस्था में लाकर खड़ा कर दिया है। इस लिये आर्य समाज और आर्यमित्र यह दोनों पर्यायवाची शब्द समझे जा सकते हैं। जब हम आर्य मित्र की जयन्ती मनाते हैं तो यह आर्य समाज की जयन्ती ही हो जाती है। आर्यसमाज का लाउडस्पीकर आर्य मित्र है।

जिस समय आर्य समाज की उत्पत्ति हुई। उससे पहले देश की जो दशा थी उससे प्रत्येक व्यक्ति परिचित ही है। श्रीमती एनीबेसेंट ने उन्नीसवीं सदी के भारत का जो हाल देखा था, वह काफी दर्दनाक था। उन्होंने लिखा है "लोग आस्तिकता और नास्तिकता के बीच भटके खा रहे थे। आधी भौतिकता की बाढ़ के मारे राष्ट्र का जीवन विशृङ्खलित हो गया था। अंग्रेजी पढ़े लिखे लोग हक्सले, मिल और स्पेंसर के अनुयायी हो रहे थे, किन्तु उन्हें अपने साहित्य का कोई ज्ञान नहीं था। वे अपने अतीत से घृणा करते थे, अतः भविष्य के विषय में उनका कोई विश्वास नहीं था। वे अन्धे हो कर यूरोप के तौर तरीकों की नकल कर रहे थे एवं अपने कला कौशल और शिला का विनाश करके अंग्रेजी असबाबों से अपना घर सजा रहे थे। राष्ट्रीय जोश का उनमें लेश भी नहीं था। राष्ट्रीय जीवन की गति बनाने वाली कोई भी क्रिया कहीं दिखाई नहीं पड़ती थी एसंदिग्ध था कि भारतीय राष्ट्र के हृदय में कोई भी शेष है या नहीं।"

कर्नल अलकाट ने सन् १८७८ ई० में पदार्पण के बाद जो पहला व्याख्यान दिया था पर टिप्पणी करते हुए अमृत बाजार पत्रिका ने था कि "जब रोगी ही ऐंठकर अकड़ गया डाक्टर की सहायता से क्या होगा? भारत का और अभिमान मृतप्राय; है। भारतीयों से उद्धार की बात करना वैसा ही व्यर्थ है जसा की सिकता को सिखावन देना।"

मुर्दनी, पस्ताहिम्मती और निराशा की इस को भरने के लिए यह आवश्यक था कि हिन्दु भीतर अपने धर्म के प्रति आस्था और अपने हास के प्रति अभिमान जमाया जाय। जिस के पास संसार को ज्ञान प्रदान करने वाले वेद, दायिकता एवं व्यक्तिगत अभिमान से कोसों हटाने वाली तथा विश्व एकता का पाठ पढ़ाने उपनिषदें, कर्मयोग की शिक्षा देने वाली गीता बौद्धिक जागृति प्रदान करने वाले दर्शन विद्यमान उस जाति और देश के हृदय में आत्मग्लानि आत्म हीनता की भावना क्यों रहे? वास्तव में यह थी कि हमारे धर्म और संस्कृति पर गंदगी मोटी मोटी पर्तें जम गई थीं। आगे बढ़ने के ऐसे समय ऐसे डाक्टर की आवश्यकता थी जो इन गंदगी की पर्तों को काटकर, इनका आप कर स्वच्छ और पवित्र रूप का--उस रूप का हम वैदिक धर्म या वैदिक संस्कृति कहते हैं कराए। यह कार्य महर्षि दयानन्द ने किया। उज्ज्वल और चमकता हुआ यह वैदिक धर्म णिक कल्पनाओं, रूढ़ियों, अन्ध विश्वासों के नीचे दबा पड़ा था। स्वामी जी ने राम मोहन

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ाड़े, केशवचन्द्र के समान इन पपड़ियों को धीरे-
तोड़ने का काम नहीं किया बल्कि उन्होंने उन्हें
ही चोट से जड़ से दूर करने का प्रयत्न किया
र एक कुशल चिकित्सक के समान रोगी का निदान
ने के लिए—उसे स्थायी रूप से दूर करने के लिए
र्यसमाज की स्थापना की। आर्य समाज ने अनार्ष
यों, पौराणिक पुस्तकों को एक ही झटके में साफ
दिया। वेदों में मूर्ति पूजा, अवतारवाद, तीर्थों
र अन्यपौराणिक अनुष्ठानों, विश्वासों और कृत्यों
गलत घोषित किया। परन्तु यह सब कार्य न होते
ह आर्य समाज के पास 'आर्यमित्र' जैसा पत्र न
ता। आर्य मित्र ने अपने जीवन काल से लेकर
ज तक अनेक कठिनाइयों, मुसीबतों, आर्थिक
टों का सामना किया है, उसने जिन विरोधी परि-
स्थितियों में कार्य किया, यदि दूसरे किसी भी समा-
चारपत्र को उनका सामना करना पड़ता तो वह पत्र
तो मिट जाता या अपने सिद्धान्तों से विचलित
जाता परन्तु आर्य मित्र न तो मिटा और आज भी
न के साथ उसी मार्ग पर बढ़ता जा रहा है। आर्य
त्र क्या है ?

आर्य मित्र एक योद्धा है। यह अकेला ही ईसाई
त, इस्लाम और पौराणिक हिन्दूधर्म तीनों से मोर्चा
ता रहा है और लेता रहेगा। जहाँ बुद्धि से असंगत
मात दिखाई देगी वहाँ आर्य मित्र डट कर
सका सामना करता रहा है। दयानन्द स्वामी ने जो
द्धिवाद की मशाल जलाई थी आर्य मित्र उसका
र्गाचारक है।

'आर्य मित्र' वेदों का उद्धारक है वेद को छोड़
र कोई और अन्य धर्म ग्रन्थ प्रमाण नहीं इस सत्य
प्रचार करने के लिये स्वामी जी ने देश का दौरा
या और जहाँ जहाँ वे गये प्राचीन परम्परा के पं०
र विद्वान् उनसे हार मानते गए आज स्वामी जी
का और आर्य स० का प्रतिनिधि बन कर आर्य मित्र
विश्व में वेदों का डंका बजा रहा है।

'आर्य मित्र' सामाजिक संगठन के लिये जन्म
त वर्णव्यवस्था का विरोध और कर्मानुसार वर्ण-
व्यवस्था का समर्थक है।

'आर्यमित्र' रूढ़ियों, अन्धविश्वासों, कुरीतियों एवं पाखण्ड का नाशक है :

'आर्य मित्र' मूर्ति पूजा, पाखण्ड पूजा, कबरपूजा और इसी प्रकार अन्य अधार्मिक भावनाओं और विचारों का खण्डन करने वाला है।

'आर्य मित्र' अछूतों का उद्धार करने वाला है। सामाजिक दृष्टि से हिन्दुओं के संगठन में कभी आने का कारण अछूत प्रथा थी। इस प्रथा से हिन्दुओं का और हिन्दुओं का ही नहीं मानवता का अपमान हो रहा था। मानव मानव को अछूत बना कर दूर कर रहा था। स्वामी जी ने इस भावना को अवैदिक बतलाया। आर्य समाज ने उनकी आवाज के साथ आवाज मिलाई और आर्य मित्र ने अछूतपन को मिटाने के लिए आज तक एक निष्ठा से कार्य किया।

'आर्य मित्र' नारियों की मर्यादा वृद्धि करने वाला है। इसने स्त्रियों की शिक्षा, बाल विवाह विरोध और वृद्ध विवाह निषेध का प्रचार दिया है और इसने कन्याओं की शिक्षा, ब्रह्मचर्य का महत्व इतना अधिक प्रचारित किया कि इसके प्रभाव से हिन्दी प्रांतों में साहित्य के भीतर एक प्रकार की पवित्रतावादी भावना भर गई और हिन्दी के कवि कामिनी, नारी की कल्पना से घबराने लगे।

'आर्य मित्र' एक राष्ट्रीयता का समर्थक है। वह प्रत्येक व्यक्ति के लिए अपनी मातृ भाषा का समर्थक है और राष्ट्र के लिए एक राष्ट्र भाषा के रूप में वह हिन्दी का प्रचारक है। अभी पंजाब के हिन्दी सत्या ग्रह का नेतृत्व करने का श्रेय आर्य मित्र को दिया जा सकता है।

'आर्य मित्र' 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' सारे संसार को आर्य बनाकर, श्रेष्ठ बना कर विश्व में सच्ची शांति का मार्ग प्रसारित करने वाला है। विश्वबन्धुत्व उसका उद्देश्य है। वह अहिंसा और सत्य में विश्वास करता है परन्तु वह किसी से दबना नहीं जानता। वह सच्चे अर्थों में आर्यों का मित्र है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्य कौन है ? 'आर्य शब्द सुनियन्त्रित जीवन' स्पष्ट वादिता, शिष्टता, उच्च विचार, सद्व्यवहार, साहस, विनम्रता, पवित्रता, मनुष्यता, दया- निर्बलों की रक्षा, उदारता, सामाजिक कर्त्तव्यों के अनुष्ठान, ज्ञान पिपास, बुद्धिमानों विद्वानों के लिए आदर बुद्धि और सामाजिक सद्गुणों के एक विशेष नैतिक और सामाजिक आदर्श का बोध कराता है। 'आर्य मित्र' का प्रत्येक अक्षर, प्रत्येक शब्द और प्रत्येक वाक्य, प्रत्येक लेख आज साठ वर्षों से इसी भावना का प्रचार कर रहा है।

यही विचार धारा तो आर्य समाज के आन्दोलन का उद्देश्य थी। इसीलिए आर्य समाज और आर्य मित्र यह दोनों आन्दोलन हैं। दोनों एक हैं। आज जब भारत में अनेक प्रकार के संघर्ष चल रहे हैं 'आर्य मित्र' विश्व को और भारत को जागरण का संदेश सुनाते हुए कहता है :—

जाग जाग मिट्टी के पुतले, मानस का उल्लास
ज्योति जगे बलिदानों की, वह खोई सोई प्यास
तरल गरल पी नीलकंठ हो, अक्षर बन विश्वास
कांपे गतानुगति विगलित हो सदियों का इतिहास
आज युगों के चौराहों पर शाय लुटा वरदान
एक नया संसार बसाने आर्यों की संतान

वह कहता है:—

'गाथा गूंजी नए सृजन की, नव साधना की
देर हो रही अब तो साथी ये बिजड़ित पट हो

इस प्रकार आर्य मित्र का संदेश हम यहां करते हैं कि अपने हृदयों में धारण करेंगे अनुगम करेंगे और हम उसके वचनों का कर्तव्य में, क्रिया रूप में परिणत कर बड़ी साथ कह सकेंगे, स्वामी दयानन्द की जय, समाज की जय और आर्य मित्र की जय !

वह है सच्चा साहित्यकार

[श्री हरिशङ्कर शर्मा]

जो शब्द ब्रह्म का आराधक, विज्ञान-ज्ञान का सत् साधक,
दुर्भति-दुर्गति-दल का बाधक, अवनति-गढ़ करदे छार-छार—
वह है सच्चा साहित्यकार।

भय, पक्ष, प्रलोभन पास नहीं, पद-प्रभुता पर विश्वास नहीं,
होता न हताश-उदास कहीं, करता कुनीति पर पवि-प्रहार—
वह है सच्चा साहित्य कार।

नित्यसत्य और शिव,सुन्दर पर,जिसका जीवन-व्रत है निर्भर,
जो शुद्ध--बुद्ध भीतर-बाहर, हैं हितकारी हृदयोद्गार—
वह है सच्चा साहित्यकार।

जो अति कठोर, कोमल, महान्, जो ओज-तेज-निष्ठा निधान,
वरदान,प्राण,कल्याण, त्राण, जग मग प्रतिभा का चमत्कार—
वह है सच्चा साहित्य कार।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

स्वतंत्रता संग्राम का जागरूक प्रहरी आर्य्यमित्र

[विद्यावारिधि श्री पं० सत्यमित्र शास्त्री वेदतीर्थ]

द हम महर्षि दयानन्द के स्वरूप को देखें तो अमृत खोज में जंगल पर्वत नदी के स्रोतों को डालना और अपने जीवन को घोर ा में बिताना उनका जीवन श्रीराम के वन- को याद दिलाता है। आत्मा को अजर अमर कर लोक सेवा के मैदान में डटे रहना त्र में गीता का उपदेश करते हुए श्री कृष्ण राज को सामने ला खड़ा करता है। भगिनी चचा की मृत्यु से प्रभावित होकर विवाह यारियों के भाग निकलना और अपने जीवन ब्रह्म समाधि में लगा कर मृत्युञ्जय पद को के लिये अमृत की खोज करना भगवान् बुद्ध ोधि वृक्ष के नीचे की समाधि को याद दिलाता शास्त्रार्थ की वेदी पर शास्त्रार्थ द्वारा विरोधियों पराजित करते हुए आचार्य शङ्कर जान पड़ते ाजनैतिक विचार धाराओं को देते हुए जब वे ाज्य एवं अखंड सार्वभौम चक्रवर्ती राज्य की करते हैं तब वे आर्य्यावर्त संरक्षक आर्य्य कृति के उद्दीपक आर्यत्व के प्रति पालक महा- ा प्रताप सिंह गुरु गोविन्द सिंह एवं छत्रपति ाजी जान पड़ते हैं। सन् १८५७ के क्रान्ति के ात् इस देश में राष्ट्रीय क्रान्ति का सन्देश देने ी एक मात्र ऋषि की विचार धारा थी उसके ात् अपने जन्मकाल से ही आर्य्यसमाज प्रबल ीय आन्दोलन का प्रहरी रहा। और बाधा ही अपितु क्रियात्मक रूप से उसने राष्ट्रीय महा ों को जन्म दिया। स्वामी श्रद्धानन्द पंजाब री लाला लाजपत राय, भाई परमानन्द सरदार भगतसिंह पं० रामप्रसादजी बिस्मिल आदि लोगों ने स्वतन्त्रता संग्राम में अपने जीवन की आहुति दे डाली। आर्य्यमित्र अपने जीवन काल से ही स्वतन्त्रता संग्राम का जागरूक प्रहरी रहा। श्री पं० हरि-शङ्कर शर्मा सुकवि की लेखनी ने तो उस समय क्रान्ति का शंखनाद कर दिया था। या तो उस समय साप्ताहिक पत्र स्वदेश अथवा प्रताप था। किन्तु जब वे सुप्त हो जाते थे। उस समय आर्य्य-मित्र जागरूक प्रहरी बन कर स्वतन्त्रता की रण-भेरी बजाता था। आर्य्यमित्र के लेखों और विचारों ने एक सफल सेनानी का कार्य किया। इसी का शंखनाद था कि जो महर्षि के वेदध्वनि 'स्वराज्य-मियाय' अथर्व सन्देश को पूर्ण करने के लिये हजारों की संख्या में सर पर कफन बाँधे हुए आर्य्यवीर अपना सर्वस्व आहुति देने को कृत संकल्प होकर। फाँसी की रस्सी को नवबधूटी का अङ्ग समझ कर अपनी जीवन लीला को भारत माता की जय बोलते हुए समाप्त कर दिया देने के लिये उतावले होगये थे। स्वतंत्रता समर के अनेक क्रांति कारियों की जन्मदात्री आर्य्यमित्र की लेखनी है एवं आर्यसमाज की वैदिक राष्ट्रीय विचार धारा है। एक दिन मैं क्रान्तिकारी पुरुष श्री पं० रामप्रसाद बिस्मिल की स्वलिखित अपनी कहानी को पढ़ रहा था उ समें आप लिखते हैं मुझे अपने जीवन में आर्य्यसमाज और स्वामी दयानन्द का ज्ञान न था मैं अपने परम हितैषी श्री पं० रामस्वरूपजी के घर अपने परम मित्र शर्माजी से मिलने गया। वहाँ उनके हाथों में आर्य्यमित्र था। 'वयं राष्ट्रे जागृयाम' शीर्षक लेख पढ़ने को मिला।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पुनः मेरी उत्कण्ठा आर्य्यसमाज के प्रति बढ़ी। और उसी समय मै अपने मित्र के साथ आर्य्य-समाज शाहजहाँन पुर के उत्सव पर गया। वहाँ श्री पं० अखिलानन्दजी का व्याख्यान हो रहा था। पुनः मैंने सत्यार्थ प्रकाश का अध्ययन किया। और वहाँ से मेरे जीवन को राष्ट्रीय प्रेरणा प्राप्त हुई। राजनैतिक स्वतन्त्रता संग्राम में कूदने का प्रधान कारण एक मात्र सत्यार्थ प्रकाश का पुनीत पावन राष्ट्रीय सन्देश था। दूसरी घटना अपने जीवन क्षेत्र की है। वह आर्य्यसमाज हैदराबाद का धर्म युद्ध है। उस समय मैं कानपुर में था। वहाँ श्री नेताजी सुभाषचन्द्र जो का व्याख्यान सुनने को मैं अपने परम साथी बलिया की क्रान्ति के अग्रदूत श्रीचित्तू पाण्डेय के साथ परमठ गया। वहाँ श्री नेताजी से मिला। उस समय अपना कार्य काल राजनीति में वामपक्षीय था। वहाँ मुझे फैजाबाद निवासी महाशय केदारनाथजी आर्य्य मिले। जिनके हाथों में आर्य्यमित्र था। नेताजी ने अपने हाथों से आर्य्यमित्र लेकर बड़े प्रेम से पढ़ना प्रारंभ किया। उसमें हैदराबाद में आर्य्य सत्याग्रहियों पर अत्याचार और कांग्रेस की दुर्बल कातर नीति का स्पष्टीकरण था जिसको पढ़ कर श्री नेताजी ने वीर शब्दों में कहा कि स्वतन्त्रता संग्राम का जागरूक प्रहरी आर्य्यसमाज का प्रमुख पत्र आर्य्यमित्र है। इसी प्रकार मुझे सन् २४२ की क्रान्ति का संस्मरण है। जब देश के प्रमुख सम्पूर्ण राष्ट्रीय पत्र बन्द हो चुके थे। उस समय स्वतन्त्रता संग्राम का वाहक केवल आर्य्यमित्र था। जेल में यज्ञ के उपरान्त बलिया समाज के प्रधान श्री प्रसादजी आर्य्यमित्र पढ़ कर सबको सुना थे। उसी से सबको राष्ट्रीय समाचार सम्प्रा था। नेपाल क्षेत्र में कोई भी समाचार पत्र सकता था केवल लोगों को आर्य्यमित्र द्वारा समाचार प्राप्त होता था। और आर्य्य प्रतियाँ गुरुकुल अयोध्या से श्री स्वामी ब्र नैपाली लेकर नैपाल में घुसे थे कि उनके आर्य्यमित्र रखने के कारण कारावास में डा गया। यह है आर्य्यमित्र का स्वतन्त्रता सं प्रहरी होना। उनके कारावास जाते ही अनेक ने सत्यार्थ प्रकाश और आर्य्यमित्र लेकर प्रारम्भ कर दिया और नैपाल में भी रा के खिलाफ असहयोग आन्दोलन का श्री स्वामी ब्रह्मनाथजी के आर्य्य दल ने महर्षि दयानन्दजी ने जो अपना सन्देश का देश को दिया था। उसके प्रचार में आ का प्रमुख स्थान है। जो देश विदेश प्रत्येक पर राष्ट्रीय चेतना का शंखनाद फूंकता आज स्वतन्त्र भारत में उसकी पुण्य जयन्ती के पुनीत पावन स्थल पर अखिल विश्व 'कृवन्तो विश्वमार्यम्' का सन्देश दे जागरूक प्रहरी का कार्य्य करेगी।

चलता हुआ मनुष्य ही मधु पाता है' चलता हुआ मनुष्य ही स्वादिष्ट फल चखता है, सूर्य का परिश्रम देखो जो नित्य चलता हुआ कभी आलस्य नहीं करता, इसी लिए चलते रहो।

—ऐतरेय

× × × ×

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

आदर्श गुरु और आदर्श शिष्य—

श्रीस्वामी विरजानन्दजी दण्डी

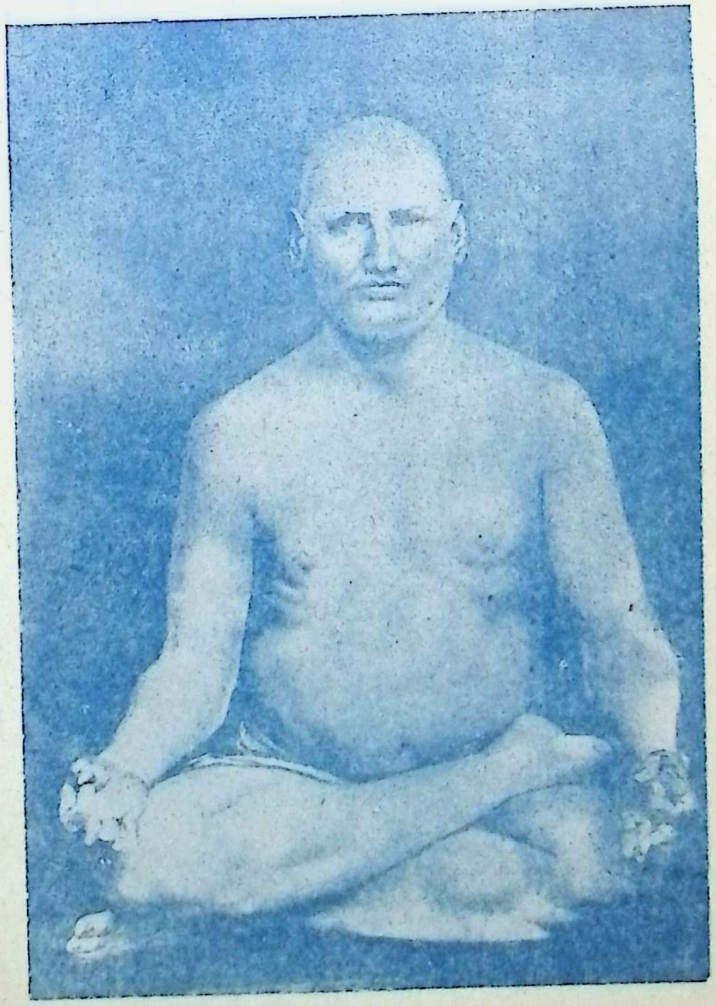

महर्षि श्रीदयानन्द सरस्वती

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मित्र के संस्मरण [डा० सूर्यदेव शर्मा साहित्यालङ्कार एम, ए.एल. टी., डी, लिट]

★

राष्ट्रों के जीवन में समाचार पत्रों का विशेष त्व होता है। यदि यह कहा जाय कि वे राष्ट्रों के समाजों के नीति निर्देष्टा तथा युग-स्रष्टा होते हैं, कोई अत्युक्ति न होगी! अनेक राष्ट्रों के उत्थान, , उन्नति, अवनति, गति, प्रगति, संसर्जन, र्जन के सूत्रधार समाचार पत्र ही रहे हैं, और । यद्यपि रेडियो और टेलीविजन के आविष्कारों मचार पत्रों का बहुत कुछ कार्य-भार सँभाल ा है फिर भी संवाद-वहन के अतिरिक्त विचार न, समस्याओं का समाधान, साहित्यिक साधना दे के लिए समाचार पत्र (विशेषतः साप्ताहिक मासिक-पत्र पत्रिकाएँ) तो अनुपम साधन सिद्ध है। "आर्यमित्र" भी इसी प्रकार के उच्चतम कोटि समाचार पत्रों की श्रेणी में आता है। जिसने अनेक र्यजनों के जीवन को पावन प्रेरणा प्रदान की है। ाज का सदैव सन्मार्ग प्रदर्शन किया है। अनेक ट-कालों में समाज की रक्षा की है। क आर्यसामाजिक इकाइयों एवं संस्थाओं को ठन के सूत्र में सम्बद्ध किया है। वैदिक धर्म-ार, साहित्य-सृजन, विचारों का आदान-प्रदान, याग्रह जैसे महान् आन्दोलन का उन्नयन, सरकारी वा रियासती अत्याचारों के सन्मुख "अर्जुनस्य ज्ञे द्वे न दैन्यं न पलायनम्" का अमिट आदर्श र दृढ़तम मोर्चा लेना "आर्य मित्र" का ही काम ा है।

मैं गत लगभग ४५ वर्षों से "आर्य मित्र" का ी और नियमित पाठक रहा हूँ। इन ४५ वर्षों में यद ही 'मित्र' का कोई अङ्क ऐसा गया हो, जो ी दृष्टि से न गुजरा हो। जब मैं हिन्दी की चतुर्थ ा में पढ़ता था तो मेरे ग्राम बरना (एटा) आर्य ाज के मंत्री श्री पं० रामचन्द्र शर्मा 'महाशय जी' के पास 'मित्र' आता था, और उनसे मांग कर मित्र का पढ़ना (आदि से अन्त तक अक्षरशः पढ़ जाना) मेरा साप्ताहिक कार्य था। यद्यपि तब मैं पूरे तौर पर उसे समझ नहीं पाता था, फिर भी आर्य सामाजिक क्षेत्र में मेरा प्रवेश और परिचय कराने में सबसे बड़ा हाथ मेरे इस "मित्र" का ही रहा है। जिसका मैं चिर ऋणी रहूँगा।

आगे जब मैं एक गवर्नमेंट हाई स्कूल का विद्यार्थी बना तो इस "मित्र" की मित्रता पर संकट आने आरम्भ हुए। मैंने अपने निजी कार्य में से पैसे बचा कर मित्र का मँगाना आरंभ किया तो हमारे हैड मास्टर साहब जो सनातनी विचारों के थे, मुझे शंका की दृष्टि से देखने लगे और एक दिन तो मुझे बुलाकर कह ही दिया "तुम 'आर्य मित्र' स्कूल के पते पर नहीं मंगा सकते"। उस समय मैंने "मित्र" को एक दूसरे ग्रामीण सज्जन के पते पर मँगाना आरंभ कर दिया लेकिन "मित्र" की मित्रता को नहीं छोड़ा। क्योंकि उसका वियोग मुझे सहन नहीं था।

मेरे आदरणीय पूज्य भाई श्री पं० हरिशंकर जी शर्मा जब "मित्र" के संपादक पद पर समासीन हुए तो उनके प्रोत्साहन पर सबसे पहले "आर्य मित्र" में ही मैंने कविता और लेख लिखना आरम्भ किया। पुराने पाठकों को स्मरण होगा कि दस वर्ष से अधिक काल तक "आर्य मित्र" में सम्पादकीय मुख्य लेख से पूर्व एक वेद मंत्र का जो पद्यानुवाद निरन्तर नियमित रूप से प्रकाशित हुआ करता था। वह मेरी ओर से ही होता था. और इस प्रकार शनैः २ समस्त सन्ध्या, हवन के मंत्रों का सारे स्वस्ति वाचन एवं शांति प्रकरण के मंत्रों का, सम्पूर्ण "आर्याभिविनय" का तथा यजुर्वेद के लगभग १० अध्यायों का एवं

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अथर्ववेद के पृथ्वी सूक्त के समस्त मंत्रों का पद्यानुवाद "मित्र" में प्रकाशित हो चुका है। इस प्रकार मेरा विचार सम्पूर्ण यजुर्वेद को पद्यानुवाद के रूप में कर डालने का था और उसमें बहुत कुछ हो भी चुका है। इस सब 'देवस्य पश्य काव्यं' का श्रेय यदि किसी को दिया जा सकता है तो अपने पुराने साथी "मित्र" को तथा उसके सम्पादकवर्य श्री पं० हरिशंकर शर्मा जी की सतत प्रेरणा और प्रोत्साहन को जिसके कारण मेरा प्रवेश साहित्यिक जगत् में हुआ। उनका "मित्र" से वियोग हो जाने पर भी मेरा "मित्र प्रेम" पूर्ववत् ही बना रहा। और किसी दशा में कभी भी मैंने 'मित्र' की मित्रता को विस्मृत नहीं किया।

आज 'मित्र' जब अपनी ६० वर्षीय हीरक-जयन्ती मना रहा है और वह भी अपने प्रमुख सम्पादक श्री पं० हरिशंकर शर्मा जी के प्र[illegible] में, तो इससे बढ़कर इसका सौभाग्य और [illegible] सकता है ?

भारत में सबसे प्रथम सन् १८१८ 'समाचार दर्पण' नाम से कलकत्ते से समा[illegible] प्रकाशित हुआ था तब से अब तक इस [illegible] की अवधि में न मालूम कितने समाचार [illegible] जन्म हुआ और कितने बिकराल काल के [illegible] समा गये। 'आर्य मित्र' का और आर्यसमाज [illegible] विशेषतः आर्य प्रतिनिधि सभा यू० पी० का [illegible] है, कि उसका मुख पत्र अनेक आर्थिक [illegible] घाटियों और आपदाओं को पार करता [illegible] अपनी समाज सेवा के ६० वर्ष पूरे कर [illegible] हमारी प्रार्थना है कि :--

हम सभी का पाठ्य प्रेरक "आर्य मित्र" सदा रहे।
ज्ञान की बिज्ञान की धारा पवित्र सदा बहे॥
साठ वर्षों से निरंतर जो चला सङ्कट सहे।
वह अमर हो "मित्र" सारे विश्व का आशिष गहे॥

'सूर्य'

अपने शत्रु के लिये अपनी भट्टी को इतना गरम न कर कि वह तुझे ही भून कर खा जावे।

--शेक्सपीयर

× × ×

जात-पांत हिन्दू धर्म का सबसे बड़ा शत्रु है यही हमारे वैमनस्य का मूल कारण है।

--लाला लाजपतराय

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पत्रकारिता एक पवित्र सेवा है

[आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री]

मुझे यह जान कर अपार हर्ष हुआ कि आर्यमित्र जैसा चातुर्दिक सेवा करने वाला अत्यन्त पत्र अपने साठ वर्ष पूरे करके हीरक जयन्ती मनाने जा रहा है।

हिन्दी भाषा का ज्यों ज्यों विकास होता गया पत्रकारिता की भूमिका भी त्यों त्यों जमनी प्रारंभ हुयी थी। हिन्दी भाषा में सर्व प्रथम पत्र "उदन्त मार्तण्ड" निकला था। हिन्दी पत्रकारिता के नेर्माण युग, इससे प्रारंभ होकर कलकत्ता की उच्च पत्रकार-कला तक के समय को अन्तर्गत समेटता है। हिन्दी पत्रकारिता का उज्ज्वल इतिहास सामने खड़ा हो जाता है हमारे समक्ष समाचार पत्रों और सामयिकों ग्रह की सूची आजाती है। इस संग्रह को देख अनेक तथ्यों पर प्रकाश पड़ता है। भूतकाल ध्ययन से पता चलता है कि पत्रकारिता एक न था। अनेक पत्रकारों ने इसे इसी रूप में ाया। समय था जब हिन्दी पत्रकारिता का आदेश, सन्देश और आदर्श से युक्त था। वर्तमान युग टैकनालोजी और उद्योग का है। प्रकृतिवाद की सबसे बड़ी देन यह है कि मानव की कीमत घट गयो है और प्राकृतिक त्रों की बढ़ गयी है। शोषण इस वाद की महान् उपज है। शोषण ने सभी क्षेत्रों पर प्रभाव रखा है। जहाँ पत्र आदर्श के प्रचार के लिए थे आज वे उद्योग बन गये हैं। उद्योग बनने के साथ साथ गन्दी राजनीति स गयी है। पत्र जब उद्योग बन गया तो है कि वह अर्थोपार्जन का साधन बनाया जावे। संपादक लेखक कष्ट सहन करते हैं परन्तु उद्योगपति कार में घूमता और आनन्द उड़ाता है। उद्योग में स्पर्धा भी होती है और उसी का परिणाम है छोटे पत्रों को आज स्थान नहीं जब कि कार्य वे बड़े पत्रों से अच्छा करते हैं।

वर्तमान समय में सभ्यता का अर्थ भी अपना एक नया ही बन गया है। बड़े-बड़े यंत्र, गगन-चुम्बी इमारतें, लम्बी चौड़ी सड़कें, सिनेमा, थियेटर और व्यभिचार इसके अर्थ हो रहे हैं। पत्रकारिता भी आज आदर्श, सन्देश, लोककल्याण साहित्य प्रचार के उद्देश्य को छोड़ती हुई कल, बल और छल के अंचल में अपने कलेवर को छिपा रही है।

हिन्दी की पत्रकारिता का इतिवृत्त १८२६ से प्रारंभ होता है। १९३६ तक इसका प्रथम युग था। बाद में १९३६ से १९४६ तक इसका द्वितीय युग रहा। इसके तीसरे युग में तो एक ऐसी धारा बह निकली है कि वह सभी कुछ बहा कर लेजाना चाहती है और अपनी गति को स्वच्छन्द बनाना चाहती है। अगर यह स्वच्छन्दता चलती रहेगी तो पत्रकारिता किस स्थान पर पहुँचेगी कहा नहीं जा सकता।

यह एक निश्चित सी बात है कि पत्रकारिता एक कारीगरी है। यह एक कलात्मक एवं रचनात्मक प्रयास है। इसका काम साहित्य सेवा, लोककल्याण के साधनों का पैदा करना और जन जागरण के लिए विचारधारायें प्रस्तुत करना है। इसमें भूत उद्बुद्ध, वर्तमान प्रतिमूर्त्त और भविष्य स्फूर्त्त है। सहयोग, सद्भाव और सहिष्णुता

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

की भावना से यह लोकहित का साधन बनती है। यह एक ऐसी समन्वयात्मक कृति है कि इसमें भौतिकता और आदर्शवादिता का समन्वय होना चाहिए। यद्यपि पत्रकारिता में आज तक के अनुभव यह बतलाते हैं कि यह पेशा भी रद्दी और मिशन भी, परन्तु मिशन ने पेशे पर अपना ऊँचा प्रभाव रखा था और वही हरएक अङ्ग में फड़क रहा था।

वर्तमान उथल-पुथल को देखते हुए आगे के लिये पत्रकारिता के आदर्शों की रक्षा करना कर्त्तव्य-सा हो गया है। पत्रकारों को अब इधर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। जिस प्रकार मानवता भीड़ का विषय बनकर अपने मूल्य को खोती जा रही है—यदि यही द्रुत गति चालू रही तो संसार की क्या स्थिति होगी, कहा नहीं जा सकता। पत्रकारों का उत्तरदायित्व इस लिए अधिक बढ़ गया है। पत्रकारिता की प्रकृति में सहकार, सहयोग और आदर्श को प्रमुखता देने की आवश्यकता है। नैतिकता और नागरिका के परिष्कार के हेतु इसे प्रगतिशील होना चाहिए। यह कार्य जहाँ विचारक, व्यवस्थापक, पूँजी और श्रम तथा साधन और साधना में निकट सामंजस्य का भाव ला[illegible] वहाँ शोषण तथा शासन, नियन्त्रण और [illegible] तथा प्रभाव और प्रवाह से मुक्त रह स[illegible] पत्रकारिता के उदात्त भविष्य का निर्मा[illegible] और प्राचीन आदर्श को कायम रखने तथा [illegible] वर्धमान रहने के लिये यह आवश्यक है [illegible] को नहीं मन्त्रों को और तन्त्रों को नहीं म[illegible] महत्त्व प्रदान किया जावे। इससे [illegible] अपेक्षा भला करने की भावना बढ़ेगी। पत्र[illegible] के पूरक सभी अङ्गों का ध्यान रखना पड़[illegible] सभी से आत्मीयता रखनी पड़ेगी। यदि पत्र[illegible] जैसा माना जाता है कोई प्रशस्त कर्म है [illegible] मानवता के धर्म को तो स्थान होना ही [illegible] साथ ही सत्य के मर्म को भी इसके अञ्चल [illegible] होना चाहिए। सत्य में प्राची और प्रती[illegible] कोई भेद नहीं। परन्तु किस प्रकार वह [illegible] किया जावे कि उसका स्वरूप नष्ट न हो [illegible] जनकल्याण का हेतु बने—यह एक कला [illegible] चातुरी है और है एक महान् कौशल। इस [illegible] की रक्षा करते हुये ही पत्रकारिता अपने [illegible] को पूरा कर सकेगी।

रत्न-कण

दुनिया में कोई ताकत नहीं जो ऊँचे, सच्चे, सादे जीवन के असर को कम करदे। —बुकर टी. वाशिंगटन

× × × ×

ऐसा कोई बड़ा आदमी कभी कोई नहीं हुआ जो सदाचारी न हो। —फ्रैंकलिन

× × × ×

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वेद-प्रचार का कार्य

[डा० मंगलदेवजी शास्त्री, बनारस]

★

आर्य समाज के उद्देश्य की दृष्टि से वेद-प्रचार का कार्य अपना विशेष महत्त्व रखता है। जहाँ तक हमको ज्ञात है कि इस कार्य के लिए भारत वर्ष की प्रत्येक आर्य प्रतिनिधि सभा में एक विशेष विभाग रखा गया है। उपदेशकों का सम्बन्ध प्रायः इसी विभाग से होता है। हमें स्वयं इस विभाग के उद्देश्यों और कार्य पद्धति से प्रायः परिचय नहीं हैं, इस लिए इसके विषय में कुछ कहना अनधिकार चेष्टा होगी। तो भी जिनका इस विभाग से सम्बन्ध है, वे इस पर विचार करके देखें कि इस विभाग के द्वारा आर्य समाजियों में या उनसे बाहर वस्तुतः 'वेदों' का प्रचार कितना और किस रूप में होता है। क्या इस विभाग के कार्य-कर्त्ताओं की नियुक्ति के संबंध में योग्यता विषयक कोई ऐसे प्रतिबन्ध रखे जाते हैं, जिनके कारण उनको किसी भी अंश में वेदों का ज्ञाता होना आवश्यक हो ?

जो हो, सामान्य जनता की भावना तो यही है कि, आर्यसमाज के प्रचार में 'नेति नेति' के रूप में खण्डन और आक्षेप की मात्रा जितनी होती है, उतनी मण्डन या स्वरूप प्रतिपादन की नहीं।

यहाँ हम एक दो प्रश्नों को जिज्ञासा के भाव से आपके सामने रखना चाहते हैं, क्योंकि वेद-प्रचार की वर्तमान पद्धति से उनका विशेष सम्बन्ध है। पहला प्रश्न यह है कि वास्तविक सार्वकालीन सार्वभौम धर्म का तत्कालीन तथा तत्तदेशीय धार्मिक संप्रदायों के साथ कैसा सम्बन्ध होना चाहिये। क्या उनमें परस्पर विरोध का भाव स्वाभाविक या आवश्यक या युक्ति-सङ्गत भी है ? या उनका पारस्परिक संबन्ध पोष्य-पोषक का होना चाहिए या हो सकता है ? सूर्य और दीपक के या एक नदी और नहर के परस्पर सम्बन्ध से इस पर कुछ प्रकाश पड़ सकता है।

आज कल सभ्य जगत् में कुछ न कुछ कार्य या प्रचार सार्वभौम मानवता के रूप में होता रहता है, जैसे रोगियों की परिचर्या, भयङ्कर रोगों की चिकित्सा, शिक्षा और कला का विकास आदि। हम देखते हैं कि सब देश यथा शक्ति ऐसे कार्यों में सहयोग देते हैं और उनका हृदय से स्वागत करते हैं। प्रश्न यह है कि क्या इसी प्रकार वास्तविक सार्वभौम धर्म के प्रति सम्प्रदायों की सद्भावना की प्रवृत्ति असंभव है ? यदि नहीं तो प्रश्न होता है कि क्या हमारे वेद प्रचार की वर्तमान पद्धति में कुछ परिवर्तन अपेक्षित हैं या नहीं ?

दूसरा प्रश्न यह है कि सार्वभौम धर्म का किसी देश-विशेष की राजनीति या जातीयता के प्रश्न से कितना घनिष्ठ संबन्ध होना चाहिए था अनिवार्य है ? देशों की अपनी अपनी राजनीति, जातीयता तथा संस्कृति होती है। सार्वभौम धर्म का संबन्ध तो स्वभावतः सब देशों से होता है। ऐसी दशा में सार्वभौम धर्म का अपना विशुद्ध रूप क्या हैं, इस का निर्णय करना अत्यन्त दुष्कर हो जाता है, तो भी उस निर्णय की आवश्यकता होती है, नहीं तो उस सार्वभौम धर्म की सार्वभौमता ही नष्ट हो जाती है, या वह बिना अत्याचार के दूसरों पर नहीं लादा जा सकता है। सौभाग्य से भारत वर्ष अब स्वतन्त्र है। उसकी कीर्ति और गौरव संसार में बढ़ रहे हैं। अब समय आगया है कि आर्यसमाज गंभीर भाव से ऊपर के प्रश्न पर विचार करे, और देखे कि उसकी कार्य पद्धति से

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कहाँ तक उसका समाधान होता है। वेद-प्रचार विभाग का इस प्रश्न से घनिष्ठ संबन्ध है।

हमारा तो विश्वास है कि वैदिक धर्म स्वभाव से ही सार्वभौम धर्म है। वह मनुष्य को नैराश्य, अकर्मण्यता और अज्ञान के अन्धकार से निकाल कर एक ऐसे उज्ज्वल और भास्कर प्रकाश में लाना चाहता है, जहाँ उसके सामने सर्वतोमुखी पूर्ण विकास और उन्नति का स्पष्ट मार्ग दिखलाई देता है। इस मार्ग का सफल यात्री बनने के लिए मनुष्य को सब प्रकार के ज्ञान की वृद्धि करते हुए उसके प्रकाश में अपने को अन्दर और बाहर से स्वस्थ, सदाचारी, संयमी बनाना आवश्यक है। दूसरे शब्दों में, एक सुन्दर सुगन्धित पुष्प के समान मानव-जीवन को स्वस्थ, सुन्दर, निष्पाप और लोक-कल्याण कारी बनाना ही वैदिक धर्म का प्रधान उद्देश्य है।

असतो मा सद्गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय। मृत्योर्माऽमृतं गमय॥ कृधी न ऊर्ध्वाञ्चरथाय जीव से॥ उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम्। देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम्॥ भद्रं जीवन्तो जरणामशीमहि॥ विश्वं चिदायुर्जीवसे॥ यद्भद्रं तन्न आ सुव॥ बुध्येम शरदः शतम्। रोहेम शरदःशतम्॥ मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे॥

इस प्रकार की उदात्त भावनाओं की किस देश, जाति और संप्रदाय को आवश्यकता नहीं हैं? सद्भावना से योग्य व्यक्तियों के द्वारा किये गये ऐसे वेद-प्रचार का कौन स्वागत नहीं करेगा?

वैदिक अनुसंधान मंदिर की आवश्यकता।

ऊपर हमने जो कुछ कहा है, उससे यह स्पष्ट है, कि वेद-विषयक साहित्यिक कार्य जितना आर्यसमाज को करना चाहिए उसका अभी तक एक साधारण अंश भी वह नहीं कर पाया। निश्चय ही वर्तमान स्थिति से उसे संतोष नहीं चाहिए। साथ ही इस दिशा में सफलता के उसे विशेष उद्योग करना पड़ेगा। हमारे में आर्यसमाजों को सुसंगठित रूप में (सार्व आर्य-प्रतिनिधि सभा के द्वारा, अथवा अन्य एक वैदिक अनुसन्धान मंदिर की स्थापना में या अन्यत्र उक्त कार्य के लिए शीघ्र ही चाहिए। वैदिक स्वाध्याय तथा अनुसन्धान दृष्टि से आवश्यक एक अद्वितीय पुस्तकालय साथ-साथ, इस अनुसन्धान-मन्दिर में एक वस्थित संपादन तथा प्रकाशन-विभाग की आवश्यकता होगी। क्या आर्यसमाज में इस को उठाने की क्षमता है? वास्तव में यह वैदिक धर्म विषयक धारणाओं की वास्तवि की परीक्षा का प्रश्न है। विभिन्न संप्रदायों ने एक देव-मन्दिर के खड़ा करने में करोड़ों रुपयों व्यय किया है। क्या आर्यसमाज जो सार्व वैदिक धर्म का गर्व करता है, उस धर्म के एक साहित्यिक 'वेद-मंदिर' के लिये कुछ लाख संग्रहीत नहीं कर सकता? फिर आर्यसमाज विद्या और ज्ञान के प्रचार की वास्तविक भावन इस कार्य को उठावे तो, न केवल सारा देश, सरकार भी इस कार्य में अवश्य उसका बटावेगी। महर्षि के गुरु विरजानन्द जी के नाम दयानन्द दीक्षा शताब्दी की स्मृति में विरजा वैदिक अनुसन्धान भवन की स्थापना एक उ और सामयिक पग है। आशा है उसके द्वारा सन्धान की दिशा में प्रगति होगी।

आवश्यकता इस बात की है, कि यह प्र केवल मंत्रों के घोर गर्जन से न हो, उसके आचार, विचार और शोध भी हो।

शीघ्र या देर में आर्यसमाज को अन्तर्व द्वारा उपर्युक्त दृष्टिकोण से विचार करना पड़ेग

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वैदिक-विनय

(डा० श्री मुंशीरामजी शर्मा, एम. ए. पीएच. डी.)

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव,यद् भद्रं तन्न आसुव ।

दिव्य गुण धारी जग के जनक, किन्तु जो करे आत्म कल्याण,
दुरित दल सकल भगा दो दूर । उसी को भर दो प्रभु भरपूर ॥

ओम् अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् ।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम ॥

सुपथपर प्रभु ! हमको ले चलो, पुण्य की प्रभा चमकने लगे,
प्राप्त हो संतत ध्रुव कल्याण । पाप का हो न लेश भी शेष ।
सकल कृतियाँ हैं तुमको विदित, भक्ति में भर कर तुमको नमें,
पाप दल को करदो म्रियमाण ॥ सहस्रों बार परम प्राणेश ॥

ओम् असतो मा सद् गमय, तमसो म ज्योतिर्गमय । मृत्योर्माऽमृतं गमय ॥

असत्से सत् ; तमसे नव ज्योति, हमें प्रतिपल प्रभुवर ! ले चलो ,
मृत्युसे अमृत तत्व की ओर । दिखाओ अरुणा करुणा कोर ॥

ओम् उप त्वाग्ने दिवे दिवे दोषावस्तर्धिया वयम् । नमो भरन्त एमसि ॥

दिवस के प्रथम , रात्रि से पूर्व , आ रहे हैं प्रति दिन ले भेंट ,
भक्ति से स्वार्थ त्याग के साथ । तुम्हारी चरण शरण में नाथ ॥

ओम् त्वं हि नो पिता वसो त्वं माता शतक्रतो बभूविथ । अथाते सुम्नमीमहे ॥

हमारे जनक , हमारी जननि ! तुम्हारी स्तुति में रत करबद्ध ,
तुम्हीं हो, हे सुरेन्द्र सुख धाम । करें हम बाल विनीत प्रणाम ॥

ओम् मा प्रगाम पथो वयं मा यज्ञादिन्द्र सोमिनः । मान्तः स्थुर्नो अरातयः ॥

चलें हम कभी न सत्पथ छोड़ , हमारे अन्दर रहें न शत्रु ,
विभवयुत हो कर तजें न त्याग । सुकृत में रहे हमारा भाग ॥

ओम् इन्द्र आशाभ्यस्परि सर्वाभ्यो अभयं करत । जेताशत्रून् विचर्षणिः ॥

सर्वदर्शक प्रभु खल बल दलन , दिशा विदिशाओं में सर्वत्र ,
विभव सम्पन्न इन्द्र अधिराज । हमें कर दो निर्भय निर्व्याज ॥

ओम् आ त्वा रम्भं न जिघ्रयो ररम्भा शवसस्पते । उष्मसि त्वा सधस्थ आ ॥

निलिख बल अधिपति ! मैंने आज , तुम्हारा अवलम्बन है लिया ,
वृद्ध की आश्रय, लकुटि समान । शरण में रक्खो हे भगवान् ॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

विचित्र शैवमत

[प्रो० विष्णुदयाल एम० ए०]

छः दशक लगातार महर्षि दयानन्द के एक-एक वचन की व्याख्या करने वाले "आर्य्य मित्र" ने हमारे पावन ग्रन्थ वेद उद्धार करने का अश्रान्त परिश्रम किया है।

कदाचित् उसकी हीरक जयन्ती के शुभ अवसर पर पाठक जानना चाहेंगे कि क्या किसी और भारतीय ने आर्य्य समाज के विचार से मिलता-जुलता विचार प्रकट किया है या नहीं ऐसे ही पाठकों के कुतूहल की तृप्ति के लिये यह लघु लेख लिखा गया है।

सेनाथी राजा एक दक्षिणी थे जिन्होंने विगत शती में शैवमत पर एक ग्रन्थ लिखा था। दुःख से कहना पड़ता है कि इस ग्रन्थ का किसी भी पश्चिमीय भाषा में अनुवाद न हुआ। लामेरेस नामक फ्रेंच लेखक ने अपने काम सूत्र के फ्रेंच भाषान्तर की भूमिक में राजा जी की ओर संकेत किया था। उन्होंने लिखा था कि राजा जी का मत है कि शिवकी पूजा प्राचीन कालसे होती आ रही है। शिव पूजक एकेश्वरवाद को मानते थे। यदि हम जान जायें कि ईश्वर, आत्मा और प्रकृति के अतिरिक्त और कुछ है नहीं तो हम शैवमत को समझ जायेंगे। यहाँ त्रैतवाद उसी रूप में पेश किया गया है जिस रूप में स्वामीजी ने उसे उपस्थित किया है। आगे चल कर राजा जी लिखते हैं कि शिव सर्वशक्तिमान् अचल दयालु और सर्वज्ञ हैं। ये विश्व को पूरते हैं, पर उससे विभिन्न हैं। प्रकृति अमर है और उसे चलाने वाले शिव हैं। आत्मा भी अमर है किन्तु वह ईश्वर नहीं है आत्मा के साथ रहते हैं जो उनके समान नहीं है। आत्मा परमात्मा या ईश्वर या सान्निध्य में रहता है, यह तब प्रकट होता है मानव अपनी इन्द्रियों को वशीभूत कर पाते शिव की कृपा से ही ऐसा होता है।

ईश्वर एक है। जो कहा करते हैं कि ईश्वर हैं वे रौरव नरक में जायेंगे।

ईश्वरीय ज्ञान एक है। मनुष्य मात्र के लि ही नैतिक मार्ग है।

प्रकाण्ड पण्डितों को ऋषि के निर्वाण के खोज करते हुए स्कन्द स्वामी विरचित उन्हें प्राप्त हुआ और विद्वानों को अ हर्ष हुआ।

ऋषि दयानन्द पक्षपात रहित थे, अतः जो लिखा संसार के कल्याणार्थ ही लिखा। हमें मालुम हुआ कि उनकी ही भाँति औरों ने वेद किया हमारे आनन्द की सीमा न रही।

वह क्या मानने लायक नहीं है कि दक्षिण में एक और फ्रांसीसी लेखक जाकोल्यो में जी से अपरिचित होने पर भी "भारत में बा नामक ग्रन्थ रचा जिस में वेदों की प्रशंसा है दूसरी ओर स्वयं एक भारतीय ने लोगों को कि भारतीय का सत्य धर्म वह है जो बतलाता ईश्वर एक है, इत्यादि।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ाश्वराज्य का संविधान 'वेद' [ले०—पं० श्री पाद दामोदर, सातवलेकर]

वेद विश्वराज्य का संविधानग्रन्थ है। अतः वह संविधान का ग्रन्थ है ऐसा समझ कर ही पढ़ना ाहिये। इस विश्वराज्य का अध्यक्ष 'आत्मा' है। सके नाम 'आत्मा, परमात्मा, ब्रह्म, परब्रह्म, ईश, श्वर, परमेश्वर' आदि अनेक हैं।

ईशावास्यं इदं सर्वं यत् किंच जगत्यां जगत्।

यजु ४०।१

'जो कुछ इस विश्व में है उस सब पर प्रभुत्व ह ईश रखता है।' इसके गुण ये हैं :—

पर्यगात् शुक्रं अकायं अव्रणं अस्नाविरं शुद्धं ापापविद्धम्। कविः मनीषी परिभूः स्वयंभूः थातथ्यतः अर्थात् व्यदधात् शाश्वतीभ्यः समाभ्यः॥

यजु० ४०।८

'वह ईश्वर-इस विश्वराज्य का अध्यक्ष चारों ओर अपना शासन एक सा चलाता है, वह वीर्यवान्, व्रण रहित है, स्नायु रहित है, शुद्ध है, अशरीरी है, ज्ञानी, मनन शील, सर्वव्यापक, और स्वयं शासक है, शाश्वत काल से जो जैसा करना चाहिये वैसा वह करता रहता है।'

राज्य का अध्यक्ष ऐसा होना चाहिये। शुद्धाचरणी, स्वयंशक्तिमान्, निष्पाप होकर जो कार्य जैसा करना चाहिये वह वैसा ही करे। इसमें न्यून या अधिक न करे। तथा—

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।

यजु० ४०।१७

'सुवर्ण से सत्य का मुख ढंका रहता है' यह बात वह जाने और अपने राष्ट्र में रिश्वतखोरी होने न दे। तथा—

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेत् शतं समाः।

यजु ४०।२

'उत्तम कर्म करते हुए सौ वर्ष जीने की इच्छा धारण करें' ऐसी प्रजा की बुद्धि हो ऐसा वह करे।

अकामो धीरो अमृतः स्वयंभू
रसेन तृप्तो न कुतश्चनोनः।
तमेव विद्वान् न बिभीत मृत्योः
आत्मानं धीरं अजरं युवानम्॥

अथर्व १०।८।४४

'वह विश्वराज्य का अध्यक्ष निष्काम, धैर्यवान्, नीरोग, स्वसामर्थ्य युक्त, रस से संतुष्ट, किसी जगह न्यून' नहीं धीर बुद्धिमान्, जरा रहित, नित्य युवा ऐसा हो, इसका ज्ञान होने से मृत्यु का भय दूर होता है।'

विश्वराज्य के वैदिक अध्यक्ष ऐसे हैं। अपने अध्यक्ष के लिये यह आदर्श गुण हैं।

युद्ध मन्त्री :—

हमारे विश्वराज्य के युद्ध मन्त्री 'इन्द्र' हैं। ये युद्ध कला में निपुण, कभी पराभूत न होने वाले, सदा विजयी, उत्साही हैं इनके गुण देखिये—

असमं क्षत्रं असमा मनीषा प्र
सोमपा अपसा सन्तु नेमे।
ये त इन्द्र ददुषो वर्धयन्ति
महि क्षत्रं स्थविरं वृष्ण्यं च॥

ऋग्वेद १।५४।८

'(असमं क्षत्रं) इन्द्र का क्षात्रतेज असीम है, (असमा मनीषा) उसकी बुद्धि असीम है। (नेमे अपसा प्रसन्तु) ये याजक अपने कर्म से उत्कर्ष को प्राप्त हों। जो लोग तेरी बधाई करते हैं वे (महि स्थविरं क्षत्रं) बड़ा विशाल क्षात्र तेज धारण करते हैं।'

इस इन्द्र का क्षात्र तेज और बुद्धिवैभव सबसे प्रभावशाली है। और देखिये—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सत्यमित् तन्न त्वावां अन्यो
अस्तीन्द्र देवो न मर्त्यो ज्यायान् ।
अहन्नहिं परिशयानमर्णो
ऽवासृजो अपो अच्छा समुद्रम् ॥

ऋ० ६।३०।४

'यह सत्य है कि हे इन्द्र ! तेरे जैसा कोई दूसरा देव नहीं है और मनुष्य भी नहीं है। तेरे से अधिक भी कोई नहीं है। जल प्रवाह का प्रतिबंध करने वाले शत्रु को, पराभूत करके तुम जलप्रवाहों को समुद्र तक जाने देते हो, इस प्रकार इन्द्र प्रभावशाली शूर वीर है।

जन हित के लिये युद्धः—

इन्द्र जो युद्ध करता है वह जनों का हित करने का ही उद्देश्य मन में धारण करके करता है, देखिये—

'स इन्महानि समिथानि मज्मना कृणोति युध्म ओजसा जनेभ्यः। अधा च न श्रद्दधाति त्विषीमता इन्द्राय वज्रं निघनिघ्नते वधम् ॥

ऋ० १।५५।५

(सः युध्मः) वह इन्द्र युद्ध करने वाला बड़ा वीर है। वह वीर (जनेभ्यः) लोगों का हित करने के लिये हो (ओजसा महानि समिथानि कृणोति) अपने सामर्थ्य से बड़े युद्ध करता है। इसलिये सब लोग (वधं वज्रं निघनिघ्नते) शत्रुपर मारक शस्त्रका प्रयोग करने वाले (त्विषीमते इन्द्राय) तेजस्वी इन्द्र के विषय में (श्रद् दधाति) श्रद्धा रखते हैं।

कपटी शत्रु का नाशः—

गुहा हितं गुह्यं गूढमप्सु अपीवृतं मायिनं क्षियन्तम्
उतो अपो द्यां तस्तभ्वांसं अहन्नहिं शूरवीर्येण ॥

ऋ० २।११।५

'(गुहा हितं) गुहा में गुह्य रीति से रहने वाले (गुह्यं) गुह्य' (अप्सु गूढं) पानी में छिपकर रहनेवाले (अपीवृतं मायिनं) कपटी शत्रुको (क्षयन्तं) अपने किले में बंद रखने वाले (द्यां अपः तस्तभ्वांसं) जलों को बंद रखने वाले (अहिं) शत्र को (वीर्येण अहन्) पराक्रम से नष्ट करते हैं।' इन्द्र के ऐसे पराक्रम

शत्रु के किलों का नाशः—

इन्द्र शत्रु के किलों का नाश करता है इस में देखियेः-

पुरां भिन्दुर्युवा कविरमितौजा अजायत
इन्द्रो विश्वस्य कर्मणो धर्ता वज्री पुरुष्टुतः

ऋ० १।

(पुरां भिन्दुः) शत्रु के किलों का नाश करत (युवा कविः) तरुण ज्ञानी (अमित-ओजाः) मित सामर्थ्यवान्' (वज्री) वज्र धारण करने (विश्वस्य कर्मणः धर्ता) सब शूर कर्मों का करने (पुरुष्टुतः) बहुत प्रशंसित ऐसा इन्द्र है।

इस तरह इन्द्र के मंत्रों में हम विश्वराज्य मंत्री का चित्र देखते हैं। अब इन्द्र के साथ वाले सैनिकों का वर्णन देखिये—

मरुत् देवता के रूप में 'सैनिकः—

मरुत् (मर् + उत्) मरने तक उठकर लड़ने सैनिकों का वर्णन मरुत् देवता के मंत्रों में देखि

गणशो हि मरुतः । ताण्डव० १६।१४।२
सप्त हि मारुतो गणाः । श०ब्रा०५।४।३।१७
सप्त गणा वै मरुतः ।तै० ब्रा० १।६।२।३
सप्त सप्त हि मारुता गणाः । वा० यजु० १
मारुतः सप्त कपालः (पुरोडाशः) ।ताँ-ब्रा० २१।१०।२३

'मरुत् वीर समुदाय में रहते हैं। सात सात मरुतों का गण होता है। मरुतों को उपहार दें तो भी वह सात सात कटोरियों में देना क्योंकि वे सात सातों के समुदायों में आते हैं

मरुत् वीरों की कतार सात वीरों की होती

पार्श्व रक्षक	मरुतों का गण	पार्श्व रक्ष
०	००००००	०
०	००००००	०
०	००००००	०
०	००००००	०
०	००००००	०
०	००००००	०
०	००००००	०

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इस तरह मरुतों के गणों में सैनिक होते हैं। त सातों की एक पंक्ति होती होती है ऐसी सात क्तियाँ होती हैं। इनमें (७×७=४९) मरुत् वीर ते हैं।

प्रत्येक पंक्ति में दोनों ओर एक एक *'पार्श्वरक्षक'* ता है। उसका कर्त्तव्य होता है कि उस ओर से त्रु आया हो तो संरक्षण करे। ये पार्श्वरक्षक सात क्तियों के दोनों ओर मिलकर १४ होते हैं। अर्थात् +१४ मिलकर ६३ मरुत वीरों का एक गण होता । 'गण' का अर्थ गिने हुए वीर जहाँ रहते हैं।

गण, व्रात और शर्ध ऐसे तीन विभाग होते हैं। ण में ६३ वीर रहते हैं, व्रात में (६३×७=)४४१ निक होते हैं और शर्ध में (४४१×७=)३०८७ ते हैं। इसके आगे वाहिनी आदि का प्रभाव इससे ात गुणा रहता है।

लड़ने का सामर्थ्यः—

वीर मरुतों का लड़ने का सामर्थ्य विलक्षण र्शाया गया है। धूम्र अस्त्र के इनके प्रयोगों के विषय ं कहा है --

असौ या सेना मरुतः परेषां
अस्मानेत्योजसा स्पर्धमाना।
तां विध्यत तमसापव्रतेन
यथैषामन्यो अन्यं न जानात् ॥ अथर्व ३।२

हे मरुतो! यह जो शत्रु की सेना स्पर्धा करती हुई हमारे ऊपर वेग से आ रही हैं (तां अपव्रतेन तमसा विध्यत) उस सेना को घबराहट करने वाले तमसास्त्र से बींधो, जिससे इनमें से कोई किसी को जान न सके' इस तरह ये शत्रु घबरा जायँ।

ऐसे शस्त्र मरुतों के पास होने चाहिये। जिससे सब शत्रु इनसे डरते रहें, देखिये--

शूरा इवेद् युयुधयो न जग्मयः
श्रवस्यवो न पृतनासु वेतिरे।
भयन्ते विश्वा भुवना मरुद्भ्यः
राजानइवत्थेषसंदृशोरमः। ऋ०१।८५।८

'ये शूरों के समान युद्ध करने वाले, शत्रु पर आक्रमण करने वाले, यश की इच्छा करने वाले वीरों के समान ये वीर युद्धों में शौर्य दिखाते हैं। ये राजाओं के समान क्रोध से उत्साही दीखने वाले नेता वीर हैं। इस लिये सब भुवन इनसे डरते हैं।'

ऐसा मरुतोंका वर्णन वेद में है। मरुतोंकी पद्धति के सैन्य को (Regular Army) नियमित सैन्य कहते हैं। यद्यपि पेशवाओं के राज्य से १२ लाख रु० वेद की सुरक्षा के लिये प्रतिवर्ष खर्च होते थे, तथापि भारतीय सब राजाओं का सैन्य (Irregular) अनियमित था। यूरोपीयन यहाँ आये, उन्होंने नियमित सैन्य को यहाँ तैयार किया और हमें पराजित किया। वेद का नियमित सैन्य करने का उपदेश किसी ने पालन नहीं किया और इस कारण हम पराभूत हुए। वेद का आदेश न पालन करने से हमारा यह पराभव हुआ। हमारे घर में वेद हैं, उसकी रक्षा के लिये लाखों रु० खर्च हो रहे हैं। पर वेद के आदेशानुसार हमारा सैन्य नहीं। इस से सब भारतराष्ट्र पराभूत होता है! यह एक आश्चर्य की बात है!!

धर्म मन्त्रीः—

वैदिक विश्वराज्य के 'धर्म मन्त्री' अग्निदेव हैं। इसलिये उनका नाम 'जातवेदाः' है। *'वैश्वानरः'* भी इनका नाम है। सब मानवों के ये नेता हैं।

सार्वजनिक हित अपने धर्म प्रचार से करने के कारण इनको *'विश्वचर्षणिः, विश्वकृष्टिः, विश्वायुः, विश्वतन्यः, विश्वमानुषः, विश्वानरः, सर्व पूरुषः,* इत्यादि नाम प्राप्त हुए हैं।

वैश्वानर ज्योतिरिद् आर्याय। ऋ० १।५७।२

'हे वैश्वानर अग्ने! तू आर्यों के लिये प्रकाश देता है।

अग्निं ईडे पुरोहितं। ऋ० १।१।१

'मैं पुरोहित अग्नि की प्रशंसा गाता हूँ।' पूर्ण हित करने वाला होने से यह पुरोहित कहलाता है।

प्रजा का रक्षकः—

विश्वासु दिक्षु अवितेव हव्यो भवद्वस्तुर्ऋषूणाम् ॥
ऋ०८।७१।१५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

'यह अग्नि सब प्रजाओं का रक्षक है इसलिये सब लोग इसकी प्रशंसा गाते हैं। तथा—

यज्ञस्य केतुं प्रथमं पुरोहितमग्निं। ऋ० ५।११।२

यह अग्नि यज्ञ का झण्डा है, पहला पुरोहित करके वर्णन करने योग्य है।

इस तरह अग्नि विश्वराज्य के धर्म मंत्री हैं, इस लिये उनके नामों में 'पुरोहित, ऋत्विज्, होता' आदि नाम आते हैं।

स्वास्थ्य मन्त्री 'अश्विनौ' :—

विश्वराज्य के स्वास्थ्य मंत्री 'अश्विनौ' हैं। इनमें से एक शस्त्रवैद्य है और दूसरा औषधियों से चिकित्सा करने वाला है। ये दोनों मिलकर स्वास्थ्य विभाग का कार्य करते हैं।

अश्विनोः असनं रथं अनश्वं। ऋ० १।१२०।१०

अश्विदेवों का रथ घोड़ों के बिना चलने वाला है। ये दोनों विमानों से आ जाते हैं इसलिये इनको *'दिविस्पृशौ'* कहा है।

इनके कुछ कार्य ये हैं—*'सद्यो जंघां आयसी विश्यायै प्रत्यतं* (ऋ०१।११६।१५) विश्पला को लोहे की टांग लगा दी।

च्यवानं पुनर्युवानं चक्रथुः (ऋ० १।११७।१३)—वृद्ध को तरुण बनाया।

तस्मा अक्षी नासत्या····आधत्तं (ऋ०१।११
उसकी आँखें ठीक की।

अन्धे को दृष्टि दे उसको ठीक करना, गर्भ न होता हो उसको गर्भ धारण होने योग्य गाय को दुधारू बनाना। ऐसी अनेक शक्तियाँ के अश्विनौ के वर्णनों में हैं। सबकी स्वास्थ्य दायित्व अश्विनौ पर है।

वेद में सब मिलाकर डेढ़ सौ देवताएँ हैं। ३३ वर्गों में बाँट दे। इस प्रकार ३३ देवताएँ कहा है। ये ३३ देवताएँ विश्व का राज्य चला अतः ये विश्वराज्य के मंत्री हैं। एक एक देवता चारों वेदों के मंत्र इकट्ठे करके पढ़ें, तो पता है कि विश्वराज्य के ३३ कार्यालय हैं और कार्यालय का एक एक मंत्री है जो विश्वरा अपना कार्य ठीक तरह कर रहा है।

अग्नि, वायु, जल, सूर्य, इन्द्र आदि देव विश्वराज्य के अधिकारी हैं और ये अपना कार्य आलस्य के कर रहे हैं जिससे विश्व की राज्य स्था उत्तम रीति से हो रही है।

पाठक एक एक देवता के मंत्र पढ़ें और मन्त्री का कार्य जानें। इससे सम्पूर्ण वेद विश्व का संविधान है यह ज्ञात होगा। इससे ही हम विधान सुधार सकते हैं।

जो न हटा मुख फेर, बढ़ा जीवन भर आगे,
जिसका साहस हेर, विघ्न भय संकट भागे।
सबल सत्य की हार, अनृत की जीत न होगी,
ऐसे प्रबल विचार, सहित विश्वरा जो योगी॥
उस दयानन्द ऋषि राज का, प्रकृत पाठ जनता पढ़े।
प्रभु शंकर आर्यसमाज का, वैदिक बल गौरव बढ़े॥

—महाकवि 'शंकर'

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

यानन्द की देन

[श्रीविश्व बन्धु शास्त्री एम. ए., एम. ओ. एल. (पं.), ओ. डी. ए. (फ्रां) के. टी. सी. टी. (इट.)]

ो संगति करने योग्य, साधु-स्वभाव, सज्जन हो, उसे ही आर्य समझना चाहिए। जो इसके रीत, लोकद्वेषी, अत्याचारी, कूट, छल तथा दम्भ से और अन्याय से दूषित होता है, सब प्रजाएँ दुःखी र उससे घृणा करती हैं। वह न ईश्वर-भक्त है न लोक-भक्त। वह नास्तिक, अनार्य है। उसका न धारण करना पृथ्वी माता के ऊपर दुस्सह है। न वह अपना सुधार करता है और न उस -मति, हतभाग्य से किसी और का लाभ होता है। वह लोक-परलोक-घातक शरीर छोड़ता है, तो न रोता है, न ही उसके प्रति तनिक आदर का श करता है। उसके मुर्दे पर कोई मित्र फूल नहीं ाता और न दो आंसू बहाता है। पृथ्वी अपने ार को हलका अनुभव करती है। सच्चा आर्य ार में प्रवेश करता है तो सब लोगों के समान ा हुआ ही आता है। चारों ओर बैठे हुए, हंसते , सम्बन्धियों की हंसी भी उसे हंसाने में असमर्थ ी है। परन्तु जब वही कर्मवीर बन कर शनैः शनैः नी जीवन-नौका को भवसागर से पार करता हुआ, ने जनों पर अन्तिम दृष्टि फेरता है, तो उन्हें रोता ा पाता है, और उसके अपने होठों से मुसक्यान मधुरता और नेत्रों से संतोष और प्रभु-विश्वास शान्ति बरसती है। यह है, संक्षेप से, आर्य-वन का तात्पर्य।

प्रत्येक व्यक्ति को परमात्मा ऐसा शुद्ध, पवित्र तथा लेष्ठ जीवन धारण करने का सामर्थ्य दे रहे हैं, न्तु इस शक्ति का विकास सबमें एक समान नहीं या जाता। हमारे पूर्वज आत्मिक बल के धनी होते । इसका प्रभाव उनकी समग्र रीति-नीति पर दिखाई ा था, जहाँ व्यक्ति समर्थ होता है, वहाँ जातीय ोवन भी सुगठित और दृढ़ हो जाता है। इस कारण उस समय भारतीय जनता के नेताओं में विचित्र चुम्बक शक्ति का विकास हो रहा था। सारी जाति सम्पर्क मात्र से दूसरों को अपने रंगमें रंग लेती थी। सहस्रों लोग विदेश से आकर हममें क्षीर-नीर-न्याय से एक रूप हो गए। कालचक्र से विचारों में भेद पैदा हुआ जातीय अभिमान तथा कुलाभिमान बढ़ता बढ़ता ऊँच और नीच का मूल कारण बना। अपने आप को हम सर्वश्रेष्ठ समझ कर दूसरों से परे रहने लगे। शनैः शनैः हमने अपने विस्तार-चक्र को इतना अन्दर खींच लिया, कि कोई विजातीय अंश अब हमारा अंग नहीं बन सकता था। सार्वभौम भाव इतना जड़ से उखड़ा कि अब हम तनिक अपराध को भी सहन करने में असमर्थ हो गए। अपने अङ्गों को भी अस्पृश्य कह कर अपने से परे हटाने लगे। अपने देश, नहीं नहीं समय आया, जब हमने ग्राम से और घर से बाहर पग धरने मात्र से अशुद्ध हो जाने का भ्रम पैदा किया। प्रभु की लीला विचित्र है। जहाँ आत्मिक विस्तार की कोई सीमा नहीं वहाँ संकोच की भी कोई अवधि नहीं।

संसार में जितने मत हैं, उनको दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। प्रथम वे, जो कपड़े फाड़-फाड़ कर फैलना चाहते हैं, जैसे बौद्ध, ईसाई तथा इस्लामी मत। दूसरे वे, जो अपनी काल्पनिक पवित्रता के नाश हो जाने के भय से दूसरों से बच-बच कर ही रहने में भलाई समझते हैं, जैसे यहूदी, पारसी तथा हिन्दू लोग। ऐतिहासिक दृष्टि से देखा जावे, तो पता चलता है कि इन दूसरे प्रकार के लोगों के संकोचात्मक स्वभाव से ही प्रथम प्रकार के मतों की उत्पत्ति हुई है! सामयिक हिन्दू मत के अन्दर, सामाजिक विषमता से उपजे हुए अन्याय तथा अत्याचार के भाव ने ही राजकुमार गौतम बुद्ध के हृदय को ठेस पहुँचाई। वे दबे हुए शूद्रों की ओर दया-दृष्टि से युक्त हो गए। और बौद्ध-धर्म को

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सार्वजनिक बना कर, समस्त भू-मण्डल में प्रचार पाने योग्य कर दिया। कुछ बौद्ध प्रभाव से प्रभावित होकर और कुछ अपने यहूदी भाइयों के संकोच से उत्तेजित होकर सैण्ट पाल ने ईसा के उपदेश को सब मनुष्य मात्र के लिए निश्चित किया।

यही नियम आज भी कार्य करता हुआ दिखाई देता है। गुरु नानक देव का सिक्ख संप्रदाय, यद्यपि विशेष रीति से दूसरे लोगों में नहीं फैला, तो भी मौलिक रूप से सब मनुष्यों को भक्ति का समान अधिकार देता है। उन्नीसवीं शताब्दी में हिन्दुओं के अन्दर इस संकोच को दूर करने के लिए कई साधन प्रकट हुए। पश्चिमी साम्राज्य के साथ ही साथ पाश्चात्य सभ्यता का भारत में प्रवेश हुआ। परमात्मा ने पाश्चात्य लोगों को ऐश्वर्य और प्रकाश दोनों दिये थे। भारतीय दीन, हीन प्रजा चकाचौंध होकर, अन्धाधुन्ध अनुकरण करने लगी। बड़े तीव्र वेग से लोग साहिब लोगों से भेंट करते, जाति बहिष्कृत होते और अपने प्राचीन धर्म से पतित हो जाते थे। इस बाढ़ को रोकने के लिए और परस्पर मेल-मिलाप को धार्मिकरूप देकर व्यवस्थित करने के लिए, बंगाल में ब्रह्म समाज की स्थापना हुई। इसी प्रकार पीछे प्रार्थनासमाज और थियासोफिकल सोसायटी की रचना हुई तथा और भी छोटे-मोटे कई दल पैदा हुए।

परन्तु सब से प्रबल और सबसे भिन्न: प्रकार का कार्य स्वामी दयानन्दजी ने किया। उन्होंने तीव्र योग-चक्षु से भारतीय जनता के रोग की परीक्षा की। उन्होंने देखा और अनुभव किया कि यह रोगी चिरकाल से शैय्या पर लेटे रहने के कारण, निरुत्साह और निश्चेतन सा हो गया है। पाचन-शक्ति के दुर्बल हो जाने से इसकी नस-नाड़ियों में विजातीत द्रव्य का दबाव पड़ रहा है। इसके मन्द-गति रुधिर-प्रवाह में, उसे बाहर फेंकने का सामर्थ्य दिखाई नहीं देता। प्रथम तो नया द्रव्य इसके भीतर घुस नहीं सकता, और यदि दैव-वशात् कभी चला भी जाता है, तो मन्दाग्नि के कारण ठीक न पच कर विष-रूप हो जाता है। इस लिए अन्दर सड़ांद पैदा हो रही है और अब यह अपने आप को ही खाए जा रहा है। अंग-प्रत्यंग सभी दुःख रहे हैं। बस, हैरानी तो यह है अब तक मरा क्यों नहीं?

वैद्यराज दयानन्द ने उक्त रोगी के एक का ठीक प्रकार से निरीक्षण करके उसके को दृढ़ करने का निश्चय किया।

स्वामी दयानन्द जी ने अनुभव हम भारतीय लोग निस्तेज और निःसत्व नित्य संकुचित होते चले जाने से हमें विस्तार करना सर्वथा अपने स्वभाव के वि होता है। छूआछूत और ऊंच-नीच के कारण, हमारे जोड़ ढीले पड़ चुके हैं इस दु दूर करने के लिए, श्री स्वामीजी ने वेद-म दूध हमको पिलाया, हमारे पूर्वजों का भानु उज्ज्वल इतिहास हमारे सम्मुख रखा। कि कोई हीन-सत्व क्यों न हो, उसे यह विश्वास कि तुम बड़े शूर-वीर हो, बस वह उठ खड़ा भारतीय जाति तो वस्तुतः सिंह-समान परा इस की कुम्भकर्णी निद्रा के खुर्राटों को ही अपेक्षित था। किसी भी जाति के पुनरु सर्वोत्कृष्ट उपाय उसे अपना पूर्व उज्ज्व इतिहास के दर्पण में दिखाना ही होता है। श्री ने इस रहस्य का खूब मनन किया और व प्रयोग किया। उनके द्वारा किए गए धर्म कारण, समस्त जाति के विचार तथा अन्तर पड़ा। एक वार तो उनके जीवन यों प्रतीत होता था कि वे बड़े विशाल, जग भूकम्प के केन्द्र बन रहे हैं। कोई होगा, जो न हिल गया हो। सहस्रों नर-नारी उनके अमृत प्रवाह में स्नान करके शुद्ध हो रहे सारा देश उनके द्वारा स्थापित आर्य स सम्मिलित नहीं हुआ, तथापि भारतीय म विचारों को ग्रहण कर चुका है। दक्षिण, म बंगाल के विद्वानों की लेखनी, यदि उनके न होते हुए भी, प्राचीन भारत के गीत ऋषि-मुनियों के यश का बखान करती श्रीस्वामी जी का ही छिपा हुआ आन्त प्रकट होता हुआ समझिये। दूसरे शब्दों अन्तरात्मा आज उनके चरणों में झुक चु

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

महर्षि दयानन्द की दूरदर्शिता—[कृष्णदत्त जी. एम. ए, बी. एड्.]

र्षि दयानन्द जी सरस्वती को प्रायः एक धर्म-चारक या समाज सुधारक ही माना जाता है। देह स्वामीजी महाराज ने वेद प्रतिपादित धर्म ार किया और उन्होंने अनेक सामाजिक त्रुटियों ार संकेत करने के लिये भी आर्यसमाज को और प्रोत्साहित किया, किंतु स्वामी जी केवल ही नहीं करना चाहते थे। वे इससे भी कहीं क कार्य करने के इच्छुक थे और अपनी उन्हीं योजनाओं की परिपूर्ति के लिये उन्होंने आर्य न की स्थापना सन १८७५ में की थी। आर्यसमाज ापना से पूर्व ही वे सत्यार्थ-प्रकाश नामक प्रसिद्ध की रचना कर चुके थे। इसको एक प्रकार से समाज का 'मैनिफेस्टो' अर्थात् घोषणा-पत्र कह हैं। महर्षि ने आर्यसमाज की स्थापना अनेक ाओं को लेकर की थी। सत्यार्थप्रकाश के इवें समुल्लास में महर्षि ने लिखा है, "जैसा समाज आर्यावर्त देश की उन्नति का कारण है दूसरा नहीं हो सकता।" इससे स्पष्ट है कि ने भारत की सर्वाङ्गीण उन्नति को लक्ष्य में रख ही आर्यसमाज की स्थापना की थी। इसीलिए ी जी महाराज ने सत्यार्थ प्रकाश में मनुष्य को से लेकर मृत्यु पर्यन्त जिन-जिन कार्यों को करना न है उन सभी के बारे में अपने विचार प्रकट हैं। वैयक्तिक कर्त्तव्य, धार्मिक आचार, सामाजिक त्व, राजनैतिक एवं आर्थिक व्यवहार, तात्पर्य ई कि जीवन के अङ्ग और क्षेत्र के बारे में उन्होंने आदर्श हमारे सामने प्रस्तुत किया है और यह कुछ वे आर्य समाज के द्वारा ही करवाना ते थे।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जहाँ यह चाहते थे कि के लोगों में धार्मिक शिक्षा का प्रचार हो, वहाँ ह भी चाहते थे कि भारत के लोग नाना विषयों सीखें तथा राजनैतिक, सैनिक, व्यावसायिक, सङ्गीत, कला आदि शिक्षाओं से भूषित हों। उसी प्रकार महर्षि ने यह भी चाहा था कि भारतीयों की औद्योगिक शिक्षा का भी उचित प्रबन्ध हो। उन्होंने जब यह देखा कि भारत की उर्वरा तथा शस्य-शालिनी रत्न-गर्भा वसुन्धरा की गोदी में उसकी अपनी प्रिय सन्तान भूखों मर रही है, तो स्वामी जी बहुत दुःखी हुये। वे इस परिणाम पर पहुँचे थे कि भारत की सुजला-सुफला भूमि में भारतीयों के अकाल पीड़ित होने का कारण यहाँ पर उद्योग धंधों का अभाव था। अंग्रेजों ने जान बूझ कर यहाँ के उद्योगों को विनष्ट कर दिया था और वे नहीं चाहते थे कि भारत में औद्योगिक शिक्षा का विकास हो। महर्षि दयानन्द चाहते थे कि भारतीय युवकों को भिन्न-भिन्न उद्योगों की शिक्षा दी जाय। इंग्लैंड से इसकी आशा ही नहीं की जा सकती थी। यूरोप में उन दिनों भी जर्मनी औद्योगिक दृष्टि से बहुत उन्नत था। महर्षि दयानन्द का यह भी एक चमत्कार ही था कि विदेशी भाषा को न जानते हुये भी उन्होंने विदेशों में भी अपने अनेक भक्त और मित्र बना लिये थे। उन्हीं में से श्री जी. ए. बीस नामक एक जर्मन सज्जन थे। महर्षि इन्हीं बीस महोदय की मार्फत भारतीयों की औद्योगिक शिक्षा में लग गये।

सन् १८८० ईस्वी में उन्होंने बीस महोदय को अनेक पत्र लिखे। स्वामी जी ने उन पर इस बात का जोर डाला कि भारत के छात्रों को विभिन्न औद्योगिक शिक्षा दिलाने में वे उनकी सहायता करें। स्वामी जी के पत्र के उत्तर में २१ जून १८८० में लिखे पत्र में बीस महोदय ने यह प्रकट किया, "जो-जो विषय आपके विद्यार्थियों के प्रयोजन के लिये सबसे अधिक उपयोगी और आवश्यक होंगे वे सब हम उन्हें सिखा देंगे। साधारण विद्यार्थियों की अपेक्षा, जिनके सामने ऐसा कोई विशेष उद्देश नहीं होता, हम आपके विद्यार्थियों की विशेष शिक्षा पर अवश्य ध्यान देंगे।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हम ऐसे प्रबन्ध करने के लिपे उद्यत हैं जो आपके देशवासियों के लिये और हमारे लिऐ संतोष जनक हों।"

ऐसा प्रतीत होता है कि स्वामी जी महाराज ने यूरोपीय देशों के तत्कालीन लोगों के व्यवहार से यह अनुभव किया कि वे लोग भारत को उचित दिशा में उन्नति करते हुए नहीं देखना चाहते। सम्भव है स्वामी जी महाराज ने श्री बीस महोदय को इस सम्बन्ध में लिखा भी होगा कि उनके भेजे गये विद्यार्थी महान् उद्देश्य को लेकर भेजे जा रहे हैं। अतः उनकी शिक्षा का बड़ा ही अच्छा प्रबन्ध होना चाहिये। उस पत्र के उत्तर में ३० जून १८८० में बीस महोदय ने बड़ा पत्र लिखा और उसमें स्पष्ट किया, "मेरे इस पत्र का उद्देश्य आपको इस बात की सूचना देना है कि मैंने आपके नवयुवक देशबन्धुओं को ऐसे स्थानों में भेजने के विषय में और भी अधिक पूछताछ की, वे विविध कलाएँ और व्यवसाय अत्यन्त क्रियात्मक और वाचनिक रीति से सीख सकते हैं। हम आपके आर्य विद्यार्थियों को सारी उपयुक्त कलाएँ और वस्तुएँ सिखलाने के लिऐ अपनी देख-रेख में लेने के लिए उत्सुक हैं। मैं अपने नवयुवक भारतीय मित्रों की देखरेख और विकास पर पूर्ण ध्यान दूंगा। उनको मैं किसी दूसरे की देख-रेख और रक्षा में कदापि नहीं छोड़ूंगा। इसके लिए चाहे मुझे अपने यूरोपीय विद्यार्थियों की रक्षा और शिक्षा के निमित्त दूसरों को भी नियुक्त करना पड़े।" बीस महोदय ने इसी पत्र में एक बात विशेष रूप से लिखी है जिससे ऋषि दयानन्द के मन में भारतीयों के प्रति यूरोपीय देशों के लिए जो आशङ्का उठी थी उसका समाधान है। वे स्वामी जी को लिखते हैं, "आपके पुत्र हमसे भौतिक कलाएँ और अन्य विद्याएँ तथा शिल्प-कर्म सहर्ष सीख सकते हैं। हमें आपकी उन्नति पर डाह नहीं है।"

इसके अतिरिक्त महर्षि दयानन्द ने एक विशेष बात यह की कि इस कार्य के लिये धनवानों को भेजने की अपेक्षा निर्धनों को भेजना चाहा लिए संभव है उन्होंने बीस महोदय को लिख और उनसे व्यय आदि के लिए उन निर्धन लिये कुछ सुविधा भी माँगी थी। उसके बीस महोदय ने स्वामीजी को लिखा, माता-पिताओं पुत्र लेने और उन्हें अपने पुरुषों से शिक्षा दिलाने के लिये समुद्यत हूँ में ज्यों ही हमारी आर्य जाति इस योग्य आप कहेंगे, तो आपके कुछ दरिद्र विद्यार्थी उनको बहुत थोड़े शुल्क पर अथवा बिना दूंगा और उनकी उन्नति के लिए सहायता

पत्रों के इन उद्धरणों से प्रकट होता है दयानन्द केवल कह देने अथवा लिख देने कल्याण नहीं समझते थे। उन्होंने जो लि कहा उस पर आचरण किया। दूसरों को करने की प्रेरणा दी। उन्होंने बीस महोद व्यवहार के उपरांत लाहौर तथा अन्य कुछ अपने कुछ धनी भक्तों के पास धन के लिये लिखे। धन-संग्रह का कार्य छोटा तो था स्वामीजी महाराज एक दो छात्रों को भेज नहीं करना चाहते थे। वे ऐसे छात्रों के भेजना चाहते थे, जिसके लिये विपुल धन श्यकता थी। सरकार से वे इसमें सह आशा ही नहीं कर सकते थे। किन्तु देश का कि सन् १८८३ में ही विष देकर उनकी इहल समाप्त कर दी गई और इस प्रकार उन महान् कार्यों की भाँति यह कार्य भी अपूर्ण किंतु महर्षि के यह प्रयत्न उनकी दूर दर्शिता करते हैं। हम इनसे यह जान सकते हैं कि की सर्वाङ्गीण उन्नति में किन-किन बातों देना चाहते थे और उनके सन्मुख कित राष्ट्रीय योजनायें थी। वह योजनायें पूर्ण कुछ तो आरम्भ भी न हा सकी, किंतु रूप से महर्षि की महत्ता तथा दूरद सूचक हैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

राष्ट्र में गौ का स्थान

[श्री पं० अवधविहारीलाल एम. ए., बी. एल.
साहित्याचार्य. वेद-पुराण तीर्थ]

गौरक्षा के लिये महर्षि दयानन्द ने महान् प्रयत्न किया। गोकरुणानिधि नाम की एक पृथक् पुस्तक लिखी जिसमें गोवध के राष्ट्रघातक परिणाम का करुण जनक वर्णन किया। वाइसराय से मिलकर गोवध बन्द कराने की प्रार्थना की। हस्ताक्षर संग्रह करने का अभियान भी चलाया था और महर्षि का विचार था कि तीन लाख लोगों के हस्ताक्षर के साथ आवेदन पत्र राजेश्वरी विक्टोरिया के पास भेज गोवध बन्द करने की अपील की जावे। राजस्थान के कई प्रमुख राजाओं के भी हस्ताक्षर करा लिये गये थे। भारत का दुर्भाग्य था कि ऋषि का असमय महाप्रयाण हो गया और यह कार्य आगे न बढ़ सका। ऋषि कुछ काल और जीवित रह जाते तो निश्चय है कि आज का स्वतन्त्र भारत—शिवि, दिलीप और कृष्ण का भारत—गोहत्या के पाप से कलंकित न होता।

ऋषि ने इतना परिश्रम इस दिशा में क्यों किया? इसका रहस्य वैदिक मंत्रों का मनन करने से हमें विदित हो जावेगा। उस मंत्र में जो यजुर्वेद के २२ वें अध्याय में है राष्ट्र के लिए जहाँ सर्व प्रथम ब्रह्म तेजस्वी ब्राह्मण फिर शूर, धनुर्धर, स्वस्थ, महारथी क्षत्रियों के लिए प्रभु से प्रार्थना है उसके बाद ही दुग्धी धेनु अर्थात् दुधारी गौएँ राष्ट्र में हों इसकी याचना परम पिता परमात्मा से की गई है। यथार्थ में भौतिक विभव या अध्यात्मिक विषय में भी गौओं का स्थान बड़ा ऊँचा है।

यद्यपि ऐसे मंत्रों की संख्या एक हजार से भी अधिक है जिसमें गौओं की उपयोगिता का संकेत किया गया है परन्तु एक मंत्र और है जिसमें विशेष रूप से गौओं का आदर्श वैदिक राष्ट्र में क्या स्थान होना चाहिये इसको बड़े सुन्दर ढंग से समझाया गया है। वह मन्त्र ऋगवेद मंडल ८ सूक्त १०१ का पंद्रहवाँ है। वह इस प्रकार है—:

"माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः। प्रनुवोचं चिकितुषे जनाय मा गामनागामदितिं वधिष्ट॥"

इस मन्त्र में गौ को अमृत की नाभि कहा गया है और उसे मत मारो यह तो कहा ही गया है। जो बात बड़े मार्के की है वह कि गौ को 'रुद्रों की माता', 'वसुओं की पुत्री' और 'आदित्यों की बहिन' कहा गया है। वेद के इस आशय को यहाँ स्पष्ट करने का प्रयत्न किया जायगा।

गौ रुद्रों की माता है

'रुद्र' शब्द 'रुद्' धातु से बना है जिसका अर्थ है रोना। 'रुद्र' का अर्थ इसी व्युत्पत्ति के आधार पर शतपथ ब्राह्मण काण्ड १४ अ० ५ में "तद् यद् रोदयन्ति तस्मात् रुद्राः" अर्थात् 'रुद्र' कहते हैं इसलिए कि वे रुलाते हैं। शरीर के दस प्राण और एकादश जीवात्मा को भी रुद्र इसी लिए कहा गया है कि शरीर से निकलते हुए वे रुलाते हैं। परमात्मा को भी 'रुद्र' इसी लिए कहते हैं कि वह दण्ड देकर पापियों को रुलाता है ऐसा महर्षि दयानन्द ने अपने ग्रन्थों में लिखा है। अतएव रुद्र का यौगिक अर्थ रुलाने वाला होने के कारण राष्ट्र न्यायाधीश (दण्डाधिकारी) और सैनिक (शत्रुओं को रुलाने वाला) को भी रुद्र कह सकते हैं। इस मन्त्र में 'रुद्र' का अर्थ मेरी दृष्टि में सैनिक या दण्डाधिकारी ही है।

दण्ड देने वाले के लिए दो बातें आवश्यक हैं। एक तो यह कि वह बलवान होवे। यदि बलवान् न होवे तो वह दण्ड न दे सकेगा, दण्ड देने जायगा तो स्वयं पिट जायगा। दूसरी बात जो दण्डाधिकारी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

के लिए अनिवार्य है वह यह है कि वह क्रूर प्रकृति का न हो। भेड़िया के समान हिंसक या अकारण क्रोधी न हो अन्यथा उसकी शक्ति 'परेषां परिपीड़नाय' दूसरों के उत्पीड़न में लगेगी। राष्ट्र के र ण में नहीं! दण्डाधिकारी या सेनाध्यक्ष राम बने राव ! न बने; प्रताप बने नादिर शाह या तैमूर न बने।

अन्न से ही मांस और मन दोनों ही बनते है यह हम छान्दोग्य उपनिषद् में पढ़ते हैं। अतएव अन्न (भोजन) वही होना चाहिये जिससे शरीर बलवान् और मन पवित्र बने। कुछ भोजन तो ऐसे हैं जिनसे शरीर पुष्ट होगा पर मन गन्दा बनेगा; कुछ भोजन ऐसे हैं जिनमें मन सात्विक भावों से युक्त रह सकता है पर शरीर पुष्ट और बलिष्ट नहीं रह सकता—वह ऐसा न रहेगा कि जिससे दुष्टों का दमन या शत्रुओं का मान मर्दन किया जा सके। मांसाहारी कहते हैं मांस से शरीर बलवान् बनता है। 'दुर्जन तोष' न्याय से यदि इसे मान भी लिया जावे तो मांसाहारी बलवान् निश्चित रूप से रावण या कंस ही बनेगा। कुछ लोग कहते हैं मनुष्य के दाँत बन्दर के दांतों के जैसे हैं अतएव मनुष्य को फलाहारी ही होना चाहिये। फलाहार का विरोधी नहीं होते हुए भी मैं यह मानता हूँ अकेला फलाहार वह शरीर बल नहीं दे सकता जो आततायियों को उनके कुकृत्यों का उचित दण्ड देने के लिये अपेक्षित है। आज के विज्ञान में भोजन के सम्बन्ध में जो खोज हुई है उससे यह स्पष्ट पता चला है कि गोदुग्ध एक पूर्ण भोजन है जिसमें शरीर की सारी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये आवश्यक तत्त्व विद्यमान हैं। अतएव गोदुग्ध को वीरों का पेय भी वेद में अन्यत्र कहा गया है। गौ को रुद्रों की माता कहने का यही रहस्य है।

गोरस पर रहने वाले गोपाल कृष्ण के सम्बन्ध में शिशुपाल द्वारा कृष्ण की अग्रपूजा पर आक्षेप होने पर (राजसूय यज्ञ के अवसर पर) भीष्म पितामह ने कहा था—

वेदवेदांगविज्ञानं बलंचाभ्यधिकं तथा
नृणां लोके हि कोन्योस्ति विशिष्टः केशवा
(सभापर्व अध्याय

कृष्ण दोनों प्रकार से बड़े थे वेदवेदांग में और शारीरिक बल में भी।

ऐसा ही कथन प्रसिद्ध गौ सेवक दि सम्बन्ध में कालिदास ने रघुवंश के प्रथम सर्ग

व्यूढोरस्कः वृषस्कन्धः शाल प्रांशुमहा
आत्मकर्म क्षमं देहं क्षात्रोधर्म इवाश्रि

दिलीप के शरीर में मानो क्षात्र धर्म आश्रय लिया हो।

(२)

वसुओं की पुत्री

गौ वसुओं की पुत्री है, ऐसा इस मन्त्र गया है। 'वसु' का अर्थ शतपथ ब्राह्मण अ० ५) में किया "एते हीदं सर्वं वासयन्ते" ये सबको बसाते हैं। राष्ट्र के वे अधिकारी कार्य प्रजा के निवास की व्यवस्था करना "वसु" कहे जायंगे। भारत सरकार ने पाकि विस्थापितों के पुनर्वास के लिये विभाग तो उसके मंत्री और मन्त्रालय भी बने हैं प की आदर्श वैदिक व्यवस्था में प्रत्येक मनुष्य की व्यवस्था होनी चाहिये। कलकत्ता नगरी पाथों पर तीन लाख मनुष्यों का निवास हमारे राष्ट्र की अत्यन्त हीनावस्था का द्यो वेद मंत्र में उसी आदर्श वास व्यवस्था की संकेत है जिसमें गृह विहीन कोई न रहे औ लिए राजशासन प्रबन्ध में एक पृथक् विभा उसी विभाग के अधिकारी 'वसु' संज्ञक हैं।

गौ उन वसुओं की पुत्री है। पिता की लिए सबसे बड़ी चिन्ता उसे जीवन में कहीं कर देने की होती है। पिता चाहता है कि पु जावे वहाँ (वर के पास) सुन्दर वास व्यव

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जीविका के साधन हों। स्त्रियाँ कहती हैं उनकी पुत्री के घर को हो ईंटों का घर और भैंसों का हर (हल) हो, तो जैसे पिता माता की चिन्ता पुत्री के सम्बन्ध में होती है वैसे ही चिन्ता गौ के व्रज और गोचर भूमि की राष्ट्र के अधिकारियों में होवे। इसी कारण गौ को वसुओं की पुत्री कहा गया है, ऐसा प्रतीत होता है।

(३)

गौ आदित्यों की बहिन है

शतपथ ब्राह्मण के पूर्वोक्त स्थल पर 'आदित्य' का अर्थ किया—"एते हिइदं सर्वं आददाना यन्ति" ये अपने साथ सब को लेकर चलते हैं। दूसरों को लेकर चलने वाले अर्थात् नेतृत्व करने वाले नेता हैं। अतएव 'आदित्य' का अर्थ इस मंत्र में नेता लिया जायगा। गौ राष्ट्र के नेताओं की बहिन है। कैसे? देखिये।

स्त्रियाँ भाई को अपना बड़ा रक्षक मानती हैं—वीर बली मानती हैं। राजपूत रमणियाँ विपत्ति के समय भाई को राखी भेज कर अपने को आपत् विपत् और संकट में सुरक्षित समझ लेती थीं। चित्तौड़ की महारानी कर्णवती ने मुगल बादशाह हुमायूं को गुजरात के बहादुरशाह से अपनी रक्षार्थ राखी भेजी थी और हुमायूं ने तत्काल चित्तौड़ पहुँच कर बहादुरशाह के आक्रमण से चित्तौड़ की रक्षा थी। यह इतिहास की घटना प्रसिद्ध है।

पति सामान्यतः स्त्री का रक्षक माना जाता है। और है भी ठीक ही। परन्तु पति के क्रूर और निष्ठुर हो जाने पर पति की क्रूरता से भी बहिन की रक्षा करने का भार भाई के ऊपर ही है। भाई इस कर्त्तव्य को निवाहता है, यह आज भी देखा जाता है। पति की मृत्यु पर भी भाई के ऊपर मुख्य रूप से बहिन का दायित्व आ जाता है।

अतएव बहिन का प्रसिद्ध रक्षक भाई है। यही कारण है कि गौ को वेद ने नेताओं (आदित्यों) की बहिन कहा है। राष्ट्र के नेता अपने उत्तरदायित्व को समझें तो भारत के स्वर्ण दिन फिर आने में देर न लगेगी।

आर्यमित्र के प्रति

(ले० श्री वैद्य राजबहादुर आर्य 'सरस',)

जुग जुग जियो मित्र तुम जग में।
साठ वर्ष की प्रौढ़ावस्था में भी पूरे यौवन पर हो—
शुभ सन्देश सदा वेदों का देते जाते रहे सदा घर घर हो।
निरुत्साह बलहीन जनों के भरते हो साहस रग रग में ॥जुग-जुग-१॥
जब जब छिड़ा कोई आन्दोलन तब तब तुमने अलख जगाया—
किया पराजित शत्रु सदाही प्रतिपक्षी देख तुम्हें घबड़ाया।
निज प्रभाव से दूर किये यदि कंटक कहीं मिले जो मगमें ॥जुग-जुग-२॥
इस विकास विपति के दिन भी देखे किन्तु न तुम घबड़ाये—
त्याग तपस्या अपनी से नित उन्नति पथ पर बढ़ते आये।
"मित्रस्याहं" वेद वाक्य को किया सार्थक तुमने जग में ॥जुग-जुग-३॥
प्रभु से विनय हमारी है यह सकल जयन्ती होय तुम्हारी।
निज प्रकाश से 'सरस' मिटाओ भ्रांत पन्थों की निशि अँधियारी।
ईश कृपा से मित्र तुम्हारा स्वर गूँजे अम्भोनिधि जग में।
जुग जुग जियो मित्र तुम जग में ॥जुग-जुग-४॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

धर्म निरपेक्ष भारत में आर्यसमाज का उत्तरदायित्व

[श्री सत्यार्थी
जालन्धर

संकीर्ण सम्प्रदायवाद और मतमतान्तरों के परम विरोधी ऋषि दयानन्द को आर्यसमाज की स्थापना से कोई छोटा सा सुधारक दल, अथवा धार्मिक गृह, सैद्धान्तिक सम्प्रदाय: निर्माण करना अभीष्ट न था। वह तो आर्यावर्त की बहुविधि सांस्कृतिक दिग्विजय, राजनैतिक स्वतंत्रता, राष्ट्रीय एकता, आर्थिक समृद्धि, कृषि उद्योग, कला-कौशल, संवर्धन प्रवर्धन रक्षा, गुण कर्म स्वाभाव के विवेक पर आधारित, वैदिक वर्ण व्यवस्था, के अनुसार भारतीय समाज के पुनर्निर्माण और मानवी समानता के सिद्धान्त का प्रसा करते हुए उन्नत आर्यावर्त के द्वारा विश्व कल्याण और संसार भर के उद्धार के लिये आर्यसमाज को अपना साधन बनाना चाहते थे। उनका सर्वोच्च लक्ष्य वैदिक ज्ञान विज्ञान और आर्य संस्कृति का पुनरुदय ही था। उसी के लिये वह जिए, और उसी के लिये वह अपने प्राणों की बलि दे गये। उन्हें विष पिलाने वाले मूर्ख क्षुद्र धन लोभी जगन्नाथ पाचक को क्या विदित था कि वह अपने घिनौने कुकृत्य से आर्यावर्त और संसार का कितनी भयङ्कर हानि कर रहा है।

राष्ट्रनायकों का अग्रदूत—

ऋषि की उत्कट इच्छा थी कि आर्य समाज राष्ट्र नायकों का अग्रदूत बनकर देशवासियों का पथ प्रदर्शन करे। हमारे दुर्भाग्य से आज आर्य समाज हीन मनोवृत्ति का शिकार होकर अपने उत्तम स्वरूप महान् लक्ष्य और श्रेष्ठ कर्त्तव्य से पराङ्मुख होकर छोटी-छोटी बातों में उलझ कर राष्ट्रों की दौड़ में पिछड़ा चला जा रहा है। ऋषि ने तो जन-जन को निमंत्रण दिया था कि यदि आर्यावर्त का बहुमुखी कल्याण चाहते हो तो आर्य समाज में सम्मिलित हो जाओ, परन्तु हम तो अपने धर्म निरपेक्ष शासकों के कृपा पात्र, उनसे आर्थिक व नैतिक संरक्षण व पारितोषिक प्राप्त करने की लालसा से अपने आप आर्य समाज को तथा आर्य शिक्षा संस्थाओं को धर्म रहित सैक्यूलर समाज व संस्थाएँ घोषित तक के लिये तुल रहे हैं। अंग्रेजी शासन में समाज के कई नेता अपने गौराङ्ग महाप्रभुओं प्रसन्नता प्राप्त करने को बहुत सचेष्ट रहे। हमें भि रहती थी कि हमारी शिक्षा संस्थाएँ सरकार तिरछी दृष्टि की कोप भाजन न बने, और आ अपनी सैक्यूलर स्वराज्य सरकार के प्रभाव होकर दब रहे हैं। हम ऊपर चलने वाले बैल न कर नीचे चलने वाले भैंसे ही बन गये। ऋषि मृत्यु से आर्यावर्त को एक ऐसा धक्का लगा पूर्ति आज तक न हो पाई।

हा! शोक! ऋषि की मृत्यु के ठीक ६५ वर्ष एक पथ भ्रष्ट नवयुवक ने ३० जनवरी १९४ भारतीय संस्कृति के महान प्रसारक और रा परमोद्धारक महात्मा गाँधी की हत्या कर ५० वर्ष की कठोर तपस्या और अनथक परि सेवा के पश्चात् स्वतंत्र भारत के विशाल साध प्रयोग करके भारत और संसार भर को उनके द्वा भारतीय संस्कृति की शिक्षा दीक्षा मिलने वा और उनके बताये मार्ग से जो राष्ट्र निर्माण योजनाएँ बनने वाली थीं उससे मानव समाज के लिए वञ्चित हो गया।

नेताजी सुभाषचन्द्र का एक भाषण—

३१ वर्ष की पुरानी ऐतिहासिक एक घटना जिसका मैं स्वयं साक्षी था। दिसम्बर १९ कलकत्ता में इण्डियन नेशनल कांग्रेस का अधि हुआ। उसके साथ एक सोशलिस्ट यूथ कान्फ्रेंस हुई। बम्बई के पारसी नेता श्री एफ० के० ना उसके सभापति थे और श्री सुभाष चन्द्र (नेता उसके स्वागताध्यक्ष। सुभाष बाबू ने अंग्रेजी भा लिखे अपने भाषण में कहा कि देश के नौजव साबरमती आश्रम अहमदाबाद के सन्त महात्मा की सत्य, अहिंसा, सादगी ब्रह्मचर्य, ईश्वर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वार धारा को तहस नहस कर दो। पाण्डुचेरी राज महर्षि अरविन्द घोष की योग समाधि ड को भी तोड़ दो, भारत के योगियों, ब्रह्म- ों और तपस्वियों की जरूरत नहीं रही। भारत का संघटन तो समाज वाद के नए पर करना है गा।" इस भाषण के ६ मास मुझे गाँधी जी से साबरमती आश्रम में भेंट का प्रबसर मिला, उनसे सुभाषबाबू के उपर्युक्त पर विचार विनिमय किया और उनकी क प्रतिक्रिया जानने का प्रयास किया। उस गाँधीजी ने कहा—

महात्मा गाँधी और अंग्रेजी सभ्यता—

सुभाषजी का भाषण हुये ६ मास बीत चुके। ाबरमती आश्रम खड़ा है। इसका मतलब है ाष की बात को नहीं मानता। यदि मैं इसे होता तो अपने इस आश्रम को फूँक करके हिमालय चला गया होता। मेरे भाई! सुभाष ा और है और मेरा मार्ग दूसरा। सुभाष कहता देश में अंग्रेज न रहें, अंग्रेज की सभ्यता भले परन्तु मैं कहता हूँ अंग्रेज रहे या न रहें परन्तु रा में अंग्रेज की सभ्यता न रहे।"

ी सुभाषचन्द्र जी पठान के भेष में गुप्त रूप से छोड़ने से पहिले सम्भवतः १९४० में लाहौर थे। वहाँ डाक्टर धर्मवीर जी की कोठी पर मैं एकान्त में मिला और उनके ऊपर लिखित त्ता के भाषण में प्रकट की गई विचार धारा पर वार्तालाप किया। तब उन्होंने कहा था "अब चार बहुत बदल चुके हैं। अब मैं भारतीय ों से प्रेरित ही स्वतन्त्र भारतीय राष्ट्र का निर्माण ा चाहता हूँ।"

धु व स्वामी की विचारधारा—

वर्तमान युग में संस्कृति के उदात्त प्रचारक र्षीय आदित्य ब्रह्मचारी महात्मा साधु टी. एल. ानी जी एम. ए, जो आजकल पूना में विराज- हैं, उनसे एक पत्रकार ने देश के नवयुवक, यों के नाम एक सन्देश अपने पत्र में प्रकाशनार्थ माँगा तो उन्होंने प्रश्नोत्तरी के रूप में निम्नलिखित विचार प्रकट किये :—

प्रश्न–मैं किस कागज पर अपना संदेश लिखूं ?

उत्तर–आर्य युवक युवतियों के हृदय पटल पर ही मैं अपना सदेश लिखना चाहता हूँ।

प्रश्न–किस स्याही से अपना संदेश लिखूं ?

उत्तर–श्रद्धा की ज्योतिर्मयी स्याही में।

प्रश्न–किस भाषा में लिखूं ?

उत्तर–अनेक बलिदानों व कठोर तपस्याओं से पुनीत शहीदी खून की भाषा में।

प्रश्न–और वह सन्देश है क्या ?

उत्तर–ऐ भारत के युवती, युवको! अपने अपने प्राचीन आर्यावर्त्त की ज्ञान निधि से स्फूर्ति प्राप्त करो। और अपनी आन्तरिक आत्मिक शक्ति को उभारो, क्योंकि तुम्हारे तत्वदर्शी मेधावी ऋषि अभी मर नहीं गये। उनकी दाय भाग रूप छोड़ी हुई सांस्कृतिक सम्पदा अब तक जीवित है ने के कारण वह भी अभी तक जीवित ही है और सारा विश्व आज हमारी मातृभूमि के शक्तिशाली संदेश को सुनने की प्रतीक्षा में बेचैन अपने नयन और श्रोत खोले खड़ा है।

आर्यावर्त के ऐसे महान् सांस्कृतिक सन्देश को देने के लिये ही ऋषि दयानन्द ने आर्य समाज को अपना उत्तराधिकारी बनाया था। इस बात का प्रमाण है कि विश्व भर के विद्वान कितनी श्रद्धापूर्ण भावना से प्राचीन आर्य ऋषियों के वेदिक सन्देश को सुनने के लिये तड़फ रहे हैं, वर्तमान युग के पश्चिमी संसार के सर्वतः सम्मानित शिरोमणि ज्योतिष विद्या के प्रसिद्ध विज्ञान वेत्ता, पदार्थ विद्या के अद्वितीय पण्डित और महान् गणित शास्त्र विशारद सर जेम्स जीनज ने लिखा है—

विश्व विख्यात वैज्ञानिक जेम्स जीनज की वेदान्त निष्ठा—

"मेरी पदार्थ विद्या का विज्ञान मुझे मानवी-जीवन सम्बन्धी वेदान्त शास्त्र के तत्व ज्ञान की ओर बड़ी बलवती प्रेरणा और तीव्र गति से खींचे हुए लिये जारहा है और इस समस्या के समाधान के लिये

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उसके सिवाय मेरे पास कोई और वैकल्पिक मार्ग ही दिखाई नहीं देता। हम योरुपी लोगों की पुरानी मान्यता यह थी कि यह जीवन एक जेलखाना (बन्दी गृह) है जिससे छूटने का कोई रास्ता और साधन ही नहीं। परन्तु आर्यावर्त का वेदान्त दर्शन हमें उस बन्दीगृह से मुक्त होने का मार्ग प्रदर्शन करता है। और हमें अपने पूर्व स्वरूप तक पहुँचने का निर्देशन करता है दूसरे शब्दों में वह हमें ईश्वर प्राप्ति तक ले जाता है जो जीवात्मा की सर्वथा सम्पूर्ण स्थिति और पराकाष्ठा है।

अंग्रेज तत्वज्ञानी मैकेनजी की श्रद्धा—

इसी प्रकार इंगलैंड में कारडिफनगर के यूनीवर्सिटी कालेज के प्रोफेसर मैंकैनजी ने लिखा—

"मैं जन्म से ईसाई मतावलम्बी हूं परन्तु सत्य की रक्षा जो उच्चतम और श्रेष्ठतम महत्व की वस्तु है उसके हित में बड़ी सद्भावना पूर्वक आन्तरिक प्रेरणा से विवश होकर मुझे इस तथ्य को स्वीकार करना पड़ता है कि भारत की भगवद् गीता उपनिषदों के तत्व ज्ञान की व्याख्या की मनुष्यों की बुद्धि में श्रद्धा पूर्वक विश्व उत्पन्न कर सकती है, और वही केवल आत्मा को शान्ति देने में समर्थ है।"

आर्य समाज का उत्तरदायित्व—

आर्य समाज के कन्धों पर उन्हीं ऋषियों और शास्त्रों के तत्वज्ञान और उन्हीं आदेशों से प्रेरित संस्कृति के पुनर्जीवन दायित्व ऋषि दयानन्द ने अपना बना कर डाला था। हमें अपने स्वतंत्र सैक्यूलर शासन से कभी न दब कर और बड़ी निर्भयता से इस वैदिक संस्कृति अपने लक्ष्य की ओर बढ़ना है। महर्षि दीक्षा उत्सव पर जो भारत की नवीन दीक्षा उत्सव भी है, हमें यही स्फूर्ति प्राप्त और इसी की रक्षार्थ प्रतिज्ञा करनी है।

दयानन्द ने जो जगाया न होता

जागृति ★ जगदीश पाण्डेय

दुखी दीन को दान देके दया का, यथा विश्व-कल्याण की कामना थी।
तथा वेद का स्वर्ण-संदेश देते, सुधी साधु की साध थी साधना थी।
अहिंसा तथा सत्य अस्त्र लेके, यहाँ धर्म का छत्र छाया न होता।
दयानन्द ने जो जगाया न होता।

कहीं बाल वैधव्य की अश्रुधारा, वियोगाग्नि में वक्ष को धो रही थी।
निराशा निशा से मुँदे लोचनों में, सुखों की मनो-भावना सो रही थी।
व्यथा से थकी सी उन्हीं देवियों ने, दया और आनंद पाया न होता।
दयानन्द ने जो जगाया न होता।

तपस्वी व्रती ने मही पै प्रसारी, स्वसत्यार्थ-आलोक की दिव्य छाया।
उसी से अविद्या मिटा मानवों ने, सुधी आर्य हो वेद का ज्ञान पाया।
असत्कर्म खो धर्म जिज्ञासुओं ने, असद्धर्म को यों मिटाया न होता।
दयानन्द ने जो जगाया न होता।

कहीं राज की नीतियाँ नाशकारी, यहाँ स्वर्णदा भूमि को लूटती थीं।
हमारी जली छातियों पै विदेशी, जनों की कभी गोलियाँ छूटती थीं।
पराधीनता को मिटाया किसी ने, प्रजातन्त्र का मंत्र गाया न होता।
दयानंद ने जो जगाया न होता।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

र्य समाज और सभ्यताओं का संघर्ष [श्री भीमसेन विद्यालंकार]

ज सभ्यताओं के पारस्परिक संघर्ष के दुष्परि-णामों से मानव जाति को बचाने के लिये कई के यत्न किये जा रहे हैं।

जनैतिक स्तर पर संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा विविध ों की सहायता से इस दिशा में यत्न किया ा है। इसके लिये विश्व के पिछड़े हुए देशों के क स्तर को उन्नत करने के लिये उन्हें आर्थिक ता दी जा रही हैं। शिक्षा क्षेत्र में भी शिक्षा ाओं द्वारा पिछड़े देशों को जागृत किया जा । यही नहीं संयुक्त राष्ट्र संघ की एक विशेष त ने (जिसमें संसार के प्रसिद्ध वैज्ञानिक शामिल यह निर्णय दिया है कि रंग भेद, शरीर रचना ा मानव जाति के नैतिक मानसिक व आध्यात्मिक पर कोई भेदक या हीनता जनक असर नहीं । परन्तु हम यह देख रहे हैं कि इन यत्नों के हुए भी विश्व की विविध सभ्यताओं का संघर्ष प्रति दिन तीव्र हो रहा है।

अमरीका तथा इङ्गलैंड में भी अनेक स्थानों पर ण अफ्रीका की भाँति रंग भेद के कारण-कालेरंग ा भिन्न वर्ण के लोगों के साथ हीनता का व्यव-किया जा रहा है। प्रश्न यह है कि सभ्यताओं संघर्ष कैसे दूर किया जाय। कइयों का यह विचार के सब सभ्यताओं के सम्मिश्रण से एक मिश्रित ता को स्वीकार किया जाय।

हमारी सम्मति में यह विचार वृक्ष-शाखा सिंचन मान है। हमारी सम्मति में सभ्यताओं के संघर्षों दूर करने का एक मात्र उपाय यह है कि मानव ते ही शिक्षा-प्रणाली में एकता तथा समानता की ना पैदा की जाय।

वैदिक आर्य संस्कृति के सूत्रधारों ने विश्व में क स्थापित करने का मुख्य साधन गुरुकुल शिक्षा-ाली को माना था और इसी के द्वारा मानव जाति एकता के सूत्र में संघटित करने का यत्न या था।

गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली का मूल सिद्धान्त यह है कि बालक ब्रह्मचारी गुरु के आश्रम में पारि-वारिक, सामाजिक भेद-भावों से पृथक् रहकर विद्या अध्ययन करे। इस शिक्षा-प्रणाली के मूल तत्त्व वेद आरम्भ संस्कार के समय आचार्य द्वारा ब्रह्मचारी को जो उपदेश दिये जाते हैं, उसमें कुल-भिन्नता-मातृभूमि की भिन्नता अथवा जातिगत भिन्नता का लेशमात्र भी संकेत नहीं है। एक मानव के विकास के लिये जिस वातावरण की आवश्यकता होती है उसी का निर्माण करने का इसमें यत्न किया गया है।

इसी प्रकार से जब वह शिक्षा समाप्त करके गुरु-कुल से विदा होता है या आचार्य उसको अंतिम उप-देश देते हैं तो उसमें भी मानवता-एवं मनुष्यमात्र के कल्याण की ही चर्चा तथा आदेश है। इस प्रकार की शिक्षा में दीक्षित् राजा, व्यापारी तथा शिक्षक जब भी विस्तृत कार्य क्षेत्र में काम करते ये तो उनके सामने राष्ट्रीयता तथा पारिवारिक के जन्म जात संकीर्ण उद्देश्य के स्थान पर विशाल मानव समाज का कल्याण ही मुख्य उद्देश्य होता था।

इसी कारण हम देखते हैं कि उस समय का मानव समाज आजकल की भाँति विविध सभ्यताओं के संघर्ष से पीड़ित नहीं था। जब से ईसाई धर्म और इस्लाम धर्म की शिक्षा दीक्षा की प्रबलता हुई तभी से इस प्रकार के संघर्ष उग्र रूप में प्रकट हुए।

इन दोनों समुदायों की संकीर्णता को उत्पन्न करने वाले उनके धर्म ग्रन्थ ही थे। बाईबिल में सारी विचार धारा ईसा मसीह की व्यक्तित्व की छाप से सीमित थी। आज ईसाई धर्म द्वारा स्थापित संस्थाओं तथा संचालित कल्याणकारी कार्यों में भी मनुष्यता के स्थान पर सम्बद्ध व्यक्तियों को ईसाई धर्म में दीक्षित करना मुख्य उद्देश्य है।

मुसलमानों का धर्म ग्रन्थ कुरान तो अरब और मुहम्मद साहब सम्बन्धी विचारधाराओं से ओत-प्रोत है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इसके मुकाबले में गुरुकुल शिक्षा प्रणाली या वैदिक संहिताओं में निर्दिष्ट शिक्षा सम्बधी सिद्धान्तों से परमात्मा-प्रकृति-मनुष्य तीनों को स्वाभाविक रूप में केन्द्र बनाकर शिक्षा देने की व्यवस्था है।

ऋषि दयानन्द ने इसी वैदिक दृष्टिकोण से सत्यार्थ प्रकाश में शिक्षा-पद्धति की व्यवस्था की है। प्रारम्भिक अवस्था में जो शिक्षा-सम्बन्धी ग्रन्थ निर्दिष्ट किये हैं उनमें संकुचित राष्ट्रीयता व कुल सम्बन्धी धारणाओं का नामों निशान भी नहीं है।

परन्तु वर्तमान आर्य समाज तथा उसके शिक्षणालय इस शिक्षा पद्धति से निर्दिष्ट आदर्शवाद को व्यावहारिक रूप न दे सके। इसीलिये हम अपने देश में तथा विश्व में सभ्यताओं के संघर्ष की तीव्रता को मन्द नहीं कर सके।

भारत के स्वतंत्र होने के बाद हमें आशा थी कि हमारे राष्ट्रनायक भारत वर्ष की परम्परागत-गुरुकुल शिक्षा प्रणाली को अपनाएँगे, परन्तु शोक के साथ देखते हैं कि वह इस दिशा में उलटे मार्ग पर ही जा रहे हैं।

भारतवर्ष के प्रधान मन्त्री पंचशील की घोषणा के द्वारा विश्व में शान्ति स्थापित करने का स्वप्न लेते रहते हैं परन्तु वे देश की शिक्षा-प्रणाली में आवश्यक मौलिक परिवर्तन करने को तैयार नहीं है। अपितु शिक्षा को (Secular) या लौकिक बनाने के नाम पर भारत के शिक्षणालयों को नैतिक तथा धार्मिक शिक्षण से भी वंचित किया जा रहा है।

इस दिशा में आर्यसमाज भारतीय जनता तथा विश्व के सांस्कृतिक--संघटनों का पथ-प्रदर्शन कर सकता है परन्तु यह तभी हो सकता है जब कि आर्य समाज गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली के सिद्धान्तों को अपने सब शिक्षणालयों में न सही कम से कम गुरुकुल कहे जाने वाले शिक्षणालयों में क्रियात्मक परन्तु यह कार्य प्रबन्धक समितियों के द्वा सकता। इसके लिये आदर्शवादी गुरुओं श्यकता है। पिछले ६० सालों में गुरुकु आदर्शवाद को व्यावहारिक रूप देने का य

परन्तु अब हम देख रहे हैं कि स्वतंत्र बाद गुरुकुलों का वातावरण भी गुरु प्रणाली के आदर्शवाद से रहित हो रहा

इसका मुख्य कारण यह है कि गुरुकुलों लक अब जनता-जनताजनार्दन के स्थान प चाहे वह स्वदेशी ही क्यों नहो को अपना देव मानने लगे हैं। क्या यह अवस्था हमें की ओर ले जायगी ?

इस अवस्था में हमें क्या करना आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य वैदिक द्वारा मानव समाज को एक सूत्र में गु है। इसका मुख्य उपाय यह है कि हमारे में वैदिक आर्य संस्कृति के मूल-भूत वेदों पर विशेष बल दिया जाय। वर्तमान भारत से इसकी आशा करना दुराशा मात्र है। आर्य समाज के कार्यकर्ताओं तथा आर्य साग्रह निवेदन करना चाहते हैं कि लोकमत संघटित कर आर्य समाज के विशेषतः गुरुकुलों को स्वदेशी सरकार स्वातंत्र्य तथा वैदिक आदर्श विरोधी प्र करना चाहिये। इसके लिये हमें इन आदर्शवादी गुरुओं तथा अध्यापकों के लि वातावरण पैदा करना चाहिये। तभी हम द्वारा भारत तथा विश्व की सभ्यताओं तीव्रता को कम कर विश्व में शान्ति मै कर सकेंगे।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

महर्षि दयानन्द और डा. मॉण्टेसरी [श्री सूर्य्यभानु सिंह गौतम 'शठ']

आज शिक्षा जगत् की क्रांति में डा० मॉण्टेसरी का नाम बड़े गौरव और आदर के साथ लिया जाता है। इटली के रोमनगर में उत्पन्न होकर इस महान् महिला ने शिक्षा क्षेत्रमें जो क्रांतिकी, हमें नई दिशा और प्रेरणा दी और जो उनकी अन्तर्राष्ट्रीय व्यापिनी ख्याति का कारण बनी, वह सचमुच ही स्पृहणीय है। शिक्षा के छोटे से दायरे को लेकर उन्होंने उसके द्वारा विश्व-बन्धुत्व, मानवधर्म (प्रेम व सहयोग) और विश्वचेतना को जन्म दिया और इस तथ्य का प्रतिपादन किया कि महान् व्यक्ति किसी राष्ट्र विशेष की सम्पति नहीं वरन् उसका कार्यक्षेत्र सम्पूर्ण मानव जाति है। यही बात गुजरात प्रांत के एक छोटे से ग्राम में उत्पन्न हुए महर्षि दयानन्द जी ने भी चरितार्थ की। जिन्होंने धर्म और समाज सुधार का कार्य अपने हाथों में लेकर विद्यासागर, राष्ट्रीय चेतना, विश्वबन्धुत्व और अन्धविश्वास हटाकर पूर्णरूपेण बुद्धि और मानवभावनाओं को सृष्टिक्रमानुकूल संचालित करने की प्रेरणा दी। अङ्गरेजी जैसे सम्पन्न साहित्य और वैज्ञानिक विज्ञान के विद्यार्थी न होते हुए भी उन्होंने अपने ग्रन्थों में जिन सिद्धान्तों और बातों को खण्डन मण्डन हेतु प्रयुक्त किया उससे उनकी साहित्यिकता और वैज्ञानिकता पर दाँतों तले उँगली दबानी पड़ती है।

विचारणीय बात यह है कि आज हमारे यहाँ शिक्षा-क्षेत्र में जो अनिश्चितता और आपाधापी मची है तथा हम विभिन्न दृष्टियों को लेकर किंडर-गार्टन, नर्सरी और मॉण्टेसरी शिक्षा पद्धतियाँ प्रचा-रित कर रहे हैं उनमें हमारे सम्पूर्ण जीवन को प्रभा-वित करने वाली हमारी वर्तमान परिस्थितियों के अनुकूल सर्वश्रेष्ठ शिक्षा पद्धति कौन है जो प्रयुक्त की जा सके।

वर्तमान शिक्षा पद्धतियों में सर्वांगपूर्ण और सम्पूर्ण जीवन के विकास को प्रतिपादन करने वाली मॉण्टेसरी प्रणाली और महर्षि दयानन्द जी द्वारा प्रतिपादित शिक्षा प्रणाली की समानता-असमानता को देखते हुए इन दो महानुभावों के दिव्य जीवन पर सरसरी दृष्टि डालेंगे।

जीवन की अद्भुत समानताएँ

(१) दोनों ने ही अपने-अपने सिद्धान्तों के प्रचार प्रसार के लिये जितेन्द्रियता और मनोयोग से अवि-वाहित रहकर जिस श्रद्धा और एकनिष्ठ साधना से सारे जीवन के कार्य किये—वह संसार के लिये अपूर्व उदाहरण बन गये।

(२) जीवन के एक क्षेत्र को लेकर अपनी साधना व मनन-वृति से, समाज, राष्ट्र और विश्व को प्रभा-वित करने में समर्थ हुए।

(३) स्वसिद्धान्तों के प्रचारार्थ महर्षि दयानन्द ने आर्यसमाज और डा० मॉण्टेसरी ने 'अन्तर्राष्ट्रीय मॉण्टेसरी संघ' की स्थापना की।

(४) जीवन निर्माण में माता-पिता और वाता-वरण का महत्त्वपूर्ण भाग बताते हुए आचार्य की जितेन्द्रियता, त्यागमयभावना, संयम, द्वेषभाव से दूर प्रेमयुक्त ताड़ना और आत्मसंयम पर बल दिया।

(५) आध्यात्म बल पर जोर देते हुए विश्वयोजना नुसार कर्म में सतत संलग्न रहने का आदेश दिया।

(६) अपनी-अपनी राष्ट्रभाषा में अपने सिद्धान्तों की व्याख्या और प्रचार किया।

(७) शिक्षा का अर्थ 'मानव शक्तियों का सहज, स्वाभाविक विकास, माना।

उक्त समानताओं के साथ-साथ कुछ सिद्धान्तों में भिन्नतायें भी थीं परन्तु वे केवल, देशकाल सम्बन्धी ही हैं :—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(१) महर्षि दयानन्द ने अपना प्रचार कार्य भारत भर में सीमित रक्खा इसके विपरीत डा० मॉण्टेसरी ने सभी देशों का भ्रमण कर प्रचार किया।

(२) महर्षि दयानन्द जी पुनर्जन्म में विश्वास करते थे परन्तु डा० मॉण्टेसरी का पुनर्जन्म में विश्वास न था।

(३) महर्षि दयानन्द जी ने जीवन को आश्रमों में बाँट कर गृहस्थी और परिवार से दूर बालक और बालिकाओं की अलग २ शिक्षा का प्रतिपादन किया। इसके विपरीत डा० मॉण्टेसरी ने आश्रम व्यवस्था को आवश्यक न समझते हुए समाज के माध्यम द्वारा ही शिक्षा देने पर बल दिया।

(४) डा० मॉण्टेसरी ने मूर्त्त-अमूर्त्त को अलग करके, कठिनाइयों को कम करके (Isolation of difficulties) शिक्षा के सरल प्रस्तुतीकरण पर बल दिया–महर्षि दयानन्द जी ने शिक्षा की सरलता पर तो बल दिया पर मूर्त-अमूर्त को अलग नहीं किया।

(५) महर्षि दयानन्द जी ने माता--पिता को बालक का प्रथम और सर्वश्रेष्ठ शिक्षक कहा, फिर 'आचार्य' को महत्व दिया, परन्तु डा० मॉण्टेसरी ने "बालघर" में आचार्य के द्वारा ही वातावरण को नियमित कराकर शिक्षा देने की योजना बनायी।

अब उनके विरोधी प्रतीत होने वाले सिद्धांतों की समीक्षा कर देने से यह स्पष्ट हो जायगा कि उनकी यह विभिन्नता उचित है या नहीं और क्यों है :—

महर्षि दयानन्द जी उग्र राष्ट्रवादी थे। उनका उद्देश्य स्वयं को और स्वदेश को उन्नत करना था इसके पश्चात् अन्य देशों को भी। जैसा कि उन्होंने एक बार इस प्रकार के प्रश्न के उत्तर में अपना कार्य विदेशों में न प्रारम्भ करने के कारण को स्पष्ट करते हुए अपना अभिमत दर्शाया था।

डा० मॉण्टेसरी ने भारत में आने के पश्चात् यहाँ के वातावरण को अध्ययन करने पर पुनर्जन्म के विश्वास में उनका उत्तर सर्वथा नकारात्मक न था किन्तु उन्होंने कहा था "मैं अंधविश्वास नहीं करती-जब वैज्ञानिक पुष्टि न हो जाय मैं 'हाँ' या 'न' सकती पर यदि पुनर्जन्म है तो मैं चाहूँ अगला जन्म भी बालसेवा में ही इसी प्रकार

आश्रम व्यवस्था में एक सबसे अच्छ वह यह कि उसमें सामाजिक दोषों से दूर सुसंस्कृत और नियंत्रित वातावरण बच्चों है जहाँ विकास आसानी व शीघ्रता से हो और संयम, ब्रह्मचर्य, समानता तथा निर्वि निर्वाह भली प्रकार होता है पर डा० मॉ सामने आश्रम व्यवस्था का कोई स्वस्थ स्व अतः उन्होंने सामाजिक आदर्शों और गति बीच एक नियंत्रित वातावरण में शिक्षा देने कही। ७-८ वर्ष तक की शिक्षा में डा० और महर्षि दयानन्द जी में पूर्ण समानता वे ७-८ वर्ष तक पारिवारिक शिक्षा पर, दि देते हैं और सहशिक्षा का स्पष्ट विरोध करते माण्टेसरी का शिक्षा सम्बन्धी कार्य ७-८ ही सीमित रहा। अतः सहशिक्षा के विषय विचार स्पष्ट नहीं हो सके।

प्राथमिक शिक्षा पर दोनों महानुभावों एक हैं, उसे माता-पिता द्वारा ही दिलाना पर वर्तमान औद्योगिक सभ्यता के अभ्युदय वारिक व्यवस्था को बड़ा आघात पहुंचाया खास कर यूरोप वगैरह में बच्चे निरा गये उनका विकास रुक गया क्योंकि द्वारा अपेक्षित सहायता-जो उनके विका समृद्धि के लिये अनिवार्य थी, परिवार से न मिल सकी। अतः डा० माण्टेसरी पूर्ति बालघर में कर दी। उन्होंने बालघर नहीं बनाया किन्तु बच्चों के सर्वांगीण दृष्टिगत रखते हुए मुक्त और सुसंस्कृत युक्त किया।

डा० मॉण्टेसरी द्वारा प्रतिपादित, (Social) भाषा की सहायता, व्यवहार

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दि बातों को महर्षि ने सत्यार्थ प्रकाश के द्वितीय ल्लास में प्रकट किया है।

ऋषि ने शिक्षाविधि पर कुछ स्पष्ट निर्देश न यह हम लोगों पर छोड़ दिया है कि उपर्युक्त र की शिक्षा हमारे बालकों को मिल सके। ाविधि निर्माण का कार्य डा० मॉण्टेसरी ने क्षेत्र में लगातार २० वर्ष के प्रयोग और संधान द्वारा किया यदि हम उनकी शिक्षा ति को ग्रहण कर महर्षि दयानन्द द्वारा पादित विषयों की शिक्षा देना आरम्भ कर दें तो प्रतीक्षित समस्या का समाधान सहज ही निकल ता है।

अब भाषा की सहायता के सम्बन्ध में डा० टेसरी द्वारा की गई खोज और 'सत्यार्थप्रकाश' तीय समुल्लास में वर्णित विधि भी प्रायः न ही हैं।

इसके पश्चात् महर्षि ने उस तरह का मार्ग भी त किया है जिससे २०-२१ वर्ष में ही सम्पूर्ण र की जीवनोपयोगी शिक्षा मिल जाय। हाँ इतना तर यहाँ महर्षि और डा० मॉण्टेसरी के बीच श्य है कि उन्होंने गान्धर्ववेद (नृत्य संगीत) ादि की शिक्षा चारों वेद, आयुर्वेद और धनुर्वेद के पश्चात् देने का विधान किया है पर डा० टेसरी ने इसे बचपन से ही भाषा, सामाजिक व्यवहार और मुक्तक्रियाओं (Free activities) के साथ देने का विधान किया है।

वास्तव में यदि देखा जाय तो मॉण्टेसरी शिक्षा पद्धति महर्षि द्वारा वर्णित पाँच परीक्षाओं और आठ प्रमाणों [ईश्वर के गुणानुकूल, सृष्टिक्रमानुकूल, आप्तवचनानुकूल, स्वात्मानुकूल, और प्रमाणानुकूल (प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, ऐतिह्य, अर्थापत्ति सम्भव और अभाव)] पर आधारित महर्षि की शिक्षा पद्धति का नूतन और समयानुकूल संस्करण है किण्डर गार्टन और नर्सरी पद्धतियों में बालकों को खेलों द्वारा शिक्षा दी जाती है परन्तु इसमें बालक की आध्यात्मिक प्रवृत्तियों की पुष्टि और तुष्टि का ध्यान कम है। हाँ, सामाजिक वर्ताव तथाकथित सांस्कृतिक उन्नति, ललितकलाओं(नृत्य संगीत)आदि की शिक्षा पर विशेष बल दिया जाता है जिसका रूप उपदेशात्मक (Instructive) ही है हाँ उसमें दमन (Represion) की बात नहीं है। इसके अतिरिक्त मॉण्टेसरी पद्धति उपर्युक्त सामाजिक और सांस्कृतिक प्रवृत्तियों के विकास के साथ-साथ मानसिक दृष्टि से वैज्ञानिक, नैतिक और आध्यात्मिक चेतना जाग्रत करके विश्वचेतना=जीवन का एकत्व और सृष्टि क्रम में मानव कर्त्तव्यों का बोध कराने वाली है। यह जीवन के प्रथम वर्ष से प्रारम्भ होकर जीवन पर्यंत के लिए उपयोगी है। आर्य समाज को बालकल्याण के कार्य में इसे अपनाना चाहिए।

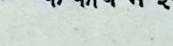

अमर सत्यार्थ प्रकाश

१—मेरा इस ग्रंथ के बनाने का मुख्य प्रयोजन सत्य अर्थ का प्रकाश करना है। अर्थात् जो सत्य है उसको सत्य और जो मिथ्या है उसको मिथ्या ही प्रतिपादित करना सत्य का अर्थ का प्रकाश समझा है।

—महर्षि दयानन्द सरस्वती

२—मैं चाहता हूँ कि आर्यसमाजिक पुरुष वेद वेत्ता दयानन्द के बतलाये हुए मार्ग पर चलने के लिये उनके अपूर्व ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश का दैनिक स्वाध्याय अवश्य करें।

—स्वामी श्रद्धानन्द

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वैदिक धर्म में स्त्रियों की स्थिति

[श्रीसुशीलादेवी विद्यालंकृता मंत्रिणी : आर्य सभा मध्य दक्षिण, हैदराबाद.]

मनुष्य संसार में किसी उद्देश्य-विशेष को लेकर अवतीर्ण हुआ है। उसके जीवन का ओ३म् लक्ष्य है !—

असतो मा सद्गमय।
तमसो मा ज्योतिर्गमय ॥
मृत्योर्माऽमृतं गमय ॥॥

असत् से सत् की ओर जाना। अंधकार से प्रकाश की ओर तथा मृत्यु से अमृत की ओर। उसकी चरम साधना है—

अथ त्रिविध दुःखात्यन्त निवृत्तिरत्यन्त पुरुषार्थः।

आधिभौतिक, आधिदैविक, आध्यात्मिक दुःखों से निवृत्त होकर मोक्ष की प्राप्ति करना। यह लक्ष्य मनुष्य मात्र के लिये है। वेदों में मनुष्य शब्द स्त्री पुरुष दोनों के लिये ही प्रयुक्त हुआ है। मनुष्यः कस्मात् ? मननात्। जिनमें मनन शक्ति है, सत् असत् का विवेचन करने की क्षमता है, अच्छे बुरे की परख करने की योग्यता है, राजहंस की तरह नीर क्षीर का विवेक करने की बुद्धि है उन्हें ही मनुष्य कहते हैं। यह मनन तथा विवेचन शक्ति जहाँ पुरुषों में है वहाँ स्त्रियों में भी है। इसी लिये हमारी वैदिक प्रार्थनाओं में नः शब्द का प्रयोग है। 'धियो यो नः प्रचोदयात्'। सविता देव हमारी बुद्धियाँ श्रेष्ठ कार्यों की ओर प्रेरित करे। 'यद्भद्रं तन्न आसुव' कल्याणकारी सुखों को हमें प्राप्त कराइये। ओमग्ने नय सुपथारायेऽस्मान्। हे अग्नि रूप प्रभो ! हमें ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिये श्रेष्ठमार्ग से ले चल।

इस प्रकार की प्रार्थनायें सामान्य प्रार्थनायें थीं। स्त्री पुरुष दोनों के लिये ही इनका विधान था। दोनों में एक ही आत्मतत्त्व का निवास है। दोनों को अपना सर्वाङ्गीण विकास करने की स्वतंत्रता थी। इसी लिये स्त्री पुरुष दोनों के 'मनुष्य' शब्द का ही सामान्यतया प्रयोग हुआ हाँ, जहाँ माता, पुत्री, कन्या, बहिन पत्नी के कर्त्तव्यों का विधान करना होता है, वहीं स्त्री का प्रयोग किया गया है। पृथ्वी, उषा, आदि के द्वारा भी रूपक बाँध कर उसके विशेष क की झाँकी दिखाई गई है।

कुछ लोगों का विचार है कि "स्त्री नाधीयातामिति" स्त्री शूद्रों को वेद पढ़ अधिकार नहीं। वह अपनी स्वतंत्र रूप से की साधना नहीं कर सकती। उसकी मुक्ति तो की भक्ति से ही हो सकती है। पति ही देवता है, स्त्री को केवल पति की सेवा करनी अन्य किसी देवता की पूजा उसके लिये उचित

पूज्य महात्मा गांधी ने भी बापू का पत्र नाम' में कुछ इसी प्रकार के विचार व्यक्त किये आप लिखते हैं :—

"स्त्रियों पर अन्याय तो राम राज्य से ही आया है। एक मात्र धोबी के कहने से श्रीरामच ने अपनी परम साध्वी पत्नी सीता को त्याग दि सीता की अग्नि परीक्षा के बाद भी उन्होंने उ अन्याय किया। सीता उस समय गर्भवती थी रामचन्द्रजी ने उस पर कुछ भी ध्यान न दि उन्हें सीता से साफ-साफ यह कहने की भी हि नहीं हुई कि एक धोबी के कहने से तुम्हारा करता हूँ। छल से लक्ष्मण द्वारा वन में दिया। स्त्रियों पर अन्याय की प्रथा अब तक आ रही है और स्त्रियाँ इसे चुपचाप सहन आ रही है। मिस मेयो ने 'मदर इण्डिया' लि उसने भारत में स्त्रियों की स्थिति का दर्दनाक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

न किया। और भी कई विदेशी लेखक तथा
के चरण चिह्नों पर चलने वाले भारतीय
क भी यही सिद्ध करने का प्रयत्न करते हैं कि
त में स्त्रियों की स्थिति कुछ उच्च न थी।
ज्ञों के यहाँ आने के पश्चात् ही उन्हें पढ़ने
ने तथा समाज की अन्य गति विधियों में भाग
की प्रेरणा प्राप्त हुई। पहिले सदा ही यहाँ की
बाल-विवाहों, पर्दा-प्रथा तथा अन्य कुरीतियों
सी, दबी घुटी पशुओं का सा जीवन बिताती
इत्यादि। यह सच है कि समय के फेर से,
मानों के इस देश में पदार्पण करने के बाद
ों की पर्दा प्रथा आदि का अवलम्बन करना
। मध्य युग में उससे पढ़ने पढ़ाने का अधिकार
लिया गया। अशिक्षित होने से उसकी
सिक शक्तियों का विकास भी अवरुद्ध हो गया।
यक दृष्टि से भी उसे पुरुष का मुंह देखते रहने
लिये मजबूर होना पड़ा। पुरुषों की स्वार्थ लिप्सा
से घर की वन्दिनी बना डाला। असूर्यपश्या बन
घर की चार दीवारी में रह कर ही घुटना
। पर यह सब समय के फेर से हुआ। वैदिक
में स्त्रियों की स्थिति इस प्रकार की न थी।
ाल विवाह था न पर्दा प्रथा, न उसे आर्थिक
में पर मुखापेक्षी बनना पड़ता था। वह पुरुष
कंधे से कंधा भिड़ा कर हर प्रकार से प्रगति पथ पर
बढ़ सकती थी। उसे शिक्षा दीक्षा के पूर्ण अधि-
थे। "कन्यानां संप्रदानं च कुमाराणां चरक्षणम्"
र कुमारियां दोनों गुरुकुल जाते थे। फिर
ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दतेपतिम्' ब्रह्मचर्य के
ष्ठान पूर्वक कुमाराँ कुमारियां गृहस्थाश्रम में
ष्ट होते थे। तदन्तर वानप्रस्थ संन्यास भी स्त्री
दोनों के लिये ही विहित थे। याज्ञवल्क्य
ासाश्रम में जा रहे हैं। अपनी सारी संपत्ति
वह अपनी पत्नी मैत्रेयी के नाम कर जाना चाहते
हैं पर मैत्रेयी पूछती है। क्या इस ऐश्वर्य को प्राप्त
कर अमृत हो सकूँगी? उत्तर मिलता है:—
अमृतत्वस्य तु नाशारित वित्तेन। धन से अमृतत्व
नहीं मिल सकता। तो वह आर्य नारी चिल्ला
उठती है.—येनाहं नामृता स्यां किमहं तेन कुर्याम्?
वह भी सर्वस्व त्याग कर साधना के पथ पर
अग्रसर हो जाती है।। ब्रह्मवादिनी गार्गी का नाम
किसने नहीं सुना? वह संन्यासिनी थी। कहते हैं कि
एक बार ज्ञानियों की गोष्ठी में बैठे बैठे उसने सुना
कि एक बहुत बड़े दार्शनिक ब्रह्मज्ञानी सौ योजन की
दूरी पर रहतेहैं। गार्गी परम तत्त्व ज्ञानी थी फिर भी
उसकी ज्ञान पिपासा शान्त न हुई थी। चल पड़ी
उस सन्त के दर्शनों को। पैदल चलते-चलते महीनों
में यात्रा पूर्ण हुई। आश्रम में जा पहुँची। संत को
सूचना दी गई, गार्गी आपसे मिलना चाहती है।
सन्त ने अभिमान के साथ कहा—"मैं स्त्री दर्शन नहीं
करता?" उनसे कहदो चार दिन यहाँ ठहर कर
थकान मिटालें। फिर जब इच्छा हो यहाँ से चली
जायँ।" शिष्यों ने जाकर यही सन्देश माता
गार्गी को कह सुनाया कि हमारे गुरुजी संन्यासी
हैं तथा स्त्री दर्शन न करने का उनका व्रत है।
गार्गी आश्चर्यान्वित हो बोली—अच्छा! ऐसे
संन्यासी हैं तब तो मैं अभी यहाँ से चली जाऊंगी
क्यों कि यहाँ ठहरने से संभवः है उन्हें मेरे और
मुझे उनके दर्शन हो जायें। शिष्यों ने जाकर गुरु-
जी को बताया कि गार्गी तो वापिस जा रही हैं।
गुरु हैरान हुए। मीलों चलकर आई देवी बिना
थकान मिटाये ही मेरी बात सुन कर लौट पड़ी।
दर्शनों के लिये पुनः-पुनः आग्रह न किया। गुरु
स्वयं गार्गी के पास आये। पर गार्गी वापिस जा
रही थी। गुरु ने दौड़कर उन्हें पुकारा—गार्गि!

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आप तो रुष्ट हो गईं। गार्गी ने फटकारा। "महाराज ! मुझे सूचना मिली थी कि आप सच्चे ब्रह्मज्ञानी हैं, इसी लिये मैं इतनी दूर से चलकर अपनी ज्ञानपिपासा शान्त करने यहाँ आई थी। पर यहाँ आकर देखा कि आपका व्यवहार ब्रह्मज्ञानियों का सा नहीं। इसी लिये वापिस जा रही हूँ। "आप यह कहने का साहस कैसे करती हैं कि मैं ब्रह्मज्ञानी नहीं," संन्यासी ने क्रुद्ध होकर पूछा। गार्गी कहती हैं–"इसीलिये कि जो व्यक्ति ब्रह्म का ज्ञान प्राप्त कर लेता है वह लिंग-भेद से ऊपर उठ जाता है। उसके लिये स्त्री-पुरुष, बालक-वृद्ध और युवा सभी समान हैं किंतु आप तो अभी सामान्य भेद-भाव की परिधि में ही चक्कर काट रहे हैं।"

ब्रह्मज्ञानी गार्गी का उत्तर सुन संन्यासी उनके चरणों में नतमस्तक हो गया। उसकी आँखें खुल गईं। उसे आज सच्चे आत्मतत्व का ज्ञान हो गया जो इन भिन्न २ शरीरों, भिन्न २ नाम-रूपों में रहता हुआ भी सर्वत्र सर्वदा एकरस है एक है।

विद्वत्ता तथा आत्मबल में बड़े बड़ों कों हराने की क्षमता रखने वाली नारी की गाथा आज कौन नहीं जानता। राजा जनक की राज्य-सभा में स्वयं को सबसे बड़ा पण्डित मानने का अभिमान करने वाले याज्ञवल्क्य का मानमर्दन भी गार्गी ने ही किया। उसके प्रश्न पर कि "कस्मिन्नु इमे लोका ओताश्च प्रोताश्च" याज्ञवल्क्य को कहना पड़ा–"गार्गी ! माति प्राक्षीः"। परमवीरा दुर्गा को वीरता किससे छिपी है। जिसने यह प्रण किया था कि:—

यो मां जयति संग्रामे यो मे दर्पं व्यपोहति।
यो मे प्रतिबलो लोके सो मे भर्त्ता भविष्यति॥

"जो मुझे वीरता में हरा देगा वही मे[illegible] होने का सौभाग्य प्राप्त करेगा।" पर उसे [illegible] कुमारी ही रहना पढ़ा, क्यों कि उसे [illegible] कोई जीत न सका।

स्त्रियाँ वेद वेदांग पढ़ती थीं। न के[illegible] ही पढ़ती थीं, वेदों की भाषिका भी थीं। [illegible] भी इनके काम वेदमन्त्रों के साथ ऋषि[illegible] अङ्कित हैं। विश्ववारा, अदिति, लोपामुद्रा [illegible] शाश्वती, घोषा, जुहू, शची, गोधा, रोमश[illegible] के नाम अनन्त काल तक गर्व के साथ [illegible] किये जायेंगे। अनुसूया, मदालसा, सीता, [illegible] पार्वती, दमयन्ती, देवहूती, भारती आदि [illegible] नारियों के चरणों में श्रद्धा से मस्तक [illegible] हैं। धन की देवी श्री लक्ष्मी के [illegible] विद्या व ज्ञान की देवी सरस्वती के [illegible] वीरता की देवी बल व शक्ति की देवी [illegible] रूप में नारी जाति के गौरव की गाथा ही [illegible] है। गङ्गा, गायत्री भी नारी की पवित्र[illegible] बुद्धिमत्ता के ही परिचायक हैं।

महात्मा गाँधी जिनका एक उद्धरण [illegible] दिया जा चुका है। उन्हें भी आगे चलकर [illegible] विचार बदलने पड़े और कहना पड़ा :—

"विष्णु का नाम लक्ष्मीपति प्रसि[illegible] महादेव को पार्वती-पति कहते हैं। महा[illegible] द्रौपदी को और आदि कवि वाल्मीकि ने [illegible] को गौरवपूर्ण स्थान दिया है। हम प्रा[illegible] सतियों का नाम लेकर पवित्र होते हैं। जो [illegible] इतनी उच्च है उसमें स्त्रियों का दर्जा [illegible] मिल्कियत के समान कदापि नहीं हो सकता।

वेदों के सूत्र ग्रन्थ कहते हैं—

यस्यां भूतं समभवद्यस्यां विश्वमिदं जगत्।
तामद्य गाथां गास्यामि, या स्त्रीणामुत्तमंयशः॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भूत, वर्तमान और भविष्यत् की जननी, महा-या, महाभाग्य शीला विश्वमाता की यशोगाथा गान करते हुए शास्त्रकार अघाते नहीं। अस्तु। स्त्री कौन ? यह प्रश्न विचित्र लगता है। इसका भी उत्तर देना आवश्यक है। वह र है। उसमें आकर्षण है। उसका रूप, यौवन, र सौदर्य पुरुष को मस्त कर देता है तो इसका अर्थ नहीं कि स्त्री नरक का द्वार है। या पुरुष गिराने वाली है। रूप, यौवन नरक के साधन । रूप की तो पूजा की जा सकती है। यौवन शक्ति का समुद्र है। उसमें इतनी शक्ति है कि के द्वारा संसार का नव-निर्माण हो सकता है। चञ्चल है तो संसार में नरक उतरता है (मन ङ्गा तो कठौती में गंगा)। तो फिर स्त्री कौन है ? माता है। या मिमीते मान्यान् करोति सा ता। माता निर्माता भवति। वह केवल अपने लक की ही माता नहीं, वह तो विश्वमाता है। ार का प्रत्येक व्यक्ति माता की ही कृति है। ी का निर्माण है। माता की ही गोद में उसने नम्रता का सन्देश पाया है। इसीलिये माता का ान परिवार, समाज और राष्ट्र में सर्वोपरि है। तो वेदों में स्त्री, पुरुष दोनों को समानाधिकार पर माता होने के नाते उसे विशेषाधिकार प्त थे।

मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरुषो वेद।

ता पहले निर्माण करेगी उसके बाद ही तो ता और गुरु उस पर संस्कारों का रंग चढ़ायेंगे। ान का निर्माण, फिर पालन साक्षात् ब्रह्मा र विष्णु के गुणों से युक्त शक्ति का नाम ही ता है। प्राणीशास्त्र में प्राणियों के दो भेद माने हैं—अनुलोम परिणामी अर्थात् निर्माण क्रिया तत्पर शक्ति। २–प्रतिलोम परिणामी–विध्वंस कारी शक्ति। माता निर्माणकारी शक्ति है इसीलिये उसका स्थान उच्च है।

पिता वै गार्हपत्योग्निर्माताग्निर्दक्षिणः स्मृतः।
गुरुराहवनीयस्तु, सोग्निस्त्रेधा गरीयसी ॥

माता, पिता, और गुरु तीन अग्नि हैं जो संतान के अज्ञानांधकार का नाश कर उसकी आत्मा का विकास करती है।

एतावानेव पुरुषो यज्जायात्मा प्रजेति हे।

स्त्री, अपना शरीर और आत्मा तीनों मिल कर पुरुष कहाता है। परिवार में एकात्मा के अनुभव का विकास इतना हो कि अनेक शरीर एक प्राण हो सकें। एक दूसरे के सुख दुःख के सच्चे साथी। तब इस प्रकार परिवार क्यों कर स्वर्ग न बनेंगे।

स्त्री पत्नी है। माता के रूप में उसका स्थान सर्वोपरि है। पत्नी के रूप में वह पति की अर्धाङ्गिनी है। उसके बिना उसके सब यज्ञ अधूरे हैं। उन दोनों में इतना अन्योन्यपन है कि मनु कहते हैं—स्त्रियाँ तु रोचमानायां सर्वं तद्रोचते कुलम्। स्त्री प्रसन्न है तो सारा कुल ही आनन्दमय हो जाता है। इसीलिये वेदमाता स्त्री से कहती है—

ओमिह प्रजायै ते सभूष्यतामस्मिन् गृहे गार्हपत्याय जागृहि। एना पत्या तन्वं संस्पृशस्वाथ जिविर्विदय मावदासि ॥ अथर्व १४। १। २१

हे स्त्री ! इस गृहस्थ में तेरे और तेरी संतान के लिए ऐश्वर्य वृद्धि हो। उस ऐश्वर्य तथा गृह और गृहपति की रक्षा के लिये तू सदा जागती रह। घर, गृहपति तथा ऐश्वर्य की तू ही संरक्षिका है। पति के साथ जीवन को आनन्द मय बना तथा ज्ञान वृद्ध बन कर सभाओं में भी मानव को कल्याण का संदेश दे।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पत्नी के रूप में नारी पति पुत्र तथा गृहस्थ के सुख शाँति की संरक्षिका भी मानी जाती थी। इसीलिये वेद् उसे सदा जागरूक रहने का आदेश देता है। वह गाफिल हुई तो पति और पुत्रों का मार्ग दर्शन कौन करेगा। इसीलिये विवाह के समय उसे कहते हैं:—

ओं भगस्यनावमारोह, पूर्णामनुपदस्वतीम्।
तयोप प्रतारय यो वरः प्रतिकाम्यः।

हे कन्या ! तू ऐश्वर्य से लदी हुई नाव पर चढ़ और उस नौका से अपने जीवन साथी इष्टदेव को पार ले जा।

आज फिर देश में स्त्री जाति के उत्थान के नारे लग रहे हैं। उसके समानाधिकार की पुकार हो रही है। पर वह सब ऊपर की आवाज है, अन्तःकरण की नहीं। यही कारण है विधान की पंक्तियाँ कागज पर ही अङ्कित रह गईं अभी जीवन का अङ्ग नहीं बन पाई हैं। पश्चिमी सभ्यता नारी को जिस प्रकार की आज़ादी दे रही है वह उसे और भी बर्बादी के पथ पर लिये जा रही हैं। इन रँगीली छैल-छबीली तितलीं नुमा परियों से देश का नव-निर्माण न हो सकेगा। उसके लिए उसे कामिनी नहीं माता बनना पड़ेगा। उसका कामिनी रूप घर की शोभा के लिये है समाज के लिए नहीं। उसका वह रूप आग है जिसमें आने वाले भौरें जल कर खाक हो सकते हैं। उसका अमृत रूप तो विश्व जननी है जो संसार को अमृतत्व की ओर ले जा सकता है। इसीलिये उसके गौरवास्पद सम्बोधन जगदम्बा, जगज्जननी, जगदीश्वरी हैं। इन्हीं के रूप में नारी की पूजा होती है। रंभा, उर्वशी, मेनका रूप तो सदा तपस्वियों की तपस्या भङ्ग कराने के रूप में ही अङ्कित किये गये हैं जिन्हें कभीं ऊँची नजरों से नहीं देखा जाता था। उसके रति रूप ने ही शायद शङ्कराचार्य को नारी नरकस्य द्वारम् कहने के लिए विवश किया होगा। उसकी विलासिता की झाँकी देख कर ही शायद बुद्ध को वैराग्य हुआ होगा। आज हमें नरक का द्वार उद्धार का द्वार बनकर संसार को अमृत कराना है। मानवता अणुयुग की विभीषि संत्रस्त हो उठी है। आज आवश्यकता है जगदम्बा बन कर दुःखी मानव को युद्धों के मुक्ति दिलाएँ। समानाधिकार के नारे नारी का गोरव घटाया है। माता होकर से समानाधिकार चाहे, नहीं वह माता है से है। अपने बच्चों के कल्याण के लिए उसके विशेषाधिकार हैं। कौन उससे छीन उन्हें। जब जब बालक गिरा माता का हाथ बढ़ा, उठाया, पुचकारा। जब बालक ने की, माता ने चपत लगाई। प्यार भी मि माँ से। डाट भी पड़ी तो माता से। पर ने गिला न की। माता तो माता है न! मानवता अन्धकार में भटक कर ठोकर खा है। उसके ममतामय हाथ को ही आगे बढ़ उसे उठाना है। आज मानव स्वार्थ लिप्सा एक दूसरे के खून का प्यासा हो उठा है। उसे ही आगे बढ़कर डांटना, सँभालना पु तभी संसार का उद्धार हो सकता है। बड़ी शांति सभायें शान्ति स्थापित नहीं कर स शान्ति और सुख की वर्षा तो स्त्रियों के द्वार संभव हो सकेगी। इसीलिये वेदों ने नारी पृथ्वी, पृथ्वी के समान अन्नपूर्णा, उषा—उ समान प्राणदायिनी, सूर्या—सूर्य के समान अ विनाशिनी, गायत्री—बुद्धिदायिनी, सावि प्रेरणा प्रदा, अदिति—लक्ष्य पर अटल रहने के रूप में प्रस्तुत किया है। जिस प्रकार नदि महानदी बलशाली होकर अपना साम्राज्य स्थ करती है। उसी प्रकार वेद के शब्दों में कन्या के रूप में पिता के घर की, पत्नीं के पति के घर की सामग्री है तथा माता के न केवल परिवार, समाज, राष्ट्र बल्कि विश्व साम्राज्ञी है। सच है जो हाथ पालना झुला संसार का शासन करता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

स्वामी दयानन्द आये

[श्री धर्मदत्तजी 'आनन्द']

सबल स्वस्थ श्रुति धर्म विस्तार करने, जगत् बीच स्वामी दयानन्द आये।
असत् अज्ञता, अघ, अनय भार हरने, जगत् बीच स्वामी दयानन्द आये ॥

अविद्या निशा में अभागे निशाचर,
मनुष्यत्व का कर अकारण अनादर।
बड़े वेग से बढ़ रहे थे निरन्तर,
हुआ लुप्त था ज्ञान का खर दिवाकर।
अधम, आसुरी वृत्तियां क्षार करने, जगत् बीच स्वामी दयानन्द आये ॥

मिटै दैन्य दुख बस यही कामना थी,
मिले सुख सभी को यही चाहना थी।
हटे द्वेष दानव यही साधना थी,
मिलें सब परस्पर यही भावना थी ॥
दुःखी प्राणियों को पुनः प्यार करने, जगत् बीच स्वामी दयानन्द आये ॥

प्रकृतिवाद की हो रही वन्दना थी,
नहीं ईश के नाम की अर्चना थी।
धवल धर्म की हो रही भर्त्सना थी,
निपट स्वार्थ से पूर्ण प्रति कल्पना थी।
धराधाम पर ध्येय का ध्यान धरने, जगत् बीच स्वामी दयानन्द आये ॥

भयङ्कर छुआछूत का गढ़ गिराया,
मनुष्यत्व का पाठ प्यारा पढ़ाया।
सभी रूढ़ियों, भ्रान्तियों को भगाया,
सदा श्रेष्ठ जन का समादर सिखाया।
दलित दीन जन का समुद्धार करने, जगत बीच स्वामी दयानन्द आये ॥

सहे कष्ट पर कष्ट पर प्रण न तोड़ा,
किया पान विष सत्य से मुख न मोड़ा।
चले आग पर लक्ष्य अपना न छोड़ा,
हुआ चूर वह जो बना राह रोड़ा।
निबल देह में शक्ति संचार करने, जगत् बीच स्वामी दयानन्द आये ॥

सबल, स्वस्थ, श्रुति-धर्म विस्तार करने, जगत् बीच स्वामी दयानन्द आये ॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हम आत्म परीक्षण करें [ले०—श्री आनन्द प्रिय पं

महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज की स्थापना कर इस देश को धार्मिक, सामाजिक एवं राजनैतिक दासता से मुक्त करना चाहा था। आर्य समाज ने सर्व प्रथम धार्मिक क्षेत्र में क्रान्ति का शंखनाथ बजा पुरानी विचार प्रणालीका को जबरदस्त टक्कर दी। इसी प्रकार आर्यसमाज का सामाजिक क्षेत्र में क्रान्ति का कार्य भी आशातीत सफलता को वरण कर सका। धार्मिक क्षेत्र में तो हमने बड़ी मुस्तैदी से सबसे लोहा लिया। हमारे प्रचार कार्य का व्यापक प्रभाव पड़ा। आर्य समाज ने तर्क की कसौटी पर सब को अपने सिद्धान्त कसने का मार्ग दिखाया।

सामाजिक क्षेत्र में हमने दलितोद्धार, विधवा विवाह, नारी सम्मान की भावनाएँ आदि अनेक विध कार्य कर समूचे राष्ट्र का दृष्टि कोण ही बदल डाला परन्तु जन्म मूलक जाति के बंधनों को तोड़ने में हम असफल रहे। सिद्धान्त रूप में हमने गुणकर्मानुसार जाति निर्माण का प्रचार किया। किन्तु व्यवहार में जो क्रान्ति हम करना चाहते थे वह न कर पाये। सच पूछो तो आज हमारा संघटन केवल बैठक का ही संगटन रह गया है। हम बिरादरियों के सागर को पार न कर पाये।

राजनैतिक क्षेत्र में अब भारत स्वतंत्र हो गया है। मुस्लिम शासकों ने हमें तलवार के बल पर दास बनाया था। शिवाजीने तलवार का मुकाबला तलवार से कर मुगल सम्राज्य का अन्त कर दिया। अंग्रजों ने अपने शासन काल में अपने शिक्षण द्वारा हमें मानसिक गुलाम बनाने का आयोजन किया था। भारत से चले जाने पर भी वे अपनी सांस्कृतिक-विजय के रूप में काले अंग्रेज इस देश में छोड़ जाना चाहते थे। महर्षि दयानन्द ने इस रहस्य को समझकर देश को पश्चिम की इस मानसिक दासता से मुक्त के लिए वेदों की ओर चलो सूत्र देकर हमें की गौरव पूर्ण संस्कृति के इतिहास का कराया। और सच्ची राष्ट्रीयता उत्पन्न करने सुझाया। गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का पुनरुद्धा उद्देश्य से हुआ था। गुरुकुलों के खुलने से युग का दर्शन होगा ऐसा सबको भासित परन्तु हमारी यह सफलता चिरजीवी न मैकोले के गोत्रधारियों ने जीवन निर्वाह करने शिक्षण का प्रलोभन देकर स्कूल और कालेजों दिए। आर्य समाज के गुरुकुल फीके पड़ गये हमारी मानसिक गुलामी पूर्ववत् बनी रही। माध्यम द्वारा शिक्षण देने वालों इसाई स्कू कॉनवैन्टस हमारे आराधनामंदिर बन गये। गण्य-मान्य आर्य समाजियों की संतानें भी एवं अपने स्कूल कालेजों को छोड़ कर इन्हीं में शिक्षा दीक्षा लेने लगीं। एक अछूत आ ईसाई बन जायें तो हमें दुख होता है। परन्तु ग्राम में कॉन्वेन्टों में पढ़कर मानसिक ईसाई वाले बच्चों को देखकर हमें अभिमान और होता है।

आर्य समाज ने शिक्षण क्षेत्र में अद्भुत प्रारम्भ कर अन्ततोगत्वा हार मान ली। और लित शिक्षण क्रम में ही अपनी संस्थाओं दिया। परिणाम स्वरूप सैंकडों हाई स्कूल और चलाने पर भी हमारी भावी-सन्तानें आर्य स रस नहीं ले रहीं। हमारे कालेज केवल मात्र के केंद्र ही बन कर रह गये। हम उन्हें संस्कार न बना सके। महर्षि दयानंद गुरुडम के विरो अंध श्रद्धा और अंध विश्वास के शत्रु थे। हमने गुरुओं को तथा सच्ची श्रद्धा भक्ति को भी कर डाला।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

महर्षि ने प्रजातंत्र वाद पर ही हमारे संगठन की
ा डाली थी हमारे सब कार्यों में चुनाव पद्धति को
प्रधानता दी गई है। परंतु हमारी चुनाव पद्धति
चमी दल बंदी के ढाँचे पर चली गई। उसमें
र्मिकता का एकदम अभाव हो गया। आर्यसमाजों
चुनाव के समय हमारे दिवालिया पन का नग्न
त्र जो हमें दीखता है। इस बात का द्योतक है कि
में धार्मिकता का अभाव है। सच कहें तो इस
य चुनाव और चुनावों के कारण उत्पन्न होने
ी दलबंदी ने हमें सभ्य एवं शिष्ट जगत् के सामने
ास्पद बना दिया है। इस हीन अवस्था में विश्व
टन करने का हमारा दावा कितना पोला है।

इसी प्रकार आर्य समाज में स्वाध्याय वृत्ति,
संग भावना कम हो रही है! आर्यसाहित्य का
ा बंद सा हो गया है। हमारे साप्ताहिक सत्संग
स तथा श्रद्धाहीन हो गए हैं। इससे स्पष्ट है कि
में हमारे संगठन को जीवित बनाने का विचार
नहीं। फिर हम युग परिवर्तन के साथ भी चलना
चाहते। महर्षि और सिद्धांतों की दुहाई देकर
बात में हम गतिरोध उत्पन्न करते हैं। हम इस
की किसी भी प्रगति शील प्रवृत्ति को अपनाना
चाहते।

प्राचीन आर्यों ने तो सब क्षेत्रों में उन्नति की
पर हमारी सफलता की सीमा केवल तालसुर
ान भजन गाने में और रट कर भाषण देने में
ुनने में ही रह गई है। यही कारण है कि नई
हमें पुरातनवादी मान हमसे दूर भागती है।
ारी वर्तमान प्रचार पद्धति केवल उत्सव मनाकर
वजय करने में ही सीमित हो गई है। देवोत्थान
शी के समान हमारे देव भी उत्सव के समय ही
जाग्रत होकर फिर वर्ष तक आराम से सोते हैं।
आर्य समाज का एक भी उत्सव आर्यसमाजियों की
समस्याओं पर सजीव विचार करने के लिये व
संस्थाओं को बनाने के लिए नहीं होता। हमारे उत्सव
मनोरंजन के ही साधन मात्र बन गये हैं। नये सभा
सद हमें नहीं मिल रहे। रिक्त स्थानों की पूर्ति करने
वाला कोई नहीं मिलता। प्रत्येक संस्था अपने सामने
कुछ योजना रखती है। उस योजनानुसार कार्य-क्रम
बनाती है। प्रतिदिन बदलने वाली परिस्थितिओं में
आज भी ५० वर्ष पूर्व की ही योजनाएँ एवं कार्य-
क्रम हमारे सामने हैं। इस समय कोई नवीन योज-
नाएँ ना नवीन कार्य क्रम हमारे सामने नहीं है।
इससे हमारे सब कार्यों में नीरसता आ गई है। विश्व
को आर्य बनाने वाले हम अभी तक उडीसा,
आसाम केरल, तामिलवाड, आंध्र, मैसूर, आदि
प्रदेशों में साहित्य द्वारा अथवा प्रचारकों द्वारा पहुँच
ही नहीं पाये। अरब में हलचल मचाने वाले ब्रह्म-
चारी स्वामी की दुनियाँ में ही रह गये। जिस समय
रामकृष्ण मिशन के सैंकड़ों ग्रेजुएट सन्यासी देश
विदेशों में और सेवा क्षेत्रों में डंका बजा रहे हो, उस
समय हमारे सन्यासियों की संख्या उँगलियों पर
गिनी जा सकती है। ऐसा प्रतीत होता है कि नई
प्रजा इस आश्रम के महत्व को नहीं समझ रही।
हमारा दुर्दैव तो यह है कि हमारी सभायें, समाज
तथा संस्थाएँ अपने झमेलों से ही ऊपर नहीं आरहीं
क्या यह उचित नहीं कि अब समय आ गया है कि
आर्य समाज तथा इसके कर्णधार अब एक आत्म
परीक्षा सम्मेलन करके इस घर को फिर से सुव्य-
वस्थित करें। आशा है दीक्षा शताब्दी का हमारे
लिए यही एक मात्र पावन सन्देश होना चाहिए।
समय हमारे कर्त्तव्य की परीक्षा ले रहा है।

१०—स्वामी दयानन्द पहले व्यक्ति थे जिन्होंने 'हिन्दुस्तान हिन्दुस्तानियों के लिये है' का नारा लगाया था। उस महान् पुरुष के लिये मेरे हृदय में सच्ची पूजा की भावना है।

श्री मती एनी बीसैण्ट

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्य पत्रकारों का संक्षिप्त इतिहास

[श्री आचार्य नरदेव शास्त्री, वेद

पंजाब—पंजाब में दो दल थे एक महात्मा पार्टी तथा दूसरी कॉलेज पार्टी। महात्मा पार्टी का अंगरेजी अखबार था "आर्यपत्रिका"-इसके संपादक पहिले पहिले थे बा० अर्जुनसिंह। इसके 'मुकाबले में कॉलेज पार्टी का पत्र या 'आर्यमेसेंजर' इसके संपादक थे बाबा अर्जुनसिंह के ज्येष्ठ भ्राता बाबा छज्जूसिंह। महाशय कृष्ण बी. ए. भी आर्यपत्रिका के कई वर्ष संपादक रहे। महात्मा पार्टी का एक और उर्दू पत्र था 'प्रकाश' यह म० कृष्ण का अपना पत्र था किन्तु महात्मा पार्टी का पोषक था, आर्य समाज अनारकली से कॉलेज पार्टी का एक उर्दू साप्ताहिक "आर्य गजट" अब भी जालन्धर से प्रकाशित होता है। महात्मा पार्टी का एक उर्दू पत्र 'सद्धर्म प्रचारक' जालन्धर से प्रकाशित होता था। इसके स्वामी और संपादक स्वयं उस समय के लाला मुन्शीराम थे जो स्वयं आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान भी थे। ला० खुशालचन्द्र आनंद कुछ वर्ष 'आर्य गजट' के प्रधान संपादक रहे।

जब महात्मा मुन्शीराम कांगड़ी के प्रथम मुख्याधिष्ठाता होकर गुरुकुल में आये तो उनका सद्धर्म-प्रचारक प्रेस और 'सद्धर्मप्रचारक' पत्र भी कांगड़ी आगया था फिर 'सद्धर्म प्रचारक' ने हिंदी रूप धारण किया। फिर वही सत्यवादी का रूप धारण करके स्व० संपादक रुद्रदत्तजी तथा श्री पण्डित पद्मसिंह शर्मा के संपादकत्व में निकलता रहा। इस समय पंजाब में आर्यों के तीन हिन्दी पत्र निकल रहे हैं १ आर्य गजट का हिन्दी "आर्य जगत्" जो कि आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख पत्र है। उसके प्रथम संपादक थे श्रीरामस्वरूप शास्त्री और पिछले दिनों रहे श्री अजित प्रसाद सत्यार्थी और अब त्रिलोकचन्द्र जी शास्त्री हैं आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख पत्र था 'आर्य' अब उसका पत्र है, आर्योदय दोनों के संपादक, श्री जगदेव सिद्धान्ती मन्त्री प्रतिनिधि सभा। 'आर्यवीर" पहले उर्दू में ही निकलता रहा। संपादक श्री पं० महेरचन्द्र श्री अब वही पत्र हिन्दीमासिक रूप में निकल संपादक वे ही हैं मेहरचन्द्र शर्मा जी।

राजस्थान-परोपकारिणी सभा की मासिक "परोपकारी निकलता रहा हिन्दी थे श्री स्व. पं० पद्मसिंह शर्मा। ये जब आये तब पत्र बन्द हो गया। इस साल से उसका प्रकाशम पुनः सभा ने आरम्भ आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान मुखपत्र "आर्य मार्तण्ड" था। अच्छा दल बन्दी के कीचड़ में फँस गया था। कभी चमक निकलता है, श्रीजयदेव शर्मा कार इसके संपादक थे. कभी स्व० चान्दकिरण भी संपादक रहे। अब श्री भगवती प्रसाद सम्पादक हैं। अब प्रतिनिधि सभा मध्य मुख पत्रिका है 'आर्यावर्त'। लश्कर से निक पहले उसके सम्पादक उमेशचन्द्र स्नातक थे संपादक हैं श्री अशोककुमार विद्यालङ्कार।

बम्बई—आर्य प्रतिनिधि सभा बम्बई का था (गुजराती साप्ताहिक) इसके पश्चात् कई हुए पर कोई पत्र न निकल सका। हाँ "आर्य निकली थी वह भी बीच में बन्द हो गई।

दक्षिण—हैदराबाद से बहुत वर्ष तक आर्य निकलता रहा, संपादक थे श्री नरेन्द्र। अब सम्पादकत्व में उसके पश्चात् "विवृति" नामक पत्रिका निकल रही है हैदराबाद प्रतिनिधि सभा मुख पत्रिका रूप में। इसी वर्ष से तेलगू 'परिव्राट्" नामक साप्ताहिक पत्र आर्य समाज पूरा हैदराबाद की ओर से निकल रहा है।

मध्यप्रदेश—मध्यप्रदेश आर्य प्रतिनिधि का मुख पुत्र "आर्यसेवक" पहिले साप्ताहिक चलता रहा है। बीच में कभी पाक्षिक भी रहा मासिक रूप में निकल रहा है।

बिहार—बंगाल प्रतिनिधि सभाएँ पहिले

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

लिए उस प्रदेश में श्रीरुद्रदत्त शर्मा के संपादकत्व आर्यवर्त' चलता रहा। एक 'सरपञ्च' नामक पत्र श्रीरुद्रदत्त निकालते रहे। अब दोनों प्रतिनिधि ाएँ पृथक्-पृथक् हैं। बंगाल की प्रतिनिधि सभा पत्र "आर्य समाज" प्रकाशित हो रहा है।

दिल्ली—आर्य सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा मुखपत्रिका 'सार्वदेशिक' बराबर निकल रही है। हिले कई वर्ष विद्यामार्तंड धर्मदेव विद्यावाचस्पति रहे। पण्डित रघुनाथ शर्मा पाठक सहायक हुए। ली से साप्ताहिक 'पुण्य भूमि' पं० ब्रह्मदत्त स्नातक के ादकत्व में, श्रीप्रकाशवीर शास्त्री का 'आर्यसमाज' काल चल कर बन्द हो गया।

उत्तर प्रदेश—"गुरुकुल पत्रिका" कांगड़ी की पत्रिका है। संपादक हैं विद्या मार्तण्ड धर्मदेव ले थे रामवेदी थे।

भारतोदय—महाविद्यालय ज्वालापुर की मुख-का रही। मासिक और साप्ताहिक रूप में। स्व० पद्मसिंह शर्मा, श्रीनरदेवशास्त्री, श्री पं० हरिशङ्कर र्मा तथा श्री रामस्वरूप शास्त्री समय-समय पर दक रहे। प्रारम्भिक दशा में स्वा० दर्शनानन्द स्वती उर्दू में महाविद्यालय समाचार निकालते ।

आर्यमित्र—श्री महात्मा नारायण स्वामी श्री ० मशालसिंह, श्री चौधरी हुकमसिंह (आंगई) य-समय पर प्रारम्भिक दशा में इसको चलाते । फिर स्व० संपादकाचार्य रुद्रदत्त शर्मा, श्री पं० र्वानन्द (स्व० पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी दारागंज, ाग) फिर पं० हरिशंकर शर्मा, बीच में श्री धर्मेन्द्र शास्त्री एम० ए० समय-समय पर काम करते । बीच में एक वर्ष के लिए श्री बनारसीदास र्वेदी संपादक रहे। सबसे अधिक काल है, श्री शङ्कर शर्माजी का। उनके सहकारी श्री रामस्वरूप स्त्री भी रहे।

लखनऊ आने पर आर्यमित्र एक साल तक नक भी रहा। श्रीहरिशङ्कर जी के समय में धौलपुर आर्य समाज के सत्याग्रह के समय में भी १॥ मास के लिये तथा मथुरा शताब्दी के समय दैनिक होगया था। इस समय संपादक हैं श्रीउमेशजी स्नातक एम० ए०।

आर्य मुसाफिर—यह है पं० भोजदत्त आर्य-मुसाफिर का निजू पत्र था। यह आगरे से निकलता रहा और उर्दू साप्ताहिक रूप में रहा।

वेदवाणी—पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु का निजूपत्र है, पर है आर्यसमाज का पोषक मासिक रूप में वाराणसी से निकलता है।

इसके अतिरिक्त—निम्न पत्र आर्यसामाजिक पुरुषों के निजू पत्र रहे। इन पत्रों से भी आर्यसमाज को बड़ी सहायता मिलती रही।

प्रताप उर्दू—दैनिक पहिले लाहौर से निकलता रहा। पञ्जाब विभाजन के पश्चात् नई दिल्ली से निकल रहा है। सम्पादक वे ही महाशय कृष्ण हैं।

वीर अर्जुन—पहले स्वा० श्रद्धानन्द जी का पत्र रहा। फिर श्री इन्द्रजी के हाथ में वर्षों रहा। फिर जन संघियों के हाथों में गया। अब महाशय कृष्णजी के हाथों में है। दैनिक रूप में।

उर्दू मिलाप—यह लाहौर से निकलता था। श्रीखुशालचन्द खुरसन्द का पत्र था। पञ्जाब विभाजन के पश्चात् न्यू दिल्ली आया। वहीं से सञ्चालित होता है। सम्पादक है खुरसन्दजी के पुत्र श्री रणवीर जी इसी पत्र का दैनिक हिन्दी एडीशन जालन्धर से निकता है। सम्पादक हैं, श्रीखुरसन्द (आनन्दस्वामी) के छोटे पुत्र श्री यश। हैदराबाद दक्षिण में इसी पत्र की उर्दू और हिन्दी के दैनिक एडीशन निकल रहे हैं।

पञ्जाब में महाशय कृष्णजी का जो उर्दू साप्ताहिक 'प्रकाश' निकलता था, वह ईस्टपञ्जाब में आकर हिन्दी में निकलता रहा। उसी पत्र को 'वेदप्रका' नाम से मासिक रूप में दिल्ली के गोविन्दराम हासानन्द निकाल रहे हैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

स्व० स्वामी तुलसीराम जी सामवेद भाष्यकार का अपना 'वेदप्रकाश' आर्य समाज के सिद्धान्तों का अच्छा वैदिक मासिक था।

फर्रुखाबाद में आर्यसमाज का मुखपत्र 'भारत-सुदशा प्रवर्तक' पहले मासिक रूप में चल रहा था। इसके प्रवर्तक महर्षि स्वा० दयानन्द सरस्वती थे। स्वामीजी का पत्र समझ कर वहाँ का आर्यसमाज श्रद्धा भक्ति पूर्वक १९०८ तक इसे चलाता रहा अन्तिम दो साल में यह साप्ताहिक रूप धारण कर गया था।

स्व० पण्डित गणेश प्रशाद शर्मा सम्पादक थे।

रोहिलखण्ड—मुरादाबाद से स्व० शङ्करदत्तशर्मा 'शंकर' नाम का एक साप्ताहिक रहे। वह दो वर्ष ही चल सका।

आगरा—श्री पण्डित हरिशंकर शर्मा 'प्रतिभा' भी कुछ काल चमक कर बन्द होगई 'निराला' भी बहुत दिन चल न सका।

ऋषि की याद

(श्री हरिश्चन्द्र एम. ए. साहित्यरत्न)

दीप की लौ में ऋषिवर : सुधि तुम्हारी जगमगाती ॥
वेद की पावन परम ध्वनि को सकल भू पर गुँजाने,
विश्वभर के मानवों को आर्यजन फिर से बनाने।
तुम स्वयं आये क्षमा का पाठ सब जग को पढ़ाने,
आज भी वह दिव्य आकृति लोचनों में उभर आती ॥
दीप की लौ में.....

ज्ञान से अज्ञान की गति आपने अवरुद्ध करदी,
मतमतान्तर में भ्रमित मति आपने फिर शुद्ध कर दी।
नव प्रभा लेकर अवनि पर नव प्रभात उतार लाये,
उस विभा की ज्योति अब तक सकल जग में जगमगाती ॥
दीप की लौ में.....

वह पवन सी गति तुम्हारी वह धरा सी धृति-क्षमा,
चन्द्र के आलोक-सी उज्ज्वल तुम्हारी आत्मा।
जो प्राण-घातक के लिये भी शान्ति-सरिता बन बही,
प्रेम करुणा औ दया की सीख हम सब को सिखाती ॥
दीप की लौ में.....

स्वर्ग के सन्देश वाहक! प्रेम के पावन पुजारी,
विश्व-हित के परम साधक, क्षेम भावों के प्रचारी।
शांति-पथ के औ प्रदर्शक! हे ऋषि, हे महान् योगी,
आज दीपावलि तुम्हारी याद बरबस ही दिलाती ॥
दीप की लौ में ऋषिवर सुधि तुम्हारी जगमगाती ॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

शिक्षा कैसी हो ! [श्री डा० हरिदत्त शास्त्री एकादशतीर्थ एम. ए.]

ऐसा कौनसा पितृ हृदय है जो अपने बालक को सदाचारी, सुशिक्षित, सौरम्य, विनीत, तीन और आज्ञाकारी बनाना नहीं चाहता। ऋक्य ने जो छः जीव लोक के सुख गिनाएँ हैं में पुत्र का आज्ञा कारी, मातृ भक्त, पितृसेवी होना एक गुण है–उन्होंने आज से ३ तीन हजार वर्ष कहा था कि:—

१ २
अर्थागमो नित्यमरोगिता च,
३ ४
प्रिया च भार्या प्रियवादिनी च।
५ ६
वश्यश्च पुत्रोऽर्थकरी च विद्या,
षड् जीव लोकस्थ सुखानि राजन् ॥

पर देखा यह जा रहा है कि बच्चा कालेज में पढ़ने नहीं कि हाथ से भी गया। इस रोग का कारण ा का दोष-पूर्ण होना है। आज कल की शिक्षा ल किताबी तालीम है। शिष्य का जैसे गुरु से सम्बन्ध नहीं होता वैसे ही उसकी विद्या का भी के जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं होता। जिस ा को जीवन में नहीं ढाला गया तब तो वह ा-गधे का बोझा ही हुआ। तथा यह भी जान आवश्यक है कि शिक्षा अक्षर ज्ञान या पुस्तक को नहीं कहते वह तो गुरु सेवा तथा यमनियम ायाम व सदाचारके पारिपालन से उत्पन्न होती है। एव बालक का विद्यारम्भ तो उपनयन के बाद ा है पर अनुशासन व्रतपालन से होता है। इस यह विचारना है कि हमारे बच्चे शिष्ट और कैसे बनें। इसके लिए केवल सत्संग या गुरु के अन्य कोई उपाय नहीं, सत्सङ्ग का अर्थ यहाँ अच्छा वातावरण, अच्छे सहपाठी, अच्छे गुरु, र अच्छी पुस्तकें। इस ही के लिए ऋषि दयानंद ने "गुरु धाम" की शरण ली थी, तथा तृतीय समुल्लास में विद्याभ्यास क्रम बतलाते हुए व्याकरण वेद, उपवेद, दर्शन यह विद्या क्रम रक्खा है। जिस का भाव यह है कि व्याकरण से शब्द निर्माण (Phonology) और (marphology) अर्थात् Philology को जानने के बाद वेदमन्त्रोच्चारण ठीक होगा। अपने-अपने वेद के पढ़ने के बाद उपवेद और दर्शन पढ़े साथही तुलनात्मक दृष्टि से पाश्चात्य दर्शनों को भी पढ़े। तथा राज विद्या पद से राज भाषा का भी ग्रहण किया गया है। इस विद्याध्ययन की प्रक्रिया कोउत्तम बतलाया गया है क्योंकि उन्होंने स्वयं लिखा है कि "जितनी विद्या इस रीति ले बीस या इकीस वर्षों में हो सकती है। उतनी अन्य प्रकार से शतवर्ष में भी नहीं हो सकती।"

सारांश यह है कि आचार विचार के साथ जितना भी पढ़ा जायगा। वह मनुष्य को देव बनायगा अन्यथा मनुष्य राक्षस होगा साक्षर होने पर भी। इस शिक्षा के प्रसार के लिए स्वामीजी ने फर्रुखाबाद की पाठशाला के बाद अयोध्या में भी एक पाठशाला खोली थी। दण्डीजी स्वामी विरजानन्द जी के शिष्य श्री उदयप्रकाश जी थे। उनके पुत्र थे श्री मुकुन्द देव जी। इन्हीं के साथी श्री वनमाली जी थे। ये सब दण्डी जी के शिष्य थे। मुकुन्द देव जी के शिष्य श्री पं० श्रीवर जी शास्त्री चतुर्वेदी थे। जिनका अभी हाल में स्वर्गवास हुआ है। आजीवन द्वारिकाधीश संस्कृत-पाठशाला के प्रधानाध्यापक रहे। श्री मुकुन्द देव जी गवर्नमेंट-हाई-स्कूल, मथुरा के हेड मास्टर श्री आत्माराम खत्री द्वारा संचालित पाठशाला में आजीवन अध्यापक रहे। "राजपुरुष" इस पद पर दण्डी जी का रंगाचार्य के साथ शास्त्रार्थ हुआ। कुछ लोगों का कहना है कि "अजाद्यतष्टाप्" इस सूत्र पर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

शास्त्रार्थ हुआ। दण्डी जी का सत्य-पक्ष होते हुए भी श्री स्वामी विशुद्धानन्द जी ने विपरीत निर्णय दिया तथा दिलवाया। दण्डी जी क्रोधी तो थे ही। अनार्ष-ग्रन्थों के विरुद्ध हो गये। उन्होंने 'प्रभुदयाल को अपने यहाँ ४० रुपया पर नौकर रखा। उसका काम यह था कि वह प्रतिदिन दण्डी जी की ओर से भारत के वायसराय को पत्र लिखें, जिस पत्र में लिखा होता था कि अपनी विशेष आज्ञा के द्वारा भागवत तथा सिद्धांत कौमुदी का पठन-पाठन भारत में बन्द करा दिया जाय तथा इन पुस्तकों को यमुना में बहा दिया जाय। इस प्रकार वे जब तक जीवित रहे, इसी उद्देश्य की पूर्ति में लगे रहे। ऋषि दयानंद ने भी गुरु की आज्ञा नुसार इस लक्ष्य की पूर्ति के लिये अनेक स्थानों पर पाठशालायें खुलवाईं। वे जब अयोध्या पहुँचे तो श्री गुरु चरण जी उपाध्याय के सरयू बाग में ठहरे-घूमते २ बोले कि "गुरु चरण मेरा पैर फँसता है।" गुरु चरण जी ने कहा कि महाराज आज्ञा कीजिए उन्होंने कहा कि यहाँ एक संस्कृत पाठशाला खोलो। पाठशाला खुल गई उसका नाम "ब्राह्मण विद्यालय" रक्खा गया जिसमें ५०० छात्र पढ़ते थे, १६ अध्यापक थे, वहीं एक प्रेस भी खोला महाभारत व महा भाष्य के कुछ अंश मुद्रित हुए गुरु चरण जी की माता कृष्ण भक्त थी उन्होंने ऋषि से कृष्ण की मूर्ति स्थापन का आग्रह किया— माता की उम्र १११ वर्ष की थी। ऋषि ने माता का अभिनिवेश देखकर ब्रह्मचारी कृष्ण, की मूर्ति कल्पित करके आदर्श रूप में चरित्र बनाने के लिये रखने का आदेश दिया। यह मूर्ति आज भी सरयू बाग में विद्यमान है। बाद में अयोध्या के महाराज जिन्हें ददुआ महाराज कहते थे उनके लाख समझ बंटवारा हो ही गया ११ पुत्रों में जायदाद यह पाठशाला भूसी (प्रयाग) चली गई तथा पेड़" पाठशाला के नाम से चलने लगी, श्री जी की धर्म परायण धर्म पत्नी ने मिर्जापुर पुर (जिला गोंडा) में भी पाठशाला जिनमें मिर्जापुर की नष्ट हो गई पर तुलसी आज भी चल रही है, अयोध्या की पाठशा भी चल रही है। वहाँ के प्रधान अध्यापक लग्न जी व्याकरणाचार्य है तथा गोपेश ज्योतिषाचार्य आदि ४ अन्य अध्यापक भी पाठशाला के व्यवस्थापक श्री गुरु चरण जी श्री पं० श्री निवास जी एम. ए., एल एल. बी कल इस पाठशाला के व्यवस्थापक हैं। श्री निवास जी के दो पुत्र हैं। श्री प्रद्युम्न उपाध्याय श्री गंगा प्रसाद उपाध्याय। इस प्रकार विद्या प्रचार के लिए मथुरा, फर्रुखाबाद, काशी आदि स्थानों पर बड़ा उद्योग किया द्वारा अनुमोदित कृष्ण मूर्ति यह बतला प्रत्येक छात्र को विद्योपार्जन के समय कृ गुरु भक्त व ब्रह्मचर्य का जीवन बनाना यही एक मात्र उपाय है जो छात्रों में बढ़ते हु शासन हीनता की भावना को हटा कर संय जीवन की ओर अग्रसर होने की प्रेरणा दे यह वर्णन हमने श्री श्री निवास जी अ स्वयं मिलकर स्वयं जानकारी व खोज क है। यह ऋषि जीवन तथा शिक्षा के विकास पहलू है जिसे अपनाना हम सब का कर्त्त

मैं तो ऋषि दयानन्द को श्री कृष्ण की बाँसुरी बजाते हुए, स्वतंत्रता और कर्त्तव्य का पाठ पढ़ाते हुए देखती हूँ। ऋषि की भाषा में सौंदर्य बलिदान, स्वतन्त्रता और वीरत्व है। ऋषि की प्रशंसा में वाणी कुंठित है।

—भारत कोकिला सरोजिनी नायडू

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सुख और दुःख

[श्री ला० पूर्णचन्द्र जी एडवोकेट, प्रधान सार्वदेशिक सभा]

★

दुख में सब सुमरण करें, सुख में करे न कोय।
जो सुख में सुमरण करें, दुख काहे को होय॥

इस दोहे में एक महत्वपूर्ण प्राचीन वैदिक सच्चाई पर प्रकाश डाला गया है। विशेष बल ईश्वर के सुमरण पर दिया गया है। ईश्वर का सुमरण मनुष्य जीवन की मर्यादा के लिये आवश्यक है, परन्तु जब मनुष्य सुखी होता है, धन धान्य से परिपूर्ण होता है, उस के पास पर्याप्त पशु और प्रजा होती है सब प्रकार के सुख के साधन उपलब्ध होते हैं तो वह इनके प्रयोग में मग्न हो जाता है, मस्त हो जाता है, अपने आवश्यक कर्तव्य को भूल जाता है। यदि प्रातः काल मनुष्य ईश्वर का सुमरण कर ले तो दिन भर उसको सुख प्राप्त करते समय और सुख के भोग करते समय ईश्वर के आदेश और उद्देश्य उसके सन्मुख रहेंगे। वह ईश्वर के अटल नियमों को ध्यान में रखेगा, ईश्वर का नियम यह है कि जीव कर्म करने में स्वतन्त्र है परन्तु फल पाने में दैविक व्यवस्था के सन्मुख परतन्त्र है। यदि सुख की खोज में उस की सामग्री की, प्राप्ति की धुन में और प्राप्त की हुई सुख की सामग्री के प्रयोग में ईश्वर की सत्ता से विमुख होकर कर्म करने लगता है तो इसका परिणाम सुख न होकर दुःख हो जाता है। सुख और दुःख परिणाम के रूप में समझने चाहिए। शुभ कर्म का फल सुख है, और अशुभ कर्म का फल दुःख है। शुभ कर्म के लिये कर्म फल प्रदाता की सत्ता पर विश्वास करना अनिवार्य है।

यदि कर्म फल प्रदाता की सत्ता और उसकी अटल कर्म व्यवस्था सम्मुख रहेगी तो उसका कर्म मर्यादित रहेगा और जो अशुभ कर्म के कारण दुःख प्राप्ति का परिणाम होता है उससे बचा रहेगा। दूसरे शब्दों में सुख और दुःख का सम्बन्ध ईश्वर सुमरण से और ईश्वर सुमरण का सम्बन्ध पाप और पुण्य से है। अर्थात्—सुख और दुःख का सम्बन्ध ईश्वर का सुमरण करने और न करने से है।

ईश्वर की उपासना और प्रार्थना केवल परलोक के लिये नहीं, इसका घनिष्ट सम्बन्ध जीवन के हर क्षेत्र और हर स्थान और हर समय से है, यदि किसी को अपना जीवन पवित्र मर्यादित दूसरे शब्दों में सुखमय बनाना है तो उसको ईश्वर की उपासना पर ध्यान देना होगा और ईश्वर उपासना की विधि को समझ कर ईश्वर उपासनामय अपने स्वभाव को बनाना होगा। ईश्वर उपासना का सीधा सम्बन्ध पाप की भावना के निराकरण से है।

मनोविज्ञान की दृष्टि से पाप की भावना के दो आधार हैं, पाप जब किया जाता है उस समय पाप करने वाला यह धारणा कर लेता है कि उसके पाप को कोई देखने वाला नहीं है, यदि यह धारणा हो जाती है कि एकान्त स्थान होने के कारण या रात्रि के अन्धेरे के कारण उसका पाप छिपा रहेगा तो उसको पाप करने के लिये साहस हो जाता है। इसी प्रकार पाप की भावना

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

के लिये, दूसरा आधार पाप के क्षमा हो जाने की आशा से है। यदि पाप करने वाला यह समझले कि उसका पाप छिप न सकेगा और न क्षमा हो सकेगा तो उसको पाप करने के लिये न साहस होगा न विचार आयेगा। इन दोनों मनोवैज्ञानिक भ्रम मूलक आधारों का निराकरण तभी हो सकता है जब यह भावना दृढ़ हो जाये कि संसार में कर्मफल प्रदाता और कर्म की व्यवस्था करने वाली एक व्यापक शक्ति है जिससे न कुछ छिप सकता है और न जिसके न्याय से कोई बच सकता है। तब दोनों मनोवैज्ञानिक भावनाओं का निराकरण हो जायेगा और वह स्वभाव से पाप कर्म से बचे रहने वाला और पुण्य कर्म करने वाला हो जायेगा। इस दृष्टि से ईश्वर उपासना का सीधा सम्बन्ध कियात्मक जीवन से है। आज सुख की वृद्धि के लिये और दुःख के निराकरण के लिए योजनायें बन रही हैं, राजा और प्रजा इन योजनाओं को सफल बनाने में लगे हुए हैं, परन्तु इनके असली कारणों पर ध्यान नहीं। यदि कोई चिकित्सक रोग के कारणों का निदान नहीं करता और केवल बाहर के चिन्हों पर ध्यान देकर उपचार की आशा रखता है वह रोग के निराकरण में सफल नहीं होगा। रोग का निराकरण, कारण के पता लगा लेने से होगा और कारण के पता लग जाने से ही सच्चा निराकरण हो सकता है। यदि योजना बनाने वाले अपनी शक्ति का एक बहुत बड़ा भाग कारणों की खोज में लगाये तो सुख की वृद्धि और दुःख का निराकरण भली प्रकार हो सकता है।

सुख और दुःख का सम्बन्ध अर्थ और काम की व्यवस्था से है। अर्थ और काम की व्यवस्था बिना धर्म के नहीं हो सकती। धर्म का सीधा सम्बन्ध ईश्वर की उपासना और सुमरण दूसरे शब्दों में हम यों समझ सकते हैं कि का सुमरण या ईश्वर उपासना धर्म का रूप है और धर्म के इस सार्वजनिक मौलि को समझ लेने से हम सबका मौलिक सुख सकता है और दुःखों को निर्मूल करने की चरितार्थ हो सकती है।

ईश्वर की उपासना और ईश्वर का और भजन रूढ़ि और परम्परा से मुक्त चाहिए। केवल भजन और कीर्तन से सच्चे में ईश्वर का सुमरण नहीं होता। यदि भजन कीर्तन करने वाला, भजन और कीर्तन के होने पर ईश्वर के आदेश और उपदेश को अपने कर्मों में मनमानी करने लग जाता भजन और कीर्तन से लाभ नहीं होता। प्रकार का भ्रम उत्पन्न हो जाता है। भजन कीर्तन करने वाला समझने लगता है अपना धार्मिक कर्त्तव्य पूरा कर लिया मुझे कुछ करना शेष नहीं है। अब तक के परिणाम से वह बचने की निर्मूल आशा लगता है और भविष्य के लिये भी उसे ऐसी निर्मूल आशा स्थान पा लेती है। तीर्थ यात्राओं में ऐसे भ्रम में फंसे हुए लाखों भटके फिरते हैं। चारों धाम हो आते हैं दूर का देशाटन करते हैं। जब देशाटन करते हैं तो उनके अन्दर यह धारणा होती ईश्वर के दर्शन करने जा रहे हैं। ईश्वर दूर हैं, बड़े कष्ट से उसका दर्शन प्राप्त इसका मनोवैज्ञानिक परिणाम यह होता जहां उसे अपना सारा जीवन निर्वाह करना ईश्वर न होने की भावना आने लगती प्रकार जब वह देशाटन करके लौटता है

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

नुभव करता है कि ईश्वर को पीछे छोड़ दिया, पने निवास की ओर आगे बढ़ता जाता है, और ईश्वर से दूर होने की भावना उसके अन्दर मावेश हो जाती है, जब लौटकर आता है तो सा ही कोरा रह जाता हैं और जाते समय और ाते समय ईश्वर की व्यापकता में उसका विश्वास ाम मात्र के लिये रहता है, परन्तु उसका स्थायी काप उसके सम्मुख नहीं रहता। ईश्वर के सुमरण का परिणाम यह होना चाहिये कि सुमरण करने वाला यह धारणा रक्खे कि ईश्वर व्यापक है, हर जगह है और उसका मंदिर ही वह स्थान है जहाँ जीव और ईश्वर दोनों निवास करते हैं और जहाँ दोनों में सम्बन्ध बना रहता है।

यदि ईश्वर के सुमरण करने वालों की दृष्टि आन्तरिक होगी तो वह अपने मंदिर में केवल सायंकाल और प्रातःकाल ही नहीं, परन्तु हर समय, हर क्षण में, हर अवस्था में, अपने को ईश्वर के समीप अनुभव करेगा और हृदय जगत् ही वह स्थान है जहाँ से सब कल्पनाएँ आरम्भ होती हैं और जहाँ से इच्छाओं और द्वेष का आरंभ होता है। यदि हृदय जगत् की व्यवस्था हो जाये तो इच्छाएँ और द्वेष मर्यादित हो जायेंगें, भावनाएँ शुद्ध और पवित्र हो जायेंगी, और भावनाओं के शुद्ध और पवित्र होने से उसका स्वभाव भी शुद्ध और पवित्र हो जायेगा। वह अशुभ कर्मों से बचा रहेगा, पाप नहीं करेगा। पाप के परिणाम स्वरूप दुःख से बचा रहेगा, पुण्य करेगा और पुण्य के परिणाम स्वरूप सुख को प्राप्त करेगा।

शैर--डरकर आदमी उसको न जानिएगा,
चाहे कैसा हो साहिबे फहम व जका।
जिसे ऐश में यादे खुदा न रही,
जिसे तैश में खौफे खुदा न रहा॥

ऐश में यादे खुदा न करना दूसरे शब्दों में सुख में ईश्वर का सुमरण करना आदमियत है, मानवता है। मनुष्य की समझ की परीक्षा तभी होती है जब वह सुख में या ऐश में यादे खुदा रखता है। जो ऐश में खुदा की याद नहीं रखता वह खुदा को भूल कर दुःख की भूल भुलैया में घुस जाता है। इसी प्रकार तैश में अर्थात् क्रोध में जब उसके अन्दर हिंसा की भावना आये तो बुद्धिमानी इसी में है कि वह ईश्वर की न्याय व्यवस्था से डरकर ईश्वर से डरता रहे, ईश्वर से डरना कायरता नहीं, सब से ऊंची वीरता है। वीर वही होता है जो अपने कर्त्तव्य के पालन करने में सचेत रहता है, और अकारण डरता नहीं। वीरता उच्छृङ्खलता, मनमानी करने से बिल्कुल पृथक् है। खौफे खुदा, अर्थात् ईश्वर की न्याय व्यवस्था से डरना समय की पहचान है और बुद्धि की कसौटी है। सैकड़ों पाप काम और क्रोध के वशीभूत होकर मनुष्यों द्वारा किये जाते हैं। ऐश से काम वासना प्रबल होती है और क्रोध में विवेक जाता रहता है। वर्तमान समय में मानव-निर्माण और चरित्र निर्माण सबसे आवश्यक कार्य है। मानव निर्माण और चरित्र निर्माण का आधार ईश्वर की सत्ता में विश्वास और उपासना में है। ईश्वर की उपासना मानव निर्माण का मुख्य आधार है। धर्म और नैतिकता का घनिष्ट सम्बन्ध है। यदि धर्म का व्यावहारिक रूप नैतिकता नहीं तो ऐसा धर्म निराधार है। यदि नैतिकता का आधार धर्म नहीं है तो यह वृक्ष निर्मूल है। वृक्ष की सफलता के लिये उसकी जड़ और उसके फल दोनों ही पर ध्यान देना है। नैतिकता रूपी वृक्ष का धर्म मूल है और सदाचार उसका फल है। साथ ही धर्म

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

का मूल ईश्वर उपासना है, दूसरे शब्दों में ईश्वर सब सत्य विद्या का आदि मूल है और सब पदार्थों के निर्माण का भी आदि मूल है। आदि मूल को सम्मुख रखने से आदि से अन्त तक सफलता हमारे सम्मुख रहेगी और सारा सुखमय रहेगा। यह एक अटल और अनादि सिद्धान्त है। इसको अवहेलना नहीं की जा और न अवहेलना करनी चाहिए।

संस्कृति-सप्तक

[श्री कविवर प्रण शास्त्री]

जहाँ नवीन कज्ज-कली विकसे न समीप में नील निराशा रहे।
अवनी में सदा कुल क्षेम लिए शुभ प्रेम की एक पिपासा रहे।
सुख साध समुन्नति सम्पति में सब की सब में अभिलाषा रहे।
शुचि संस्कृति की सुख सिन्धु भरी वरदायिनि ये परिभाषा रहे॥

मन मन्दिर मञ्जु मनोहर में जन जागृति-दीप जलाया करें।
प्रिय प्राण की वीण प्रवीण लिए करतार से तार मिलाया करें।
कहीं बैठ रहस्य के प्राङ्गण में हिय आस्तिक भाव जगाया करें।
भर गुञ्जन तान निरञ्जन की गुण पुञ्ज प्रभातियाँ गाया करें॥

यह आत्म समाहित साधन की शुभ शास्त्र समुज्ज्वल सारणा है।
बलदायिनी वन्द्य विवेक भरी मन भाविनी वेद विचारणा है।
परलोक प्रतीति प्रभाव लिए नित पावन पन्थ की धारणा है।
हित कामना एक धराञ्चल की ध्रुव ध्यान विकासित धारणा है॥

निज देश विदेश की सीमा प्रथा प्रतिमा का यहाँ प्रतिबन्ध नहीं।
अनुमोदित तर्क प्रणाली यहाँ सुविचार का द्वार है बन्द नहीं।
कभी वर्ण या जाति बवण्डर से यह दीप अलौकिक मन्द नहीं।
उपकार उपक्रम विक्रम है यहाँ स्वार्थ-सुरा की तो गन्ध नहीं॥

सब प्राणि पखेरू के रञ्जन को वर वैभव बोध की बाटिका है।
सुख शील सनेह के सूत्र सजी मधु मानवता की यह शाटिका है।
चिर शान्ति शुभा सजनी के लिए कल कञ्चन रङ्ग वराटिका है।
रस आत्मिक रङ्ग में राँची हुई सुखदायक नायक नाटिका है॥

जब एक प्रथा परिवार लिए धरती अवतार धरेगी यहाँ।
दुख दारिद द्वेष न लेश रहे नय साधक वीर वरेगी यहाँ।
भय भीति परस्पर होगी कहाँ जो विराट विचार भरेगी यहाँ।
जगती भर अङ्ग उमङ्ग महा भवसागर-धार तरेगी यहाँ॥

यह हीरक हार विचार सजे मुनि माली मनोज्ञ बनाते रहें।
सुर संस्कृति स्वर्णिम कीर्ति कलाधर-भानु वितान तनाते रहें।
युग गौरव ग्रन्थ के गायन में सुर साम संगीत सुनाते रहें।
जन आर्य मनोरम मित्रमयी रसवन्ती जयन्ती मनाते रहें॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ष्ट्र की आत्मा आज मूर्छित है,

[ले० श्रीरामनाथ जी 'सुमन']

च्चे की 'राष्ट्र की आत्मा' होते हैं; क्यों कि यहीं है, जिनको लेकर राष्ट्र पल्लवित हो सकता हीं है, जिनमें अतीत सोया हुआ है, वर्तमान ें ले रहा है, और भविष्य के अदृश्य बीज़ बोये ई है। बालक हमारे राष्ट्र के अतीत, वर्तमान भविष्य तीनों का समाहार है, और वही बालक मूर्च्छित है, अचेत है, न उसे पता है, न उसके भावक जानते हैं और न राष्ट्र के नेताओं को है, कि उसे कहाँ जाना है, क्या करना और बनना है कैसे क्या ढलना है इसीलिये हलचलों आन्दोलनों के इस तूफान में भी, जहाँ वाणी सबसे सस्ती हो गई है, कुछ हो नहीं पाता है, का रथ आगे बढ़ नहीं पा रहा है, क्योंकि राष्ट्र ात्मा आज सो गयी हैं, मूर्च्छित है।

देश स्वतन्त्र हो गया हमें इसका अभिमान भी हजारों वर्षों बाद हमने स्वतन्त्रता से सिर उठा अपना चेहरा देखा, पर अपना चेहरा देख कर लानि होती है, और हृदय एक अनुभूत व्यथा र जाता है, क्या इसी रूप की उपलब्धि के लिये ाजी ने हमारी सत्प्रवृत्तियों का युद्ध में आवाहन था ? क्या है आज हमारे चारों ओर जिसमें अनुभव करें कि हम भारतीय हैं, हमारे जीवन में राष्ट्र के जीवन में विश्व के लिये एक संदेश है। की विकास क्रिया में हमारा एक नियत कार्य अंग्रेज चले गये, पर अंग्रेजी न गयी, 'अंग्रेजियत' भी न गयी, हमारे बच्चे हमारे सामने 'विदेशी' जा रहे है; उनके चारों ओर का वातावरण ी है, विजातीय है उनका शिक्षण विजातीय नको शासन ने विजातीयता की ओर प्रेरित है, जो अंग्रेजों के जमाने में होता था, वही है, वही शिक्षण, वही जीवन शैली, वही ावरण, तब कैसे ये बच्चे राष्ट्र के भविष्य का ण करेंगे।

योजनाओं की बात बहुत सुनने में आती है, पंचवर्षीय, सप्तवर्षीय योजनाएँ बन रही हैं पर इन्हें बनाने वाले वही है जिन पर पश्चिमीय सभ्यता से प्रेरित अर्थ विज्ञान का प्रभाव है, जिनका शिक्षण और जीवन केम्ब्रिज और ऑक्सफोर्ड के साँचे में ढला है, जिनके सामने कोई स्पष्ट चित्र नहीं कि वे अपने बच्चों को क्या बनाना चाहते हैं! यह तो सभी कहते हैं कि वर्तमान शिक्षा पद्धति दूषित है, पर यत्न उसी के विस्तार का हो रहा है, यहाँ वहाँ पैबन्द लगाने या मुलम्मा कर देने का कभी कभी यत्न किया जाता है, पर यह सफल नहीं होता, हो भी नहीं सकता।

सब से पहली आवश्यकता इस बात की है, कि हम समझें कि भारत क्या है, भारतीय सभ्यता क्या है। भारतीय संस्कृति क्या है और कौन सी आन्तरिक शक्ति और प्रेरणा थी, जिससे शताब्दियों के संघर्ष युक्त लम्बे व्यवधान को पार कर भारतीय संस्कृति बच रही, तब यह सोचें कि वर्तमान विश्व में उसे आगे बढ़ाने के लिये किन नूतन संस्कारों की आवश्यकता है। और हम उसकी मूल प्रेरणाओं को बदलते हुए एवं तेजी से बदलते हुए विश्व में कैसे सुरक्षित और पल्लवित रख सकते हैं। उसी भूमिका पर बच्चों का, नयी पीढ़ी का जीवन गढ़ना होगा। स्वतन्त्रता एवं शान्ति हमें नवीन जीवन दृष्टि देती हैं, पर आज हमारी जीवन दृष्टि वही बनी हुई है जो ब्रिटिश शासन में थी। इसलिये भूल से साक्षरता को विद्या का, शिक्षा का पर्याय मान लिया गया है। वस्तुतः विद्या वह है जो प्रेय से श्रेय की ओर ले जाती है। और शिक्षा इसी शक्ति अर्जन की साधना है।

पाश्चात्य सभ्यता ने हम पर संख्या बल का जादू चला रक्खा है। उन्नति का अर्थ आँकड़ों की भाषा में ही हम समझते हैं। 'फैक्टरी मेंटिलिटी' हर जगह

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

व्याप्त हो गयी है। कपड़े की मिलों की तरह शिक्षा की भी फैक्टरियाँ खुल गयी हैं। और खुल रही हैं, और उनकी सफलता एवं महत्ता दिन दिन बढ़ते हुए आंकड़ों से ही कूती जाती है। कितना कपड़ा या लोहा इस वर्ष बना, इसी तरह कितने स्नातक इस वर्ष किस यूनिवर्सिटी से निकले, इसी पर शिक्षण सफलता का अङ्कगणित चलता है। गुणप्रधान क्वालिटेटिव की जगह संस्था प्रधान क्वांटिटेटिव दृष्टि की स्थापना ने भारतीय संस्कृति की मूल प्रेरणाओं पर सबसे अधिक आघात किया है।

आज युनिवर्सिटियाँ ज्ञान के साधनास्थल नहीं, विक्रय स्थल बन गयी हैं, बच्चों को देखिये उच्छृङ्खल, अनियन्त्रित, जीवन की बाह्य सुविधाओं एवं भोगों के प्रति आसक्ति, सिनेमा ही जिनका तीर्थ है, और सिनेमा स्टार जिनके आदर्श है। अनुशासन विहीन, आत्म नियन्त्रण से स्खलित, जीवन से गेंद की भाँति खिलवाड़ करने वाले क्या ये राष्ट्र का भविष्य बनायेंगे ?

पर उनका दोष क्या है। हमने उन्हें ऐसे शिक्षक दिये, ऐसा वातावरण दिया, ज्ञान की साधना ही जिनके लिये सब कुछ है ऐसे आचार्यों की जगह विद्यादान को एक पेशा और केरियर मानकर चलने वाले शिक्षकों से हमारी यूनिवर्सिटियाँ भरी हुई हैं, ब्रह्मबल, तेज, तप, एवं ज्ञानार्जन का स्थान धन की वितृष्णा ने ले लिया है। जैसे दुकानों में वस्तुओं की बिक्री होती है, वैसे ही इनके यहाँ दो विद्या बिकती हैं। विद्या एवं ज्ञान का मापदण्ड चरित्र एवं जीवन नहीं। कागजों पर छपे उपाधि पत्र हैं। कोई युग ऐसा भी था जब स्नातक केवल यह कह कर अपना परिचय देता था कि मैं अमुक का शिष्य हूँ, अमुक का शिष्य होना ही सब से बड़ा प्रमाण पत्र था, क्योंकि विद्या पुस्तकों के माध्यम से नहीं, आचार्य के जीवन माध्यम से प्राप्त होती थी। एक जीवन के सम्पूर्ण संस्कार दूसरे जीवन को प्राप्त होते थे, गुरु या आचार्य अपना जीवन ही शिष्य को देता था। विद्या जीवन में उतर जीवन में, उसके आचरण से बोलती थी।

जिज्ञासा मानव की पहली वृत्ति है। जिज्ञासा पहले होती है, वाणी बाद में इसी जिज्ञासा के कारण उसका मानसिक होता है, यह जिज्ञासा परिस्थिति एवं अनुरूप होती है। ज्यों ज्यों बच्चे की दुनि जाती है। और उसके संस्कार बनते जिज्ञासा का क्षेत्र भी विस्तृत होता जाता है

जिज्ञासा के मूल तीन तत्व होते हैं १. है, २. क्यों है ? और ३. कैसे हो ? जिज्ञा का बीज है। इस जिज्ञासा वृत्ति को विक्री और उसमें अच्छे संस्कार डालने में ही उपयोग है। इसलिये जो शिक्षा मानव में को जागरित नहीं करती जो उसे प्रेय से श्रेय नहीं ले जाती, जो उसके हृदय में प्रविष्ट एक श्रेष्ठ जीवन स्वप्न से भर नहीं देती, नहीं है, केवल साक्षरता है और आज ऐ मूढ़ों की बढ़ती हुई संख्या ही जगत् क समस्याओं का कारण है।

इसलिये शिक्षा की पहली समस्या है संस्कृति के मूलाधार को समझ कर उसके नवीन जीवन निर्माण की एक व्यापक योज की। दूसरी समस्या है, आचारवान, आत्मनिष्ठ, पेशा नहीं, बल्कि ज्ञान की जिनके जीवन का लक्ष्य है, ऐसे शिक्षकों या तैयार करने की तभी हमारे विद्यामन्दि एवं प्रकाश के प्रतीक बन सकते हैं।

परन्तु इतना ही बस नहीं। यह मान विद्यार्थी पाठशालाओं में ही सीखता है, भूल है। वह कुटुम्ब में, मार्ग में चलते हु साथियों के सम्पर्क में सर्वत्र कुछ न कुछ रहता है। वह अपने प्रति माता पिता, मित्रों, साथियों और परिचितों अपरिचितों

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बहुत कुछ सीखता है। इसलिये आवश्यकता समाज का वातावरण आज की भाँति दूषित उसका परिष्कार किया जाय। अर्थप्रधान न दृष्टि की जगह धर्म प्रधान या कर्त्तव्यप्रधान न दृष्टि की स्थापना, इसके लिये अत्यन्त श्यक है, उपर्युक्त एवं पवित्र वातावरण के ण के लिये आजकल के चल चित्रों पर कड़ी रेख की आवश्यकता है। अश्लील चित्रों का ण एकदम रोक दिया जाना चाहिए।

इस तरह की अनेक बातें सामने रक्खी जा ी है। परन्तु मूल बात है : कि जब तक हमारे शिक्षण का पूरा ढांचा नहीं बदलता और हमारी जीवन दृष्टि भारतीय संस्कृति के अनुरूप नहीं बनती, जब तक हम श्रेयस्करी जीवन दृष्टि को नहीं अपनाते और जब तक हमारी शिक्षण शालाएँ साक्षरता एवं पुस्तकीय ज्ञान के विक्री केन्द्र नहीं बल्कि जीवन के मर्म में प्रवेश करने वाले स्वप्नों एवं आदर्शों, चरित्र एवं ज्ञान के साधना केन्द्र, तपस्या भूमि नहीं तब तक सब निरर्थक है। तब तक राष्ट्र की आत्मा सोती रहेगी। तब तक राष्ट्र की आत्मा सोती रहेगी, तब तक लाख स्थूल योजनाएं हमारे जीवन के क्षितिज को प्रकाश पूर्ण नहीं कर सकती!

गीत

[श्री 'कुसुमाकर']

मधुर आर्य जीवन के सुखमय तराने, अगर हम न गाएँ तो फिर कौन गाए!

सुना है कि हम कोटि तेतीस सुर थे।
न सम्मुख हमारे ठहरते असुर थे।
विजयिनी पताका लिए लोक में हम—
भरे प्राण में बल-पराक्रम प्रचुर थे।

उसी स्वर्ग सुख की सुनहली प्रभा को धरा पर न लाए तो फिर कौन लाए!

अधम, स्वार्थी बन सताते नहीं थे।
कलह-काण्ड कुत्सित कराते नहीं थे।
कभी क्रूर-अक्रूर बन कंस के सम—
दुखी लोक-जीवन बनाते नहीं थे।

बिखरती विषम-विश्व की वृत्तियों पर घटा बन न छाएँ तो फिर कौन छाए!

हमीं ने विपुल दानवों को पछाड़ा।
जरासन्ध-शिशुपाल को भी लताड़ा—
किया पान हमने ज्वलित वह्नि को भी।
कुरुक्षेत्र में केहरी सा दहाड़ा।

'यथा योग्य' व्यवहार से दम्भ गढ़ को अगर हम न ढाएँ तो फिर कौन ढाए!

हमीं ने अगम-सिन्धु का सेतु बांधा।
असम्भव सकल विश्व का कार्य साधा।
दलीं आसुरी-शक्तियाँ राम बन कर—
मुदित शीश पर धारली लोक बाधा।

भरे 'विश्व-बन्धुत्व' की भावना को अगर हम न आएँ तो फिर कौन आए?

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

'आर्यमित्र प्रशस्ति'

[आयुर्वेदाचार्य कविराज हरिनन्दन मिश्र, बी० आई० एम० एस० सिद्धान्त शास्त्री, साहित्य विशारद

आर्य मित्र है धर्म कर्म का प्रचुर प्रचारक,
वैदिक वैतरणी कल्याणी का प्रबल प्रवाहक ॥

१

साठ वर्ष से वेदों की वीणा का वादक,
दयानन्द की सत्य साधनाओं का साधक,
कर्म योग की धवल धारणा ले उतरा है,
प्रीति रीति की भव्य भावना से विचरा है,
जिसकी शान्त सुधामय वाणी सकल सुधारक ॥ आर्य मित्र है० ॥

२

सबल सभ्यता की दृढ़तर सीमाएँ साधीं,
मानव-जीवन जागृति की रेखाएँ बाँधीं,
देश जाति का पथ-प्रशस्त आलोकित आखिर,
आर्य समाजी जौहर का उद्घोषक जाहिर,
ओ३म् ध्वजा की यश उजियारी का विस्तारक ॥ आर्य मित्र है० ॥

३

समय-समय की ज्वाला में तप कंचन निकला,
परिवर्तन की घड़ियों में ध्रुव ध्येय न बदला,
कण-कण में जिसके कार्यों की छाप लगी है,
कोटि-कोटि मानस पटलों पर धाक जमी है,
दैन्य, सङ्कटों का दृढ़ दुस्तर दुर्ग विदारक ॥ आर्य मित्र है० ॥

४

सदियों के मिथ्या-गुरुडम प्राचीर गिराये,
ज्ञान-ध्यान के ठीक-ठीक प्रतिबिम्ब दिखाये,
प्राणी को सुख सुविधा के अवलम्ब बनाये,
पोप पुजारी मत मण्डी के खम्भ हिलाये,
वाम मार्ग की लीलाओं का नित्य निवारक ॥ आर्य मित्र है० ॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

श्री पं० भीमसेन जी का पश्चात्ताप [श्री दिगम्बरदेव]

बात सन् १९१७ की है। मेरे पिता श्री पुरुषोत्तम देव जी आयुर्वेदाचार्य्य उस नय लालसिंह मानसिंह ब्रह्मचर्य्याश्रम मैनपुरी पढ़ते थे। वहाँ के संस्कृत विभाग के अध्यक्ष थे ननीय श्री पं० दिवाकर जी शुक्ल आचार्य्य वेद चस्पति जो इससे पूर्व गुरु कुल वृन्दावन में थे। ा दिन पिता जी को किसी अपराध के कारण ाचार्य जी ने दंडित किया था। आचार्य के दण्ड- र से प्रायः आश्रम में भूकम्प आ जाता था कभी- ी ऐसा अवसर भी आता था कि पौराणिकों से, गयुद्ध भी होने लगता था और पराजित सन्यासी त्रों के मनोरंजन की सामग्री हो जाते थे। एक दिन ा छात्र खेल में व्यस्त थे। पिता जी मुख्य द्वार बैठे थे कि सहसा एक वृद्ध पुरुष ने प्रवेश किया र पिता जी से पूछा दिवाकर कहाँ है? उन्होंने वेश में आकर उत्तर दिया आप बड़े असभ्य ीत होते हैं। वृद्ध ने गंभीर होकर कहा कैसे? तब होंने उत्तर दिया आपको पूछना चाहिये था ाचार्य जी कहाँ हैं। इस प्रकार की भाषा में पूछकर ाप हमारे गुरुदेव का अपमान कर रहे हैं। वृद्ध एक तारामी उत्तरीय ओढ़े थे। पिता जी यह समझ थे कि अभी वाद विवाद में पराजित होने के ात् उसे बुरी तरह भागना पड़ेगा। किंतु शांत होकर द्ध ने कहा आचार्य दिवाकर जी कहाँ हैं उनके पास के पहुंचाओ और तुम्हारा नाम क्या है? पिता जी कहा--पुरुषोत्तम देव। कहाँ के हो? कैथावा, ावा। इटावा के नाम से उन्हें बड़ा हर्ष हुआ पिता ने पूछा आपका नाम? उन्होंने कहा—भीमसेन ने में पिता जी भीमसेन जी को लेकर आचार्य ाकर जी के कक्ष की ओर गये। इस विवाद को कर खेलते हुए कुछ विद्यार्थी और आ गये थे र सब के मन में एक ही धारणा थी कि अभी गुरु के पास पहुँचते ही वाग् युद्ध होगा। जैसे ही दिवा कर जी ने आते हुए वृद्ध पुरुष को देखा तो कक्ष से बाहर ही उनके चरणों पर गिर पड़े और संस्कृत में स्तुति करने लगे। इधर इन मनोरंजनकारियों का बुरा हाल था। सब भाग गये। पिता जी उनका थैला थामें थे और गुरु जी का पहला क्रोध सजीव होकर इनके सामने आ खड़ा हुआ। बुरा हाल था। आगन्तुक भीमसेन कौन हैं। कैसी भाषा में शिकायत करेंगे। पुनः शरीर दण्ड भय से काँपने लगा। आगन्तुक ने दिवाकर जी को चरणों से उठाया और सिर पर हाथ रख कर 'त्वं जीव शरदः शतं' का आशीष दिया और प्रसन्न मुद्रा में बोले दिवाकर, तुम्हारा यह शिष्य पुरुषोत्तम बड़ा गुरुभक्त है। गुरु जी ने कहा पुरुषोत्तम जल लाओ। पिताजी जल ले आये आचार्य दिवाकर जी ने उनके पैर धोये तब पिता जी को ज्ञात कराया कि यह हैं पं० भीमसेन जी शर्मा वेदों के प्रकांड पण्डित और यह गुरुदेव तुम्हारे इटावा के ही हैं। उसके पश्चात् पिताजी आश्रम में आ गये। रात्रि में पुनः भीमसेन जी ने बुलवाया और पारिवारिक समाचार पूछे फिर वे पैर दाबने लगे एक पैर श्री दिवाकर जी और एक पैर पिता जी। दाबते हुए जब दिवाकर जी अपने पैर के नीचे के हिस्से में आये तो पं० जी एक तीव्र पीड़ा से कराह उठे। श्री दिवाकर जी ने पूछा गुरु देव यह क्या हो गया है? तब पं० जी का गला रुंध गया और साश्रु हो कर बोले दिवाकर यह कुष्ठ है। मैंने अपने गुरु श्री स्वामी दयानन्द जी महाराज के प्रति बड़ा विश्वासघात किया है। उस पाप के फलस्वरूप मेरे समस्त शरीर में कुष्ठ होकर कृमि होने चाहियें। आर्थिक लोभ के कारण लेखों द्वारा जो मैंने गुरु को वचन दिया था, उसका पालन नहीं कर सका। मैं उस अन्तर्व्यथा में अब जल रहा हूँ किसी प्रकार मुझे शान्ति हो ही नहीं पा रही है और दिवाकर अब मेरा मरण निकट है, मैं तुम्हारे पास इसलिये आया हूँ कि मरण

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

से पूर्व मैं गुरु ऋण से उऋण होने के लिए एक यज्ञ वैदिक विधि से चाहता हूँ। मेरे सनातनी हो जाने के पश्चात् मेरे समस्त शिष्य पौराणिक हो गये हैं। एक मात्र तुम्हीं वैदिक धर्मी हो और मेरे गुरु-देव में आस्था रखने वाले शेष हो। मेरी स्वामी जी पर उसी प्रकार आस्था है, श्रद्धा है, जिस प्रकार उनके जीवन में थी और मैं आज तुम से कहता हूँ उनका उद्देश्य, उनका चिन्तन, उनका उपदेश, अद्वितीय था मैं अर्थ की मार से दब गया और आर्य समाजियों में श्रद्धा भावना की न्यूनता के कारण मैं अपने मन पर पत्थर रख कर गुरु के सिद्धान्तों की आलोचना करता रहा। संभव है अब तुम्हें मैं पुनः दर्शन न दे सकूँ। मैंने उस यज्ञ का आचार्य तुम्हें बनाया है तुम पूर्ण वैदिक विधानानुसार उसका सम्पादन करो। इसके पश्चात् दिवाकर जी ने पूछा कि महाराज! स्त्रियों को वेदाधिकार है या नहीं ? पण्डित भीमसेन जीने उत्तर दिया महर्षि दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में, भाष्य भूमिका में तथा अपने भाष्य में प्रतिपादित किया है वह अक्षरशः सत्य है। यजुर्वेद के तीसरे अध्याय मंत्र ४८ में "त्र्यम्बकं यजामहे" यह मन्त्र अम्बका है इस मन्त्र का उत्तरार्द्ध "सुगन्धिम् पुष्टि मृत्यो र्मुक्षीय मामुतः" यह स्त्री के पढ़ने का है। त्र्यम्बक इष्टि में पत्नी अपने सौभाग्य के लिये देती है। यह मन्त्र स्वतः सिद्ध करता है को वेद पढ़ने का अधिकार है। इस प्रकार में स्वामी दयानन्द जी के प्रति श्रद्धावान कहते थे गुरुदेव दयानन्द साधारण पुरुष इस प्रसंग के पश्चात् पं० जी प्रातः मैनपुरी से पिता जी को आशीष देकर प्रस्थान इसके पश्चात् उन्होंने एक वृहत् यज्ञ का किया और उसका आचार्य पद श्री दिवाकर ग्रहण कराया। वैदिक रीत्यनुसार कुरावली सम्पन्न हुआ और वे जीवन के अंतिम पूर्णतया वैदिक धर्मानुयायी होगये थे। रण में कोई भी शंका की बात हो उसका मेरे पिता श्री पुरुषोत्तम देव जी वैद्य इटावा और पूज्य गुरुदेव आचार्य दिवाकर मैनपुरी से हो सकता है।

आर्य मित्र के प्रति

[श्री शिवचरण लाल गर्ग]

ओ३म् की पताका धार सारी वसुधा में कर-
ध्येय का प्रचार, चारु जीवन बिताते हो।
प्रति रविवार, दे के सुन्दर विचार सार-
वेदों का प्रसार, ज्ञान चेतना जगाते हो॥
भ्रम-तम हरने को पूषण समान दिव्य-
द्युति दमका कर प्रकाश प्रकटाते हो।
सभ्यता के स्वामी, अनुगामी ऋषि पद्धति के-
धीर, वीर नामी "आर्य मित्र" कहलाते हो॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्यसमाज की विचारधारा--[पं० गङ्गा प्रसाद जी उपाध्याय]

धर्म अधर्म, कर्त्तव्य-अकर्तव्य पाप-पुण्य का सम्बन्ध केवल जीव से है और विशेष कर व्य से, अतः धार्मिक समस्याओं के समाधान में व के स्वरूप को विशेष स्थान है। इस दृष्टि से र्य्यसमाज की विचार धारा अन्य मत मतान्तरों विचार धारा से सर्वथा पृथक् है। और इस चार धारा को सु-व्यक्त करने में ऋषि दयानन्द विशेष हाथ है। जितने आस्तिक धर्म हैं वे प्रः सब के सब हर समस्या का समाधान ईश्वर अपेक्षा से करते हैं। और जो उन से विपरीत स्तिक हैं वह भी जीव के स्वरूप की अवहेलना करते हैं। प्राचीन भारतवर्ष के प्रसिद्ध नास्तिक रवाक से लेकर आधुनिक विज्ञान वेत्ताओं तक न्होंने चेतनत्व को जड़-प्रकृति का विकार ही ना है, जीव की स्व-स्थिति का निषेध किया है ा जगत् का आस्तिक समुदाय, वह भी जीव सत्ता को कुछ महत्व नहीं देता। गीता के ८ वें अध्याय का ६१ वाँ श्लोक है:--

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन् सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया॥

हे अर्जुन! ईश्वर सब प्राणियों के हृदय-देश निवास करता है। और वह सब प्राणियों को प प्रकार घुमाता है जैसे मायावी कठपुतली को ाता हो। 'यंत्रारूढ़ानि' का अर्थ है कि जैसे ाजकल की किसी मशीन का चलाने वाला शीन चलाता है इसी प्रकार ईश्वर की माया प्राणि जगत् कार्य कर रहा है। श्री शङ्कराचार्य ने इसका भाष्य करते हुए 'दारुकृत पुरुषादीनि' र्थात् कठपुतली का प्रयोग किया है। यदि सभी प्राणी कठपुतली हैं और ईश्वर इनको गतिमान् कर रहा है तो धर्म, अधर्म, कर्त्तव्य, अकर्त्तव्य, पुण्य, पाप का कोई गहन प्रश्न नहीं रहता। ईश्वर चाहे हृदय-देश में सुस्थित हो अथवा किसी स्वर्ग विशेष या लोक विशेष में, चौथे आसमान पर या सातवें आसमान पर, गोलोक में या स्वर्ग लोक में, एकत्र अथवा सर्वत्र, सब प्राणी तो कठ पुतली ही ठहरे। ईश्वर ने उनको वस्तुतः किसी प्रकृति से बनाया हो, या अनिवर्चनीय और अबोधव्य रीति से अपनी सत्ता से या शून्य से, अथवा ईश्वर अविद्या या माया से स्वयं जीव सा प्रतीत होने लगा हो, विवर्तवाद से या परिणाम वाद से, जीव की स्वयं सिद्ध सत्ता नहीं रहती। और जगत् की समस्त प्रकृतियों का केन्द्र ईश्वर रह जाता है। शायद महावीर स्वामी या गौतमबुद्ध ने इस परिस्थिति पर दार्शनिक दृष्टि डाली हो और इसी से उन्होंने ईश्वर की सत्ता से इनकार किया हो। क्योंकि जितने ईश्वर विश्वासी हुए, उन्होंने जीव को ईश्वर की माया की कठपुतली ही बना छोड़ा। ईश्वर ने सृष्टि क्यों बनाई और उस सृष्टि के अङ्गभूत प्राणियों का अन्त क्या होना है? बुलबुला समुद्र से उत्पन्न होकर समुद्र में ही विलीन हो जाता है। ईश्वर से आये और वहीं जाना है। इसी सूत्र का भिन्न-भिन्न प्रकार से वर्णन भिन्न-भिन्न धर्मों ने किया है। भक्त की अपनी इच्छायें इष्टदेव की इच्छाओं में विलीन कर देनी चाहिये। 'राजी है हम उसी में जिसमें तेरी रजा हो।' इसी सूक्ति को अपने रूपों में वर्णन किया गया है। इस का तात्पर्य तो यह हुआ कि न जीव

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

को कोई इच्छा रखनी है न उसका अपना कुछ उद्देश्य है। उद्देश्य है तो ईश्वर का। इच्छा है तो ईश्वर की। गाड़ी उधर जाती है जिधर को गाड़ीवाला ले जाता है। गाड़ी से पूछो कि तू कहाँ जा रही है और क्यों जा रही है? वह कहेगी कि गाड़ी वाले से पूछो। मैं कुछ नहीं जानती। इसी प्रकार ईश्वर भक्त कहता है कि ईश्वर की इच्छा ही मेरी इच्छा है। इस भावना ने जीव को कठपुतली बना दिया है। यह भाव इतना बढ़ा कि हम हर एक काम में ईश्वर को हस्तक्षेप करते पाते हैं। यदि अधर्म बढ़ा तो अधर्म को मिटाने के लिये भी ईश्वर ने कुछ हस्ताक्षेप किया :—

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत,
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मनं सृजाम्यहम्।

जब धर्म की ग्लानि होती है तो ईश्वर आता है। श्रीकृष्ण आये और फिर आयेंगे। क्योंकि जगत् तो कठपुतली है। ईसाई कहते हैं कि जब पाप बढ़ा तो ईश्वर ने अपना पुत्र भेजा, मुसलमान कहते हैं कि ईश्वर ने एक प्रतिनिधि पैगम्बर भेजा। पुराणों और बौद्ध गाथाओं में भी है कि नारद जी जाते हैं जगत् की दुर्दशा का वर्णन करते हैं। विष्णु जी के दरबार में परामर्श होता है। किसी को भेजो। रावण आदि के अत्याचारों के समाचार जब स्वर्ग में पहुँचे तो हलचल मच गई और राम, लक्ष्मण, हनुमान्, सुग्रीव आदि सभी स्वर्गीय व्यक्तियों ने अपना रूप बदल कर जगत् में जन्म लिया। क्यों कि मनुष्य के लिए स्वयं कुछ करना असंभव था। आर्यसमाज में भी कभी कभी गीता के 'यदा यदा' आदि की भावना से प्रेरित होकर यह दावा किया जाता है कि ईश्वर ने एक ऋषि को दयानन्द के रूप में भेजा कि वह जगत् का उद्धार करे। ऋषि की यह भावना नहीं थी। स्वामी दयानन्द आत्मा थे हम जैसे। उन्होंने स्वयं अपने का विकास किया। स्वामी दयानन्द को हाथ की कठपुतली मानने से स्वामी दयानन्द महत्व कम हो जाता है। और दूसरों के प्रेरणा नहीं होती। मैं कह सकता हूँ यदि मुझे भी भेजता तो मैं भी स्वामी के से काम करता। स्वामी दयानन्द ने दावा नहीं किया कि मुझे ईश्वर ने भेजा ही अकेला ऋषि हूँ और मेरे पीछे कोई होगा। स्वामी दयानन्द का विचार है मनुष्य तपस्या करे तो ऋषि हो सक स्वामी दयानन्द यह भी नहीं कहते कि किसी दूत द्वारा या स्वप्न में या अन्त ऊपर कुछ आज्ञाएँ भेजता है। स्वामी का तो कहना यह है कि समस्त सृष्टि लिये है, जीव के भोग के लिये और अपवर्ग के लिये। मेरी आंखों से लेकर सभी मेरे लिये हैं। स्वामी दयानन्द के सौंदर्य यह है कि वह जीव केन्द्रित (Bio है, ईश्वर केन्द्रित(Iheo Centric) नहीं।

कुछ लोग शायद समझें कि इससे ई अवहेलना होती है। ईश्वर पर श्रद्धा जाती है। परन्तु सच्ची आस्तिकता वह हम जीव के अपने स्वरूप की अवहेल और न जीव का अपने को महत्वपूर्ण ईश्वर की अवहेलना है। क्यों कि जीव करने का क्षेत्र तो ईश्वर की ओर से हो यदि जीव महत्वपूर्ण न होता तो सृष्टि स्वरूप न होता। जिसमें प्रत्येक वस्तु लिए है, और यदि जीव अल्प न होता

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

गत् का यह रूप न होता। परन्तु यदि ईश्वर
ो सत्ता न होती तो जीव स्वतंत्रता का प्रयोग
पने विकास के लिये न कर सकता। ईश्वर एक
चित्र और महती सत्ता है। परन्तु हम ईश्वर
ो ओर भी अपनी अपेक्षा से दृष्टि डालते हैं।
ह मित्र है, पिता है, बन्धु है, अर्यमा है, उरुक्रम
करीम है, रहीम है। माता है, देवी है, मोक्ष
ाता है। यह सब नाम प्रकट करते हैं कि हम
श्वर के अनेक नाम अपने स्वरूप की अपेक्षा से
ते है। ईश्वर के सहस्र नामों के अर्थों का
मारी सत्ता से सम्बन्ध है। इसके अतिरिक्त ईश्वर
या है हम नहीं जानते। हम अपनी परिस्थिति
ाप उत्पन्न करते हैं। आप स्वयं बढ़ते हैं।
मारा उत्तरदायित्व है। जब कभी हम असफल
ो होते हैं, वहाँ कारण यह होता है कि हम
ज्ञानवश अपनी शक्ति और परिस्थिति का ठीक-
ीक विचार नहीं कर पाते। जितना हमारा ज्ञान
रिष्कृत होता है हमारी कर्म करने की इच्छाएँ
मारी परिस्थिति के अनुपात से होती हैं। लोग
दियों को पार करते हैं। परन्तु जिन्होंने
पनी शक्ति को उन नदियों के वेग के अनुपात
अनुकूल नहीं बनाया वह डूब जाते हैं। जिनकी
ातृत्व शक्ति और कर्त्तृत्व शक्ति में अनुरूपता होती
वह किसी काम में असफल नहीं होते। जो
पने ज्ञान को बढ़ाते नहीं और तूफान में अपनी
कश्ती डाल देते हैं वह असफल हो जाते हैं। इस
सफलता में ईश्वर का दोष नहीं। हमारा दोष
। हम ईश्वर पर इसलिये श्रद्धा रखते हैं कि
ईश्वर ने कार्यक्षेत्र का निर्माण किया है और
वह भी ऐसे कार्यक्षेत्र का जो हमारी स्वतन्त्रता
का विकास करने में साधक हो, बाधक न हो।
ऐसा कार्यक्षेत्र नहीं, जिसमें हम परतंत्र हों।
कठपुतली हों! कुछ कर ही न सकें। ईश्वर
हम को नाच नचावे। यदि ऐसी परिस्थिति होती
तो हम न पापी होते न पुण्यात्मा। बन्धन और
मोक्ष में भेद ही क्या होता। धार्मिक सम्प्रदायों
की यह निर्बलता रही कि उन्होंने जीव निरक्षेप
इच्छा को ही जगत् के जन्म, स्थिति और संहार
का कारण माना, और जीव को सर्वथा विस्मृत
कर दिया। वैज्ञानिकों ने भी जीव की उपेक्षा की।
जहाज कैसे बनता है, कैसे चलता है। इसका
अन्वेषण तो किया परन्तु जहाज पर सवार होने
वालों को तो सर्वथा भुला दिया। मानों जहाज
में सवारियाँ कुछ नहीं। जगत् है उसमें प्रकृति
का विचित्र खेल है परन्तु इस जगत् रूपी जहाज
में कुछ यात्री भी हैं जिनकी भावनाओं की पूर्ति
काल में जहाज बना। इसकी सर्वथा उपेक्षा-सी
गई है। जिस राज में राजा ही सब कुछ है प्रजा
कुछ नहीं और यदि है भी तो वह राजा की
आवश्यकताओं या अभिलाषाओं की पूर्ति के लिये,
वह राज तो ठीक नहीं। जिस देवमन्दिर में
उपास्य ही उपास्य है और उपासक का
कोई महत्व नहीं, वह देव मंदिर ही कैसा?
स्वामी दयानन्द ने वैदिक दर्शन की विशेषता यह
बताई है कि जीव को अजर और अमर तथा अपने
भाग्य का स्वयं अपने को निर्माता बताया है।
जैसी करनी वैसी भरनी। मनुष्य भी जीव है।
और पशु पक्षी भी। पशु-पक्षी भी किसी अंश में
अपने कर्मों के करने में स्वतन्त्र हैं और उन
कर्मों का फल पाते हैं। घोड़ा शिक्षा प्राप्त करके
स्वामी का भक्त होता है। कुत्ते को शिक्षा दी
जाय तो वह भेड़ों को भेड़ियों से बचा सकता है।
मनुष्य उस शिक्षा में साधक होता है। जैसे बाप
अपने बच्चे के विकास में। हाँ, इस स्वातंत्र्य की

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सीमाएं हैं, और सृष्टि का निर्माण न केवल मनुष्यों अपितु समस्त प्राणियों के ज्ञातृत्व, कर्तृत्व, तथा भोक्तृत्व के विकास में सहायक है। वह भी तो वैसे ही अजर और अमर जीव हैं जैसे हम मनुष्य हैं। इसीलिये तो वेद ने कहा कि "मित्रस्य चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्।" यहाँ 'यंत्रारूढ़ानि मायया' का प्रसङ्ग तो नहीं लगता। मैत्रेयी याज्ञवल्क्य संवाद में इसी सिद्धांत की विवेचना की गई। आत्मा वा अरे श्रोतव्यः इत्यादि। उद्दालक ने श्वेतके भी यही कहा था—"तत् त्वमसि हे श्वेतकेतु! वह महत्वपूर्ण सत्ता तू है। को नास्तिक सम्प्रदाय और आस्तिक दोनों के दलदल से उभार कर उसको उ भाविक उच्च स्थान पर बिठालना आर्यसभ्य विचारधारा की विशेषता है।

कर्त्तव्य-निष्ठा

एक दिन जूती और टोपी आपस में मिलीं। काँटों और कङ्कड़ों की रगड़ से जूती की छिली हुई पीठ देख कर टोपी बोली—"अरी! यह तूने क्या रूप बना रक्खा है? छोटा-सा तो तेरा शरीर, मन-मन दो-दो मन बोझ ढोहना और फिर वह भी ऊबड़,खाबड़ रास्ते पर" तरस आता है तेरी दशा पर। मुझे तो देख शान से मालिक के सिर पर बैठी आराम करती हूँ। फिर तू काहे को पागल बनी फिरती है!

"ठीक कहती हो बहन! पर मुझे तो इस पागलपन में ही जिन्दगी नजर आती है। मालिक के शरीर और पगों को रक्षा करते हुए जब मेरा अङ्ग-अङ्ग लहू-लुहान हो उठता है, सर्वस्व मानों नष्ट होने को होता है, तब न जाने मुझे एक असीम आनन्द की अनुभूति होती है! भला वह शान किस काम की, जिसमें मैं अपने कर्त्तव्य पालन का रस ही गँवा बैठूं?

और यह कहते-कहते जूती हर्षातिरेक से मौन हो गई।

× × × ×

काश! हम भी राष्ट्र रूपी शरीर के लिये टोपी की शान को भूल कर जूती का पागलपन ग्रहण करें!

ले०—श्री सत्यनारायण मिश्र

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वैदिक सृष्टि-विज्ञान

[श्री पं० वीरसेन जी वेदाश्रमी]

सृष्टि विज्ञान वेद का एक प्रमुख विज्ञान है। यद्यपि इस विज्ञान का अन्तर्भाव वारुणी विद्या के अन्तर्गत है और इसकी निष्पत्ति का आधार इसी विद्या का अङ्ग है तथापि उस विद्या के अन्तर्गत अनेक जल विज्ञानों में से इस वृष्टि विज्ञान का प्रमुख स्थान है, क्योंकि बिना इस विज्ञान के अथवा बिना वृष्टि के इस पृथ्वी पर जीवन स्थिर नहीं रह सकता है। यह जल तत्त्व अपनी अनेक स्थितियों एवं वर्तनों एवं रूपों से विश्व का पालन-पोषण कर रहा है।

"अपोवा इदमग्र आसीत्" उपनिषद् का यह वाक्य जल की प्रधानता एवं उसकी प्राथमिकता का द्योतक है। स्थूल रूप से दृश्यमान जल यद्यपि "त्र्यावरुण ग्रह" का कार्य रूप है तथापि सृष्टि निर्माण में जो जल प्रारंभिक एवं मौलिक तत्व है और जिसको उपनिषद् ने प्रतिपादित किया है, वह यह कार्य रूप जल तत्त्व नहीं है और उपलब्ध जल का निकटतम मौलिक तत्त्व भी नहीं है, अपितु वह सृष्टि का प्रारंभिक मौलिक तत्व है।

सृष्टि निर्माण के मौलिक तत्व को जल, सलिल, अम्भस्, एवं कुहक आदि शब्दों से भी प्रकट किया जाता है। वेद ने "सरिरं छन्दः," कह कर इसका आदन कर्म एवं इसकी छादन स्थिति व्यापकता को ब्रह्माण्ड के चारों ओर भी इङ्गित किया है। यह तत्व समस्त ब्रह्माण्ड को आवृत किये रहता है और इसी अम्भस् के आवरण में से सृष्टि को जीवन तत्व प्राप्त होता रहता है। मातृगर्भ में जिस प्रकार शिशु के चारों ओर कलल रस विद्यमान रहता है और उस कलल रस से शिशु का संवर्धन एवं पोषण होता रहता है उसी प्रकार इस महान् ब्रह्माण्ड के चारों ओर वह तत्व फैला हुआ है। इसकी भी समुद्र संज्ञा है। दार्शनिक शब्दों में इसे महत्तत्व के नाम से भी संबोधित कर सकते हैं। वेद ने इसी "समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत" के रूप में सृष्टि की पूर्वावस्था के रूप में वर्णित किया है।

समुद्र ब्रह्माण्ड के चारों ओर है। मध्यभाग—अन्तरिक्ष में भी है और सृष्टि के स्थूल भाग पृथ्वी पर भी समुद्र है। अन्तरिक्ष में जो समुद्र है उसकी रचना में उससे ऊपर के जल और पृथ्वीस्थ जल दोनों का समिश्रण होता रहता है। अन्तरिक्ष से ऊपर के जलों के अंश अन्तरिक्ष में आते रहते हैं और अन्तरिक्षस्थ समुद्र को बनाये रहते हैं, तब तक यह समुद्र दृश्यमान नहीं होता। परन्तु जब पृथ्वीस्थ समुद्र के जल को वे आकर्षित कर पर्जन्य एवं मेघ रूप में हो कर मण्डराने लगते हैं तो अन्तरिक्षस्थ समुद्र स्थूल रूप में प्रकट होने लगता है या दृश्यमान हो जाता है। और जितना ही यह दृश्यमान होता जाता है अर्थात् स्थूलतर होता जाता है तभी उसकी पृथ्वी पर गिरने की क्रिया प्रारम्भ हो जाती है। इसका प्रधान कारण अन्तरिक्षस्थ उन जल के मौलिक तत्वों का जो अन्तरिक्ष से भी ऊपर के स्थानों से आये हैं उनका पुनः ऊपर की ओर आकर्षण और पृथ्वीस्थ समुद्र के जलों का नीचे की ओर आकर्षण होता है।

प्रारम्भ में जब इन दोनों जलों में आकर्षण होता है तो इन दोनों प्रकार के जलों में मैथुन, परस्पर एकी भाव की क्रिया होती है। पृथ्वीस्थ जल सूर्य की किरणों के आकर्षण अर्थात् रश्मि मार्ग से अन्तरिक्ष में अप्सरा बन कर जाते हैं और वहाँ उन जलों को धारण करने की सामर्थ्य वाले जल जो जल गंधर्वरूप से रहते हैं, उन दोनों प्रकार के जलों का मैथुन, मिश्रण होता है और जब तक द्युलोकस्थजलों में से जो वितर रूप हैं उनका मातृस्थानीय पृथ्वीस्थ जलों में गर्भ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

स्थापन नहीं होता है अर्थात् उत्पादक शक्ति, जीवनी शक्ति, एवं प्राणशक्ति पृथ्वीस्थ जलों को नहीं प्राप्त होती तब तक दोनों शक्तियाँ आकाश में क्रीड़ा एवं कौतुक करती हैं और जैसे ही पृथ्वीस्थ जलों को जो अप्सरा बनकर ऊपर पहुँचे थे उनकी अपनी अभिलषित कामना की पूर्ति हुई और द्युलोकस्थ पितृजलों का कार्य पूर्ण हुआ उसी समय दोनों जल अपने २ आकर्षण एवं विकर्षण से पृथक् हो जाते हैं। इस प्रकार पृथिवीस्थ जल पुनः पृथ्वी पर अन्तरिक्ष से नव जीवन एवं नव प्राण लेकर हमारे लिये उतर आता है और समस्त पृथ्वी में उत्पन्न का हेतु बन जाता है। उपनिषदों ने इसीलिए कहा—"यदात्वमभिवर्षथेमाः प्राणते प्रजाः। आनन्द रूपास्तिष्ठन्ति कामायान्नं भविष्यति ॥"

निःसन्देह वृष्टि आनन्द रूपा है। हम सन्ध्या के मन्त्रों में भी-"शंयोरभि स्रवन्तु" कह कर परमात्मा से सुख की वृष्टि की कामना करते हैं। परन्तु वृष्टि तभी तक सुखकारक है जब, तक वह हमारे लिये अनुकूलता सम्पादक हो। यदि वह वृष्टि हमारी अनुकूलता को सम्पादन करने वाली न हो तो वह आनन्द रूपा न हो सकेगी, न वह सुखदायिनी ही हो सकेगी। अतः वृष्टि को आनन्द रूपा एवं सुखदायिनी बनाने की विद्या को जानना आवश्यक है। अर्थात् वृष्टि को अपने अनुकूल बनाने के लिए वृष्टिविज्ञान का जानना और उसका प्रयोग ज्ञान भी आवश्यक है।

यजुर्वेद के २२ वें अध्याय के २२ वें मन्त्र में—"निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु" यह पाठ आता है। इसका पाठ हम बड़े उत्साह से अनेक सुअवसरों पर करते हैं। परन्तु क्या इस मन्त्र वाक्य से हमें उस वैदिक विज्ञान या शक्ति की खोज करने की प्रेरणा प्राप्त नहीं होती कि जिससे हम यह शक्ति प्राप्त करलें कि जब हम चाहें तभी वृष्टि हो और जब चाहें तब वह वृष्टि रुक भी सके। अर्थात् अतिवृष्टि और अनावृष्टि पर हमारा पूर्ण अधिकार हो।

इसी प्रकार "पर्जन्यो अभिवर्षतु" (यजुः अ. ३६ मं० १०) का पाठ हम शान्ति प्रकरण के मन्त्रों में करते हैं, क्योंकि वर्षा सुख और शान्ति का परन्तु यदि वही अति की स्थिति में हो यातो हमें उस अति से बचने का साधन ढूंढ अथवा यदि हम उस अति वृष्टि से लाभ सकते हैं तो हमें उस लाभ की प्राप्ति का प्रय होगा। अर्थात् दोनों प्रकार से हमें अपने शान्ति के मार्ग ढूंढने पड़ेंगे और इस प्रकार एवं अतिवृष्टि पर नियन्त्रण के साधनों का हमारे लिये आवश्यक हो जाता है

यजुर्वेद के प्रथम अध्याय के १६ वें मन्त्र को-"वर्षवृद्धम्" कहा है, अर्थात् यज्ञ वृष्टि है। इसका तात्पर्य यह हुआ कि वर्षा के नि आवश्यक है। यह उसका मुख्य साधन प्रकार दूसरे अध्याय के १६ वें मन्त्र में-"मि त्वावृष्ट्यावताम्"-के द्वारा वर्षा के कारण और वरुण देवताओं को बताते हुए उनके द्वा क्रिया होने और उससे संसार की रक्षा संकेत है। पुनः उन्हीं देवताओं को सम्बो मन्त्र में कहा है-"ततो नो वृष्टिमावह"-अ द्वारा हमारे लिये वृष्टि को प्राप्त कराओ।

इसका स्पष्ट तात्पर्य है कि वर्षा कराने वेद मित्र और वरुण देवताओं या दिव्य उपदेश करता है कि ये दोनों दिव्य तत्व प्रधान-भूतकारण हैं और इन दोनों को अपने करने के लिये "ततः" शब्द के द्वारा जिस मन्त्र में किया है उसको मंत्र में--"वशापृ दिवंगच्छ" के रूप में बता दिया है कि मित्र को वर्षा के लिये अनुकूल बनाने के निमित्त इच्छित आहुति अन्तरिक्ष में भेजी जाती "मरुतां पृषतीर्गच्छ"--वह आहुति वायुम विविध स्तरों को प्राप्त होती हुई वृष्टि पृथ्वी में समर्थ होती है। इस प्रकार वर्षा विज्ञान का वेद हमें उपदेश करता है।

इसी प्रकार वर्षा के कराने के लिये वेद भी अनेक स्थानों पर प्रयोग बताये हैं। उपयु रण में जो "वशा पृश्निर्भूत्वा दिवंगच्छ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

त्रमा वह"--कह कर जिस आहुति के अधीन वर्षा बताया है उन आहुति द्रव्यों के अन्वेषण की यन्त आवश्यकता है और उनका परीक्षण भी ने की आवश्यकता है। जिससे हम इच्छानुसार र्षा करा सकें। इस प्रकार के द्रव्यों की श्रेणी का ा लगाने में हमें कुछ सफलता भी प्राप्त हुई है।

वर्षा के अभाव में अपनी आहुति द्वारा इच्छा-ार वर्षा कराने का उपदेश एवं साधन वेद ने बता या है। परन्तु यदि वर्षा प्राकृतिक कारणों से या न्य कारणों से अधिक मात्रा में होने लगे तो उस ाति में "मैत्रावरुण ग्रह" को छिन्न-भिन्न करके र्षा रोकने का भी साधन जानना आवश्यक है, जिस अति वृष्टि से संसार को बचा सकें। वेद इस क्रिया के बारे में भी हमें स्पष्ट उपदेश करता है।

यजुर्वेद के १३ वें अध्याय के ५३ वें मन्त्र में जलों सृष्टि के विविध तत्वों में स्थापित करने के लिये ा है। अतः जलों को अर्थात् वर्षा को पृथक् २ वों या द्रव्यों में अपनी आवश्यकतानुसार स्थापित ने की प्रक्रिया का उपदेश कर रहा है। उसका हमें भीरता से अन्वेषण करना चाहिये और किस-किस व में किस-किस रूप से जल स्थित रह सकता है। नको जानते हुए जलों के उन स्वरूपों के निर्माण की ी प्रक्रिया को खोजना आवश्यक है। जल की अनेक थतियाँ हैं। २२ वें अध्याय के २५ वें मन्त्र में १२ कार की जल की स्थितियों का वर्णन मिलता है। नका भी क्रम बद्ध स्वरूप इस विज्ञान के द्वारा संसार सामने वेद के विज्ञान द्वारा प्रकट किया जा कता है।

यजुर्वेद के १५ वें अध्याय के छठे मन्त्र में इस विज्ञान की ओर अग्रसर होने के लिये और भी स्पष्ट उपदेश भिन्न शब्दों में मिलता है-"विष्टम्भेन वृष्ट्या वृष्टिं जिन्व"—अर्थात् वृष्टि के विष्टम्भन-रोकने-के द्वारा वृष्टि को जीतो। इस मन्त्र से स्पष्ट है कि वृष्टि का विष्टंभन अर्थात् रोकना हो सकता है। वृष्टि के रोकने के प्रकार को जान लेने से अतिवृष्टि पर नियंत्रण होसकता है और उसके द्वारा संसार को सुखी किया जा सकता है। यह कार्य उपदेशों से नहीं अपितु वेद के क्रियात्मक विज्ञान के अन्वेषण और परीक्षणों से ही सिद्ध होगा।

वर्षा कराने और उसे रोकने के वैदिक विज्ञान में हमारी वर्षों से श्रद्धा एवं विश्वास है तथा इस बारे में स्वसामर्थ्यानुसार अन्वेषण चल रहा है। इसके परीक्षण भी प्रारम्भ कर दिये हैं। परन्तु साधन सीमित हैं। आम जनता की वेद के प्रति श्रद्धा व सच्चे प्रेम तथा वेद प्रेमी धनी मानी जनों के सहयोग प्राप्त होने से हम इस विज्ञान में विशेष अग्रसर हो कर गति कर सकते हैं और सफलता भी प्राप्त कर सकते हैं। अतिवृष्टि को भी रोकने का एक लघु परीक्षण किया जा चुका है, जिसमें सफलता प्राप्त हुई है।

यदि आर्य जनता इस कार्य में रुचि एवं सहयोग प्रदान करे तो वेद के वृष्टि विज्ञान द्वारा संसार को वेदों की ओर आकर्षित किया जा सकता है। तथा अन्य भी वैदिक विद्या एवं विज्ञानों का अन्वेषण हो सकता है जिससे समस्त संसार वेदों के अध्ययन की ओर श्रद्धा एवं प्रेम से अग्रसर हो सके।

१—आर्य समाज के साथ मिलकर उसके उद्देश्यानुसार आचरण करना स्वीकार कीजिये नहीं तो कुछ हाथ न लगेगा। क्योंकि हम और आपको अति उचित है कि जिस देश के पदार्थों से अपना शरीर बना अब भी पालन होता है आगे होगा उसकी उन्नति तन, मन, धन से सब जने मिलकर प्रीति से करें। इस लिये जैसे आर्य समाज आर्यावर्त देश की उन्नति का कारण है, वैसा दूसरा नहीं हो सकता।

—महर्षि दयानन्द सरस्वती

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्य समाज का आदर्श संगठन [श्री पं० इन्द्रविद्यावाचस्पति

ऋषि दयानन्द अपने पीछे आर्य समाजों को अपने ग्रन्थों को, अपने चरित्र को, और कई शिष्यों को छोड़ गये थे, इनमें से हरेक स्मारक है, परन्तु जिस स्मारक की स्थिरता सब से अधिक है, वह आर्य समाज है। आर्य समाज ऋषि दयानन्द का स्मारक ही नहीं, वह ऋषि का प्रतिनिधि भी है। ग्रन्थों की, सिद्धान्तों की, संस्थाओं की और वस्तुतः वेदों की रक्षा का बोझ आर्य समाज पर है। ऋषि दयानन्द ने अपने पीछे अपना प्रतिनिधि आर्यसमाज को बनाया है, देखना है कि यह प्रतिनिधि बनने के योग्य भी था या नहीं?

यह मानना पड़ेगा कि आर्य समाज का वर्तमान संगठन धार्मिक संसार में नया है। इससे पूर्व किसी धार्मिक समाज में प्रजासत्तात्मक शासन प्रणाली का ऐसी पूर्णता से प्रयोग नहीं किया गया। प्रायः सब मत किसी एक अलौकिक असर के नीचे रहते हैं। रोमन कैथोलिक ईसाई रोम के पोप को अपने धर्म का गुरु मानते हैं, इस्लाम की नजर पहले खलीफा की ओर लगी रहती थी, अब मक्के की ओर लगी हुई है। बौद्ध भिक्षुओं के चुनाव में किसी प्रजामत का हाथ नहीं था। प्रोटैस्टैण्ट-ईसाई-चर्च यद्यपि प्रायः राजकीय शक्ति पर भरोसा रखता है, तो भी यह मानना पड़ेगा कि प्रोटैस्टेण्ट-चर्च के मुख्य पुरुषों के चुनाव में आम ईसाइयों का कोई हाथ नहीं होता। धर्म के लोकमत का प्रतिनिधित्व ऋषि दयानन्द से पूर्व केवल एक स्थान पर स्वीकार किया गया था। हजरत मुहम्मद की मृत्यु के पीछे जो खलीफा हुए, वे सर्वसाधारण की ओर से चुने गये, परन्तु शीघ्र ही जो तलवार अब तक इस्लाम और अन्य मतों के झगड़े में सत्या-सत्य का निर्णय करने का अन्तिम साधन समझी जाती थी, वही इस्लाम को खिलाफत के अधिकारानधिकार के निर्णय के लिए भी अन्तिम प्रमाण मान ली गई। हजरत अली और उम्मैयदवंश की टक्कर [illegible] का प्रजासत्तात्मक रूप कुचला गया।

उस समय भारतवर्ष के लिए राजनीति [illegible] प्रजासत्तात्मक वाद नया था। अभी [illegible] पर उसका पूर्णतया प्रयोग नहीं हुआ था। [illegible] सरकार बहुत संभल-संभल कर कहीं-कहीं [illegible] को थोड़ा-बहुत स्वीकार कर रही थी। और [illegible] स्वयं इङ्गलैंड में पूरा प्रजासत्तात्मक शासन [illegible] वहाँ का राजा प्रजा का चुना हुआ नहीं होता [illegible] स्मिक घटना का चुना हुआ होता है। राजा [illegible] जो लड़का पहले पैदा हो गया, वही राजा [illegible] अधिकारी बन जाता है। इसे ऋषि दयानन्द [illegible] का अद्भुत चमत्कार कहना चाहिए कि उन्होंने [illegible] क्षेत्र में उस सिद्धान्त का पूर्णता के साथ प्रयोग [illegible] जिसे अन्य धर्म तो क्या राजनीति के नेता [illegible] हुए घबराते थे-मानते सब थे, परन्तु प्रयोग [illegible] ला सकते थे। समझा जाता था कि प्रजा [illegible] शासन को चलाने के लिए सदियों के शिक्षित [illegible] उसे काम में नहीं ला सकते थे। ऋषि दयानन्द [illegible] उस सिद्धान्त को केवल भली प्रकार समझा [illegible] उसे व्यवहार-योग्य बनाकर कार्यरूप में परि[illegible] कर दिया, और यह सब कुछ अंग्रेजी और [illegible] शिक्षा से अनभिज्ञ होते हुए किया। यदि [illegible] परोक्षदर्शिता में किसी को सन्देह हो तो [illegible] इसी दृष्टान्त से उनका संशय दूर हो सकता [illegible]

आर्य समाज का जो संगठन ऋषि दयानन्द [illegible] बनाया है, वह बहुत उत्तम है। उससे भारत [illegible] ही नहीं, अन्य देशों की धार्मिक तथा राज्यसंस्था [illegible] शिक्षा ले सकती हैं। समय के अनुसार [illegible] मोटे परिवर्तन आवश्यक हो जाएँ उन्हें कर [illegible] परन्तु प्रधान अंशों में वर्तमान संगठन श्रेष्ठ [illegible]

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्य समाज के संगठन की श्रेष्ठता पर लिखने पूर्व आवश्यक प्रतीत होता है कि कुछ शब्द इस पय पर लिखे जाएँ कि आर्य समाज क्या वस्तु है ? या वैदिकधर्मी मात्र के समूह का नाम आर्यसमाज ? या वैदिक धर्म के प्रचार के लिए जो सोसायटी नाई गई है, वह आर्य समाज है ? दोनों प्रश्नों के त्तर स्पष्ट हैं। यह आवश्यक नहीं कि वैदिकधर्मी मात्र आर्य समाज के सभ्य हों क्योंकि आर्यसमाज के सभ्य ोने के लिए चन्दे की शर्त आवश्यक है। सन्यासी न्दा नहीं दे सकते, और न गरीब लोग दे सकते हैं सी दशा में वे लोग सामान्यतया आर्यसमाजके सभा द् नहीं बन सकते ? तब क्या वह वैदिक-धर्मी नहीं ? वह वैदिक-धर्मी अवश्य हैं। आर्य समाज से ाहर भी वैदिक धर्मी हैं और हमेशा रहेंगे। आर्य-जगत् आर्यसमाज तक परिमित नहीं है। आर्यसमाज ो उन लोगों की संस्था है, जो वैदिक धर्म के प्रचार ही अभिलाषा रखते हुए संगठन में शामिल होते हैं।

दृष्टान्त से यह विषय और अधिक स्पष्ट हो जाता है। एक शहर में तीन लाख निवासी निवास करते हैं। उनमें से वोट देने के अधिकारी केवल २५ हजार और उनमें से भी म्युनिसिपल कमेटी के चुनाव में केवल १० हजार ही शहर के निवासी भाग लेते हैं। ऐसी दशा में क्या वह १० हजार ही शहर के निवासी समझे जाएँगे ? उत्तर, हाँ में नहीं हो सकता। उसी प्रकार आर्यजगत् आर्यसमाज से बहुत बड़ा है। आर्य समाज शब्द भी दो अभिप्रायों से प्रयुक्त होता है। सामान्यतया हरेक ऋषि दयानन्द की शिक्षाओं को स्वीकारकरने वाला वैदिक-धर्मी व्यक्ति आर्यसमाजी माना जाता है। आर्यजगत् के लिए आर्यसमाज शब्द का प्रयोग होता है। यह विस्तृत आर्य समाज है।

आर्य समाज एक निश्चित संगठन भी है। यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक वैदिक-धर्मी आर्यसमाज में सम्मिलित भी हो। आर्य समाज से बाहर भी वैदिकधर्मी रह सकते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि आर्य समाज उन वैदिकधर्मियों का संघ है, जो वैदिक शिक्षाओं के प्रचार और रक्षणार्थ इकट्ठे होते हैं। वैदिकधर्मियों का संघ आर्यसमाज से बहुत बड़ा है। यदि आर्य जगत् और आर्यसमाज के भेद को ठीक प्रकार से समझ लें तो यह आक्षेप करने का अवसर नहीं रहता कि संगठन ने आर्य समाज को संकुचित बना दिया है। संकुचित बनाने का दोष आर्यसमाज के नियमों के बनाने वाले के सिर नहीं मढ़ा जा सकता। वह दोष तो हम लोगों का है जो वैदिकधर्म को आर्यसमाज तक परिमित समझ बैठे हैं। यदि हम इस बात को अवगत कर लें कि वैदिकधर्मियों का समूह आर्य-समाज की संस्था से अधिक विस्तृत है, और आर्य समाज उन लोगों का संगठन है जो वैदिक धर्म के प्रचार तथा रक्षण के लिये सभा में सम्मिलित होने की इच्छा रखते हैं तो सम्पूर्ण कठिनाई दूर हो जाती है। उस दशा में आर्य समाज का संगठन अत्यन्त उत्कृष्ट प्रतीत होगा।

आर्य समाज के वर्तमान संगठन की पूर्णता और सुन्दरता को वे लोग भली प्रकार समझ सकेंगे जिन्होंने भिन्न-भिन्न देशों की राजनीतिक और धार्मिक संस्थाओं का अनुशीलन किया हो। थोड़ी बहुत बातों में समयानुकूल परिवर्तन होते ही रहते हैं, परन्तु सामान्य सिद्धान्त में प्रतिनिधित्व की दृष्टि से आर्य समाज का संगठन एक प्रकार से आदर्श है। सदासद् बनने की शर्त यह है कि वह व्यक्ति ग्यारह मास तक चन्दा देने वाला सदस्य रहा हो। चन्दा आमदनी का शतांश है। गरीब-से-गरीब व्यक्ति आर्य समाज का सदस्य रह सकता है क्योंकि वोट के अधिकारी होने के लिए कोई राशि निश्चित नहीं है, छोटी-से-छोटी आमदनी का शतांश है। यही कारण है कि आर्य समाज कभी अमीरों का संघ नहीं बन सकता। अधिकारियों का चुनाव प्रतिवर्ष होता है। सार्वदेशिक प्रतिनिधियों का चुनाव तीसरे वर्ष आवश्यक है। सर्वसाधारण की सम्मति को जितनी अच्छी तरह आर्य समाज के नियमानुसार बनी हुई सभायें प्रमाणित करती हैं, शायद ही दूसरी कोई सभायें करती

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हों। स्विटजरलैण्ड और अमेरिका को तो छोड़ दीजिये, साधारणतया अन्य देशों के राजनीतिक संगठन भी लोकमत के लिए अच्छे प्रतिनिधि नहीं हैं। संगठन के मजबूत होने का ही यह फल है कि बीसियों धार्मिक और राजनीतिक चोटों को खाकर भी आर्य समाज की शक्ति निरन्तर बढ़ती ही गई है।

आर्यसमाज के संगठन पर एक आक्षेप हो सकता था। एक धार्मिक संस्था के धर्म-सम्बन्धी प्रश्नों को हल करने के लिए जिस प्रकार के प्रबन्ध की आवश्यकता है, वह आर्य समाज में नहीं था। आर्य सभासदों, आर्य प्रतिनिधि सभाओं या सार्वदेशिक सभा के सदस्यों तथा अधिकारियों में किसी के लिए धार्मिक योग्यता आवश्यक नहीं थी। परिणाम यह था कि सम्पूर्ण आर्य संसार में एक भी प्रामाणिक सभा ऐसी नहीं थी, जो आर्य जनता का धार्मिक नेतृत्व कर सके। इसका उपाय करने के कई यत्न हुए पहले विद्वत्सभा बनी, फिर धर्मार्थसभा की स्थापना हो गई, जिससे वह न्यूनता पूरी हो गई। इस विषय में आर्यसभासदों का भी एक कर्तव्य है, आर्यप्रतिनिधि सभाओं में ऐसे विद्वानों को अधिक संख्या को भेजना, जो धर्म के विषय में राय देने का अधिकार रखते हों, आर्य सभासदों का कर्तव्य है। नियमों का इतना है कि उन्होंने सम्मति देने वालों को यह नहीं बताया कि वे कैसे व्यक्तियों को अपने चुनें, किन्तु समझदार पुरुषों को इतने विस्तृ को आवश्यकता भी नहीं रहती। आज समाज के प्रबन्ध में व्यावहारिक पुरुषों की दिखाई देती है, तो उसका कारण केवल आ की उपेक्षा दृष्टि है।

ऋषि दयानन्द ने आर्य समाज का जो बनाया है, उसकी मुख्य विशेषताएँ दो हैं। स्वाधीन और अपने आप में संपूर्ण है, ही लोकमत का सच्चा प्रतिनिधि है। अपने सभासदों की भलाई के लिए संगठन की अपेक्षा नहीं करता। यदि पड़े तो वह अपने सभासदों की सामाजिक, और राजनीतिक आवश्यकताओं को पूर्ण है। यह लोकमत को प्रतिबिम्बित करने साधन है। यही दो कारण हैं कि वह स्थि आर्य समाज का ऐसा अच्छा संगठन न हो मजबूत झकोरे इसे गिराने के लिए आते कभी के सफल हो गए होते।

अगर तुम वह करते हो जो तुम्हें नहीं करना चाहिये, तो तुम्हें वह सहना पड़ेगा जो तुम्हें नहीं सहना पड़ता।

—एण्डरु जैक्सन

× × × ×

महान् व्यक्तियों में दृढ़ निश्चय होता है। कमजोर व्यक्ति केवल इच्छा ही करते रहते हैं।

—चीनी कहावत

× × × ×

कीमती पोशाक सौन्दर्य नहीं बढ़ाती वह रौब पैदा कर सकती है और रौब प्रेम का शत्रु होता है।

—शेसटन

× × × ×

ठोकरें सिर्फ धूल उड़ाती हैं जमीन से फसलें नहीं उगातीं।

—रवीन्द्रनाथ टैगोर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ारीरक उपनिषद्

[ले० स्वर्गीय पं० रामदत्त जी शुक्ल एम. ए.]

[पं० रामदत्त जी शुक्ल वेदों के तपोनिष्ठ विद्वान् थे। वे अध्यात्मविद् और मन्त्रार्थ के सम्बन्ध में य वेत्ता थे। आजन्म ब्रह्मचारी रह कर उन्होंने अपना अधिकांश समय वेद ब्राह्मण उपनिषद् आदि के यन में व्यतीत किया। मेरे तो वे वेद-गुरु ही थे। लगभग बीस वर्षों तक उनके साथ रहने और मंत्रार्थों पर ार विमर्श का अवसर और सौभाग्य मुझे मिलता रहा। वे अपने पीछे कुछ लिखित कापियाँ और डायरी ड़ गए हैं। उन्हीं के आधार पर कुछ सामग्री 'आर्य मित्र' के पाठकों के लिये प्रस्तुत करने का विचार है। का यह आरम्भ दीक्षा शताब्दी अङ्क से कर रहा हूँ। शुक्लजी के अनेक मित्र और सहयोगी अभी जीवित हैं। शा है उन्हें श्रद्धेय पं० रामदत्तजी की इस सामग्री में रुचि होगी। कृष्ण यजुर्वेद के चरण साहित्य की परम्परा शारीरक उपनिषद् है जो निर्णय सागर के १०८ उपनिषदों के संग्रह में छपा है। उसी का यह भाषानुवाद जी ने लिखा था। —वासुदेव शरण अग्रवाल]

ओम्। शरीर पृथ्वी आदि महाभूतों का एक समवाय है (इसमें) जो कठिन है वह पृथ्वी जो द्रव (भाग) है वह जल है, जो उष्ण भाग वह तेज (अग्नि) है, जो संचरण करता है वह वायु है, और जो सुषिर (खोखला) है वह आकाश है।

श्रोत्रादिक ज्ञानेन्द्रियाँ हैं। श्रोत्र आकाश, त्वचा वायु, चक्षु अग्नि, जिह्वा (स्वाद) जल और घ्राण पृथ्वी गुणान्वित हैं। इस प्रकार से इन्द्रियों के क्रम शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध यह विषय क्रम से पृथ्वी आदि महाभूतों से ये उत्पन्न होते हैं।

वाक्, पाणि, पाद पायु और उपस्थ ये पाँच कर्मेन्द्रियाँ है। उनके क्रम से वचन, आदान (ग्रहण करना), गमन, विसर्ग (त्यागना) और आनन्द ये विषय हैं। क्रम से पृथ्वी आदि महाभूतों से यह उत्पन्न होते हैं।

मन, बुद्धि, अहङ्कार और चित्त ये अन्तःकरण चतुष्टय चार हैं। उनके क्रम से संकल्प-विकल्प, अध्यवसाय (निर्णय करना), अभिमान और धारणा (स्मृति) ये विषय हैं। मन का स्थान गले का अन्तिम भाग, बुद्धि का वदन, अहङ्कार का हृदय और चित्त का नाभि स्थान है।

(शरीर में) अस्थि (हड्डी), चर्म (चाम) नाड़ी, रोम और मांस ये पार्थिव अंश (भाग) हैं।

मूत्र, श्लेष्म (कफ,) रक्त, शुक्र (वीर्य) और स्वेद ये जल के अंश हैं।

क्षुधा, तृषा (प्यास), आलस्य मोह और मैथुन (कामेच्छा) ये अग्नि के अंश हैं।

प्रचारण (चलना.) विलेखन (खुरचना), स्थूल (नेत्रों) का उन्मेष (खोलना) और (निमेष मूँदना) ये वायु के अंश हैं।

काम, क्रोध, लोभ, मोह और भय ये आकाश के अंश हैं।

शब्द, स्पर्श, रूप, रस गन्ध ये पृथ्वी के गुण हैं।

शब्द, स्पर्श, रूप रस ये जल के गुण हैं।

शब्द, स्पर्श, रूप ये अग्नि के गुण हैं।

शब्द, स्पर्श ये वायु के गुण है।

शब्द मात्र आकाश का गुण है।

सात्विक, राजस और तामस लक्षण वाले तीन गुण हैं।

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह (दान न लेना), अक्रोध, गुरु शुश्रूषा, शौच (पवित्रता) संतोष, आर्जव (सीधापना), अमानित्व (अभिमान शून्यता), अदम्भित्व (दम्भ न करना),

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आस्तिकता, अहिंसता (दया) ये सब विशेषतः सात्विक गुण समझने चाहियें।

मैं कर्त्ता हूँ, मैं भोक्ता हूँ, मैं वक्ता हूँ मैं अभिमानी हूँ इन सबको ब्रह्मज्ञानी राजस गुण कहते हैं।

निद्रा, आलस्य, मोह, राग, मैथुन और चोरी को ब्रह्मवादीगण तामसियों के गुण कहते हैं।

सात्विक ऊर्ध्व (ऊपर), राजसिक मध्य और तामसिक नीचे को जाते हैं।

सत्य ज्ञान सात्विक, धर्मज्ञान राजसिक और तिमिरान्ध (अज्ञान) तामसिक हैं।

जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति और तुरीया यह (जीव की) चार अवस्थायें होती हैं।

ज्ञानेन्द्रिय, कर्मेन्द्रिय, अन्तःकरण चतुष्टय इन चौदह करणों (उपायों) से युक्त जाग्रत् अवस्था होती है।

अन्तःकरण चतुष्टय मात्र से युक्त स्वप्नावस्था होती है।

चित्तमात्र करण से संयुक्त सुषुप्ति होती है।

केवल जीव युक्त ही तुरीयावस्था होती है।

उन्मीलित, निमीलित, मध्यस्थ (?) जीव और परमात्मा में से जीवात्मा को जाना जाता है।

ज्ञानेन्द्रिय (५) कर्मेन्द्रिय (५) मन, बुद्धि इन १७ से मिल कर सूक्ष्म शरीर होता है।

मन, बुद्धि, अहङ्कार, आकाश, वायु, पृथ्वी ये आठ प्रकृति हैं। (इनके) अन्य हैं। श्रोत्र, त्वचा, चक्षु, जिह्वा घ्राण ये— उपस्थ कर, पाद और-वाक् ये—दश, रूप, रस और गन्ध ये २३ प्रकृत तत्त्व अव्यक्त प्रधान है। पुरुष (इनसे) परे है।

सहनाववतु इति शान्तिः इति शारीरकोपनिषत्समाप्ता।

आज पढ़ना सब जानते हैं लेकिन पढ़ना क्या चाहिये यह कोई नहीं जानता।

× × × ×

प्रण हीनता प्राण हीनता के समान है।

× × × ×

जीवन एक फूल है प्रेम उसका मधु

× × × ×

विचार फूलों के समान है, और सोचना उनको माला में गूंथना है।

× × × ×

दुर्बल चरित्र वाला व्यक्ति उस सरकण्डे के समान है जो हवा के हर झोंके पर झुक जाता

× × × ×

आदमी को चाहिये वह अपना मित्र आप बने, बाहरी मित्र की खोज में न भटके

× × ×

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ऋषि ऋण कैसे उतरे !

[श्रीमती सुशीला देवी जौहरी, एम. ए. टी. डी. (डब्लिन), एफ. आर. जी. एस. (लन्दन)]

बचपन ही से मैं आर्य विचारों में पली। मेरे दादा पं० क्षेमकरण दास जी त्रिवेदी अथर्व-भाष्यकार थे। उनके कार्यालय में दिन भर वाद का कार्य होता रहता : अथर्ववेद के काण्डों र्सल भूखण्ड के भिन्न-भिन्न स्थानों में भेजे जाते

ट्रीनीडाड, फिजी, केनिया आदि उसमें प्रमुख टिकटों का चाव था। सैकड़ों वी० पी० के मनी-र्डर फार्मों पर घर का पता लिखने का कार्य मुझे ा जाता था। धीरे २ वैदिक धर्म प्रचार में रुचि ी गई। हमारे दादा से जब मुरादाबाद में महर्षि नन्द से भेंट हुई तब से वे एक दम शाकाहारी गये। फलतः मांस, मछली, प्याज, लहसुन का ग भी जन्म से कायस्थ होते हुए भी हमारे परि- से एकदम उठ गया और आज तक भी वही जारी है। आरम्भ से ही यथाशक्ति स्वदेशी ुओं का प्रयोग चला आ रहा है। संस्कार कुछ बन गये हैं विदेशी वस्त्र खरीदने को जी ही चाहता।

कुछ बड़ी हुई तो आर्य समाज के वार्षिकोत्सवों पर बड़े-बड़े संन्यासियों जैसे स्वामी श्रद्धानन्द, पूज्य-पाद नारायण स्वामी आदि उपदेशकों के उपदेश सुनने माता जी के साथ जाया करती थी। ज्यादा तबियत तो नहीं लगती थी पर आशय समझ में आ जाता था। मौलवियों और पादरियों से जो विद्वानों के शास्त्रार्थ होते थे उनसे भी निष्कर्ष निकाल लेती थी कि सबका मूल धर्म केवल एक ही हो सकता है और वह है मानव धर्म या वैदिक धर्म। समय-समय पर स्थान स्थान पर लोगों ने अपने तरीके से उसमें परिवर्तन कर लिये और मूल से इतनी दूर हो गये कि वास्तविकता के बिलकुल विरुद्ध बात को ही सत्य समझने लगे।

माता जी ने आरंभ से ही सब का स्वभाव डाल दिया था। कि जब तक संध्या न करलो, कुछ भी मत खाओ। कभी-कभी जब भूख लगती थी और हम लोग बहुत आग्रह करते थे तो "ओ३म्" कह कर खाने की आज्ञा मिल जाती थी। उसका फल यह हुआ कि बिना परमात्मा का स्मरण किये हम लोग कुछ खा ही नहीं सकते थे।

बचपन योंहीं बीता। मैट्रिक की परीक्षा पास कर ली। इण्टर में नाम लिखाना चाहा। माता जी ने आगे अंग्रेजी पढ़ने का बड़ा विरोध किया और प्रतिज्ञा कराई कि मैं वेदों का अध्ययन व प्रचार करूँगी। मैंने कहा, "मुझे अंग्रेजी पढ़ने दिया जाय मैं अवश्य ही उनकी आज्ञा का पालन करूँगी"। पन्द्रह दिन के बाद माता जी मेरी दृढ़ता पर अत्यन्त प्रसन्न हुईं और मुझे आगे पढ़ने की सुविधा दी गई।

जब मैं बी. ए. (द्वितीय वर्ष) में पढ़ती थी, १६ वर्ष की आयु में सन १६२६ में मेरा विवाह हो गया। इलाहाबाद में मेरा जन्म हुआ और वहीं पली

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

थी। मेरे पति श्री हरनाम सुन्दर लाल जी लखीमपुर खीरी में एडवोकेट हैं। कुछ समय लखीमपुर खीरी एक बहुत छोटा और अविकसित स्थान था। स्त्रियों को बहुत पर्दा करना पड़ता था परन्तु मैंने घर पर ही अपने अनुकूल वातावरण बना लिया था। पास पड़ौस की लड़कियों व परिवार की स्त्रियों को पढ़ाना लिखाना, सीना, बुनना व संध्या हवन सिखाना मेरा नित्य कर्म हो गया।

दो बच्चे हो गये। इसके बाद मेरे पिता जी ने मेरे भाई को लन्दन पढ़ने के लिए भेजने का निश्चय किया। मैंने भी अपना मत वहाँ जाने का प्रकट किया। फलस्वरूप मैं अपने भाई डा० इन्द्रदयाल सेठ व अपने दो बच्चों को लेकर १० फरवरी, १९३४ को जहाज द्वारा लन्दन को रवाना हो गई। रास्ते में २१ दिन समुद्र पर बिताने पड़े। जहाँ-जहाँ जहाज ने कोयला लिया वहाँ-वहाँ उतर कर सैर की। स्वेज नहर को देखकर आँखें खुल गई। मनुष्य का इतना चमत्कार। वह जो चाहता है अपने परिश्रम से कर सकता है। बस, परमात्मा की कृपा चाहिये। पोर्ट सईद पर (फ्राँसीसी इन्जीनियर जिसने स्वेज नहर को बनवाया था) की मूर्ति देखकर उस कर्मठ के प्रति श्रद्धा से सिर झुक गया।

लन्दन पहुंच कर कुछ दिन इधर उधर रही फिर बिरला के "आर्य भवन" का पता लगा कर हम लोग वहीं वैलसाइज पार्क में रहने लगे। यहाँ का प्रबन्ध एक गुजराती महोदय के हाथ में था। सुबह दूध दलिया, फल आदि और शाम को रोटी दाल, तरकारी वगैरह मिलने लगी। भारत में लोग कहते थे कि इङ्गलैंड में शाकाहारी रह कर कोई जीवित नहीं रह सकता। बच्चों को तो विशेष रूप से अंडे आदि अवश्य खिलाने चाहिये पर मैंने एक भी नहीं सुनी और मैं और मेरे बच्चे पूर्णतया स्वस्थ रहे।

"आर्य भवन" में बहुत से गुजराती हिन्दू रहते थे। मैंने सोचा कि यहाँ आर्य समाज की स्थापना करके प्रत्येक शनिवार को एक अधिवेशन किया जाय। "आर्य भवन" में पुस्तकों का संग्रह अच्छा था। फलतः मैंने श्रीमद्भगवद्गीता का अर्थ प्रारम्भ किया। कुछ धार्मिक गोष्ठियाँ भी रूप से होने लगीं। महीनों तक यही क्रम बार एक भारतीय नवयुवक एक अंग्रे साथ आये और यह इच्छा प्रकट की कि रीति से उससे विवाह करना चाहते समारोह से वह संस्कार सम्पन्न कराया और वेश भूषा में सजी वधू तथा वर के साथ खिंचवाई।

मैंने सार्वदेशिक सभा देहली को समाज" को स्थायी रूप देने को लिखा "सार्वदेशिक" पत्र की एक प्रति भेजी। चले आने के बाद कदाचित् वह अधिवे भी बन्द हो गया।

लन्दन में पहले तीन महीने मैं *Macmillan Nursery Training* मैं पढ़ती रही। फिर *Maria Grey College* मैं पढ़ कर डब्लिन (आय *Higher Diploma in Education* पास की और आयरलैंड, स्कॉटलैंड, फ्राँस, जर्मनी आदि की सैर करती हुई जुलाई भारत वापस आ गई। इन सब स्थानों में इतनी सुन्दर चरित्र निर्माण और अ शिक्षा दी जाती थी कि देख कर हर आता था कि वही शासक यहाँ और भारत में। क्या भारतीय बच्चों विदेशी अधीन होने के कारण ऐसे अभागे हैं कि नागरिक बनने का अधिकार भी नहीं प्राप्त का संदेश यदि हमने क्रियात्मकरूप में अ तो हमें कदापि पराधीन न होना पड़ता।

महर्षि की जीवनी पढ़ी। पण्डिता साथ उनका जो पत्र व्यवहार हुआ था उन्होंने उनसे आग्रह किया था कि स्त्रियों स्त्रियाँ ही कर सकती हैं। वे विवाह न महर्षि की भाँति अपना जीवन नारी उ दें। मन में लहर उठी कि अब भी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

न्त काम में जुट जाओ। लखीमपुर में कन्या ८
की भगवानदीन आर्य कन्या पाठशाला थी वहाँ
ई मुख्याध्यापिका नहीं टिक पाती थी। कुछ आर्यों
मेरे पति से आग्रह किया कि वे मुझे यह कार्य
र सम्भालने की अनुमति दे दें। "अन्या क्या
गे ? दो आँखें।" मेरे पतिदेव ने अवैतनिक रूप से
र्य करने की अनुमति विलायत जाने के पहले ही
ी थी और मैंने कुछ महीनों कार्य भी किया था।
ी अगस्त १९३७ से मैंने वैतनिक रूप से इसी
ठशाला में मुख्याध्यापिका के पद पर कार्य करना
रम्भ कर दिया। और अब भी उसकी प्रधाना-
र्या हूँ। अब वह पाठशाला जिला खीरी की एक
त्र संस्था है, जो कि कन्याओं को उच्च शिक्षा देती
। परमात्मा को धन्यवाद है कि अब यह एक इण्टर
लेज है और बी. ए. की कक्षायें भी यहाँ व्यक्ति-
त रूप से चल रही हैं। कोर्स के पाठ्यक्रम के अति-
क्त यहाँ पर धर्म शिक्षा भी अनिवार्य से पढ़ाई जाती
। इस पाठशाला में लगभग ८०० कन्यायें इस
मय शिक्षा प्राप्त कर रही हैं। मुस्लिम, ईसाई,
रिजन व प्रत्येक मतावलम्बी कन्याओं और आर्य
न्दू कन्याओं में कोई भेद नहीं है। सब के हृदयों
र यही प्रभाव डालने की चेष्टा की जाती है कि
भी मानव एक समान है। ५५० वर्ष पहले कोई
सिक्ख संसार में नहीं था। लगभग १४०० वर्षों से
हले कोई मुसलमान नहीं था। १९५९ वर्षों से पहले
ोई ईसाई नहीं था। २५०० वर्षों से पहले कोई बौद्ध
ा जैन नहीं था। ३००० वर्ष पहले कोई यहूदी नहीं
ा। और लगभग ४००० वर्ष पहले कोई पारसी नहीं
ा। भारतीय या वैदिक सभ्यता संसार में सब से
ुरानी है। मोहनजोदड़ों और हड़प्पा तथा कौशाम्बी
के खण्डहर पुकार कर यह कह रहे हैं। धर्म एक है।
सब मत उसी से निकले हैं। बौद्ध तथा जैन मत
वैदिक धर्म की एक शाखा है और ईसाई मत है बौद्ध
मत का परिवर्तित रूप। स्वामी शंकराचार्य ने बौद्ध
मत की नास्तिकता के विरुद्ध जो शंखध्वनि की थी
कि ब्रह्म एक है उसी की शाखा अरब में मुस्लिम
मत बन कर फैली।

यदि हमें ऋषि ऋण उतारना है तो प्रत्येक आर्य
का पुनीत कर्त्तव्य है कि अहिंसा, प्रेम व सत्य के
आधार पर अपने आचरणों को ऐसा ढाले कि
जिससे सम्पर्क में आये वही हमारा लोहा मानने
लगे।

आजकल लोगों को अपने को "आर्य" कहने में
लज्जा आती है। तीस वर्ष पहले प्रत्येक व्यक्ति किसी
भी आर्य समाजी को बड़ी श्रद्धा से देखता था। जो
कोई उसके सम्पर्क में आता था उस पर उसकी छाप
अवश्य ही पड़ती थी। अब समय है कि हम दल-
बन्दियों से ऊपर उठें और आत्मनिरीक्षण करें। एक
दयानन्द ने क्रांति कर दी, एक निहत्थे गाँधी ने
संसार की सबसे बड़ी सत्ता से देश को मुक्त कर
दिया, क्या हम भी उनकी तरह जो चाहें सो नहीं
कर सकते हैं ? इच्छाशक्ति को बढ़ाइये तभी "कृण्-
वन्तो विश्वमार्यम्" का नाम सार्थक हो सकता है।

यदि अपने २ दायरे में सब लोग कुछ न कुछ
अविलम्ब ही करना प्रारम्भ कर दें तो सम्भव है कि
हम ऋषि ऋण उतारने में समर्थ हो सकें। हमारे
विचारों की लहरें अवश्य ही विश्व में गूजेंगी।
विज्ञान का युग है। सब ही तर्कबुद्धि से काम लेने
लगे हैं। हमें परिस्थितियों का लाभ उठा कर परिश्रम
करते रहना चाहिये।

"कर्मण्येवाधिकारास्ते मा फलेषु कदाचन" के
अनुसार हम अनासक्त होकर कार्य करते रहें।
परमात्मा से प्रार्थना है कि वह हमें ऋषि ऋण उता-
रने में समर्थ बनाये !

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मानवता [श्री लखनसिंह, भदौरिया साहित्य रत्न]

कोई कैसे जी रहा, तुम्हें कुछ पता नहीं, तुम मानव और मनुजता का दम भरते हो
कोई कैसे मर गया, तुम्हें कुछ पता नहीं। सच कहना, उसके लिए कि कितना मरते हो
नित दबा हृदय में आग, सुखा आँसू कोई- वह पड़ा-पड़ा सड़ रहा, पड़ौसी सालों से
कितना विष पीकर गया, तुम्हें कुछ पता नहीं! क्या उसकी कुटिया में भी दो पग धरते हो

क्या उससे पूछा कभी कि कैसे रहते हो ?
इतनी पीड़ा तुम कितने दिन से सहते हो ?
दे उसे सहारा आप कभी निज बाँहों का,
"लो पियो तनिक पानी"-मधुस्वर में कहते हो ?

वह पाकर स्नेह तुम्हारा, शायद खिल उठता ! पर अहंकार ने तुमको तो हिलने न दिया
उसकी पीड़ा का पर्वत, शायद हिल उठता ! मानव से जाकर मानव को मिलने न दिया
दो बोल तुम्हारे मरते को जीवन देते- अभिमान बना दीवार मनुजता के पथ में
जीने में शायद स्वाद उसे कुछ मिल उठता ! रस के अभाव ने मुकुलों को खिलने न दिया

वह देखो कोई द्वार खड़ा भिखमंगा है !
क्या सोचा कभी कि क्यों यह भूखानंगा है ?
हाँ तुमने तो इतना निष्कर्ष निकाला है--
यह ढोंगी, ठग है, कायर धूर्त्त लफँगा है !

ये पतित स्वयं में कितना राज समेटे हैं ? रख कर कन्धे पर हाथ कभी पूछा जाकर
क्या पुण्य बाँटने को खुद पाप लपेटे हैं। उनके अभाव का घाव तनिक सा सहला कर
क्या इनके जीवन पृष्ठ पलट कर देखे हैं ? "तुमने यह गर्हित जीवन कैसे लिया सहे!
यदि कहते हो--"हम एक पिता के बेटे हैं ? खोलता हृदय के पृष्ठ तुम्हें अपना पाकर

तुम रस बरसाने को आतुर सागर जल पर,
मर रही मनुजता प्यासी कबसे मरुस्थल पर !
क्या तब ही सचमुच अमृत की वरसा होगी !
जब अर्थी होगी मानवता की गल गल पर !

तुम मानव और मनुजता के तो हामी हो ! यह म्लान पड़े मृदु मुकुल इन्हें रस से खींचो
पर दानवता को देते नित्य सलामी हो ! बढ़ आओ अब मत पीछे हाथों को खींचो
जाओ यह मिथ्या दम्भ डुबाओ सागर में- लो धूल भरे हीरों की कीमत पहचानो
जिससे न और मानवता की बदनामी हो ! तुम देख घिनौनी सूरत मत आँखें मीचो

इनकी सूरत पर पड़ी तुम्हारी कीचड़ है !
अब और घृणा का कूड़ा मत इन पर डालो !
दमकाओ मानव रूप स्नेह छींटे देकर !
धोओ मन का कालुष्य मनुजता व्रत पालो !

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

विज्ञान की आदि उपलब्धि अग्नि

वैदिक विज्ञान की साक्षी

[श्री डा० वासुदेवशरण अग्रवाल]

विज्ञान में जिस तत्व को अग्नि, ऊष्मा, ताप, ऊर्जा या एनर्जी कहते हैं, और अन्तिम विश्लेषण में जो कहीं "प्राण" के समीप आ पहुँचा ..... उसे वैदिक वैज्ञानिकों ने उस रूप में तो देखा ही है, उससे आगे भी कुछ देखा जिसे "दृष्टा" रूपि देखता है, वह क्या है ?

तात्विक दृष्टि से जितने प्रकार की शक्तियाँ विश्व में है, सब का मूल स्रोत एक है। भौतिकशक्ति, प्राणशक्ति और मानव शक्ति—शक्तियों के ये ही तीन विभाग हैं, इन्हें ही क्रमशः भूतमात्रा, प्राणमात्रा और प्रज्ञामात्रा भी कहा जाता है। इन तीन मात्राओं की समष्टि मानव है। अर्थात् मानव के निर्माण में भौतिक शरीर, उसके भीतर की प्राणशक्ति और चिन्तन शक्ति, इन तीनों का योग हुआ है, मन, प्राण और भौतिक भूत इन विविध शक्तियों में विज्ञान की दृष्टि से भले ही अभी तक भेद माना जाता रहा है। किन्तु वैदिक दृष्टि से और विश्व की तत्वात्मक दृष्टि से ये तीनों एक ही हैं। आज तो अर्वाचीन विज्ञान भी उस स्थिति में पहुँच गया है। जहाँ भौतिक शक्ति के विषय में उसकी अब तक की एकान्तिक विचार धारा डावांडोल हो गयी है। एडिंसटन और जेम्स जीनों का कथन है कि विश्व के जिस स्वरूप का ज्ञान हमें हो रहा है, वह हमारे मन का ही परिणाम है।

वस्तुतः भूतमात्रा, प्राणमात्रा और प्रज्ञामात्रा को ही हम अग्नि, वायु और सूर्य कहते हैं। तीनों एक ही है। केवल उनमें तारतम्य का भेद है। एक स्थूल है, दूसरा सूक्ष्म है। और तीसरा उससे भी सूक्ष्मतर है। एक घन, दूसरी तरल, और तीसरी विरल शक्तियों को ही क्रमशः अग्नि, वायु और आदित्य कहा जाता है। अपने शरीर की प्रक्रिया पर ही हम विचार करके देखें तो इन तीनों का तारतम्य और आपेक्षिक संबन्ध स्पष्ट समझा जा सकता है। हम शरीर के पोषण के लिये स्थूल अन्न ग्रहण करते हैं। वह शक्ति का घन रूप है, शरीर के भीतर पहुँचकर वह कुछ काल तक अपने घन रूप में रहता है। अन्न से रस, रस से असृक्, माँस, मेद आदि यह सब शक्ति का घन रूप ही है। इसके आधार पर और इसी के मन्थन से प्राण शक्ति उत्पन्न होती है। वह शक्ति का तरल रूप है। उसके पुनः मन्थन से मानस शक्ति उत्पन्न होती है, जिससे हम विचार करते हैं। तीनों एक दूसरे से अविनाभूत है। यदि इनमें से एक का भी उच्छेद हो जाय तो शेष दो का भी उच्छेद हुए बिना नहीं रहेगा। यदि शरीर को अन्न मिलना बन्द हो जाय तो प्राण की विधारणा और मन की संस्थिति दोनों ही टूट जाएंगे। अतएव मानव का शरीर मन, प्राण, वाक् इन तीनों की समन्वित प्रक्रिया पर ही निर्भर है। जिस शक्ति प्रक्रिया में यह तीनों मात्रायें सम्मिलित रहती हैं, उसे ही वैश्वानर अग्नि कहा जाता है। पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्युलोक यह तीन भी क्रमशः घन तरल और विरल है भूत-मात्रा, प्राण मात्रा, प्रज्ञा मात्रा, इनकी ही संज्ञायें हैं। यह शक्ति के तीन रूप है। जहाँ शक्ति होती है वहाँ उसके नियन्ता कन्ट्रोलर का भी होना आवश्यक है। यदि नियन्ता कन्ट्रोलर न हो, तो शक्ति का उपयोग असम्भव नहीं। जो शक्ति हमारे उपयोग से बाहर है वह अयज्ञिय है। जो नियमित है अर्थात् किसी नियामक तत्व या नियन्ता के अधीन है वही यज्ञिय है। अर्थात् रचनात्मक प्रक्रिया के अन्तर्गत है। नियन्ता या संचालक को ही वैदिक परिभाषा में नर कहा

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जाता है। पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्यौः यह तीन लोक हैं। इन तीन लोकों में भरी हुई जो घन, तरल, विरल, त्रिविध शक्ति है, उनके तीन नर हैं। जिन्हें अग्नि, वायु और आदित्य कहा जाता है। यह तीन ही विश्व है। और उनके तीन ही विश्वनर है। विश्वनरों से नियन्त्रित जो शक्ति है वही वैश्वानर अग्नि है। मानव के शरीर में जो अग्नि रहस्यमय शक्ति है वही वैश्वानर अग्नि है। शतपथ ब्राह्मण से स्पष्ट कहा है:-

अयमग्नि वैश्वानरीं यो यं अन्त पुरुषे येनेदमन्नम्
पचयते। शतपथ १४।८।१०।१

अर्थात् पुरुष में जो शक्ति है वही वैश्वानर अग्नि है। इसकी सत्ता की मोटी पहिचान यह है कि यह खाये हुए अन्न को पचा देती है। और भी नाना प्रकार के कई कार्य इससे संपन्न होते हैं। पर जब तक यह बाहर से आने वाली अन्नाहुति को यथावत् भस्म करती रहती है, तब तक शरीर यज्ञ सकुशल रहता है। बाहर से आने वाले अन्न को सोम कहते हैं। अग्नि में सोम की आहुति यही यज्ञ है। अग्नि अन्नाद है। सोम अन्न है। अन्नाद और अग्नि का समागम यही विश्वयज्ञ की प्रक्रिया की सन्तत कोटि है। अन्न में अग्नि पड़कर अपनी सता खो देता है। वह अन्नाद के रूप में मिल जाता है। अतएव अन्नाद ही शेष रहता है। अन्न केवल अन्नाद के सम्बर्द्धन का कार्य करता है।

अर्वाचीन विज्ञान की दृष्टि से जितने भी स्थूल दृश्य पदार्थ हैं, उनकी त्रैकालिक कोई सत्ता नहीं। उनके नाम और रूप दोनों ही मिथ्या है। सत्य केवल वह शक्ति है, जो परमाणुओं का रूप धारण कर इन भौतिक पदार्थों के रूप में प्रकट हो रही है। विश्व के बाह्य रूप में सर्वथा अभेद है। विज्ञान के मूल भूत ९२ तत्वों के अभ्यन्तर में परमाणुओं का स्थान है। जिसे परमाणु कहते हैं। वह भी घन विद्युत और विद्युत तरंगों की समष्टि है। इनमें पारस्परिक कोई ऐसा अवश्यम्भावी भेद नहीं है, जो एक तत्व के प्रभाव से बचा रह सके। परमाणुओं को ऋण, धन, ऋणाणु और धनाणु इनकी संख्या के भौतिक जगत् में तत्वों के भेद उत्पन्न केवल गणित सिद्ध मानना पड़ेगा। इस प्र शक्ति तत्व एक और सर्वथा एक है।

वैज्ञानिक शक्ति के प्रायः ७ विभाग ताप या उष्णता, प्रकाश, विद्युत्, चुम्क रासायनिक शक्ति, शब्द और यान्त्रिक स्प्रिंग आदि सप्तधा विभिन्न होते हुए भी शक्ति एक ही है। अतः विज्ञान का यह प्र माना जाता है कि एक प्रकार की शक्ति प्रकार की शक्ति में बदला जा सकता है के इन नाना रूप के विज्ञान ने एक प्रका करण और नाम करण किया है। वैज्ञि की दृष्टि से इनके वर्गीकरण और नाम परिभाषाऐं भिन्न है। यह स्वाभाविक है क संस्कृति अपने मूल विचारों की अभिव्य स्वतन्त्र शब्दावली और परिभाषाओं क करती है। विज्ञान ने भी आज जिस भा के नाना रूपों का नाम करण किया है। अनुसंधान की यह प्रक्रिया पूरी की जाय और परिभाषायें भिन्न हो सकती हैं।

वैदिक विज्ञान ने शक्ति तत्व की ओर दृष्टिपात् करते हुए निःसंशय हो इन्द्र, मित्र, वरुण, अग्नि, गुरुत्मा, मातरिश्वा ये सब भिन्न होते हुए भी सत् तत्व के अनेक रूप हैं:—

इन्द्रम्मित्रम्वरुणमग्निमाहुरथो दि
स सुपर्णो-गरुत्मान्।
एकं सद्विप्रा बहुधावदन्त्यग्नि
यमम्मातरिवानमाहुः॥ ऋ०

इसी भाव की पुष्टि मनु के इस जाती है :—

एतमेके वदन्त्यग्नि मनुमन्ये प्र
इन्द्रमेके परे प्राणं अपरे ब्रह्म श

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कोई इसे अग्नि कहते हैं। दूसरे उसे ही प्रजा-
मनु की संज्ञा देते हैं। कोई उसे ही इन्द्र कहते
और कोई उसे प्राण मानते हैं। किसी के मत में
शाश्वत ब्रह्म है।

"एकं वा इदमग्रेभूव सर्वम्" यही इस सृष्टि का
रहस्य है। एक ही शक्ति तत्व अनेक रूपों में
अभिव्यक्त हुआ। अन्ततोगत्वा इस महान् विश्व की
शक्ति वैदिक भाषा में सच्चिदानन्द ब्रह्म है।
ज्ञानिक भाषा अभी अपनी अन्तिम समीक्षा का
र्माण ही कर रही है। अविचाली ध्रुव तत्व के
षय में उसके अनुभव से अभी आपेक्षतावाद
द्धांत ने विज्ञान के प्रांगण में शताब्दियों से जमें हुए
त कुछ कूड़े करकट हटा दिए हैं। शक्ति और
त भौतिक पदार्थ का कल्पित भेद मिट गया है।
दृश्य भूत पदार्थ हैं वह छन्द विशेष में सिमटी
शक्ति का ही रूप है। इसे ही अंग्रेजी में यों
ईंगे ॥ "मैटर इज वाटिल्ड एनर्जी"। वैज्ञानिक
न्तन को एक और क्रांति की आवश्यकता है।
श्चय रूप से उसका मुहूर्त निकट आ रहा है।
ज्ञानिक भी ऋषि है। और वे विश्व के नाना स्थानों
शक्ति के मूल स्वरूप के समाधान खोजने में
गे हैं।

जिसे हम अग्नि कहते हैं। उसका मूल स्वरूप
या था, इस प्रकार विचार करते हुए ऋषियों का
थन है कि आरम्भ में शक्ति का एक समुद्र था।
सर्वत्र व्यापक था। इसीलिये उसे आपः कहा
या:—

यदाप्नोत् तस्मादापः (शतपथ, ६.१.१.६.)

आरम्भ में केवल एक प्रजापति था। उसने
पनी ही शक्ति से अपने को अभिव्यक्त किया वह
निर्विशेष और निर्धर्मक स्थिति से सविशेष और सर्व-
र्मात्मक स्थिति के रूप में आया। वह उसका व्यापक
वरूप शक्ति का समुद्र था, जिसे वैदिक विज्ञान की
भाषा में आपः या जल कहा जाता है। "आप एव
ससर्जादौ" का यही अभिप्राय है। वहाँ सृष्टि के
आरम्भ में समुद्र या "आपः" से भौतिक जलों का
ग्रहण नहीं किया जा सकता, क्योंकि भौतिक जल
की सत्ता तब वहाँ थी ही नहीं। जिसे विज्ञान की भाषा
में शक्ति का सर्वत्र सम वितरण कहते है। "एनर्जी
इन ए स्टेट ऑफ इक्विलिब्रियम" वही यह अनन्त
जल समुद्र था जल उसका प्रतीक है जो अभी रचना
संस्थान में परिगृहीत न हुआ हो। समत्व का सर्वोत्तम
प्रतीक जल माना जाता है। उस प्रकार के शक्ति
समुद्र में सृष्टि प्रक्रिया का उन्मुख भाव उत्पन्न हुआ।
उसमें कहीं एक केन्द्र का आविर्भाव हुआ। केन्द्र
विहीन अवस्था, सम वितरण की अवस्था थी। शक्ति
का किसी एक केन्द्र पर प्रकट होना यही सृष्टि के
आरम्भ में आवश्यक हुआ होगा।

वह अभिव्यक्ति शक्ति अग्नि है। यह अभि-
व्यक्ति किस कारण से सम्भव हुआ इसका उत्तर
है गतित्व। शक्ति के समवितरणात्मक धरातल पर
गतित्व का प्रादुर्भाव हुआ। उसी की संज्ञा अग्नि
थी। वस्तुतः गति तत्व और अग्नि तत्व एक दूसरे के
पर्याय है। स्थिति तत्व शक्ति का प्रसुप्त भाव है।
वही जब अभिव्यक्त होती है। तब उसे ही गति रूप
में हम देखते हैं। गति ही प्रकम्प या कम्पन है। केन्द्र
से परिधि या परिधि से केन्द्र तक गति और आगति
का द्वन्द्व यही गति का स्वरूप है। केन्द्र से परिधि की
ओर शक्ति या विद्युत की गति है। उसे केन्द्र कहा
जाता है। वही जब परिधि से अपने छन्द से छन्दित
होकर केन्द्र की ओर लौटती है तो उसी आगति
तत्व का नाम विष्णु है। गति और आगति अथवा
इन्द्र और विष्णु इन दोनों द्वन्द्वोंका संघर्ष प्रत्येक पर-
माणु के अभ्यन्तर में अहर्निश जारी है। इसे ही एक
शब्द में बलतत्व कहते हैं। स्थितिभाव रस है। गति
भाव बल है। बल तत्व ही अग्नि है। यही सृष्टि के
आरम्भ में सबसे पहले जिसे वैदिक भाषा में "अंभे"
कहते हैं, प्रादुर्भूत हुआ था। संकेत से इसे "अग्रि"
कहा गया वह अग्रि ही अग्नि है:—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

स यदस्य सर्वस्य अग्रम असृत तस्मात् अग्रिः।
अग्रिर्ह वै तम् अग्नमित्याचक्षते परोक्षम्॥
शतपथ, ६.१.१.११.

तद्वा एनम् एतदग्रे देवानाम् प्रजापतिः अजनयत्।
तस्मादग्नि, अग्रिःहे वै नाम एतत् यदग्निरिति॥
शतपथ, २.२.४.२.

यहाँ स्पष्ट कहा है कि जो शक्ति सृष्टि के आरंभ में प्रजापति ने देवी से पूर्व अवस्था में उत्पन्न की वही अग्र स्थानीय होने से अग्रि कही गई और ऋषि लोग उसे ही संकेत से "अग्नि" कहते हैं।

यह अग्नि क्या है इसका स्वरूप केवल एक "कम्पन" है। स्पन्दन की शक्ति का नाम ही अग्नि है, सूर्य की रश्मियों में, मनुष्य हृदय में, लोहे के अग्नियन्त्र में, जहाँ जहाँ स्पन्दन है वहीं वहीं अग्नि है। स्पन्दन ही सृष्टि की मूल शक्ति है। स्पन्दन का नाम ही गतितत्व है। स्पन्दन को ही प्राण कहते हैं। "फैलना और सिकुड़ना" इस प्रक्रिया की संज्ञा 'स्पन्दन' है। अतएव प्राण की सर्वोत्तम परिभाषा जो वैज्ञानिक तत्व कथन के समकक्ष है, ऋषियों ने इस प्रकार की है :—

प्राणो वै समचन प्रसारणम्।
शतपथ, ८-१.४.१०.

फैलना, सिकुड़ना कन्ट्रैक्शन, एक्सपैन्शन यही सब शक्तियों का स्वरूप है। यही अग्नि शक्ति है। हृदय की धड़कन में प्राण के संमचन प्रसारण का रूप हमें साक्षात् दिखाई देता है। इसी का परिणाम जीवन है। यही छन्द है। अहोरात्र, पूर्वपक्ष, उत्तर-पक्ष, या दर्श, पौर्ण मास, उत्तरायण, दक्षिणायन, ये सब काल छोटे बड़े छन्द हैं। जिनके द्वारा सूर्य का सचरणशील रथ महाकाल को सापेक्ष काल के रूप में परिणत कर रहा है। यह छन्द जीवन का हेतु है। संवत्सर में ऋतुओं का छन्द न हो तो कोई भी सृष्टि कार्य सम्भव नहीं। अग्नि का नाम ही संवत्सर है। अग्नि ने संवत्सर के रूप में अपना द्वि विरुद्ध भाव प्रकट किया है या काव्य की भाषा में कहे तो कह सकते हैं कि अग्नि रूपी गरुड़ ने उड़ने के दो पंख फैलाये हैं।

संवत्सर दो प्रकार का है:—

एक चक्रात्मक, दूसरा यज्ञात्मक। मास, ऋतु, अयन ये कालात्मक संवत्सर हैं। इन रूपों में गरुत्मा सुपर्ण अपने पंख [illegible] हुआ सृष्टि के आरम्भ से सृष्टि के अन्त [illegible] रहेगा। इन कालखण्डों की कोई सत्ता नहीं भ्राँतिसिद्धि है, प्रतीति मात्र है। जैसा [illegible] है। सृष्टि का कोई विधाता काल रूपी [illegible] में लेकर लव, कुनिमेष, वर्ष, युग, कल्प प्रचण्ड वाण वर्षा कर विश्व के प्रत्येक बींध रहा है। जितना भी परिवर्तनशील वह सब उससे बिंध रहा है। एक मात्र केन्द्र तत्व को काल के ये वाण नहीं छू पाते :—

लव निमेष परवानुजुग, बरष कलप [illegible]
भजसि न मन तेहि राम, कालु जासु

कालात्मक या चक्रात्मक संवत्सर उस संज्ञा है जिसमें पृथ्वी एक विन्दु से चल उसी विन्दु पर लौट आती है। इतनी सूर्य की अग्नि अर्थात् उसकी तप प्रक रश्मियाँ अपने आप को जितने भूत भा वर्तित कर देती है। वही यज्ञात्मक संवत्स रूप है इसी प्रक्रिया से तृण वनस्पति उग इसी में पशु, पक्षी, मनुष्य वर्ष प्रतिवर्ष

शीत और उष्ण दोनों में ऊष्मा का त दोनों एक ही अग्नि के दो रूप हैं। इन्हीं ऋण और धन है। इन्हें ही हम विराट् सू और चन्द्र के रूप में देखते हैं। सूर्य चन्द्र या मिट्टी पानी के जड़ गोले न समझना तो भुवन में प्रतीक बनकर प्रकट हुए हैं। धारा या शीतधारा के जो अग्नि की सृजन अनिवार्य परिणाम है, सूर्य और चन्द्र विश्व के किस पदार्थ में नहीं है यह जो सामने सूर्य दीखता है। यह तो अपनी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अन्तिम कड़ी है। इसके पीछे न जाने कितने सूर्य परंपरा जुड़ी है। जिन सब का पर्यवसान उस ऊष्मा में या उस महान् आदित्य में ढूढ़ना ये। यहाँ से ये ब्रह्माण्डनिकाय निरन्तर जन्म ले हैं। दूरतम नक्षत्रों में और उद्गम करते हुए धूम- प्रों में तत्व तरल नीहारिकाओं में और उनके भयंकर अलातचक्रों में एक ही अग्नि है। उसके बहुधा समिद्ध रूप को चकित मानव का प्रणाम भाव अर्पित हैं। अग्नि के पुष्कल कण आदि और अन्त- हीन है। मानवीय आयुष्य उस महाकाल का एक पलमात्र है, उस अहान् अग्नि की एक चिनगारी मात्र है, उस महान् यज्ञ की एक आहुति मात्र है, उस महान् साम का एक स्रोत मात्र है। इसका छन्द और विराट छन्द दोनों सर्वथा एक है।

हम प्रकृति से तो परिचित हो रहे हैं पर अपने अन्दर के स्वर्ग से बिल्कुल अपरिचित हैं। —महात्मा गाँधी

× × × ×

हम सब शारीरिक पश्चात्ताप से डर खाते हैं और उससे बचने की तदबीर करते हैं लेकिन आत्मा को लकवा मार जाने पर किसी को परेशानी नहीं होती है। —एपिक्टेटस

× × × ×

किसी विश्वास को न खोकर किसी अड़चन से हताश न होकर बराबर काम में लगा रहना ही तुम्हारा कर्त्तव्य है। —विवेकानन्द

× × × ×

अगर आदमी सीखना चाहे तो उसकी हर भूल उसे शिक्षा दे सकती है। —अज्ञात

× × × ×

क्रोध मूर्खता से आरंभ होता है और पश्चाताप पर खतम होता है। —पैथा गोरस

× × × ×

महान् उद्देश्य ही महान् मस्तिष्कों का निर्माण करते हैं। —एमरसन

× × × ×

आदर्श को हमेशा वास्तविकता में से उगना होता है। —कार्लाइल

× × × ×

जो मन का गुलाम है वह अपना शत्रु है। उसे शत्रु चारों ओर से घेरे रहते हैं। —जेम्स एलन

× × × +

विपत्तियों में वे ही विचलित होते हैं जिनमें स्वार्थ और अहंकार घर किये होता है। —जे. ए. शिडलर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

योग द्वारा परमानन्द की प्राप्ति

[श्री कन्हैयालाल 'मुमुक्षु' मिश्र

ॐ—युञ्जानः प्रथमं मनस्त त्वाय सविता धियम् ।
अग्ने ज्योति निचाय्य पृथिव्या अध्याभरत ॥यजु० ॥

अर्थ—योग को करने वाले मनुष्य तत्व अर्थात् ब्रह्म ज्ञान के लिये प्रथम जब अपने मन को परमेश्वर में युक्त करते हैं। तब परमेश्वर उनकी बुद्धि को अपनी कृपा से अपने में युक्त कर लेता है, फिर वह परमेश्वर के प्रकाश को निश्चय करके यथावत् धारण करते हैं। पृथ्वी के बीच में योगी का यही प्रसिद्ध लक्षण है।

आज संसार के बड़े २ फिलास्फर (दार्शनिक) प्रकृति के अन्वेषण में लगे हुए हैं। प्रकृति के रहस्यों को समझने और चरितार्थ करने में मानव के चरम लक्ष्य की पूर्ति विज्ञान द्वारा भौतिक जगत् में प्रगति करना मानव जीवन का उद्देश्य समझा है। परन्तु इस से मानवता का सुख प्राप्त होना तो क्या दिग्दर्शन भी सम्भव नहीं।

यह ठीक है कि प्राकृतिक जगत् में प्रकृति की कलाओं को जान कर उससे उचित लाभ उठाना चाहिये। आज लाखों रुपये का व्यय करके अमूल्य यन्त्रों द्वारा ग्रहों की खोज की जा रही है। इसके दो ही कारण प्रतीत होते हैं।

एक तो यह कि ईश्वर की अनन्त सृष्टि का यथा संभव ज्ञान प्राप्त करना और उससे उचित उपयोगप्राप्त करना, यह तो अच्छा है। परन्तु सांसारिक वातावरण को देखकर दूसरा यह अनुमान होता है कि जब पृथ्वी और आकाश को बाँटकर सन्तोष न मिला तो अब ग्रह उपग्रहों का नम्बर आया। यदि ऐसा है तो असन्तोष की भी सीमा न रही। रे मानव! तूने जीवन की अन्तिम घड़ियों में जब भयानक मृत्यु का सामना होगा उस अपार वेदना और असह्य दुःख से बचने के लिये क्या सामग्री एकत्रित की यह पृथ्वी, आकाश और यन्त्र क्या उस समय कुछ सहायता इस विज्ञान ने तुझे जीवन भर नट मर्क खेल खिला कर क्या अन्धकार में नहीं

वास्तव में आध्यात्मिक जगत् में वेद, उपनिषद्, दर्शन शास्त्रों के तत्व अर्थ का उपनाम विज्ञान है। इस विज्ञान त्याग और योग बल से आत्म साक्ष ऋषियों ने मानव जीवन के कल्याण र्शित किया। इतना ही नहीं, मृत्यु के भ विजय प्राप्त करने के साधन महर्षि पतञ्ज ग्रन्थ योग दर्शन में बताये, अर्थात् मृ रूप को बदल कर सुखप्रद बनाने अधिकार में न रह कर मृत्यु को अपने रख कर आत्मा को इच्छानुसार शरी के अमूल्य साधन उपस्थित किये। भवि बना कर मोक्ष प्राप्ति का अवसर दिया। के अन्त का चित्रपट है। जीवन काल के की प्रबल शक्ति का उपयोग बताया। आत्मा का विकास होने पर योगी हाल जान लेता है, आयु बढ़ा सकता है सिंह का बल प्राप्त कर लेता है, आकाश सकता है, इत्यादि ४६ प्रकार की विभूति प्राप्त होती हैं। आत्मा का पूर्ण विकास सांसारिक वासना और एषणाओं से नि मोक्ष प्राप्त होता है। यह मोक्ष अर्थात् प्राप्ति ही मानव जीवन का चरम ल लिये महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रका मार्मिक स्वर्णिम शब्दों में लिखा है। स्तुति हानि लाभ कितना ही क्यों न

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रज्ञाचक्षु विरजानन्द जी के प्रति

[भारत भूषण त्यागी, एम. ए., साहित्य रत्न, सिद्धान्त शास्त्री]

हम अपने चर्म-चक्षुओं से, सीमित भू-भाग देखते थे;
हम अपनी दोनों आँखों से, भौतिक अनुराग देखते थे;
मानस की लहरों का गर्जन, हमको दिखलाई देता था;
प्रज्ञाचक्षु वह परमहंस, मुक्ताओं को चुन लेता था।

[२]

हम बिन्दु लेकर लड़ते थे, रेखा को स्वयं मिटाते थे;
हम शाखाओं को सींच-सींच, जड़ पर तलवार चलाते थे;
हम आँखों वाले आँखों से, देखते हुए भी अन्धे थे;
व्याकरण-सूर्य ओ विरजानन्द, तुम दिव्य ज्योति के बन्दे थे;

[३]

कितने वर्षों से तड़प रही, होंगी अन्तस्तल की आँखें;
क्या हुआ अगर मुंद गईं देख, जग की उल्टी हलचल आँखें;
आँखों ने आँखों को देखा, परखा गुरू की गहराई को;
बूढ़ी आँखों ने चेले में, देखा अनुपम ऊँचाई को।

[४]

दो मुंदी हुईं-दो खुली हुईं, आँखों ने वह विस्तार किया;
पथ भ्रष्ट कोटि आँखों वाली, इस जगती का उद्धार किया;
यह आँखों की थी दिव्य पकड़, लौंगों का थाल हटाती थी;
थी विनय शीलता आँखों की, जो प्रण पर प्राण चढ़ाती थी।

[५]

यह कैसा दर्शन-लाभ देश, घूकवत् तम में रहता था;
उत्तर को दक्षिण समझे था, पूरब को पश्चिम कहता था;
आँखों वाले हम आँखों से, प्रतिकूल दिशा में जाते थे;
अज्ञान-आवरण पड़ा हुआ, ठोकर पर ठोकर खाते थे।

[६]

उन आँखों ने जब समझाया, जोड़ा जो हमें जोड़ना था;
उन आँखों ने जब ललकारा, छोड़ा जो हमें छोड़ना था;
यह उन आँखों की सूझ-बूझ, जिस पर इन्सान चल रहा है
यह उन आँखों की नींव मित्र, जिस पर निर्माण चल रहा है

से विनम्र प्रार्थना है:--

इस आश्रम से अध्यात्म गङ्गा बहेगी।
सकल विश्व के दुःख को जो हरेगी॥
बनेगा फिर यह स्वर्ग संसार सारा।
ऋषे! धन्य तुमको है तुमने उबारा॥

१२ का शेष

को छोड़ मुक्ति के साधनों में सदा लगे रहना।
महर्षि के अत्यावश्यक आदेश और उपदेश को
तार्थ करने के लिये महर्षि दयानन्द के स्मारक
में 'दयानन्द योगाश्रम' बनाने की आर्य जनता

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हिन्दी और आर्य समाज

[श्री प्रकाशवीर जी शास्त्री, सं

आर्य समाज और उसके प्रवर्तक महर्षि दयानंद जी का आरंभ से ही आर्य भाषा (हिन्दी) के साथ घनिष्ठतम संबन्ध रहा है। महर्षि स्वयं यद्यपि गुजराती थे और अध्ययन का क्रम भी विशेषतः संस्कृतमें ही रहा परन्तु अपने सब ही ग्रन्थोंके निर्माण का माध्यम उन्होंने हिन्दी को रखा है। हिन्दी में गुजराती शैली का पुट भी यद्यपि उनकी भाषा में अन्त तक चलता रहा, लेकिन इतने पर भी स्वामीजी ने अपनी लेखनी और वाणी से हिन्दी की पर्याप्त सेवा की है। यह वह समय था जब भारत देश में उर्दू और फारसी का बोलबाला था तथा ब्रिटिश शासन की कृपा से अंग्रेजी भी धीरे धीरे अपने पैर जमाने लगी थी। उस समय हिन्दी का प्रयोग न केवल आश्चर्य का ही कारण था अपितु राष्ट्रीय अपराध भी समझा जाता था। जनता की भाषा में जनता के गीत गाने वालों पर पैनी निगाह रखी जाती थी। हवा का रुख बहुत उलटा जा रहा था। १८५७ की क्रान्तिके बीचमें ही दब जाने से चारों ओर आतंक का राज्य था। पर उन विषम परिस्थितियों में भी राष्ट्रीय एकता का स्वप्न देखने वाला वह योगी घर घर जा कर अलख जगा रहा था। समय थोड़ा था और काम बहुत था, फिर भी राष्ट्रभाषा का प्रश्न उनके लिये असाधारण रूप में ही सामने रहा। आर्यसमाजी अपने परस्पर के व्यवहार और लेख आदि में भी हिन्दी को अपनायें इस पर कई बार अपने पत्रों में और भाषणों में भी स्वामी जी ने बल दिया।

आर्य समाज का प्रचार स्वामी जी के जीवन काल में उत्तर भारत में विशेष हुआ। पंजाब उसका एक प्रमुख केन्द्र था। आर्य समाज की दूसरी पीढ़ी के नेता भाई परमानन्द, लाला लाजपतराय और स्वामी श्रद्धानन्द जी तथा महात्मा हंसराज जी आदि का जन्मस्थान पंजाब में ही था। पंजाब में आरम्भ में आर्य समाज की दो प्रकार की शिक्षण चालू हुईं। कुछ गुरुकुलों के रूप में और कुछ के रूप में। शिक्षण संस्थाओं का यह जाल अतिरिक्त और भी कई प्रान्तों में फैलता गया लगभग एक अरब रुपये से अधिक के मूल्य संस्थाओं के बनकर धीरे धीरे तैयार हो गया करोड़ वार्षिक व्यय के रूप में शिक्षा पर कई लगने लगा। परन्तु शिक्षा का माध्यम हिन्दी को ही रखा गया। पंजाब जैसे संस्कृति से प्रभावित क्षेत्र में जहाँ सन्ध्या के मन्त्र भी आरम्भ में आर्य जन उर्दू में याद करते थे वहाँ आज की नई पीढ़ी संस्थाओं के इस हिन्दी-प्रधान वातावरण ही उर्दू से उतनी ही दूर चली गई है। हिन्दी चार-पत्र जो दिल्ली से परे बहुत कम पढ़े इन आर्य शिक्षण संस्थाओं की कृपा से में पहुँचते हैं।

दक्षिण में भी आन्ध्र-कर्नाटक महाराष्ट्र गुजरात जहाँ-जहाँ भी आर्य समाज का वहाँ हिन्दी भी बराबर चलती रही। न केवल में अपितु अफ्रीका, मारीशस, स्याम, ब्रह्मा तथा यूरोप के देशों में जहाँ भी आर्य समाज हिन्दीमें कार्य, हिन्दीमें विद्याध्ययन और प्रचार होते हैं। महात्मा गाँधी जी ने काशी विश्वविद्यालय के रजत-जयन्ती महोत्सव में अंग्रेजी के भरमार देखकर अपने भाषण में दुःखी होकर था, "यह गंगा के किनारे इन बच्चों को का पानी पिलाया जा रहा है? राष्ट्रीय जागृति के लिये देखो।" हरिद्वार के वृन्दावन के निकुञ्जों में गुरुकुल हिन्दी के माध्यम से शिक्षा देने श्रद्धानन्द जी, दर्शनानन्द जी और नारायण

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दि का कार्य कितना सराहनीय था। आर्य समाज शिक्षण संस्थाओं से संबन्धित कई आर्य विद्वानों हिन्दी में इतने उच्चकोटि के ग्रन्थ लिखे हैं जिन हिन्दी का सर्वोच्च पुरस्कार मङ्गला प्रसाद पारि- क भी उन्हें मिला है। सम्पादकाचार्य पं० पद्म- र शर्मा, पं० गंगा प्रसाद जी उपाध्याय, श्री चन्द्र विद्यालंकार और प्रो० सत्यव्रत सिद्धान्ता- र के नाम इनमें विशेष उल्लेखनीय हैं। इन ण संस्थाओं में जहाँ विदेशों से बहुत से छात्र ा प्राप्त करने आये वहाँ अहिन्दी भाषी प्रान्तों के कई सहस्र छात्र स्नातक होकर आज अपने अपने ों में राष्ट्र की सेवा कर रहे हैं।

प्रचार के क्षेत्र में भी आर्य समाज के प्रचारकों विद्वानों ने हिन्दी को व्यापक रूप देने में अद्भुत दिया है। आर्य समाज के मञ्च से प्रायः भाषण ी में ही होते हैं। जो सामाजिक उत्थान के लिये और कविताएँ पिछली कुछ शताब्दियों में ई गयीं हैं उनकी भाषा भी हिन्दी ही रही है। केवल नगरों में अपितु ग्रामों में भी स्वर्गीय चन्द्र , पंडित वासुदेवजी, ठाकुर नत्थासिंह और ठाकुर सिंह जी के गीतों ने इतना लोकप्रिय वातावरण या कि उनसे जहाँ आर्य समाज का संदेश गांव २ पहुँचा है वहाँ हिन्दी भाषाको भी सर्वप्रियता प्राप्त है। साहित्य के उच्चतम क्षेत्र में कविता कामि- न्त, स्वर्गीय पण्डित नाथूराम शर्मा 'शंकर' की ताओं ने एक अद्भुत हलचल उत्पन्न कर दी थी। तसर कांग्रेस के स्वागताध्यक्ष स्वामी श्रद्धानन्दजी राज वह पहले व्यक्ति थे जिन्होंने कांग्रेस के से प्रथम बार हिन्दी में भाषण दिया था। इस र आर्य समाज और उसके कार्यकर्ताओं ने परा- भारत में हिन्दी के लिये वह क्षेत्र बना दिया जिससे स्वतंत्र होने के पश्चात् भारतीय संविधान हिन्दी को राष्ट्रभाषा के पद पर आसीन कराने में कोई विशेष कठिनाई नहीं हुई। आर्य समाज क्योंकि एक समाज सुधारक संगठन है, इसके कुछ मासिक और साप्ताहिक पत्र भी निकलते रहे हैं। भारतोदय, सद्धर्म प्रचारक, आर्य मित्र, आर्य जगत्, आर्य, आर्य प्रकाश, (गुजरात) आर्य भानु, (हैदराबाद) आर्य सेवक (नागपुर) और आर्य मार्तण्ड आदि पत्रों ने हिन्दी के विकास में पूर्ण योग दान दिया है। आर्य मित्र की तो उसकी हिन्दी सेवाओं के लिये आज हीरक जयन्ती मनाई जा रही है:

अब संविधान में हिन्दी को राष्ट्रभाषा का स्थान मिल जाने के पश्चात् भी कुछ इस प्रकार की बाधाएँ हिन्दी के मार्ग में हैं जिससे १५ वर्षों में हिन्दी को जितना लोकप्रिय होना चाहिये था उतनी नहीं हो पायी। परन्तु फिर भी जहाँ तक आर्य समाज के मञ्च और लेखनी का संबंध है वह इस दिशा में पर्याप्त सावधानी से कार्य करते रहे। पीछे भारतीय गणराज्य के राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद जी ने जब यह सुझाव दिया कि भारतीय एकता के लिये क्षेत्रीय भाषाओं की एक लिपि होना भी आवश्यक है, उसका और किन्हीं क्षेत्रों में स्वागत हुआ हो या न हुआ हो परन्तु आर्य समाज ने उसका खुले हृदय से स्वागत किया और आज गुजरात एवं आन्ध्र प्रान्त में इस प्रकार की परम्पराएँ चालू हो गयीं हैं कि भले ही भाषा उनकी अपनी हो परन्तु लिपि के लिये देवनागरी का प्रयोग ही उन्होंने आरम्भ कर दिया है। आज नहीं तो कल, यह तो एक ध्रुव सत्य है कि हिन्दी को उच्चतम स्थान तक पहुँचने से कोई रोक न सकेगा और भारतीय राष्ट्र की दृढ़तम इकाई के लिये उसको इस स्थान पर यथाशीघ्र पहुँचाना होगा परन्तु जो बाधाएँ हिन्दी के मार्ग में हैं उनका निराकरण करने में आर्य समाज का संगठन, उसकी शि ण संस्थाएँ तथा प्रचारक आज भी पहले की तरह ही यत्नशील हैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अब अधान्न भारतीय शिक्षा

[श्री पं० बुद्धदेव विद्यालङ्कार

★

आज मानव समाज की अत्यन्त दुर्दशा है। प्राकृतिक वैभव अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच चुका है। किन्तु उसका फल विध्वंश ही विध्वंश दीख रहा है। इसका कारण क्या है? प्रकृति के जिन तत्वों को मानव ने खोज निकाला है। उनके सदुपयोग के लिए जो सदाचार भ्रातृभाव तथा जितेन्द्रियता अपेक्षित है, वह आज मानव समाज में नहीं है। इससे बढ़कर दुःख की बात है कि मानव समाज इसका उपाय ठीक नहीं सोच रहा है। आज समाजवादी तथा साम्यवादी लोग कहते हैं, कि यदि भोज्य पदार्थ पर्याप्त मात्रा में उत्पन्न हों तथा उनका वितरण ठीक हो तो मानव समाज के दुःख दूर हो जायेंगे। यह बात कुछ अंश तक ठीक है। जो लोग भूख और दरिद्रता के कारण बुराइयाँ करते हैं, वह इससे दूर हो जायेगी, परन्तु भूख और दरिद्रता से बढ़कर तृष्णा और भोगवाद है। उसकी चिकित्सा तो क्या करनी थी, समाजवादी और साम्यवादी दोनों ही उसको बढ़ाने में लगे हुए हैं।

दरिद्रता और भूख के कारण ही बहुत अंश तक यह भोगवाद है। वितरण के दोष इसी से उत्पन्न होते है। आज संसार में अन्न और वस्त्र की इतनी कमी नहीं, जितनी मनुष्यता की है। उसको उत्पन्न करने के साधन हैं, ईश्वर भजन, त्याग, ब्रह्मचर्य, जितेन्द्रियता, सत्सङ्ग, और इन सबको एक शब्द में कहना हो तो वह है उत्तम शिक्षा। उसकी ओर मानव समाज का ध्यान नहीं जा रहा। हमारी सम्मति में उत्तम शिक्षा मानव समाज की अन्तिम शरण है।

परन्तु उत्तम शिक्षा का लक्षण भी होना चाहिए। यही बात आज हम इस दिखाना चाहते हैं। आज हम शिक्षा परम मौलिक, परमोपयोगी, परमोपेक्षित संसार के सामने रखना चाहते हैं। बात है। परन्तु न जाने इसका शिक्षा शास्त्र में क्यों नहीं किया जाता। वह सिद्धांत है (Pledge) हम किसी सैनिक को सेना में करते, जब तक उसको झण्डे के सामने राष्ट्र रक्षा की उससे शपथ नहीं लेली जा प्रकार राष्ट्रपति, सेनापति, राष्ट्र के मन्त्रि संसद के सदस्य आदि सब लोगों से जाती है। हमारा गृहस्थ आश्रम इसी आधार पर खड़ा है। विवाह क्या है? के एक दूसरे के सुख दुःख में जीवन भर की शपथ। वह शपथ हवन-कुंड के चाहे रजिस्ट्रार के दफ्तर में, इससे कुछ नहीं पड़ता, शपथ तो शपथ है।

किन्तु मनुष्य के भविष्य जीवन के शिक्षणालय में कोई शपथ नहीं।

प्राचीन ऋषि मुनियों ने इसी समझ उपनयन संस्कार चलाया था जाति के तीन महाशत्रु हैं। (१) अभाव (३) अविद्या।

प्राचीन मर्यादानुसार हर एक विद्या आरम्भ से पहले इन तीन महा से एक के साथ लड़ने के लिए अपना जीव करना पड़ता है। इसके लिए जो दीक्षा

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वही उपनयन संस्कार था। इसीलिए प्राचीन काल में विद्यार्थी को व्रत्ति या वर्णी कहते थे। वर्णी इस लिए कि वह इन तीनों में से एक शत्रु के नाश के लिये वर करता था। अभाव दुःख से लड़ने का व्रती वैश्य, अन्याय दुःख से लड़ने का व्रती क्षत्रिय, अविद्या दुःख से लड़ने का व्रती ब्राह्मण कहलाता था। जो अयोग्यता के कारण इन तीनों में से कुछ न बन सके, वह यदि अपनी अवस्था पर शोक करके इनमें से किसी के पास रहकर अपनी सुश्रूषा द्वारा व्रत पालन का लाभ लेता था, वह शूद्र कहलाता था। वह चुनाव करता था कि दुष्ट की सेवा नहीं करूंगा। किसी न किसी लोक सेवक की ही सेवा करूंगा, यह उसका चुनाव था। इसलिए वह भी वर्णी कहलाता था।

आज की शिक्षा में व्रत का कोई स्थान नहीं, न कोई व्रत की महिमा की ओर ध्यान देता है। अब देखिये कि यदि किसी दुर्बल पर मार पड़े, तो जती तो मर मिटेगा, किन्तु व्रतहीन कहेगा मुझे क्या गरज पड़ी है जो मैं इसकी मुसीबत में भाग लूं। बस यह पराई मुसोबत में अपने आपको मिटा देने की दीक्षा ही थी जिसने प्राचीन काल में मानव जाति को इतना ऊंचा उठाया था।

ब्राह्मण कहता था कि यदि नगर व ग्राम में एक भी विद्याहीन है तो मुझे धिक्कार है। क्षत्रिय कहता था कि यदि नगर व ग्राम में एक दुर्बल पर भी बलवान अत्याचार करता है तो मुझे धिक्कार है, मेरे जीने से क्या लाभ। वैश्य कहता था कि यदि मेरे नगर व ग्राम में कोई भोजन बिना भूखा मरता है तो मुझे धिक्कार है। मनु ने लिखा है कि यदि कोई मनुष्य जिसे मजदूरी न मिले तो, जिसके घर भोजन पका हो, उससे कह कर उठा कर खाले, उसे चोरी या डाके के अपराध में नहीं पकड़ा जायेगा। बस जो कुछ आज साम्यवादी चाहते हैं वह इसमें बहुत सुन्दरता से हो जाता था, सच कहिये तो उससे अधिक होता था।

बस हमारी संस्कृति का मूल तत्व है अधिकतम मात्रा में स्वेच्छा पूर्वक श्रम और बल का न्यूनतम प्रयोग।

रूस की संस्कृति में अधिकतम बल प्रयोग है।

पूंजीवादी संसार में पूंजोपति को यथा संभव अत्याचार की छूट है। लखपति का बेटा कैसा ही दुराचारी हो, उसकी संपत्ति उसे मिलकर ही रहेगी।

इस अधिकतम स्वेच्छापूर्वक श्रम की भावना जागृत करने का उपाय है शिक्षा से पहले की दीक्षा।

यह दीक्षा ही प्राचीन शिक्षा शास्त्र का वह आदर्श सिद्धान्त है, जिसके कारण हम कह सकते हैं कि इस दुःखी मानव राष्ट्र की शिक्षा मानवता की दीक्षा ही है।

जो व्यक्ति एक साथ दो खरगोशों का पीछा करता है वह एक को पकड़ने में सफल नहीं हो सकता। — फ्रेंकलिन

× × ×

दुर्जन जब सन्त होने का ढोंग करता है तो वह और भी बुरा हो जाता है। — बेकन

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दिव्य द्रष्टा दयानन्द [श्री अलगूराय शास्त्री]

दयानन्द दीक्षा शताब्दी के अवसर पर हमें उन अलौकिक गुरु शिष्यों की मुद्रायें अपनी ओर सहज ही खींच लेती हैं। धन्य थी वह घड़ी जब महर्षि दयानन्द गुरु बिरजानन्दजी दण्डी स्वामी के समीप विद्यादान मांगने खड़े हुए थे। इसी मिलन में भारत के अज्ञान अंधकार के विनाश के लिये, सुयोग प्राप्त हुआ था। सुकरात को प्लेटो, प्लेटो को अरस्तू मिले थे। ग्रीस के सुकरातोत्तर शत्व का सारा साहित्य संसार इन्हीं मिलनों का परिणाम है। गौतम को व्यास और व्यास को जैमिनी मिले थे और परिणाम में समस्त भारतीय दार्शनिक ज्ञान विश्व को मिला, इस प्रकार जहाँ सुपात्र शिष्य को उपयुक्त गुरु प्राप्त हो जाता है, वहाँ परिणाम में मानवता ज्ञान का प्रकाश प्राप्त कर निहाल हो जाती है। गुरु विरजानन्द ने-कश्चिद्धीरः प्रत्यगात्मानमैक्षत आवृत्तचक्षुः अमृतत्वमिच्छन्- अपनी आँखें बन्द कर विषयों से मुख मोड़ सत्य का दर्शन किया था। आर्ष ज्ञान के उपासक, आर्ष प्रणीत ग्रन्थों के स्वाधामी गुरु विरजानन्द ने उस ओर नवागन्तुक अन्तेवासी का ध्यान आकर्षित कर दिया। परिणाम में संसार की सम्पूर्ण मानवता को सत्यार्थप्रकाश के नीचे, वेद सब सत्य कलाओं का पुस्तक है। यह अक्षय अटल-अचल उपदेश प्राप्त हुआ, पाठक यह अनुभव करेंगे कि वेद के सूक्तों में पठित और प्रार्थत मंत्र ऐसे ही दमकते चमकते ज्ञान की चिनगारियाँ हैं जैसे दीपावली में हमारे घरों पर दीपों की अविरल पंक्तियाँ! जगमग करते ये दीपक आँखों को कितना आनन्द देते हैं। प्रगाढ़ अंधकार को जो अमावस्या लिये आती है, उसे खदेड़ कर एक लावण्यमय प्रकाश फैला देते हैं। इसी प्रकार वैदिक मंत्रों के ज्ञान का प्रकाश अलौकिक मान्यता में और भ्रमात्मक धारणाओं के अंधकार को दूर कर देता है।

गुरु विरजानन्द के सम्पर्क ने ऋषि दयानन्द को इस सत्य के देख लेने का पूरा अवसर दिया। उन्होंने वेदाध्ययन के गहन चिन्तन-मनन से एक ज्ञान प्रदान किया। जैमिनि के पश्चात् शृङ्खला टूटसी गयी थी। दयानन्द ने से ऋषियो मंत्र उष्टारः—की सूक्ति को चरि और मंत्र द्रष्टा बन कर ऋषि की उपा प्रमाणित हुए।

वेदों के सत्य ज्ञान मूलक होने को प्रमा में जिस तर्क-वितर्क और सूक्ष्म ज्ञान इस वीतराग सन्यासी ने दिया है, उसका पिछले २००० वर्षों में मिलना दुष्कर है।

वेद मंत्रों के अर्थ करने की कुंजी ने गड़रियों के गीत के उपहास्य पद से उठा सब सत्य विद्याओं की पुस्तक बनाया। श्री ने जो कहा था कि सब विद्याओं के श्रोत ईश्वर की रचना हो सकते हैं तो मनुष्य की उसे दुहराकर महर्षि दयानन्द ने तर्क प्रा मन्त्रों के अर्थ करके सर्वथा सत्य प्रमाणित

वेद सभी विद्याओं के मूल हैं। सभी उनमें वर्तमान है।

आज अन्न उपजाओ के गीत गाये जा

अन्न का जो महत्व है। "अन्नं लहुन्दु वचन से उपनिषद् हमें बता रहा है। अन्न युत के येन केन च विधिना, चाहे जैसे हो! में महर्षि विश्वामित्र को मरा कुत्ता खाना प महर्षि उपस्ति को उँटहारे के जूठे मसूर!! व्यजानीयात् का वचन बतलाता है कि और आधार भूत बड़ाई और महत्व अन्न है। पेट में पड़ा चारा तब बोल उठा बेचा लोकोक्ति इसी सत्य को बतलाती है।

अथर्ववेद के दो मंत्र देखिये जो मेरे के विषय रहे हैं:—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दन्नमद्भि बहुधा विरुपं हिरण्यमश्वमुत गामजामविम् ।
देव किं च प्रतिजग्रहाहमग्निष्टन्नद्धोता सुहुतं कृणोतु ॥
दन्नमदम्यनृतेन देवा दास्यदास्यन्नुत संगृणामि ।
ष्वानरस्य महतो महिमा शिवं मह्यं मधुमदस्त्वन्नम् ॥
(उसी सूक्त से)

इन मन्त्रों में प्रेरणा है कि जो भी अन्न विविध
ार के खाद्य हैं (जिन्हें हम खाते हैं) उन्हें पाचक
ग्नि पचादे ।

चाहे जिस प्रकार से भी अन्न लावें यदि वह
खावें तो वह हमारे लिये मधुमय सिद्ध हों ।
ने का तात्पर्य यह है कि अन्न हमारे लिये एक
वश्यक वस्तु है । उसे चाहे जैसे उपलब्ध करना
ा । वह हमारे शरीर के अंग-अंग को लगे, रक्त
कर वह काया को पुष्ट बनावे तभी गाड़ी आगे
सकती है । "—शरीर माद्यं खलु धर्म साधनम्"
धर्म कर्म शरीर पर ही आश्रित हैं । शरीर ही
आ तो जीवन यापन कैसे हो ? अन्न ही न हो
शरीर टिके कैसे ? वेद का यह व्यवहारिक दृष्टि-
कितना महत्त्व पूर्ण है : अन्न क्या है ? आर्त्त वा
ाते वा इति तदन्नम्—जो खाता है अथवा खाया
है वह अन्न है । अन्न की यही उपनिषदीय
ख्या है । जो देकर खाता है वह अन्न को खाता
जो अपने आप ही खाना है उसे अन्न खा लेता
"मोघः स पापो जीवति यः पचत्यात्मशरणात्"
पापी व्यर्थ जीता है जो अपने ही लिये भोजन
ता है ।

अथर्व श्रुति ने अन्न के इस महत्व को, शरीर के
उसकी अनिवार्यता को ऊपर लिखे मन्त्रों में
सुन्दर ढंग से व्यक्त किया है ! ऋषि दयानन्द
की अर्थ करने की कुञ्जी से ही वेद मन्त्र ठीक समझे
जा सकते है ! इन्हीं मन्त्रों में अश्व, गाय, अजा,
अवी आदि शब्दों का अर्थ वीर्य वर्धक औषधियों
दुग्धादि अञ्चाक्रोशांस से जैसे मचान पर बैठा
पुरुष मचान के नाम से लक्षणा द्वारा पुकारा जाता है,
वैसे ही गाय और दुग्ध दायक पशुओं से प्राप्य भोजन
सामग्री उन विविध प्रकार के अन्नों में परिगणित है
उन्हें खाकर हम अपने अंग को पुष्ट बनाने की कामना
करते हैं । परन्तु यदि कोई अभिधार्थ पर ही आग्रह
करे तब प्राणस्य सर्वं अन्नमिति, वचन में जो उपनि-
षद् में आता है अन्न शब्द के अर्थ में जो शैली
शङ्कराचार्य ने अपनायी है उसका सहारा लिया जा
सकता है । प्राण का स्वामी अन्न है । अर्थात् प्राण
सभी कुछ खाता है । तबभक्ष्याभक्ष्य का भेद कैसा ?
इस शंका का समाधान करते आचार्य कहते हैं—प्राण
भी तो सभी प्राणियों में है । अतः सात्विक
प्राण सात्विक भोजन करेगा, राजसिक राजसिक,
तामसिक, तामसिक । इस प्रकार कुत्ते बिल्ली का
प्राण जो अखाद्य खाता है । शूकर का प्राण जो
विष्ठादि खाता हैं वह मनीषी मानव नहीं खा सकता ।
फलतः विविध शरीरों के प्राण विविध अन्नों को खा
कर पाचक अग्नि के सहारे उस अन्न से बल और
शक्ति प्राप्त करते हैं ! इस प्रकार दयानन्द की दया से
हम वेदों के रहस्य को समझें। यह दीक्षा समारोह
हमें वेदाध्ययन की नवीन स्फूर्ति और प्रेरणा दे ।
आर्यमित्र आर्यों का सच्चा मित्र बन कर उन्हें इस
दिशा में प्रेरित करे ।

इसके लिये उसे सबल और गम्भीर बनाने में
योग देना हम सबका कर्त्तव्य है ।

"सत्य से हमें स्वाधीनता मिलती है केवल यही बात ठीक नहीं है उसके साथ साथ यह भी ठीक
स्वाधीनता हमें सत्य प्रदान करती है ।"
—कवीन्द्र रवीन्द्र

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बुझाते समय प्रातः दीप की वाणी

[कुं० हरिश्चन्द्र देव "चातक" कवि रत्न]

मुझे सुलाओ नहीं जगा अब रहने दो।
ज्योतिर्मय ! निज ज्योतिर्धारा बहने दो।

जब जग की थी रात संयमी-सा मैं जागा—
मेरा कहीं न कुछ कर पाया तिमिर अभागा।
द्वन्द्व ताप सब ओढ़ अशिव भी हँस-हँस झेला—
मन में फूल बसा कर खंडहर में की खेला।
महलों में मैं जगा, जगा निर्धन कुटीर में—
जगा खुशी में और जगा मैं कठिन पीर में।
जन-जन में जागरण-वार्ता को कहने दो।
मुझे सुलाओ नहीं ! जगा ही अब रहने दो।

(२)

ओठों, आँखों, इङ्गित के सन्देश सुन चुका—
रूप सामने आलिङ्गन के जाल बुन चुका।
धुँधले से, कुछ मिटे मिटे रंगीन चित्र-से—
देखे कितने दृश्य यहाँ जग में विचित्र से।
गाँठों में जादू बाँधे छल सकी न कलियाँ—
लुभा न पाईं हँसी-भरे फूलों की गलियाँ।
दाता तेरी शक्ति सहेगी सब सहने दो।
मुझे सुलाओ नहीं ! जगा ही अब रहने दो।

(३)

खुद को अपने विश्वासों में तोल सकूँ मैं—
चुका आप अपने का अब तो मोल सकूँ मैं !
संघर्षों में मान रह सके जीवित मेरा—
मेरा क्या ? मेरा तो सच सब कुछ है तेरा।
मैं तेरी बाँसुरी फूँक तेरे से बजती—
तेरी ही तस्वीर रंग तेरे से सजती।
लजे न तेरा स्नेह जगी माटी रहने दो।
तैर सकूँ तम कृपा-किरन कर में गहने दो।
मुझे सुलाओ नहीं जगा ही अब रहने दो।
ज्योतिर्मय ! निज ज्योतिर्धारा में बहने दो ॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उपस्थान

[श्रीयुत "अज्ञात"]

षड्गुण सम्पत्ति से युक्त भगवान परम ज्योति । यहाँ अन्य ज्योतियाँ भी हैं, पर उस सर्वोत्तम ोति के सम्मुख सब निष्प्रभ हैं। उस सर्वोपरि, र्वातिशयी ज्योति के उदय होते ही अन्य किसी भी ोति का अस्तित्व दृग्गोचर नहीं रहता । यह योति हम सब के चतुर्दिक व्याप्त है। साथ ही न्तर्यामी भी है । इसके समीप बैठना, इसके ामीप्य और सामुज्य को अनुभव करना कितना ाल्हादजनक है, कितना प्रकाशमय बनना है और कतनी निर्भयता की प्राप्ति है ।

सत् में भी ज्योति है, पर स्व में अपने में, ात्मा में उससे भी बढ़ कर। आत्मा देव है, पर से अनेक देव हैं। जो देवों का भी देव है, प्रका-ाकों का भी प्रकाशक है, प्रेरकों का भी प्रेरक है। त्पादकों का भी उत्पादक है प्राणों का प्राण है, सूर्यों ा भी सूर्य है, सविताओं का भी सविता है, वह क ही है। उसी को सर्वश्रेष्ठ ज्योति कहते हैं। म सब जीवों का लक्ष्य उसी की उपलब्धि करना ।

हम इस ज्योतियों की ज्योति को कैसे उपलब्ध करें ? हमारे लक्ष्य प्रभु प्राप्ति के साधन क्या हैं ? किसी की प्राप्ति के लिये हमें उसके समीप जाना ड़ता है । इस जाने में उसे छोड़ना भी पड़ता है जिसके समीप हम खड़े थे। संस्कृत में जितनी धातुएं ात्यर्थक हैं, उन सब का ज्ञान,गमन और प्राप्ति तीन ाकार का अर्थ होता है। जिसे छोड़ते हैं,उससे प्रथम वराग करना पड़ता है और जिसकी ओर चलते हैं, उससे राग जोड़ना पड़ता है। एक के हम विरागी बनते तो दूसरे के रागी। अतः किसी की उपलब्धि में हमें तीन साधनों का आश्रय लेना पड़ता है—ज्ञान वैराग्य और राग। इनमें से अन्तिम साधन राग एकोन्मुखी होने के कारण प्रेम संज्ञा प्राप्त करता है। प्रभु—प्रेम को भक्ति भावना भी कहा जाता है।

हम प्रभु की भक्ति करें, उपासना करें प्रेम-पूर्वक उसको भजें, इसके लिये उसका ज्ञान होना आवश्यक है। किसी का ज्ञान ही हमारे अन्दर उसके लिये आकर्षण उत्पन्न करता है और यह आकर्षण ही हमें उसकी ओर ले जाता है प्रभु का ज्ञान हमें कैसे होता है ? उसकी कृतियों से, गुण प्रकाश से । प्रभु की कृति क्या है, जिसमें उसके गुणों का प्रकाश हो रहा है। यह कृति ब्रह्माण्ड है। ब्रह्माण्ड में व्यवस्था है, अन्योन्याश्रयता है और सप्रयोजनता है । जिस भक्त का ध्यान इन गुणों की ओर जाता है, वह जातवेद प्रभु के गुण कीर्तन में लीन हो जाता है। प्रभु के अस्तित्व को अनुभव करने वाले इन भक्तों की निष्ठा से अन्य मानव भी प्रभु की ओर आकर्षित होते हैं जब ये भक्त नहीं भी रहते, तब भी इनकी कृतियाँ प्रभु का ज्ञान कराती रहती हैं। परम व्योम में ओत प्रोत श्रुतियां भी उस "महतो महीयान" का गुणगान करती हैं। इन श्रुतियों को सुनने का सामर्थ्य जिनके अन्दर हैं, वे प्रभु प्रेम से प्लावित होकर नाच उठते हैं। उनका जीवन संगीतमय बन जाता है—इतना प्रभविष्णु कि वह दूसरों को भी संगीत-मय बना सके।

ब्रह्माण्ड, श्रुतियाँ और संगीतमय, समस्वर जीवन वाले महात्मा ऐसे केतु हैं ध्वज हैं जो हमें लगातार प्रभु का ज्ञान देते रहते हैं। ब्रह्माण्ड के सूर्य चंद्रादि जड़ देव तथा समत्व के धनी चेतन महात्मा

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

देवों के बीच श्रुतियां हैं। ये तीनों, प्रभु की सत्ता सूचक पताकायें हैं जिनके द्वारा विश्वभर को प्रत्यक्ष दर्शन होता रहता है। प्रभु की आज्ञा का पालन इनका स्वभाव है। चाहे वह अज्ञात एवं सहज स्वभाव से हो अथवा जान बूझ कर।

प्रभु का यह ज्ञान एक ओर प्रभु-प्रेम को प्रदीप्त करता है तो दूसरी ओर संसार से विराग का भी कारण है। संसार को छोड़ कर ही हम प्रभु की ओर चल पाते हैं। जब संसार और सर्वेश्वर प्रतिस्पर्धी बन कर दो विरोधी वृत्तियों के रूप में हमारे सम्मुख उपस्थित हों, तब जिसे हम अपना समझते हैं, उसी को अपनाने के लिये बढते हैं। संसार सारहीन है—यह ज्ञान हमें आत्मसन्निधि में स्पष्ट हो उठता है। हम भावात्मक हैं, संसार अभावात्मक है। अतः यह हमारा नहीं हो सकता। प्रभु भावत्मक है, अतः वे ही हमारे हैं। वे हमारे हैं, हम उनके हैं, यह सम्बन्ध ही हमें प्रभु की ओर उन्मुख करता है। प्रभु से सम्बन्ध एवं संयुक्त होकर हम प्रतिस्पर्धी संसार से विरक्त हो जाते हैं।

संसार के निम्नतम स्तर पर घोर जड़त्व है, प्रमाद है, निष्क्रियता है। उसके ऊर्ध्व स्तर पर जंगमता, सक्रियता एवं विविधता है। इस जड़ एवं जंगमतस्थुष एवं गतिशील अचर एवं सबका प्रेरक संचालक एवं आत्मा वही एक परम देव है। वही सबका सूर्य है, प्रेरक है। अग्नि, विद्युत तथा आदित्य का प्रकाशक भी वही है। कृतिकार जैसे अपनी कृति में व्याप्त होता है, वैसे ही प्रभु सब के अन्दर विद्यमान हैं। द्यावा से पृथ्वी पर्यन्त जितना "दिव-कालावच्छिन्न" जगत है, सब में प्रभु व्याप्त हैं। वे इसमें व्याप्त होकर इसे अतिक्रान्त करके भी वर्तमान हैं। वे न केवल इस जगत् के आश्रयदाता हैं, वरन चेतन देवों के भी विचित्र बल हैं, अवलम्बन हैं। ऐसे परम बली सर्वोत्कृष्ट तत्व को छोड़ कर जीव क्यों निर्बल एवं असहाय तत्वों के पीछे पड़ेगा? ये दिखाई देने वाले तत्व केवल भासमान हो रहे हैं, भंगुर, देर तक रह कर भी अन्त में मरण-धर्म स्वयं ही अनित्य हैं, अतः वरेण्यता, वरणीयता वंदनीयता से स्वभावतः वंचित हैं। सहज रूप में जीव का इनके प्रति वैराग्य हो जाना स्वाभाविक ही है। प्रभु का भक्त इसी हेतु इस असार संसार को पैरों के नीचे दबा कर उन्मुक्त कण्ठ से जय-घोष वस्तुतः अपने प्रभु का आह्वान करता है, जिससे उनके चरण-शरण में रहना चाहता है। चेतन जीवन की पराकाष्ठा, निखिल गुणगणाकार, [illegible] आनंदीदेव के अतिरिक्त अन्यत्र आश्रय योग्य सकता है?

जब तक जीव संसार के साथ था, तब अन्धा अदिव्य और अपावन था। संसार ने उसे ऐसा बना रखा था। प्रकृति के [illegible] उसके सहज द्रष्टा, दिव्य एवं पावन रूप को दित कर लिया था। जब वह संसार से वि गया, तो अपने रूप में प्रतिष्ठित हो गया बोध से परमात्मदेव की अनुभूति करने देव ही परम दिव्य हैं, परम द्रष्टा हैं, परम जीव की सहज दिव्यता इस परम दिव्यता होकर निरन्तर उसी की कामना करती है

अनवरत रूप से प्रभु के साथ रहना, संदर्शन में जीवन व्यतीत करना, देख बोलना—समस्त व्यवहार करना, जीव स्थिति में पहुँचा देता है जहाँ निर्मलता है। इस शुक्र उज्जवल पावन, ज्योतिर्म आनन्द ममता में उसकी समस्त दीनता है। वह अदीन, निर्भय और पवित्र बन प्रभु का उपस्थान उनका समीपवर्ती निकटता में पहुँचना, उनके सालोक्य, सा सायुज्य को पल-पल में अनुभव करना तथा आचरण करना ही सच्ची भक्ति है। में सब ओर मनको दौड़ा कर प्रभु के

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

चर्य को, इनकी षड्गुण-सम्पत्ति को हृदंगम कर
त्र उपस्थान में बर्हिमुख से अन्तर्मुख होता है,
पने निकट से निकट, अपने अन्तर्यामी प्रभु को
नुभव करता है। बाहर मल है, आवरण है और
ही हेतु दीनता है। बाहर से अन्दर एक एक मला-
रण को चीरते हुए चले चलिये, तो सबसे अन्दर
दयगुहा में बैठे हुए पवित्रतम प्रभु के दर्शन होने
गेंगे। मेरे सर्वाधिक निकट वहीं हैं। मुझे उन्हीं के
गीत में जीवन यापन करना चाहिये। वही अमृत
, सत्य हैं। अन्य सब अनृत है। वही सर्व श्रेष्ठ
योति हैं, अन्यत्र अंधकार है। वही मेरे अपने हैं,
न्य कोई नहीं। दीनता का अन्त और अदीनता
की उपलब्धि उन्हीं की समाधि में सम्भव है। मैं
दिन रात उन्हीं की समीपता का अनुभव करता हुआ
अदीन हो जाऊँ।

ब्रह्म की निकटता से निर्मित मेरी ब्रह्म वृत्ति शतायु क्या उससे भी अधिक काल तक शुद्ध कामनाओं से शून्य और केवल एक ही उदात्त कामना से परिपूर्ण रहे। यह उदात्त कामना है—प्रभु के वरेण्य भर्ग का ध्यान, तप का नैरन्तर्य जिसमें समस्त मल दग्ध होते रहें और पवित्रता की पुण्य प्रदीप्ति मुझे प्राप्त होती रहे।

❀ श्रद्धेय दयानन्द ❀

महर्षि दयानन्द हिन्दुस्तान के आधुनिक ऋषियों में, सुधारकों में और श्रेष्ठ पुरुषों में एक थे। इनका चरित्र मेरे लिए ईर्षा का विषय है। उन्होंने भारतवर्ष तथा हिन्दू धर्म की महान् सेवा की है।

—राष्ट्रपिता गाँधी

मेरा सादर प्रणाम उस महान् गुरु दयानन्द को है जिसका उद्देश्य भारतवर्ष को अविद्या, आलस्य और प्राचीन ऐतिहासिक तत्व के अज्ञान से मुक्त कर सत्य और पवित्रता की जागृति में लाना था उसे मेरा बारम्बार प्रणाम है। आधुनिक भारत के मार्गदर्शक महर्षि दयानन्द जी सरस्वती को मैं सादर श्रद्धाञ्जलि समर्पित करता हूँ।

—डा० रवीन्द्र नाथ टैगोर

इस बात का श्रेय दयानन्द को ही प्राप्त होगा कि उन्होंने सर्वप्रथम वेदों की व्याख्या के लिए निर्दोष मार्ग का अवलम्बन किया था। ऋषि दयानन्द ने उन द्वारों की कुञ्जी प्राप्त की है जो युगों से बन्द थे और उसमें पटे हुए झरनों का मुख खोल दिया।

—अरविन्द घोष

स्वामी जी की तार्किक-बुद्धि और योग्यता की प्रशंसा किए बिना मैं नहीं रह सकता। स्वामी जी के जीतेजी उनके कार्य का गौरव नहीं हो सका परन्तु एक समय आवेगा जबकि समस्त भारत उनके आँखों के सामने सर झुकायेगा।

—लोकमान्य तिलक

स्वामी दयानन्द पर संकीर्णता का दोष लगाना भ्रमात्मक और मिथ्या है।

—नृसिंह चिंतामणि केलकर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

श्री पं० घासीराम के सम्बन्ध में मेरे संस्मरण

[श्री पं० गङ्गाप्रसाद जी
पूर्व प्रधान सार्वदे

श्री पं० घासीराम जी से मेरा बाल्यकाल से ही निकट संपर्क था, वे मेरी तरह मेरठ के ही निवासी थे, और मेरा व उनका घर एक ही मुहल्ले में था। उनकी आयु मेरी आयु से केवल १॥ वर्ष कम थी, मेरा जन्म सं० १९२९ वि० वैसाख सुदि ३ (अर्थात् अक्षय तृतीया का था। उनका जन्म सं० १९२९ वि० कार्तिक सुदि पूर्णिमा का था। दोनों ही बड़े शुभ दिवस माने जाते हैं। मेरे दादा श्री फकीरचन्द्र जी उनके पिता श्री द्वारिकादास जी के मित्र थे। दोनों आर्य समाजी थे। दोनों ने ही ऋषि दयानन्द से उपदेश प्राप्त किया था, ऋषि दयानन्द अपने भ्रमण में लोगों को केवल मूर्ति पूजा छोड़ने और गायत्री मन्त्र का जप करने का उपदेश दिया करते थे, जब मेरठ में आर्यसमाज स्थापित हुई तो श्री फकीरचन्द व श्री द्वारिकादास दोनों समाज के सभासद हो गये। उनका "घासीराम" नाम रक्खे जाने का एक विशेष कारण था। वह एक रोचक कथा है, श्री घासीराम से पहले उनकी माता के चार बालकों की अल्पकाल ही में मृत्यु होती रही थी। इस लिये उनका नाम 'घासीराम' रक्खा पौराणिक विचारों के अनुसार ऐसी दशा में एक घटिया सा नाम रखना शुभ माना जाता है। उनके जीवन का 'कट दूर करने के लिये उनके माता पिता ने गुड़गांवाँ की यात्रा भी और वहाँ की देवी की पूजा की। यात्रा के मार्ग में किसी साधू ने बालक को देखकर कहा था कि वह बड़ा विद्वान् होकर अपने कुल के यश की वृद्धि करेगा।

श्री घासीरामजी को उनके पिता ने आरम्भ में फारसी व उर्दू की शिक्षा दिलाई थी जो पीछे तक जारी रही, श्री घासीराम फारसी के अच्छे विद्वान् हो गये। मैं एक हिन्दी पाठशाला में भरती हुआ। कुछ समय पीछे हम दोनों अँगरेजी हाई
गये।

वह आर्य समाज का आरम्भ काल
धर्मी लोग आर्य समाजियों से घोर विरो
बिरादरी से निकालने की धमकी दी जा
इसलिए उस समय केवल वे आर्य समाज
होते थे जिनका उसके सिद्धान्तों में दृढ़
और श्रद्धा भी हो। मुझको बाल्य अव
धर्म में विशेष रुचि थी। सन् १८७५ में
परीक्षा पास कर ली। सन्यार्थ प्रकाश
संस्करण छप चुका था, मेरे दादा ला० फ
ने एक प्रति खरीदी और मुझको पढ़कर
लिये दी क्योंकि वे वृद्ध थे। मैंने बड़ी
को पढ़ा, मेरी स्मरण शक्ति अच्छी
बहुत सा भाग (विशेष कर खंडन-मंडन
मुझको कंठस्थ हो गया। मेरा बहुत सा
सहपाठियों से धार्मिक विषयों पर वाद-वि
में व्यतीत होता था। मैंने सन् १८८७
आर्य डिवेटिंग क्लब के नाम से एक
कर लिया। श्री घासीराम जी का उसमें
योग था। उसमें आर्य समाज के सम्बन्ध
व व्याख्यान होते थे।

सन १८८७ ई० में मैंने हाईस्कूल
कर ली और मैं आगरा कालिज में
आगरा चला गया तब पूर्वोक्त क्लब श्री
जी के ही घर पर होने लगा और वे
उसके अध्यक्ष रहे। सन् १८९० ई० में श्री
जी ने भी मैट्रिक परीक्षा पास कर ली
बाद वे भी आगरा चले गये। आर्य

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जी बराबर चलता रहा। जब मेरठ आर्य समाज ने अपना भवन बना लिया, तो उस को उसी में स्थान दिया गया पूर्वोक्त क्लब एक रूप में अब तक जारी है यद्यपि नाम में परिवर्तन हो गया है।

आगरा जाकर मैं कालिज में भर्ती हुआ और बोर्डिंग हाउस की कोठी नं० ६ में रहने लगा। श्री घासीराम जी जब आये तो उनको भी उसी बोर्डिंग हाउस में स्थान मिला उसमें कई और आर्य समाजी विद्यार्थी भी रहते थे जिनमें श्री ज्यालाप्रसाद (पहासू निवासी) श्री नारायणदास (जालंधर निवासी) के नाम उल्लेखनीय हैं।

आगरा जाकर मैंने मेरठ के क्लब की तरह उसी अभिप्राय से कुछ विद्यार्थियों की सहायता से 'आर्य मित्र सभा' स्थापित कराई, एक उत्साही आर्य-समाजी विद्यार्थी श्री ठाकुर हनुमानसिंह जी के मकान पर राजामंडी में होने लगी उसमें आगरा कालिज के तथा मेडिकल कालिज के विद्यार्थी भी शामिल हुआ करते थे।

आगरा आर्य समाज में उस समय सभासदों की अधिक संख्या आगरा कालिज तथा मेडिकल कालिज के विद्यार्थियों की ही थी, समाज के साप्ताहिक सत्संग किनारी बाजार में एक दूकान के ऊपर के कमरे में हुआ करते थे। आरम्भ में वेदपाठ होता था। फिर सब सभासद मिलकर भजन गाते थे। अन्त में किसी का भाषण होता था। उपदेशक कोई नहीं था। समाज के प्रधान उस समय एक बंगाली वकील थे कुछ समय पीछे श्री गिरधरलाल भार्गव जी हुए और बहुत समय तक रहे। वे एक प्रसिद्ध वकील थे और धनिक व सम्पन्न व्यक्ति थे। उनकी आर्थिक सहायता से एक बोर्डिंग हाउस बना था जिसमें विशेषकर भार्गव जातिके विद्यार्थी रहते थे। समाज के मन्त्री बदलते रहते थे। कुछ समय पीछे सरकारी बाजार के पास एक मकान किराये पर लिया गया जिसकी छत पर एक बड़ा खुला चौक था। उसमें समाज के सत्संग होने लगे।

आगरे में मेले बहुत होते हैं, कुछ नगर के बाहर होते हैं। आर्य समाज की ओर से बहुत से मेलों में प्रचार होता था अधिकतया विद्यार्थी ही प्रचार करते थे। इसमें श्री घासीराम जी का भी पूरा सहयोग होता था। पर वे भाषण कम करते थे।

सन् १८९३ ई० में मैंने एम. ए. परीक्षा पास की और उसी वर्ष अक्तूबर मास में मैं मेरठ कालिज में प्रोफेसर नियत होगया और सन् १८९८ तक वहीं रहा। श्री घासीराम जी ने १८९४ में बी. ए. की डिग्री पाई और वे यूनिवर्सिटी भर में सर्वप्रथम रहे। इसके लिये उनको यूनिवर्सिटी से एक स्वर्णपदक दिया गया. श्री घासीराम जी एक बहुत योग्य विद्यार्थी थे और उन को हर वर्ष कालिज से छात्रवृति मिला करती थी, सन् १८९६ में उन्होंने एम. ए. की डिग्री प्राप्त की और उसी वर्ष कानून की एल. एल. बी. परीक्षा भी पास करली जिसके लिये वे पहले ही से ला क्लास के लेक्चरों में शामिल होकर मलबान् थे। आगरा कालिज में उनकी शिक्षा समाप्त हुई। उसी वर्ष वे जोधपुर रियासत में महाराजा साहब के कालिज में प्रोफेसर नियुक्त होगये। ४ वर्ष तक वहाँ बड़ी योग्यता से काम करते रहे। सन् १९०१ में जोधपुर में हैजे का प्रकोप हुआ। इसलिये अपने पिता के आदेश से वे जोधपुर कालिज से त्यागपत्र देकर मेरठ आगये। मेरठ में श्री घासीराम जी का और उनके पिताजी का पहले से ही वकालत का विचार था। श्री घासीराम जी ने तुरन्त ही प्रैक्टिस आरम्भ करदी। श्री बाबू लक्ष्मणसिंह आदि उनके कई आर्यसामाजी मित्र अच्छे वकील थे। उनकी कानूनी योग्यता और सद्व्यवहार के कारण सब अदालतों के अफसर श्री घासीराम जी का बहुत मान करते थे। उनका शीघ्र ही अच्छी सफलता प्राप्त हो गई। आमदनी की दृष्टि से उन की उतनी उन्नति नहीं हुई जैसी उनकी योग्यता के कारण होनी चाहिये थी। उसके दो कारण थे। एक यह कि वे कुछ मितभाषी थे। दूसरा यह कि वे ऐसे व्यवहारों को पसन्द नहीं करते थे जिनसे छोटे दर्जे के वकील

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

लाभ उठाचुके हैं। मुकदमे करने वालों को लड़ाने की अपेक्षा उनकी सुलह या राजीनामा कराने में अधिक रुचि थी। इसकारण बहुत से पेचदार और जटिल मुकदमे वाले उनको सरपंच नियत करते थे और अदालतें भी ऐसे मुकदमे जिनमें पंच नियत करने की संभावना हो उनके पास भिजवाती थीं। ऐसे मुकदमों के लिये उनकी विशेष ख्याति होगई थी। श्री घासीराम जी ने २८ वर्तक (अर्थात् १९०१ से १९२९ ई०) तक बड़ी नेकनामी के साथ वकालत का काम किया अपने मुहल्ले कुछ के प्रतिष्ठित लोगों की प्रार्थना पर सन् १९१९ में श्री घासीराम ने मेरठ म्यूनिसिपलबोर्ड का मेम्बर होना स्वीकार किया। परन्तु उसके लिये वोट प्राप्त करने के वास्ते किसी एक मतदाता के भी पास नहीं गये। ४ वर्ष तक बड़ी नेकनामी के साथ मेंम्बर रहे और बोर्ड की शिक्षा कमेटी के प्रधान भी रहे।

श्री घासीराम जी कई वर्षों तक आर्यसमाज मेरठ के प्रधान रहे और जो सेवा उन्होंने की उस के लिये सदा उनकी ख्याति बनी रहेगी। आर्यप्रतिनिधि सभा उ० प्र० के वे कुछ वर्ष तक उपप्रधान रहे और फिर कई वर्षों तक प्रधान के उत्तरदायी पद पर रहे। सभा के प्रकाशन कार्य का आरम्भ सन् १८९५ में मैंने जब डिप्टी कलक्टर नियत होकर सरकारी नौकरी पर बाहर गया तब उस कार्य को श्री घासीराम जी ने सम्हाला और बहुत वर्षों तक बड़ी लगन के साथ उस को करते रहे। सभा ने यह बड़ा न्याय-युक्त कार्य किया कि उस विभाग के साथ श्री घासी-राम जी का नाम संयुक्त करने का आदेश दिया।

श्री घासीरामजी का साहित्यिक कार्य बड़े महत्व का था। उनको ईश्वर ने ऐसा मस्तिष्क और हृदय दिया था जैसा बहुत कम मनुष्यों का होता है। वे बड़े विचारशील और प्रतिभाशाली थे। वे अंगरेजी, संस्कृत, हिन्दी, उर्दू व फारसी के अच्छे पंडित थे। उनको अनुवाद कार्य में विशेष रुचि थी। सम्पूर्ण गीता का उर्दू पद्यों का अनुवाद किया। ऋषि दयानन्द कृत का अंगरेजी अनुवाद का ग्रन्थ है। मेरी लिखी हुई Lautan Rilegeon का उर्दू में भाषान्तर किया नाम "मखेजन उल नजाहर" है।

श्री म० नारायण स्वामी कृत ईशोपनिषद् अनुवाद अंगरेजी में किया श्री देवेन्द्रनाथ की बंगला भाषा में लिखे हुए दयानन्द सरस्वती चरित्र का हिन्दी में अनुवाद करके छपवाया श्री घासीराम का सबसे बड़ा कार्य श्री मुकर्जी की संग्रह की हुई सामग्री से स्वामी सरस्वती जी का जीवन चरित्र लिखना लिये उनका नाम आर्य जगत् में अमर रहे १९२७ से १९३० तक वे एक हिन्दी कोष को से लिखते रहे। शोक है कि वे उसको छपवा नहीं सके। श्री घासीराम जी उर्दू दोनों में कविता करते थे। उनकी हिन्दी गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन की परिषद् व सुनाई जाती थी।

उनके पुत्र श्री शिवदयाल जी से प्राप्त से ज्ञात हुआ कि दमे का रोग श्री घासी पहले से ही था। अन्त में उसने ही उनके इसके अतिरिक्त सभी प्रकार से उनका स्वा रणतया अच्छा ही था।

सन १९३४ में उनका दमे का रोग बढ़ ३० नवम्बर को ६२ वर्ष की उमर में उन होगया।

ऐसे बहुत कम मनुष्य होते हैं जिनका मस्तिष्क दोनों अच्छे हों श्री घासीराम जी मनुष्य थे। वे बड़े सत्य प्रिय थे। उनको असत्य व्यवहार करते या उसका करते नहीं देखा। वे बहुत तीव्र बुद्धि सरत बहुत से लोग कानूनी बातों के अलावा मामलों में उनसे सलाह लेने आते थे। वे सलाह देते थे। सन् १९१९ में जब

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

टारपुर का गो बध सम्बन्धी बलका वे भारी कदमा चलता था (जिस में लगभग २०० हिन्दू कड़े हुए थे) मेरी गवाही कमीशन के सामने १० दिन तक होती रही। श्री घासीराम जी अपने सब कामों को छोड़कर चले आये और मेरे पास रहे मुझ को उचित सलाह देते रहे। मुकदमा खतम होने पर व मुझ को अपना वक्तव्य Explaneatiun प्र० सरकार को भेजना था तो श्री घासीराम जी (और स्व० श्री राजा ज्वालप्रसाद साहब) ने मुझ को अपने त सलाहों से बड़ी सहायता दी थी, इस सहृदयता के लिये मैं स्व० श्री घासीराम जी का सदा आभारी रहूँगा।

श्री घासीराम जी बड़े विनोद प्रिय थे। आपसी बात चीत में तथा पत्र व्यवहार में बड़ी विनोद की बातें लिखते थे, उनके विनोद में अश्लीलता या अशिष्टता का कभी लोश मात्र भी नहीं होता था। श्री घासीराम जी के चरित्र का यह एक विशेष गुण था ईश्वर उनकी आत्मा को सद्गति प्रदान करे।

श्रद्धेय दयानन्द

स्वामी दयानन्द पहले व्यक्ति थे जिन्होंने "हिन्दुस्तान हिन्दुस्तानियों के लिये है" का नारा लगाया था। उस महान् पुरुष के लिये मेरे हृदय में सच्ची पूजा की भावना है।

—श्रीमती एनी बीसैण्ट

स्वामी दयानंद सरस्वती की हिन्दू धर्म तथा नैतिक एवं सामाजिक क्षेत्र में अपने राष्ट्र के उद्धार के लिये की गई सेवाएँ महान हैं। उनका वर्णन नहीं किया जा सकता है। अतः पौरस्त्य के नाते उनका अभिनन्दन करता हूँ।

—रहीम जादा सफावी (पूर्व न्याय मंत्री ईरान)

स्वामी दयानंद वेदों के पूर्ण ज्ञाता थे। उनका स्वाध्याय अत्यन्त व्यापक था। उन्होंने हिंदू धर्म के सुधार का बड़ा काम किया है।

—प्रो० मैक्समूलर

महर्षि का जीवन राष्ट्र निर्माण के लिये स्फूर्तिदायक, बलदायक और माननीय है। मैं उन्हें राष्ट्रवीर समझ कर वंदना करता हूं।

—साधु टी० एल० वास्वानी

हमें वेदों के अध्ययन को प्रबल प्रोत्साहन देने और यह सिद्ध करने कि मूर्ति पूजा वेद सम्मत नहीं है स्वामी दयानंद के उपकार को अवश्य स्वीकार करना चाहिये।

—जर्मन प्रो० डाक्टर विण्टरनीज

स्वामी दयानंद निःसंदेह एक ऋषि थे। उनका प्रादुर्भाव लोगों को कारागार से मुक्त करने और जाति बंधन तोड़ने के लिये हुआ था।

—पाल रिचर्ड (प्रसिद्ध फ्रेंच लेखक)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्यसमाज का सर्वप्रथम मासिक पत्रः भारत सुदशा प्रवर्तक

[श्री पं० 'भारतीय' एम० ए० सिद्धान्त

आर्य समाज का सर्व प्रथम मासिक पत्र आर्य समाज फर्रुखाबाद से प्रकाशित होने वाला 'भारत सुदशा प्रवर्तक' था। फर्रुखाबाद में आर्य समाज की स्थापना श्रावण कृष्ण नवमी शनिवार सं० १९३६ वि. को हुई। समाज संस्थापना के साथ ही साथ पत्र का प्रकाशन भी आरम्भ हुआ। यह हिन्दी पत्रकारिता का शैशवकाल था। हिन्दी गद्य के स्वरूप में स्थिरता और स्थायित्व का अभाव था। भारतेन्दु मण्डली के सदस्य सर्व श्री पं० प्रतापनारायण मिश्र, पं० बाल कृष्ण भट्ट आदि हिन्दी पत्रकार अपने अपने पत्रों द्वारा हिन्दी गद्य की अनुपम सेवा कर रहे थे।

'सुदशा प्रवर्तक' की पुरानी फाइलों को देखने से पता चलता है कि यद्यपि भाषा की दृष्टि से उस काल के लेखकों की लेखन शैली अपरिमार्जित ही थी और व्याकरणानुसार शब्दों के रूप स्थिर नहीं हो पाये थे, फिर भी सामग्री की दृष्टि से प्रत्येक अङ्क को अधिकाधिक रोचक और शिक्षाप्रद बनाने की चेष्टा की जाती थी। इस पत्र के विषय में कुछ रोचक तथ्य पाठकों के मनोरंजनार्थ और उनकी ज्ञान वृद्धि के निमित्त प्रस्तुत कियेजाते हैं।

पत्र के मुखपृष्ठ पर निम्न बातें अङ्कित रहती थीं—

ओ३म्
सत्यमेव जयते

नहि सत्यात्परो धर्मः नहि सत्यात्परं तपः।
नहि सत्यात्परं ज्ञानं तस्मात्सत्यं सदाचरेत्॥

भारत सुदशा प्रवर्तक अर्थात् नगर फरुखाबादीय आर्यसमाज सम्बन्धी मासिक पत्र, जिसमें वेदादि सत्य शास्त्रानुकूल सनातन धर्मोपदेश और वेदोक्तिकारक व्याख्या तथा अन्यान्य पदार्थ विद्या इतिहास साहित्य आदि सरल भाषा में होते हैं।

भारत सुदशा प्रवर्तक का सिद्धान्त (motto) निम्न पद्य था—

तेहि पठन पाठ विलोकि रचना रसिक मन हरषै
उर तिमिर नाश दिनेश सम करि बुद्धि विमल प्रकाशै
विकसें विचार सुप्रीति नीति कुरीति सब बिसरै
भारत दशा सुदशा प्रवर्तक दिनहिं दिन दूनी करै

मुख पृष्ठ पर ही ग्राहकों के लिये कुछ सूचनायें छपी रहती थी। टाइटिल के 'विश्वानिदेव' मंत्र और—

"सर्वात्मा सच्चिानन्दोऽनन्तो योन्यायकृ
भूयात्तमां सहायो नो दयालुः सर्व शक्ति

इस श्लोक के अनन्तर 'भूमिका' अन्तर्गत पत्र के कुछ नियम प्रकाशित तत्पश्चात् एक वेद मंत्र और उसकी रहती थी।

सन् १८८१ के जुलाई मास के अङ्क द्वितीय वर्ष को समाप्त करने और तृतीय प्रवेश करने के अल्प व्यय में ही कवलित के लिये खेद प्रकट किया गया है ऐसे दो मित्र' और 'जगतमित्र' केदेह धारण के कुछ चात् ही 'विदेह होने की सूचना प्रकाशित यह 'आर्यमित्र' हमारे इस आर्यमित्र से ही भिन्न है जिस ६० वर्षीय जीवन की उपलक्ष में हम हीरक जयन्ती में मना रहे

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

में मैनपुरी, एटा, दातागंज और पेशावर तथा अजमेर में आर्यसमाज स्थापित होने की सूचना है। ऐसी सूचनायें अन्यान्य अङ्कों में भी मिलती हैं। मुन्शी इन्द्रमणि के मुकदमे की चर्चा हुई है और उचित वक्ता (कलकत्ता) भारती विलास (आगरा) और भारत दीपिका (लाहोर) आदि विभिन्न हिन्दी पत्रों के जन्म पर प्रसन्नता प्रकट की गई है। ऋषि दयानन्द के वेद भाष्य निर्माण और उनके विभिन्न नगरों में धर्म प्रचारार्थ भ्रमण के वृत्तान्त इसके अङ्कों में प्रकाशित होते रहते थे। अजमेर, शाहपुरा, उदयपुर, जोधपुर आदि राजस्थान के विभिन्न नगरों में स्वामीजी की प्रवास यात्राओं का महत्वपूर्ण विवरण इस पत्र के अङ्कों में जाना जा सकता है। वेदभाष्य निमित्त विभिन्न आर्यसमाजों और आर्य पुरुषों द्वारा जो सहायता प्रदान की जाती थी, उसकी सूची भी पत्र में समय २ पर प्रकाशित होती रहती थी।

विभिन्न सम्प्रदायों के अनुयायियों से आर्यसमाज का विचार विमर्श सदा से ही चला आया है। अगस्त और अक्टूबर १८८१ के अङ्कों में एक ईसाई सज्जन हरप्रसाद और आर्यसमाज फर्रुखाबाद के शास्त्रार्थ का विवरण है। यह शास्त्रार्थ पत्रों के विनिमय के द्वारा होता था। 'सुदशा-प्रवर्तक' में कुछ समाज सुधार विषयक नाटक भी प्रकाशित होते थे, जिनमें नाटकीय तत्वों की अपेक्षा सुधारवादी विचारों की ही अधिकता होती थी।

सितम्बर के अङ्क में आर्यसमाज के प्रसिद्ध विद्वान् और अथर्ववेद के भाष्यकर्ता पं० क्षेमकरणदासत्रिवेदी की पुत्री के विवाह का जो विज्ञापन छपा है, उससे जाना जाता है कि पत्रों में विवाह सम्बन्धी विज्ञापन प्रकाशित कराना कोई नवीन प्रथा नहीं है।

अक्टूबर के अङ्क में मुरादाबाद आर्यसमाज के तत्कालीन पुस्तकाध्यक्ष जगन्नाथदास (जो मुन्शी इन्द्रमणि का शिष्य था। आर्यसमाज से मतभेद हो जाने के कारण जो कालान्तर में आर्यसमाज का विरोधी बन गया और ऋषि की निन्दा में जिसने ट्रैक्ट लिख कर भीमसेन शर्मा के ब्रह्मप्रेस इटावा से प्रकाशित कराये) का 'गोपुकार' विषयक लेख छपा है। गो-रक्षा आन्दोलन विषयक समाचार समय २ पर 'सुदशा प्रवर्तक' में स्थान पाते रहते थे। गोरक्षा के लिये स्वयं स्वामी दयानन्द प्रयत्नशील थे। भारत के लाखों नागरिकों के हस्ताक्षरों से युक्त एक प्रार्थना पत्र वे उस समय महारानी विक्टोरिया की सेवा में प्रेषित करना चाहते थे। 'सुदशा प्रवर्तक' इस आन्दोलन का जबरदस्त समर्थक था। इस पत्र की नीति कट्टर अंग्रेज भक्त राजा शिवप्रसाद सितारेहिंद के विरुद्ध थी। इसी मास की एक सम्पादकीय टिप्पणी में काशी नरेश द्वारा राजा साहब को गोरक्षा के लिए ब्रिटिश पार्लियामेन्ट में आन्दोलन करने के लिए भेजे जाने का विरोध इस आधार पर किया गया है कि "सी. एस. आई. साहब इतनी हिम्मत कहाँ से लावेंगे कि जिनके ये दासानुदास बन कर बैठे हैं उनके समाज में जी खोलकर गोबध का विरोध करें।" पत्र सम्पादक की यह स्पष्टोक्ति निश्चय ही उस समय की पत्रकारिता के लिए गौरव की वस्तु है। इसी अङ्क में मेरठ में मार्टिन लूथर नामक एक ईसाई की शुद्धि का भी समाचार प्रकाशित हुआ है।

'भारत सुदशा प्रवर्तक' राष्ट्रभाषा हिन्दी का कट्टर समर्थक था। उस समय अदालती भाषा उर्दू होने के कारण जन साधारण हिन्दी की उपेक्षा को दृष्टि से देखता था। परन्तु हिन्दी के पत्रकार एक निष्ठ होकर राष्ट्रभारती की अर्चना में संलग्न थे। दिसम्बर १८८१ के अङ्क में 'सब भाषाओं में कौन उत्तम और प्राचीन है' शीर्षक से एक लेख प्रकाशित हुआ है, जिसमें हिन्दी भाषा और देवनगरी लिपि की वैज्ञानिकता और सर्वोत्कृष्टता पर प्रकाश डाला गया है। इसी अङ्क में स्वामीजी के अजमेर पधारने और उसमें एक व्यक्ति द्वारा बाधा पहुँचाने का मनोरंजक वृत्तान्त छपा है। स्वामीजी के अजमेर जाने का निश्चय होने पर एक व्यक्ति ने छद्म नाम से स्वामीजी को दिल्ली पत्र लिखा और उसमें स्वामीजी से अजमेर में उनके

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

निवासादि की व्यवस्था न होने के कारण न आने को लिख दिया। स्वामी जी ने उस कपट पत्र पर विश्वास कर लिया और उनका अजमेर जाना स्थगित हो गया। स्वामी जी ने अपने अजमेर न आने की सूचना मुन्शी समर्थदान को भेज दी। तब यह भण्डा फोड़ हुआ कि किसी पौराणिक ने जुगलबिहारी शर्मा के नाम से स्वामी जी को निषेधात्मक पत्र लिखा था। यह रहस्य खुल जाने पर मुंशी समर्थ दान और अजमेर के नागरिकों की प्रार्थना पर महाराज अजमेर पधारे।

जनवरी १८८२ के अङ्क में अजमेर आर्य समाज के मंत्री मुन्नालालजी का एक पत्र छपा है। पाठकों के सम्पादक के नाम पत्र प्रकाशित करने की प्रथा भी पुरानी जान पड़ती है। स्वामी जी की जीवनी और उनके ग्रंथों से परिचित पाठकों को स्मरण होगा कि राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद और स्वामी दयानंद में एक बार ब्राह्मण ग्रंथों के वेद होने पर वाद विवाद हो गया था। स्वामी जी ब्राह्मण ग्रंथों को वेद नहीं मानते थे। राजा साहब ने एक 'निवेदन' शीर्षक टैक्ट में स्वामी जी के मत की आलोचना की थी। ऋषि ने भ्रमोच्छोदन' ग्रंथ लिख कर राजा साहब के मत का समाधान किया था। प्रस्तुत अङ्क में पं० हरि मिश्रा का राजा साहब के नाम एक पत्र प्रकाशित हुआ है। जिसमें उनकी मान्यता के विषय कुछ महत्वपूर्ण शङ्कायें उठाई गई हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि राजा साहब को इन शङ्काओं का कभी समाधान करने का साहस ही नहीं हुआ महर्षि के शिष्य स्वामी आत्मानंद के मध्य भारत नरसिंह पुर और विलासपुर आदि नगरों में प्रचार का विवरण और महर्षि के चित्तौड़ आगमन का विवरण भी इस अंक में है।

फरवरी १८८२ के अङ्क में प्रेस एक्ट के उठाने पर तत्कालीन वायसराय लार्ड रिपन को धन्यवाद दिया गया है। अनमेल विवाहों की भयंकरता पर 'एक बिहारी पाठक' का पत्र भी प्रकाशित हुआ है।

भारत सुदशा प्रवर्तक पौराणिक अंध वि
विरुद्ध सदा आवाज उठाता रहा। इसी
कुम्भ स्नान की आलोचना विषयक एक
लेख प्रकाशित हुआ है। मार्च के अंक
समाज अजमेर द्वारा एक मासिक पत्र प्रका
की योजना छपी है। अप्रैल के अंक में
दि० १६—३—८२ में प्रकाशिक एक स
उद्धृत किया गया है। जिसमें गुरुदासपु
हुये एक नियोग का वर्णन है। जो पौराणि
शास्त्रार्थों के समय आर्य समाजी विद्वानों
पूछा करते हैं कि क्या कभी आर्य समाज
नियोग किये हैं या कराये हैं, उन्हें यह
आँखें खोलकर पढ़ना चाहिये। इसी अंक में
बाद आर्य समाज के उत्सव का विवरण भी
हुआ है।

स्वामी दयानंद के सत्यार्थ प्रकाश के
समुल्लास के अंत में जिस अल्लोपनिषद्
का उल्लेख किया है, उसके विषय में एक
तथ्य जून १८८२ के सु० प्रवर्तक में छपा है
गया है कि मैसूर के नवाब हैदरअली के
में पं अहोबल शास्त्री नामक किसी विद्वान
संस्कृत फारसी मिश्रित वर्ण रूकर रचना लि
इसी अंक में फिरोजपुर के आर्य अनाथा
रिपोर्ट भी छपी है। भारतीय छात्रों को
कौशल सीखने और यूरोप में प्रचलित
अध्ययन करने के लिये विदेश यात्रा के
समय २ पर लेख और टिप्पणियाँ सुदशा
छपती रहती थीं। ऐसी ही एक टिप्पणी
१८८२ के अंक में छपी है। स्वामी जी
गमन का समाचार भी इसी अंक में है।

ऋषि के ग्रंथों को प्रकाशित करने वा
यंत्रालय अजमेर आने से पूर्व प्रयाग में था
एक परिचयात्मक विवरण मुंशी समर्थ
उक्त यंत्रालय के व्यवस्थापक थे, से लि
अक्टूबर ८२ के अङ्क में प्रकाशित हुआ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

नवम्बर १८८२ के अङ्क में महेन्द्रनाथ घोषाल क व्यक्ति के विचारों की समीक्षा आर्यसमाज नऊ के एक सभासद बलभद्र मिश्र ने एक पत्र में है। घोषाल महाशय आर्यसमाज के दार्शनिक न्त से सहमत प्रतीत होते हैं और मिश्र जी ही त्रैतवाद विषयक शंकाओं का समाधान करते विदेश यात्रा के समर्थन में एक युक्ति और ण युक्त टिप्पड़ी दिसम्बर ८२ के अंक में भी दक ने दी है। 'मंत्र ! यंत्र !! तंत्र !!!' शीर्षक टिप्पणी इस अंक में और दृष्टिगोचर होती है में जन सामान्य में प्रचलित मंत्रों के प्रभाव न्धी अन्धविश्वासों का तीव्र खण्डन किया है। ग हिन्दू समाज' नामक किसी स्थानीय संस्था के न्ध में टिप्पणी करते हुये सम्पादक ने 'आर्य' के न पर 'हिन्दू' नाम के प्रयोग पर आपत्ति की है ु उसके उद्देश्य की प्रशंसा भी की है। इसी अङ्क वामी जी के उदयपुर निवास सम्बन्धी समाचार दिये हैं।

भारतेन्दु रचित 'होली' विषयक कुछ पद्य अप्रैल ८३ के अंक में छपे हैं। सुदशा प्रवर्तक में समाजे- विषयों का भी पूर्ण समावेश रहता था। सामयिक नीति विषयक टिप्पणियाँ यह सिद्ध करने के लिये ात्र है कि यह पत्र केवल आर्यसमाजी क्षेत्र में भी प्रिय था। इसी अंक में इलबर्ट बिल के संबंध टिप्पणी और 'अदालत का व्यय और दीन भारत ' शीर्षक सम्पादकीय नोट्स पत्र का राष्ट्रीय दृष्टि- प्रस्तुत करते हैं। 'दयानन्द दिग्विजयार्क' शीर्षक ी पुस्तक पर किन्हीं दामोदर शास्त्री की लिखी खण्डनात्मक पुस्तक की समालोचना के रूप में लक्ष्मी दत्त का एक सुन्दर लेख इस अंक में है। राणा उदयपुर और राजाधिराज शाहपुरा ने ीजी को जो प्रशस्तिपत्र प्रदान किये थे वे क्रमशः १८८३ और अगस्त के अङ्कों में छपे हैं। राज- न के अन्तर्गत शेखावाटी प्रदेश के निवासी त्मा कालूराम जी जो अपने समय के प्रसिद्ध योगी और ईश्वर भक्त थे, स्वामीजी के अनुयायी बने। उन्होंने राजस्थान के कई स्थानों पर आर्य-समाजों की स्थापना की। उन पर एक संक्षिप्त टिप्पणी इस अंक में दृष्टिगोचर होती है।

जून १८८३ के अंक में मधुसूदन गोस्वामी नामक किन्हीं पौराणिक पण्डित के प्रचार और आर्य-समाज द्वारा उनसे शास्त्रार्थ किये जाने का उल्लेख है। इसी अंक में आर्यसमाज देहरादून में की गई उस प्रसिद्ध शुद्धि का भी विवरण प्रकाशित हुआ है, जिसके अन्तर्गत मुन्शी मुहम्मदउमर नामक जन्मना मुसलमान को शुद्ध कर आर्यसमाज का सदस्य बनाया गया था। वैष्णवःपत्रिका नाम्नी किसी पत्रिका में यह प्रकाशित हुआ था कि उदयपुर महाराणा का स्वामी दयानन्द के निकट बैठकर मनुस्मृति और विदुर नीति आदि ग्रन्थों का पढ़ने का समाचार मिथ्या है। जुलाई ८३ के अङ्क उक्त पत्रिका के इस असत्यता पूर्ण प्रलाप की कटु आलोचना की गई है। उन दिनों कलकत्ता अदालत में किसी मुकदमे के दौरान में अँग्रेज न्यायाधीश ने बालकृष्ण की मूर्ति अदालत में मंगवाली थी। इस बात को लेकर उस समय के पत्रों में पक्ष और विपक्ष में खूब चर्चा चली बंगाल के प्रसिद्ध नेता सुरेन्द्रनाथ बनर्जी ने गौरांग न्यायाधीश के इस स्वच्छन्दतापूर्ण कृत्य की कटु आलोचना की। फलस्वरूप वे सरकार के कोप भाजन बने और उन्हें दो मास का कारावास भोगना पड़ा। मूर्तिपूजा के प्रति अनास्था का भाव रखते हुये भी सुदशा के इस कृत्य की आलोचना की है। पौराणिकों का उस समय कितना नैतिक पतन हो गया था, यह भी इसी बात से जाना जा सकता है कि जज के कृत्य को काशी की पण्डित मण्डली ने उचित ठहराया और उसके पक्ष में अपनी व्यवस्था दी। ऐसा अनु-मान लगाया गया कि अँग्रेज न्यायाधीश को निर्दोष सिद्ध करवाने के लिये काशीनरेश और उनने कृपा-पात्र राजा शिवप्रसाद ने पूर्ण प्रयास किया। यह समस्त आलोचना सुदशा प्रवर्तक के जुलाई और सितम्बर ८३ के अङ्कों में आई है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जुलाई मास के अङ्क में ही स्वामी दयानन्द का भारत सुदशा प्रवर्तक के सम्पादक के नाम वह प्रसिद्ध पत्र छपा है जिसमें काँग्रेस संस्थापक ए० ओ० ह्यूम के वेद विषयक विचारों की समीक्षा की गई है। ह्यूम साहब ने लिखा था कि यदि स्वामी जी अपने वेद भाष्य को ईश्वर द्वारा प्रेरणा प्राप्त घोषित कर दें तो उनके वेद भाष्य को निर्भ्रान्त माना जा सकता है। उत्तर में स्वामी जी के ये शब्द अत्यन्त महत्व-पूर्ण हैं। इन शब्दों से यह जाना जाता है कि ऋषि दयानन्द किसी प्रकार के अंधविश्वास को प्रचलित करने के विरुद्ध थे। स्वामी जी ने लिखा मैं ईश्वर नहीं, किन्तु ईश्वर का उपासक हूँ। वेद मनुष्यों के हितार्थ परमात्मा ने प्रकाशित किये हैं, इसलिए यावत् मेरी बुद्धि और विद्या है तावत निष्पक्षपात होकर वेदों का अर्थ प्रकाशित करता हूं।" इसी अंक में स्वामी जी ने थियोसोफी के प्रवर्तक कर्नल आल्काट और मैडम ब्लैवेट्स्की के चमत्कारों का भी खण्डन किया है।

जिस 'वैष्णव पशिका' का उल्लेख ऊपर आ चुका है, उसी पत्रिका के एक अङ्क में स्वामी दयानंद की निन्दा और स्तुति दोनों साथ २ छपी है। विधवा विवाह, मूर्ति पूजा खण्डन, वेद में विज्ञान, शूद्रों को वेद पढ़ने का अधिकार आदि के लिये ऋषि का तिरस्कार किया गया था। परन्तु उनकी सहनशीलता, ऐक्य भावना को विस्तृत करने, उनके ब्रह्मचर्य और वैदिक चर्चा के जीर्णोद्धारक होने के कारण महाराज की प्रशंसा भी की गई थी। खितम्बर के अंक में ऋषि विषयक इस द्विविध सम्मति युक्त वैष्णव पत्रिका के उस लेख की युक्तियुक्त आलोचना की गई है। अक्टूबर मास के अंक में ही [illegible] अस्वस्थता और उनके परमधाम गमन [illegible] सूचना प्रकाशित हुई है। स्वामीजी के [illegible] डी० ए० वी० कालिज की स्थापना [illegible] उल्लेख दिसम्बर ८३ के अंक में हुआ [illegible] प्रवर्तक के अंकों में समय २ पर [illegible] लोचना' शीर्षक स्तम्भ के अन्तर्गत नवीन [illegible] होने वाली पुस्तकों की परिचयात्मक सम्म [illegible] छपती थी। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की [illegible] पुस्तकों की समालोचना छपी हैं। राज [illegible] स्वामी जो भारतेन्दु के घनिष्ट मित्र [illegible] सम्प्रदायानुयायी होते हुये भी उन [illegible] विचारों के व्यक्ति थे, की पुस्तकों [illegible] और दामिनी दूतिका की समालोचना भी [illegible] हुई थीं। पं० लेखराम आर्य पाथिक ने [illegible] 'धर्मोपदेश' शीर्षक जो उर्दू पत्र निक [illegible] उल्लेख भी इसी स्तम्भ के अन्तर्गत हुआ [illegible] तेन्दु (सम्पादक राधाचरण गोस्वामी [illegible] कादम्बिनी (सम्पादक बद्रीनारायण चौध [illegible] ब्राह्मण (सम्पादक प्रताप नारायण मि [illegible] पत्रों का परिचय भी दिया जाता था।

इस प्रकार हम देखते हैं कि आज से पूर्व प्रकाशित होने वाला 'भारत सुद [illegible] अपने युग का एक प्रतिनिधि पत्र थां। सम [illegible] होने के साथ २ सुधार संस्कार और देश [illegible] महान् कार्य में इस पत्र के द्वारा जो सहयो [illegible] वह पत्रकारिता के इतिहास में स्वर्णाक्षरों [illegible] जाने योग्य है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

राष्ट्रपति महामहिम डा० राजेन्द्रप्रसाद

आर्य जनता के निमंत्रण पर दयानंद दीक्षा शताब्दी के सुअवसर पर २५ दिसम्बर, ५९ को आपने महर्षि दयानंद सरस्वती के गुरु श्री विरजानंद दंडी की स्मृति में निर्मित होने वाले वैदिक अनुसन्धान भवन का शिलान्यास कर दोनों आचार्यों के प्रति श्रद्धाञ्जलि अर्पित की।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्य समाज से प्रेरणा लें

[श्री फतहचन्द शर्मा आराधक दिल्ली

देश के नव जागरण में आर्य समाज ने जो किया है उससे हम अपना जीवन बनाने में ा ले सकते हैं। आर्य समाज का अतीत संघर्ष था, इसलिए उस परीक्षा काल में आर्य-ज आग में सोने की तरह चमकता रहा। आर्य समाज शिथिल है पर कोई चिन्ता नहीं आर्य समाज के गौरव मय अतीत काल से ा लेकर हम अपना भविष्य आर्य समाज के ान्तों पर बनायें तब आर्य समाज और व्यक्ति ं का भविष्य उज्ज्वल हो सकेगा।

आर्य समाज की पतवार लेकर जब तक हम ाह नदी में अपनी जीवन नौका खेते रहे तब तक डूबने के भय से बचे रहे पर जब हम गर्व में आ ार को ही छोड़ बैठे—तब डूबने से कैसे बच ते थे।

आर्य समाज ने पिछली शताब्दी में सोते हुए त को जगाया उसने मनुष्य को आत्म सम्मान भाव और समभाव का पाठ पढ़ाया। जब वेद पवित्र ध्वनि आर्य समाज की ओरसे गुंजित की ी थी तब ऐसा लगता था कि प्राणों में एक नया वन संचार हो रहा है। सहनाववतु सहनौ क्तु ॥ को पढ़ कर सुनकर ऐसा कौन सा केत होगा जिसका हृदय गद्गद् न हो जाता और जो लोग इस मंत्र का अर्थ जानते हैं यदि अपने हृदय के कपाट खोल कर क्षण भर के ए भी इस मन्त्र के आत्मा का स्पर्श होने देते देखिये कितना आनन्द आता है और हम र्य तथा दूसरों का जीवन आनन्द मय बनाने दिशा को कितने सचेष्ट हो सकेंगे। आर्य समाज ादि काल से है वह सृष्टि के साथ और उसके उत्तरोत्तर क्रमिक विकास से इस पुण्य भूमि पर अवतरित हुआ है उसे किसी भवन या संस्था के रूप में प्रतिष्ठित करने वाले व्यक्ति बाद में आये हैं। आर्य समाज जिस भावना और सिद्धान्त का प्रति रूप है वह हमारे महापुरुषों के जीवन में बहुत पहले था उस ज्ञान ज्योति को जो अज्ञान के तिमिर से ढक जाने के कारण प्रकाश नहीं दे पा रही थी उसे ठीक करके जन हित के रूप में मनुष्य शक्ति का जीवन दान देने का काम ऋषि दयानन्द ने किया। स्वामी दयानन्द पिछली शताब्दी के एक ऐसे कर्मठ महापुरुष थे जिन्हें जाति, प्रदेश आदि की छोटी ईकाई अपने बन्धनों में नहीं बांध सकी। वे देश को सर्वोपरि मान कर राष्ट्र मन्दिर के निमित्त—कहां उनकी जन्म भूमि गुजरात और कहां सारा भारत—सभी में पैदल घूम कर नव चैतन्यता प्रदान करते रहे।

गुजरात की कृपा के लिये भारत सदैव ऋणी रहेगा कि उसने महर्षि दयानन्द के अतिरिक्त महात्मा गांधी, प्रेसीडेन्ट पटेल, और लौह पुरुष बल्लभ भाई पटेल आदि को देश के हित प्रदान किया। इन देश ने देश में अभूत पूर्व जागृति की। बहुत अंशों में भारतीय स्वाधीनता का श्रेय हमारे पूर्वोक्त राष्ट्र महा पुरुषों को दिया जा सकता है। आर्य समाज के द्वारा देश के विभिन्न वर्गों में की गई सेवा के पिछले ८० से अधिक वर्षों में अभी आर्य समा : : : : तक नहीं पहुँचा है जहां उसे जाना था।

सभ्यता का प्रचार:—

आर्य समाज ने "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" का

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

एक राष्ट्रीय उद्घोष किया था । इस शब्द का मेरी दृष्टि में अर्थ यह है कि सारे संसार को चरित्र वान् बनाओ । सारे संसार को आर्य समाजी की अपेक्षा हमारा दृष्टिकोण यह रहना चाहिए कि सारे संसार के व्यक्ति—आर्य बनें । आर्य से उदारता पूर्वक यह विचार ग्रहण करना चाहिए कि वे शिष्ट एवं सभ्य तथा सद्गुणी समाज के अङ्ग बने । यही वास्तव में सीधा और सच्चा संक्षेप में अर्थ है । एक प्रकार से यह एक तुला है । जिस पर हम अपने काम को तोल सकते है । आर्य समाज ने शुद्धि आन्दोलन, अस्पृश्यता निवारण आन्दोलन ईसाई विरोधी आन्दोलन आदि से सामाजिक जागृति की । पर वह जागृति का लाभ आर्य-समाज को मिलने के स्थान पर एक व्यक्ति को मिल रहा है । आर्य समाज ने बहुत से डी० ए० वी० कालिज और गुरु कुल खोले । उनमें अब नये गुरु कुल नहीं खुल पा रहे । कारण क्या है यह कहना कठिन है ? इन शिक्षण संस्थाओं की तरह आज अनेक स्थानों पर आर्य समाज को मातृ-एवं शिशु कल्याण सम्बन्धी आश्रम भी खोलने चाहिए । मुझे अनुभव है कि प्रायः अस्पतालों की चिकित्सा, पथ्य आदि और सेवा शुश्रूषा में जो लोग अधिक संख्या में लगे है उनकी दृष्टि आर्य समाज की भावना के अनुकूल नहीं ।

आर्य समाज के और भी अनेक दायित्व हैं जिन्हें इस शताब्दी के अवसर पर स्मरण किया जाना चाहिए ।

आर्य समाज की शक्ति अब विभिन्न रूपों में बट रही है उसे एक स्थान पर सुसंगठित करने की आवश्यकता है ।

आर्य समाज अपने उन प्रचारकों का भी भली प्रकार संरक्षण करे जो समाज के [illegible] आर्य समाज को मिलाते हैं । आर्य समाज ने [illegible] बड़े लोगों को सम्मान प्रदान किया किन्तु जो [illegible] आर्य समाज की नींव को मजबूत करने के [illegible] बन कर आर्य समाज के लिए मिट गए उनकी [illegible] आर्य सगाज ने कभी चिन्ता नहीं की । आर्य समाज [illegible] के पास ऐसा इतिहास भी नहीं देखने में आया [illegible] जिनको आर्य समाज का साथ देने पर हुक्का-पानी [illegible] नहीं, ग्राम तक छोड़कर भटकना पड़ा । ऐसे लोगों [illegible] को श्रद्धा पूर्वक स्मरण किया जाना चाहिए ।

उदाहरण के तौर पर इस प्रसङ्ग में मैं सम्[illegible] दकाचार्य पं० रुद्रदत्त शर्मा का नाम ले सकता हूँ [illegible] उन्होंने अपनी जन्म-भूमि धामपुर (बिजनौर) [illegible] अतिरिक्त सारे देश में वाणी और लेखनी से आर्य [illegible] समाज का प्रचार किया । आज हमारे पास अनेक [illegible] ग्रन्थ हैं—पर उनके वे ग्रन्थ जो आर्य समाज [illegible] के प्रचार में आज भी उतने ही सहायक हैं जितने [illegible] उनके जीवन काल में थे । उन ग्रन्थों का पुनर्मुद्रण [illegible] नहीं हो सका । धामपुर में उनका नाम लेवा [illegible] नहीं । और न कभी आर्य समाज धामपुर [illegible] ओर से उनका स्मरण किया जाता है । और मैं [illegible] अनेक ऐसे लोगों को जानता हूँ जो आर्य समाज [illegible] के लिए स्वयं नहीं मिटे वरन् उनके परिवार [illegible] मिट गये ।

आज इस अवसर पर उन नींव के पत्थरों [illegible] स्मरण करना भी हमारा कर्तव्य है जिनकी दृढ़ [illegible] से यह आर्य समाज का दुर्ग खड़ा है । स्वाधीनता [illegible] के शहीदों की तरह समाज और देश को आगे बढ़ाने [illegible] वाले इन वीरों का भी एक दिन आर्य समाज [illegible] ओर से श्रद्धांजलि पर्व के रूप में मनाया जाना [illegible] चाहिए ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

विज्ञान की दृष्टि : आध्यात्मिकता के अनुभव

सभी धर्मों के उपदेशकों और स्थापकों ने यही शिक्षा दी है, आधुनिक और प्राचीन पश्चिमी पूर्वी, सभी दार्शनिकों ने यही अनुभव किया है कि अज्ञात और अज्ञेय परम तत्व उनकी आत्मा ही है।

—हर्बर्ट स्पेन्सर

मनुष्य तो केवल सापेक्ष सत्य को ही जान सकता है, सम्पूर्ण सत्य का ज्ञान केवल ब्रह्मानंदवेत्ता सर्वज्ञ को ही होगा।

—आइन्स्टाइन

कोई अजानी शक्ति निरन्तर क्रियाशील है, परन्तु हमें उसकी क्रिया का कुछ पता नहीं .....मैं मानता हूँ कि चेतनता ही प्रमुख, आधारभूत वस्तु है, पुराना नास्तिकवाद अब पूरी तरह मिट चुका है, और धर्म, चेतना तथा मस्तिष्क के क्षेत्र का विषय बन गया है, इस नयी धार्मिक आस्था का टूटना संभव नहीं है।

—सर ए० एस० एडिंग्टन

आज अधिकाधिक लोग मानने लगे हैं, कि ज्ञान विज्ञान की सरिता किसी अ-यान्त्रिक परम सत्य की ओर बह निकली है, यह समूचा ब्रह्मांड अब एक महान् 'भावना' की तरह दीखता है, एक बड़ी 'मशीन' जैसा नहीं लगता कि मानव मस्तिष्क जड़ जगत् की भौतिक परिधि में कहीं बाहर से अकस्मात् घुस आया है।

—सर जेम्स जीन्स

वह युग निश्चय ही आयेगा, जब विज्ञान अज्ञात अज्ञेय के सभी बन्द दरवाजे खोलने में समर्थ होगा, जितना हम पहले सोचते थे, ब्रह्मानन्द उससे भी अधिक आध्यात्मिक तत्वों पर टिका है, सच तो यह हैं कि हम ऐसे आध्यात्मिक जगत् में रहते हैं, जो भौतिक संसार से अधिक महान् और सशक्त है।

—सर ओलिवर लाज

पशु जीवन की समूची परिधि में ऐसी बातें हैं, जो हमारे अपने मस्तिष्क से मिलती जुलती हैं। एमीबा से लेकर मनुष्य के अन्दर तक आन्तरिक और वैयक्तिक जीवन का एक ही निर्झर हिलोरें लेता है

—सर जे० ए० टोमस।

एक निर्णय जो इस बात का संकेत करता है ..... मृत्यु के बाद भी चैतन्य का जीवित रहना सम्भव है.....लकड़ी के कुन्दे में जो ज्वाला रहती है, वह लकड़ी से भिन्न है किन्तु इसके कारण ही कुन्दा ईन्धन में जलता है।

—आर्थर एच० काम्पटन

यही सत्य है कि न भौतिक तत्व न शक्ति, न कोई भी भौतिक वस्तु सिर्फ विचार चैतन्य और व्यक्तित्व ही ब्रह्मानन्द के केन्द्रीय तत्व हैं।

—जे० बी० एस० हाल्डेन

कुछ ही समय पहले तक यह बात वैज्ञानिक क्षेत्रों में एक हद तक फैशन बन गई थी कि अपने को नास्तिक एग्नोस्टिक कहा जाए। लेकिन अब अगर कोई आदमी अपनी नास्तिकता को नासकभी पर गर्व करता है, तो यह लज्जा और तिरस्कार की बात है, नास्तिकता का फशन अब मिट चुका है और, यह विज्ञान के श्रम का ही फल है।

—साइन्स एन्ड रिलिजन

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

महर्षिसन्देशः

(१)

एकोऽसौ परमेश्वरः शिव इति, ख्यातः श्रुतौ शंकरः,
सर्वव्यापक सर्वशक्तिसंहितो यो निर्विकारोऽस्त्यजः।
तस्योपासनमेव सर्वमनुजैः, सश्रद्धमाचर्यतां,
नूनं योगिवरस्य वेदविदुषः सन्देश एषो ऽद्य नः॥

(२)

कृत्वा कार्यमवैदिकं बहुजना लोके विषादं गताः,
नाना देवगणं च मूर्तिसहितं, संपूजयन्तः सदा।
एतत्कार्य मवैदिकं क्षतिकरं, सन्त्यज्यतां सत्वरं,
नूनं योगिवरस्य वेद विदुषः, सन्देश एषो ऽद्य नः॥

(३)

एकोऽसौ जगदीश्वरो ऽस्ति सकलास्तस्यैव पुत्रा वयं,
तस्मात्प्रीतियुतैः सदैव मनुजैर्भाव्यं हि सोदर्यवत्।
त्याज्या जातिभिदा विरोधजननी, येयं प्रथाऽवैदिकी,
नूनं योगिवरस्य वेदविदुषः, सन्देश एषो ऽद्य नः॥

(४)

वेदास्तेन दयामयेन रचिता यो नः पिता शिक्षकः,
सर्वे स्युः सुखिनः सुशान्तिसहिताः कर्तव्यनिष्ठा इति।
तेषामध्ययनं मुदा बुधजनैः, कार्यं तथाध्यापनं
नूनं योगिवरस्य वेद विदुषः, सन्देश एषो ऽद्य नः॥

(५)

आर्याः स्युर्भुवनेऽत्युदारमतयः सर्वे जना धार्मिकाः
न्यायं मार्गमिहावलम्ब्य सुखदं, संवर्तयन्तो मिथः।
तेषामेव समाज आवितनुतां, लोकोपकारं सदा,
नूनं योगिवरस्य वेदविदुषः, सन्देश एषो ऽद्य नः॥

—धर्मदेवो विद्यामार्तण्डः

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वैदिक समाज व्यवस्था

[श्री पं० शिवदयालुजी, मेरठ]

हिन्दू जाति में प्रचलित वर्तमान समाज व्यवस्था को ही वैदिक समाज व्यवस्था मान कर प्रायः लोग इस पर नाना प्रकार के आक्षेप करने लगते हैं, जन्म मूलक वर्णवाद, प्रचलित जाति उपजातिवाद अवर्ण सवर्णवाद, स्पृश्यास्पृश्यवाद, उच्चावचयवाद कुछ ऐसे वाद आज दिन हिन्दू समाज में प्रचलित हैं, कि जिनका वैदिक समाज व्यवस्था से किंचिन्मात्र भी सम्बन्ध नहीं किंतु फिर भी इनकी आड़ लेकर विरोधी लोग वेदों को कोसते हैं। कास्टलैस सोसायटी का नारा जो आज के प्रगतिशील राजनैतिक मस्तिष्क लगाते हैं और इन सब वादों को मिटाकर एक नव-समाज के निर्माण की कल्पना का प्रचार करते हैं सो वह केवल प्रतिक्रिया के वशीभूत होकर ही ऐसा करते हैं, उनकी यह प्रतिक्रिया इन प्रचलितवादों के विरोध ही तक सीमित न रह कर वैदिक समाज व्यवस्था के विरोध में भी कार्य करती दृष्टि गोचर होती है।

अन्य देशों की भाँति भारत की भी समाज व्यवस्था आज श्रेणी संग्रामवाद की कसौटी पर कसी जा रही है, तथा समाज को पूंजीपति एवं श्रमिक दलों के रूप में विभाजित किया जाने लगा है, इस विभाजन का आधार भी प्रतिक्रिया ही है, इसमें यथार्थवादता को स्थान नहीं।

वेद यथार्थवाद का स्पष्ट, प्रतिपादक है, "संगच्छध्वं संवदध्वं" का वैदिक आदर्श लुप्त हो जाता है यदि हम इस साम्यवादी प्रतिक्रिया को अपना लेते हैं। फिर जो वैसे वाला वह पापी और जो श्रमिक है वह पुण्यात्मा एवं धर्मात्मा है। वेद धर्म को समाज के विभाजन का आधार मानता है। और इसे विश्व से मनवाना चाहता हैं। 'गुणाः पूजा स्थानं गुणिषुन च लिंग न च वयः" यह उक्ति वैदिक भावना की पोषक है। वेद गुणों के आधार पर मानव समाज को दो अङ्गों में अर्थात् आर्य और दस्युओं में बाँटना चाहता है।

आर्य सम्बन्धी वैदिक कल्पना भी धन के कारण अथवा देश विशेष में निवास करने के कारण अथवा किसी मत वा सम्प्रदाय में आस्था रखने के कारण नहीं है, अपितु श्रेष्ठ गुणों के धारण करने एवं श्रेष्ठ कर्मों के अनुष्ठान के कारण ही मानव आर्य कहाता है।

इसी प्रकार किसी पराजित या विजित वर्ग को दस्यु मानना अथवा असंस्कृत भाषा बोलने के कारण म्लेच्छ को दस्यु कहना अथवा वनों में निवास करने वाली अरण्य जातियों को दस्यु कहना भी वेद को अभीष्ट नहीं, वेद ने दस्यु की कल्पना भी गुण कर्मों के आधार पर ही की है।

श्रेष्ठ गुणों के कारण मानव आर्य बनता है, तो निकृष्ट गुण कर्मों के हेतु वह अनार्य अर्थात दस्यु कहलाता है।

दस्यु को भी अच्छे संस्कार एवं शिक्षा द्वारा आर्य बनाना सदा से वेद नीति चली आयी है। कृण्वन्तो विश्वमार्यम् का वैदिक घोष इसी नीति का प्रबल प्रतिपादक है। दस्युओं अर्थात चोर, डाकू, दुराचारी, देश द्रोही आततायी दुर्जनों को उचित दण्ड देकर उनका सुधार करना और उनकी सन्तति को आर्य अर्थात् श्रेष्ठ नागरिक बनाना यह वेदाभिमानियों की सनातन पद्धति रही है।

आर्यों का चार वर्णों में अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्रों में विभाजित करना वेद को अभीष्ट है। शूद्र निश्चय ही आर्य हैं और समाज में ब्राह्मण

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आदि की भाँति उसको सर्व अधिकार प्राप्त हैं, वेद का पढ़ना,षोडश संस्कारों का करना, शिखा सूत्र का धारण करना चारों वर्णों के लिये विहित है, "यथेमां वाचं कल्याणीं" इस मन्त्र में ब्राह्मण,क्षत्रिय,वैश्य, एवं शूद्र, म्लेच्छ एवं अरण्यादि सभी वर्गों को वेद पढ़ने का अधिकार प्रतिपादित है, मन्त्र में क्षत्रिय के उपरान्त शूद्र शब्द पठित है, इस पर पंडित समाज को विशेष विचार करना चाहिये यह वेद की व्यवस्था इस बात की सूचक है कि शूद्र को जो अन्य तीन वर्णों से हीन व छोटा माना जाता है, वह भी वेद को मान्य नहीं,

वैदिक कल्पना के अनुसार "ब्राह्मण समाज का मस्तिष्क है तो क्षत्रिय भुजा है, वैश्य उदर है, तो शूद्र पग है, जिस प्रकार शरीर में इन चारों अंगों का पारस्परिक सम्बन्ध और समन्वय है इसी प्रकार समाज में भी समझना चाहिये, पाँव में लगा कांटासारे शरीर को व्यथित कर देता है, भुजायें मस्तिष्क आदि सब चरणों में ही झुक जाते है, पाँवों की चिन्ता सब अंगों को सताने लगती है, इसी प्रकार समाज में शूद्रों के मान गौरव का ध्यान प्रतिक्षण अन्य वर्णों को रखना चाहिये,

शूद्र, मूर्ख, अनाड़ी, नीच आदि को कहते हैं यह धारणा ही अवैदिक है, मध्यकालीन जन्म मूलक वर्णवाद के मानने वाले आचार्य ऐसी भ्रान्ति फैलाने लगे थे, शूद्र का काम कवल अन्य तीन वर्णों की सेवा करना है, यह भी सर्वथा अवैदिक कल्पना है, शूद्र तो श्रम एवं तप का प्रतिनिधि है "तपसे शूद्रमालभेत" वेद के इस वाक्य के अनुसार जीवन है तप का अभ्यास करने के लिये हमें शूद्र को गुरु बनाना होगा, श्रम को वेद ने धर्म का प्रथम एवं सर्वश्रेष्ठ अंग माना है, यथा "श्रमेण तपसा सृष्टा" आदि मंत्र स्पष्ट ही हैं। श्रमहीन जाति का संसार में विनाश निश्चित है, श्रम को अवहेलना करने वाली जाति का भाग्य सूर्य कभी उदय नहीं हुआ करता, अतएव शूद्र की समाज में प्रतिष्ठा, क्षत्रिय एवं वैश्यों के समान करना [illegible] पावन कर्तव्य है।

ब्राह्मण अपनी इच्छा से निर्धनता को वरण [illegible] है, तप त्याग उसके जीवन के आधार स्तम्भ हैं, [illegible] का अध्ययन प्रचार और विस्तार उसके जीवन [illegible] परम साधना है, विप्राणां भूषणं वेद, चाणक्य [illegible] सूत्र के अनुसार वेद का ज्ञान ब्राह्मण का परम [illegible] है, आचार्य विदुर ने ब्राह्मण को वेद बन्धु की [illegible] उपाधि से विभूषित किया है, ब्राह्मण प्रभु के [illegible] ज्ञान का विश्व में विस्तार करना अपना परम [illegible] समझता था, देश देशान्तरों में द्वीप द्वीपान्तरों में [illegible] ब्राह्मणों के आदर्श के कारण किरात, बर्बर, शक, [illegible] आदि जातियाँ अनार्य बन गई, जीवन पर्यन्त [illegible] का स्वाध्याय व मनन ब्राह्मण की दिनचर्या थी, [illegible] ब्रह्मवर्चस्वी ब्राह्मण जब भारत में थे, तो देश [illegible] भाग्य चक्र ऊपर चमचमाता था, और जब पुनः [illegible] तब भारत निश्चय ही विश्व का गुरु बनेगा, संसार [illegible] की भूतकालीन आर्य जातियाँ एक बार पुनः आर्य [illegible] को अपनायेंगी, भारत में इस प्रकार ब्राह्मणों का [illegible] अत्यन्ताभाव नहीं हुआ, आज भी नहीं है, किन्तु [illegible] संख्या केवल अंगुलियों पर गिनी जा सकती है, [illegible] इससे काम चलने वाला नहीं, इस कमी को दूर करना [illegible] राष्ट्र का महान् कर्तव्य है, वर्तमान काल के जन्म [illegible] मूलक ब्राह्मणत्व का इस वैदिक सिद्धान्तों से [illegible] सम्बन्ध नहीं है, वैदिक ब्राह्मण ज्ञान तप, तेज, [illegible] वर्चस एवं साधनाओं का धनी हुआ करता है,

क्षत्रिय, अन्याय, अत्याचार को कुचलने व [illegible] देने के लिये प्रतिक्षण प्रयत्नशील रहता है, निर्बल [illegible] अनाथों की सेवा रक्षा व उन्नति में सदा तत्पर रहना [illegible] है. दुष्ट, दुराचार का दमन करना उसका परम [illegible] होता है, देश की शत्रुओं से रक्षा उसका पावन कर्तव्य [illegible] होता है, नाना अस्त्र शस्त्रों का संचालन उसका नित्य [illegible] का अभ्यास रहता है।

वैश्य कृषि गोपालन वाणिज्य की उन्नति के लिये

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अपने जीवन को खपाता है। समाज का सब भोजन ही वस्त्र आच्छादन निवास आदि की आवश्यकताओं की पूर्ति करना वैश्य का परम धर्म है, शूद्र नाना प्रकार की कला कौशल शिल्पों की रक्षा एवं उन्नति करता है। श्रम एवं सेवा के कार्यों को दौड़ दौड़कर करने में शूद्र को आनन्द आता है। समाज की अशुचिता को दूर करना भी उसका एक लक्ष्य होता है।

इस वैदिक वर्ण व्यवस्था का यथार्थ व्यवहार इस युग में एक बार पुनः होने लगे तो संसार निश्चय स्वर्ग अर्थात् सुख का वन जाये, यह वैदिक वर्ण व्यवस्था काल्पनिक नहीं व्यवहारिक है, युग युगान्तरों तक विश्व में इसका व्यवहार होता आया है कुछ विकृत रूप में आज भी संसार के विभिन्न देशों में यह विद्यमान है। अब इस युग की सबसे बड़ी पुकार वेदों के पावन ज्ञान के आलोक में वैदिक समाज व्यवस्था से ही नव समाज का निर्माण होगा, अथवा प्राचीन समाज व्यवस्था का पुनः प्रचलन होगा। इस व्यवस्था की स्थापना के हेतु आज आर्यों को प्रयत्नशील होना है।

जगत पुरुष दयानन्द

स्वामी दयानन्द के अनुयायी उन्हें देवता तुल्य मानते हैं। वह निसन्देह इसी योग्य थे। वह इतने विद्वान और अच्छे आदमी थे कि प्रत्येक धर्म के अनुयायियों के लिए सम्मान पात्र थे।

—सरसैयद अहमद खां

जब भारत का इतिहास लिखा जायगा तो नंगे फकीर दयानंद सरस्वती को उच्चासन पर बिठाया जायगा।

—श्री यदुनाथ सरकार

स्वामी दयानंद सर्वथा पवित्र और अपने नियमों के अनुसार सर्वथा आचरण करने वाले महानुभाव थे। वह सत्य के अत्यधिक प्रेमी थे।

—दीनबन्धु एण्ड्रूज

स्वामी दयानंद एक महान् श्रेष्ठ पुरुष थे। वह अपने देश के लिये गौरव रूप थे। उनकी मृत्यु से भारत को बड़ी शोचनीय क्षति पहुंची है।

—मिस्टर ए० ओह्यूम (संस्थापक कांग्रेस)

मेरी सम्मति में स्वामी दयानंद एक जगत् पुरुष और सुधारक थे।

—मिस्टर फौक्सपिट (पूर्व गृह मन्त्री इङ्गलैंड)

इसका श्रेय केवल दयानंद को ही है कि हिंदू लोग आधी शताब्दी में ही रूढ़िवाद और पौराणिक देवताओं की पूजा छोड़ कर अत्यन्त शुद्ध ईश्वर को मानने लगे हैं।

—ब्रिजीपल

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्यसमाज और शिक्षा प्रसार

[आचार्य वीरेन्द्र शास्त्री एम० ए०,]
[मन्त्री सार्वदेशिक विद्यार्थी सभा]

महर्षि दयानन्द के लिए यह स्वाभाविक था कि वे गुरु से दीक्षा लेकर उसी प्रकार की शिक्षा का प्रसार करते जिसे उन्होने आदर्श रुप में ग्रहण किया था। तदनुसार उन्होंने (१) फर्रुखाबाद में सन् १८-६९ ई० में वेदवेदांग की शिक्षार्थ एक शिवमन्दिर में पाठशाला स्थापित की जो कुछ वर्षों ही चल पाई। इसका निरीक्षण महर्षि ने १८७३ ई० में किया। (२) कासगंज (जिला एटा) में भी अष्टाध्यायी, महाभारय, मनुस्मृति आदि की शिक्षा के लिए एक पाठशाला खोली थी। यह भी कुछ दिन चली। (३) काशी में भी पाठशाला खोलने का यत्न किया। (४) कलत्ते में श्री देवेन्द्रनाथ ठाकुर के सम्मुख वैदिक पाठशाला की स्थापना का प्रस्ताव रक्खा था जिसे उस समय सबने पसन्द किया। वहीं पर संस्कृत कालेज में वेदशिक्षा की योजना पर भी विचार किया। (५) शान्तिनिकेतन (बोलपुर-बंगाल) में जिसका प्रारम्भिक मूलनाम 'ब्रह्मचर्याश्रम' था, श्री देवेन्द्रनाथ ठाकुर ने महर्षि के कहने कहने से ही एक वेदपाठी श्रोत्रिय को प्रतिदिन होम करने के लिए नियम किया था।

आर्यसमाज की स्थापना के पश्चात्

१० अप्रैल १८७५ ई० को बम्बई में आर्यसमाज की स्थापना के समय स्वीकृति २८ नियमों में महर्षि के निम्नलिखित शिक्षासम्बन्धी विचार महत्त्वपूर्ण हैं—

नियम संख्या २०—"स्त्री और पुरुष—इन दोनों के विद्याभ्यास के लिए पृथक्-पृथक् आर्यविद्यालय प्रत्येक स्थान में यथासम्भव बनाये जायेंगे। स्त्रियों की पाठशाला में अध्यापिका आदि का सब प्रबन्ध स्त्रियों द्वारा ही किया जायेगा और पुरुषों की पाठशाला में पुरुषों द्वारा—उससे विरुद्ध नहीं।

नियम सं० २१—"इन पाठशालाओं की व्यवस्था प्रधान आर्यसमाज के अनुकूल की जायेगी।"

एक नियम यह भी था कि आर्यसमाज, आर्य-विद्यालय और आर्यप्रकाशन पत्र के लिए प्रत्येक सभासद कम से कम एक रुपया मासिक आय का प्रतिशत दिया करेगा।

लाहौर में स्वीकृत आ०स० के १० नियमों में उपर्युक्त नियमों के स्थान पर केवल मूलभूत सिद्धान्त ८ वां नियम ही रहगया—"अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।

परोपकारिणी सभा को उत्तराधिकारिणी बनाते हुए महर्षि ने अपने स्वीकार पत्र में भी यह निर्देश किया कि सभा का धन 'वेद, वेदांग आदि शास्त्रों के प्रचार अर्थात् उनकी व्याख्या करने-कराने, पढ़ने,पढ़ाने, सुनने-सुनाने, और छापने-छपवाने, में लगाया जाय।

महर्षि-निर्वाण के पश्चात्

३० अक्टूबर सन् १८८३ ई० को महर्षि के निर्वाण के पश्चात् आर्यसमाज ने महर्षि के स्मारक रूप में शिक्षाप्रसार का विशाल कार्य प्रारम्भ किया।

(१) दयानन्द ऐंग्लो वैदिक कालेज, लाहौर—८ नवम्बर १८८३ ई० को महर्षि-स्मारक के रूप में इस महाविद्यालय के बनाने का निश्चय किया गया। पं० गुरुदत्त की प्रार्थना पर प्रथम बैठक में ही इसके लिए ८००७ रु० का दान मिला, महात्मा हंसराज ने अपना समस्त जीवन इसके लिए अर्पण कर दिया।

इस कालेज का उद्देश्य (१) भारतीय साहित्य का अध्ययन (२) प्राचीन संस्कृत और वेद का अध्ययन तथा (३) अंग्रेजी साहित्य और क्रियात्मक विज्ञान

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

को उन्नत करना था। आर्यजनता ने इन्हें वेदों की की शिक्षा का साधन समझकर पूरी सहायता की किन्तु कालेज स्थापकों के सामने राष्ट्रीय लौकिक दृष्टिकोण ही प्रधान था।

अष्टाध्यायी तथा वेद की शिक्षा सन्तोषजनक न होने के कारण पं० गुरुदत्त का कालेज कमेटी से मतभेद बढ़गया और मार्च १८८९ में उनकी मृत्यु के पश्चात् अत्यधिक आन्दोलन होने पर ही सन् १८९० मिडिल क्लास में अष्टाध्यायी की पढ़ाई आरम्भ हुई जो कुछ काल पश्चात् फिर समाप्त होगई।

क्रमशः उन्नति करते हुए यह कालेज इतना विशाल होगया कि यदि पाकिस्तान न बना होता तो यह आज भारत के सर्वोत्कृष्ट विश्वविद्यालय के रूप में होता।

अनेक डी० ए० वी० कालेज पंजाब में विभिन्न स्थानों पर कार्य कर र ।। सभी डी० ए० वी० कालेजों और स्कूलों में साधारण धर्मशिक्षा बराबर किसी न किसी रूप में होती चली आरही है।

२. महर्षि की निर्वाणस्थली अजमेर में २८ दिसम्बर १८८३ ई० को परोपकारिणी सभा ने अन्य प्रस्तावों के साथ एक दयानन्द आश्रम बनाये जाने का प्रस्ताव किया जिसमें ऐंग्लो वैदिक कालेज भी सम्मिलित था। किन्तु यह प्रस्ताव कार्यरूप में परिणित ; । डी० ए० वी० कालेज अजमेर का प्रारम्भ बहुत काल पश्चात् आ० स० अजमेर ने किया।

३. जालंधर में १८८६ई० के अक्टूबर में कन्या विद्यालय आरंभ हुआ। ला० देवराज तथा महात्मा मुन्शीराम (स्वामी श्रद्धानन्द) के प्रयत्नों से यही जुलाई १८९१ ई० में कन्यामहाविद्यालय जलंधर के रूप में पल्लवित हो आज कल एक डिग्री कालेज के रूप में विद्यमान है।

(४) प्रयाग में सन् १८८७ में आर्यधर्म सभा की ओर से पं० भीमसेन के मन्त्रित्व में 'दयानंद विश्वविद्यालय का उद्घाटन किया गया जिसका उद्देश्य उपदेशक तय्यार करना था। इसके संचालक श्री विश्वेश्वरसिंह रईस ऋषि की पाठविधि का अक्षरशः पालन चाहते थे। यह दो वर्ष तक चला।

(५) मेरठ में सन् १८८७ में ही आ० स० की ओर से एक ऐंग्लो वैदिक स्कूल खुल गया था। जो साधारण रूप में चला। १८८९ में आ० प्र० स० उ० प्र० ने बरेली के अधिवेशन में डी० ए० वी० कालेज की स्थापना के लिए एक समिति बनाई। ८ वर्ष तक विवाद के बाद कालेज कमेटी की रजिस्ट्री पृथक हो गई और इसी वर्ष मेरठ में डी० ए० वी० कालेज आरम्भ हुआ जो कुछ वर्ष पीछे देहरादून चला गया। डी० ए० वी० कालेज मैनेजिंग कमेटी उ० प्र० का मुख्य कालेज कानपुर में एक विश्वविद्यालय की सी स्थिति में विशाल रूप में उन्नति कर रहा है। इन इन कालेजों पर सार्वदेशिक तथा प्रदेशीय प्रतिनिधि सभा का प्रत्यक्ष नियन्त्रण न होने के कारण आजकल वहाँ वैदिक धर्म शिक्षा का प्रबन्ध सन्तोषजनक रूप में नहीं है।

(६) सन् १८८९ में ही पंजाब में आर्य ग्रन्थों की शिक्षा के लिए महात्मा मुंशीराम, स्वामी रामानन्द, पं० गुरुदत्त आदि ने एक उद्देशक पाठशाला खोलने का निश्चय किया। १८९१ में इसे पंजाब आ. प्र. सभा ने लाहौर में आरंभ किया। १८९५ में पाठशाला लाहौर से जालन्धर चली आई। वही से वह गुजराँ वाला में गई। १८९८ ई० आ० प्र० सं० पंजाब ने महात्मा मुंशीराम जी का गुरुकुल खोलने का प्रस्ताव स्वीकृत किया और यह पाठशाला ही १६ मई १९०० ई० को गुजराँवाला में गुरुकुल के रूप में परिवर्तित हो गई। इसके दो वर्ष पश्चात् १९०२ ई० को कांगड़ी ग्राम में गुजरावाला के गुरुकुल के २४ ब्रह्मचारियों से गुरुकुल विश्वविद्यालय का सूत्रपात हुआ। इसमें पहले ३ वर्ष तक केवल संस्कृत की शिक्षा रही। सन् १९०६ से अर्वाचीन विषयों की भी शिक्षा आरंभ हुई। कुछ काल पश्चात् गुलजान कुरुक्षेत्र भटिंडा

Dr. Vivek Arya Vedic Libra

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भैंसवाल, रायकोट आदि में गुरुकुलकांगड़ी की शाखायें स्थापित हुई।

अब यह गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय आर्य-समाज का गौरव है और शीघ्र ही चार्टर्ड विश्व-विद्यालय के रूप में मान्यता प्राप्त करने जा रहा है।

(७) सन् १८९८ ई० में स्वामी दर्शनानंद जी ने सर्व प्रथम गुरुकुल सिकन्दराबाद में खोला। यही गुरुकुल १ दिसम्बर सन १९०५ से महात्मा नारायण स्वामी के नेतृत्व में आ०.प्र० सभा उ० प्र० द्वारा संचालित होकर १७ सितम्बर १९०७ को फर्रुखाबाद आगया और १६ दिसम्बर १९११ ई० को वृन्दावन क्रान्तिकारी राष्ट्रभक्त राजा महेन्द्रप्रताप जी की भूमि मथुरा) पहुँच गया। यह आज वहीं उ० प्र० के प्रमुख गुरुकुल विश्व विद्यालय के रूप में कार्य कर रहा है।

(८) पंजाब में सन् १८९४ से ही आर्यसमाज के दो दल हो गये थे। शिक्षा प्रसार के सम्बन्ध में भी दोनों दलों में प्रतियोगिता चलने लगीं। परिणाम-स्वरूप कालेज पार्टी ने अनेक डी० ए० वी० स्कूलों और कालेजों की स्थापना की तथा महात्मा पार्टी ने अनेक गुरुकुलों और आर्यकन्या-पाठशालाओं की स्थापना की। आजकल भी पंजाव प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के संरक्षण में डी० ए० वी० कालेज मैनेजिंग (कमेटी जालन्धर की ओर से पंजाव और दिल्ली में डी० ए० वी० स्कूलों तथा कालेजों का जाल सा बना हुआ है और पंजाव आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से समस्त पंजाव और दिल्ली में अनेक गुरुकुल तथा आर्य कन्या पाठशालायें चल रहीं हैं। अब प्रतिनिधि सभा ने भी कई स्थानों पर आर्य हाई स्कूल और कालेजों का भी संचालन आरम्भ कर दिया है।

(९) उ०प्र० में भी अयोध्या, डौरली, विरालसर, किरठल आदि में अनेक गुरुकुल स्थापित हुए और अनेक डी०ए०वी० हाई स्कूल तथा अनेक आर्य कन्या पाठशालायेंभी खोली गईं जो सफलता पूर्वक चल रहीं हैं।

(१०) स्वामी दर्शनानन्द जी ने विशुद्ध संस्कृत विद्या के लिए गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर का आरम्भ सन् १९०७ में किया। यह संस्था विशाल रूप में चल रही है। स्वामी जी के अन्य गुरुकुल बदायूँ [illegible] में स्थापित हुए और कार्य कर रहे हैं।

(११) सन् १९१४ में हाथरस से ५ मील [illegible] कन्या गुरुकुल की स्थापना हुई। ५ वर्ष चलकर [illegible] १२ वर्ष बन्द रह कर सन् १९३१ से यह पुनः [illegible] लक्ष्मी देवी के नेतृत्व में अच्छे रूप में चल रहा है।

(१२) १९२३ ई० में एक कन्या गुरुकुल देहरादून में आरंभ हुआ जो सन् १९२७ में देहरादून पहुँच आजकल यह बड़े अच्छे रूप में कार्य कर रहा है।

(१३) बम्बई प्रदेश में आर्य विद्या सभा (रजिस्टर्ड) की ओर से गुरुकुल, विद्यालय तथा कन्या पाठशाला आरम्भ हुईं। शोलापुर में डी० ए० वी० कालेज स्थापित हुआ। कोल्हापुर में राजाराम कालेज द्वारा शिक्षा का प्रसार किया गया।

(१४) कलकत्ता में भी कुछ समय पश्चात् विशाल कन्या पाठशालाओं की स्थापना हुई और आज कल ये सफलतापूर्वक चल रही हैं।

(१५) बड़ौदा में मास्टर आत्माराम जी के उद्योग से कन्यामहाविद्यालय का प्रारम्भ हुआ जो आजकल एक विशाल कन्यागुरुकुल के रूप में चल रहा है।

(१६) राजस्थान में डी. ए. वी. कालेज अजमेर के अतिरिक्त गुरुकुल चित्तौड़गढ़ तथा गुलाबदेवी मथुराप्रसाद आर्यकन्या पाठशाला प्रमुख आर्यशिक्षणालय हैं। इस आर्यकन्या पाठशाला की स्थापना तो १८९९ ई० में ही होगई थी। राजस्थान आ. प्र. स. की ओर से सन् १९१० में मथुरा में विरजानन्द साधु आश्रम की स्थापना हुई थी जो १९१४ ई० में अजमेर चला गया।

(१७) विहार में भी आर्यसमाज का शिक्षाकार्य गुरुकुल वैद्यनाथ धाम, गुरुकुल हरपुरजान तथा डी. ए. वी. कालेज सीवान आदि और आर्यकन्या पाठशाला वांकीपुर, पटना आदि संस्थाओं के द्वारा किया गया।

Dr. Vivek Arya Vedic Library Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(१८) गुजरात में गुरुकुल सूपा और सोनगढ़ द्वारा तथा सौराष्ट्र में आर्यकन्या महाविद्यालय पोरबन्दर आदि संस्थाओं द्वारा शिक्षा का प्रसार किया गया।

(१९) हैदराबाद दक्षिण में गुरुकुल घुटकेश्वर तथा केशव स्मारक आर्यविद्यालय तथा उदगीर में श्यामलालस्मारक विद्यालय आदि द्वारा शिक्षाप्रसार का प्रशंसनीय कार्य हो रहा है।

(२०) मध्यप्रदेश में गुरुकुल होशंगाबाद, तुलाराम आर्यकन्या विद्यालय दुर्ग, दयानन्द आर्य विद्यालय लश्कर आदि अनेक संस्थओं द्वारा शिक्षाप्रसार किया गया।

(२१) भारत से बाहर भी पूर्वी अफ्रीका, दक्षिणी अफ्रीका, मारीशस, फीजी आदि में वहां की आर्यसमाजों और आ० प्र० सभा द्वारा अनेक विद्यालया की स्थापना की गई और आजकल भी उनके द्वरा वहाँ पर शिक्षा प्रसार कार्य सम्पन्न हो रहा है।

सार्वदेशिक विद्यार्थी सभा कार्य निर्माण

मथुरा में महर्षि जन्म शताब्दी पर सन् १९२५ में सार्वदेशिक विद्यार्थी सभा के निर्माण का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ जिसका उद्देश्य समस्त आर्य शिक्षासंस्थाओं में पारस्परिक सहयोग, समानता लाना और आवश्यक सुधार करना तथा आर्य विश्वविद्यालय की स्थापना करना है।

कई बार के प्रयत्नों के पश्चात् सार्वदेशिक सभा का कार्य सन् १९५६ से नियमित रूप से हो रहा है। इस समय डी. ए. वी. कालेज मैनेजिंग कमेटी पंजाब उ० प्र० को छोड़ कर शेष समस्त गुरुकुलों तथा आर्यशिक्षा संस्थाओं और उनकी संचालिका सभाओं के प्रतिनिधि इसके सदस्य हैं। आशा है जिन संस्थाओं ने प्रतिनिधि सदस्य नहीं भेजे हैं वे भी शीघ्र सहयोग प्रदान करेंगी जिससे संगठन दृढ़ हो सके और महर्षि का शिक्षा का आदर्श पूर्ण हो सके।

सभी की ओर से आर्य सिद्धान्त विषयक विशारद, भूषण रत्न परीक्षा यें तथा महर्षि दयानन्द पाठ विधि की परीक्षाएँ संचालित की जारही हैं। गुरुकुलीय विश्वविद्यालय के संगठन के लिये तथा गुरुकुलीय शिक्षा परिषद् के निर्माणार्थ उपसमितियां कार्य कर रही हैं।

हमारा कर्त्तव्य

स्वतन्त्र भारत में आर्यसमाज का कर्त्तव्य है कि वह संगठित होकर महर्षि शिक्षा सिद्धान्तों के अनुसार अपनी आर्य शिक्षा संस्थाओं का संचालन करे। साथ ही देश की सरकारी तथा अन्य शिक्षा संस्थाओं को भी अपने आन्दोलन द्वारा सिद्धान्तों पर चलने के लिये बाध्य करे। देश की शिक्षा समस्या का समाधान ही आज सबसे बड़ी समस्या है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

नया समाज

[श्री गणेश लाल शर्मा 'प्राणेश' एम. ए. साहित्यरत्न]

नये समाज के लिये नया विधान चाहिये।
नवीन तीर के लिए नई कमान चाहिये॥

नवीन पंथ पर चलो नवीन धारणा लिए।
नवीन पंथ पर चलो नवीन प्रेरणा लिए॥
नवीन पंथ पर चलो नवीन एषणा लिए।
नवीन पंथ पर चलो नई गवेषणा लिए॥
नये पंथी सुवीर को नवीन यान चाहिए।

नये समाज के लिए नया सुधार साथ हो।
नये समाज के लिए नया विचार साथ हो॥
नये समाज के लिए नया प्रकार साथ हो।
नये समाज के लिए नया सिंगार साथ हो॥
नवीन तर्क के लिए नये प्रमाण चाहिए।

नये प्रवाह के लिए नवीन पंथ को गढ़ो।
नये प्रवाह के लिए नवीन पंख पर चढ़ो॥
नये प्रवाह के लिए अनन्त वेग से बढ़ो।
नये प्रवाह के लिए सभी दिगंत से लड़ो॥
नये बिहंग-भाव को नई उड़ान चाहिए।

नवीन पंथ के लिए नया प्रवास साथ हो।
नवीन पंथ के लिए नया हुलास साथा हो॥
नवीन पंथ के लिए नया प्रकाश साथ हो।
नवीन पंथ के लिए नया विकास साथ हो॥
नवीन बीन के लिए नवीन गान चाहिए।

नये चकोर वृंद को मिले नवीन चांदनी।
नये विभोर छंद को मिले नवीन रागिनी॥
नवीन पूर्ण चन्द्र को मिले पयोधि वीचियां।
नवीन स्वाति बूँद को मिलें विमुक्त सीपियां॥
नई वधू-विभा उसे नया विहान चाहिए।

नये समाज का उदय उसे नवीन मान दो।
नवीन भाव का उदय उसे नवीन गान दो॥
नवीन राष्ट्र का उदय उसे नवीन प्राण दो।
नवीन शौर्य का उदय उसे नई कृपाण दो॥
नवीन वेदिका-बलि, नवीन दान चाहिए

CC-0. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्यमित्र के संस्थापक एवं प्रथम सम्पादक--

आदर्श आर्य नेता महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज

आर्यसमाज की सर्वांङ्गीण उन्नति-प्रगति के लिए १८९८ में मुरादाबाद से आपने आर्य मित्र सम्पादन आरम्भ किया। आज के हर्षोत्सव समय में मित्र-परिवार अपने संस्थापक के प्रति हार्दिक श्रद्धाञ्जलि अर्पित करता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अमेरिका में आध्यात्मिक वातावरण

[श्री प्रेमसागर वर्मा]

भौतिक सौन्दर्य और अपने कलात्मक वैभव के प्रख्यात हौलीबुड नगर के मध्य स्थित एक भोजनालय के प्रवेशद्वार पर आते ही मेरे आश्चर्य की सीमा न रही। मैं नहीं सोच सकता था वहां कि भारतीय वातावरण होगा। उस भोजनालय में सर्वप्रथम जिस महिला को मैंने देखा। वह भारतीय वेश में थी पर उसे देख मैं आश्चर्य में पड़गया अमेरिकन होते हुए भी भारतीयता से उसे इतना प्रेम होगा कि नख से शिख तक अपने को भारतीयता में रंग डाले। महाश्वेता गौर वर्ण होते हुए भी उसकी मुखाकृति से भारतीयता ही प्रस्फुटित होती हुई दीख पड़ती थी। फिर भी उसका विशुद्ध अमेरिकी उच्चारण भ्रम में डाल देता था। पर जिस भारतीय विधि से उस देवी ने केश विन्यास किया हुआ था सुन्दर साड़ी को अपने शरीर पर जिसे भारतीयढंग से सजाया हुआ था वह उसके पूर्ण भारतीय होने का दर्शक को प्रमाण प्रस्तुत करने में सफल हो जाता था उसकी कोहनी के ऊपर शोभित पीतवर्ण बाजूबन्द रहे सहे सन्देह को भी मिटा देते थे। तभी तो भोजनालय के द्वार पर प्रवेश करते ही सहसा मैं उससे यह प्रश्न कर बैठा—उत्तर प्रदेश किस प्रदेश की निवासिनी हैं आप उसने सविनय कहा मुझे खेद है मैं भारतीय नहीं अमरीका वासिनी हूं थोड़ी ही दूर भोजन कक्ष में अमेरिकी पुरुषों तथा महिलाओं को भोजन परोसने मे व्यस्त तीन अन्य गोरांग महिलाओं कोभी भारतीय वेषभूषा में ही मैंने देखा। आश्चर्य तो हुआ। साहस न हुआ कि उनसे भी ऊपर जैसा ही कुछ प्रश्न किया जाय। मैंने उक्त अमेरिकी महिला से पुनः प्रश्न किया, क्या यहां पर निरामिष भोजन भी मिलता है? हां इस होटल में निरामिष भोजन ही उपलब्ध होता है। उत्तर मिला। और वह भी भारतीय ढंग से बना हुआ। अपने उत्तर का खुलासा करते हुए उस देवी ने कहा। मेरे लिये यह दूसरा आश्चर्य था मैं नहीं सोच सकता था कि हौलीवुड के मध्य किसी भी भोजनालय में प्रथम तो निरामिष पुनः भारतीय ढंग से तैयार किया भोजन भी प्राप्त हो सकेगा।

योग और वेदान्त की निष्ठा—

अभी मैं वार्तालाप में ही व्यस्त था कि अकस्मात मेरी दृष्टि दायें हाथ पर टंगे एक चित्र पर जापड़ी। चौड़ा मस्तक, सुन्दर काले और लम्बे केश कंधों से नीचे तक शोभित। सौम्यता का मुख पर वास मानो शशि स्वयं ही उस चित्र में प्रकट हुआ हो। टकटकी लगाकर देखने पर तेज की किरण भी उसी चेहरे के मध्य से उद्भूत होती हुई दृष्टिगोचर हो रही थी। इतना चमत्कार पूर्ण था वह सम्पूर्ण चित्र। मैंने भारत में "एक योगी की आत्म कथा" नामक रहस्यपूर्ण पुस्तक का अध्ययन किया था। ठीक वैसा ही चित्र उसके आवरण पृष्ठ पर था। तुरन्त ध्यान आया कि यह चित्र तो परम हंस योगानन्दजी का है। उधर भोजनालय के काउन्टर के पीछे की दीवार पर भी आकृष्ट का रहा था। दूसरा भारतीय चित्र—परम्परागत भारतीय मुद्रा में। तत्पश्चात् भोजनालय में जिधर भी दृष्टि गई भारतीय वातावरण ही दिखाई दिया।

समीप को मेज पर पातञ्जलि के योग-सूत्र का अंग्रेजी अनुवाद अपनी अपूर्व आभा से सम्पूर्ण कक्ष को आलोकित कर रहा था। उधर योगानन्द जी के ग्रन्थ हौलीवुड के इस भौतिक वातावरण में अध्यात्मवाद का अमर संदेश सुनाते हुए दिखाई

Dr. Vivek Arya Vedic Library

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दे रहे थे। एक दर्जन से भी अधिक भारतीय दर्शन तथा तत्वज्ञान संबन्धी पुस्तकें सहसा दर्शकों को अपनी ओर आकर्षित कर रहीं थीं "योग और स्वास्थ्य" नामक पुस्तक में रेस्टोरां के अनुरूप ही निरामिष भोजन का प्रबल समर्थन था। उस ग्रन्थ के मध्य चमकती हुई "एक योगी की आत्मकथा" पर भी मेरी दृष्टि कुछ ही क्षणों अन्ततोगत्वा जापड़ी। उस समय तक बहन लैल्ला भी मेरे पास आ पहुँची थीं। मुझे भारतीय जानकर मेरे में विशेष रुचि लेने लगीं।

'नमस्कार'। यह जानकर कि आप उसी भारत के निवासी हैं जहां पर हमारे गुरुजी ने जन्म लिया था, हमें बड़ी प्रसन्नता है।

बहन लैल्ला के अभिवादन का समुचित उत्तर तो मैंने दिया, पर बहन को देखकर मेरे हृदय को जिस हर्ष का अनुभव हुआ उसे व्यक्त करते हुए मैंने निवेदन भी कर डाला।

"एक भारतीय योगी में आपकी प्रगाढ़ श्रद्धा और निष्ठा को देखकर मुझे अपूर्व हर्ष हुआ है। आपने अपने हृदय और मस्तिष्क को ही भारतीय नहीं बनाया अपितु आपका बाह्य भी भारतीय ही हो गया है। भारतीय संस्कृति के प्रति आपका यह अटूट प्रेम हम भारतीयों के लिये भी एक शिक्षा का विषय है।

उत्तर समाप्त करते ही मैंने मेज पर रखी "एक योगी की आत्मकथा को ओर संकेत करते हुए कहा– "मैंने इस पुस्तक को पढ़ा है। यह अद्भुत पुस्तक अद्भुत घटनाओं से भरी हुई है, जो आधुनिक विज्ञान और वैज्ञानिकों के लिये एक पहेली है। तो यह है कि ये भौतिक विज्ञान के लिये एक चुनौती है।" मैंने उत्तर की व्याख्या करते हुए आगे कहा।

अमेरिकी निष्ठा की गहनता

जब पुस्तक के सम्बन्ध में मैंने उपर्युक्त प्रश्नात्मक शब्द कहे तब वह अमेरिकी महिला गद्गद् होउठी। हां, आप ठीक कहते हैं। हमारे गुरुजी तथा उनके भी परम पूज्यनीय गुरुजी बड़े ही पहुंचे हुए दिव्य शक्ति वाले महात्मा थे। वर्तमान विज्ञान के सम्भ्रम में डालने वाले चमत्कारों को करने की उनमें अद्भुत शक्ति निहित थी" भारत की उस महान् आत्मा, जिसको श्रद्धापूर्वक वे मास्टर नाम से संबोधन करती थीं, के प्रति अपार निष्ठा प्रदर्शित करते हुए, अमेरिकी महिला ने मेरे उत्तर की पुष्टि की। मैं एकबार पुनः स्तब्ध रह गया, अमेरिकी महिलाओं की भारतीत संस्कृति और दर्शन में अपार निष्ठा को देखकर। कुछ क्षणों के लिये मुझे ऐसा अनुभव हुआ, मानों मैं हौलीवुड में नहीं भारतीय वातावरण में था। इतना भूल गया मैं पास में बैठे, भोजन करने में व्यस्त अमेरिकी पुरुषों को भी। भला, सनसैट हौलीवुड का मुझे क्या ध्यान आता। भारतीय संस्कृति में विदेशी निष्ठा का सम्मोहन मन्त्र इतना अचूक था।

मुझे फिर ध्यान आया मैं कहां था, जब बहन लैल्ला ने वह रहस्य भी प्रकट कर दिया। "साथ वाले आत्मचिन्तन मण्डल (सैल्फरियलाइजेशन फैलो शिप) से सम्बद्ध मन्दिर की स्थापना स्वयं योगानन्द जी ने की थी और यह भोजनालय भी उसीसे सम्बद्ध है। यहां वेदान्त सम्बन्धी प्रवचन तो होते ही हैं" साथ में यौगिक शिक्षा भी दी जाती है।

"और यह देखिये" स्वामी जी के दिव्य उपदेश के अमेरिका में प्रचार के लिये आत्मचिन्तन मण्डल संस्था अनेक वर्षों से यह पत्रिका प्रकाशित कर रही हैं"। "सैल्फ रियलाइजेशन" पत्रिका की एक प्रति मेरे हाथों में देते हुए श्रद्धा से उस देवी ने दिव्य उपदेशों की प्रसार व्यवस्था पर प्रकाश डाला।

अमेरिका का योगी

पत्रिका का यह अंक एक विशेषांक के रूप में प्रकाशित किया गया था, आवरण पृष्ठ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पर श्री जनकानन्दजी का चित्र था। यह जनकानन्द पेट्रोलियम उगलने वाली धरती 'टैक्तास के निवासी थे, और उनका अमेरिकी नाम था "श्री जेम्स जे, लिन"।' अनेक अमेरिकीयों के समान ही अमेरिका के उन्मुक्त वातावरण में जहाँ मनुष्य के विकास और अभ्युदय के साधन सहज हैं। व्यक्ति के अध्यवसायी होने पर वह एक सामान्य व्यक्ति से करोड़पति बनगये। समृद्धि से समन्वित इस अमेरिकी की परमहंस योगानन्दजी से १९३२ में भेंट हुई थी योगानन्दजी के दिव्य व्यक्तित्व ने लिन के जीवन प्रवाह को ही बदल दिया था। उन्होने आत्मवाद के प्रति अपने जीवन को अर्पण कर दिया, और गुरु योगानन्दजी से दीक्षा ग्रहण कर अध्यात्म विकास रत रहने लगे। उनकी इस अद्भुत निष्ठा और लगन का फल यह हुआ कि उनका अन्तर और वाह्य सभी कुछ भारतीय बन गया। समाधि की अवस्था में उनका ओजस्वी नग्न शरीर उन्हें पूर्ण भारतीय बना देता था।

भारत अमेरिकी मैत्री विश्व कल्याण के हित में

उपर्युक्त पत्रिका के एक पृष्ठ पर मुझे परमहंस जनकानन्द (लिन) के ये शब्द अंकित दिखाई पड़े। "मैं भारत का एक ऐसी पुण्य भूमि के रूप में आदर करता हूँ–जहां के महात्माओं और ऋषियों ने एक उत्कृष्टतम विज्ञान को जन्म दिया, वह विज्ञान है योग। जिसकेद्वारा मनुष्य आत्मान्वेषण के दिव्य पथ पर अग्रसरहो सकता है। हमें उस जनसमुदाय के प्रति कितना कृतज्ञ होना चाहिये, जिसके महा पुरुषों ने शताब्दियों तक मानव में निहित अपार दैवी शक्ति की खोज के निमित्त अपने जीवन का बलिदान कर दिया था, तथा अभीष्ट की प्राप्ति के हेतु सर्वस्व न्यौछावर करने में आनन्द की अनुभूति की। अमेरिका भौतिक क्षेत्र में बहुत आगे बढ़ चुका है। भारत के पास अध्यात्मबाद की अमूल्य सम्पत्ति है यदि कदाचित दोनों ही एक सूत्र में बँध जायें, तो वे पारस्परिक सहयोग द्वारा एक आदर्श विश्व संस्कृति की सृष्टि करने में समर्थ हो सकते है, ये सार गभित शब्द गाम्भीर्य से परिपूर्ण अन्तस्तल में भी हलचल मचा देने वाले थे। अमेरिका के अभूतपूर्व अभ्युदय का दिग्दर्शन मैं कर ही रहा था, और भारतीय अध्यात्मवाद के अनिर्वचनीय चमत्कारों की कथा भी मैंने कुछ पढ़ रखी थी। मुझ पर तो क्षुधा देवी का अब पूर्ण प्रकोप हो रहा था। मुझ में न तो शक्ति रह गई थी और न साहस ही उस अत्यन्त रोचक वार्तालाप को आगे बढ़ाने का। मैंने विषय बदलते हुए बहन लैल्ला से निवेदन किया, ताकि मैं वहाँ बैठ कर भोजन कर सकूँ। वह तुरन्त दूसरे कक्ष में पड़ी एक मेज के समीप ले गई। मैं कुर्सी पर बैठ गया और भोजन सूची पर निगाह दौड़ाने लगा, किन्तु पुनः एक बार मेरी दृष्टि उस भवन में चारों ओर दौड़ गई। देखा वहाँ की प्रत्येक वस्तु भारतीयता का पुट लिये हुए थी और प्रति क्षण हौलीवुड में स्थित उस निरामिष भोजनालय में आने वाले ग्राहकों को आध्यात्मिक सन्देश—सुना रही थी अदृश्य रूप से।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जियो और को भी जीने दो

[श्री पं० प्रकाशचन्द्र कविरत्न]

स्वार्थमयी भौतिकता का इस युग में चरम विकास हुआ है।
परम पावनी आध्यात्मिकता का तो भीषण ह्रास हुआ है॥
जीवन का उद्देश्य सभी का केवल भोग विलास हुआ है।
निबल, सुजन ही आज सबल शोषक नृशंस का ग्रास हुआ है॥
यों तो बिजली के प्रकाश से नगर हरेक जगमगाया है।
किन्तु आज हृदयों में सबके गहरा अन्धकार छाया है॥
माना यह, विज्ञान विनिर्मित तुमने अद्भुत यन्त्र बनाये।
चांद सितारों तक प्राणी तुमने राकेट द्वारा पहुँचाये॥
माना यह मतिमान, निरङ्कुश शासक धन-कुबेर कहलाये।
किन्तु खेद है तुम मानव को शान्ति प्रदान नहीं कर पाये॥
जल में और व्योम मण्डल में तो चलना तुमने सिखलाया।
पर धरती के मानव को धरती पर चलना नहीं सिखाया॥
मुख से तो ये सभी राष्ट्र रट शान्ति शान्ति की लगा रहे हैं।
भीतर-भीतर निज प्रभुत्वहित साज समर के सजा रहे हैं॥
अणु, उदजन से बम प्रलयङ्कर नित्य निरन्तर बनारहे हैं।
दानव बनकर मानव ही मानव शोणित से नहा रहे हैं॥
वातावरण विषाक्त विश्व का दिन दिन होता ही जायेगा।
शान्ति व्यवस्था ये केवल भौतिक विज्ञान न कर पायेगा॥
हाँ विज्ञान, आध्यात्मिकता के दोनों ही जब पंख जुड़ेंगे।
शान्ति-गगन में मानव-पक्षी तब निश्चय उन्मुक्त उड़ेंगे॥
सुन्दर सुमन समान भले ही तुम हर्षातिरेक से फूलो।
सुख वैभव के झूले में तुम हां जितना जी चाहे झूलो॥
चढ़कर वायुविमान भले ही चांद सितारों को भी छूलो।
पर मानवता, और विश्वपति परमेश्वर को कभी न भूलो॥
मानवता है यही किसी के कांटा चुभे और तुम तड़पो।
भोगो अपने श्रम का ही फल कभी पराया धन मत हड़पो॥
साथी बिना स्वर्ग का सुख भी भूप युधिष्ठिर सम ठुकराओ।
है सुन्दर सन्देश वेद का यह 'सब बांट बांट कर खाओ'।
शांति-सुधा का पावन प्याला पियो और को भी पीने दो॥
जियो और को भी जीने दो॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

संन्यासी

[श्री नाथ शरण 'कसक']

तूने दिशि दिशि आज जलादी
महा क्रांति की ज्वाला,
राख उड़ी तपते अम्बर में
हुआ क्षितिज भी काला।
प्रलय काल की अँधियारी थी
अर्ध निशा की बेला,
महानाश का दिङ्मण्डल में
लगा हुआ था मेला।

वज्र सदृश सी पराधीनता
भारत की छाती पर
वक्र दृष्टि रहती थी निशदिन
चिर संचित थाती पर।
सत्तावन की आग बुझाकर
मौन खड़ी थी झाँसी,
अन्तर दहलाने वाली—
अगणित वीरों की फाँसी।

मत मतांतरों में डूबी थी
सर्व धर्म की वाणी,
विश्व समझता था वेदों को
कोरी एक कहानी।
टूट रहे यज्ञोपवीत थे
भारत के घर घर में
विधवाओं की आह गूँजती,
महलों में, छप्पर में।

राम कृष्ण को ईसा को—
फिर हजरत पैगम्बर को,
पागल मानव पूज रहा था
ईंट और पत्थर को।
दीप जल रहे थे कब्रों पर—
भूतों के गाँवों में,
प्रेतों का नर्तन होता था
बरगद की छाँहों में।

मुक्ति-मार्ग के बने प्रवंचक
पण्डे और पुजारी,
लूट रहे भोली जनता को
बने विकट व्यापारी।
काशी, जगन्नाथ, रामेश्र,
मक्का और मदीना,
जिसकी झूठी गाथा गाते
नभ को हुआ पसीना।
बिक जाता था धर्म वहाँ पर
सवा पाँच आने में,
धर्म कर्म का ढोंग रह गया
चौके में खाने में।
कहीं नारियों अबलाओं की
चिता धधकती जाती,
पर वर्षा विधवा जीवन पर
कहीं अश्रु बरसाती।
लक्ष लक्ष हिन्दू बनते थे
मुस्लिम और ईसाई,
दूर दूर तक तम ही तम था
देता नहीं दिखाई।
प्रातनंभ में फट पड़ी—
तब उषा काल की लाली,
खण्डहरों में कूक उठी
सहसा कोकिल मतवाली।

दिनकर के खर किरण जाल सा
चमक उठा उठा वैरागी
सर सरिता में नील सिंधु में
धधक उठी फिर आगी
नगपति की चोटी पर चढ़कर
फिर उसने ललकारा,
जगद्गुरु है और रहेगा
भारत वर्ष हमारा।

Dr. Vivek Arya Vedic Library

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

रवि के तरुण ताप सा उसका
आनन चमक रहा था।
तप्त स्वर्ण सा कुन्दन सा
वक्षःस्थल दमक रहा था।
यौवन के खिलते बसंत को
उसने ठोकर मारी।
कुसुमायुध सा पोषित होकर
ऋषि पद का अधिकारी।

भरी सभा में गरज उठा जब,
वह स्वतन्त्र संन्यासी,
मठ, मन्दिर गुरुद्वारे काँपे—
दहल उठी थी काशी।
भगे भूत भैरवी भवानी
अपनी जान बचाकर
ढोंग कहाँ तक चल सकता है
जनता को बहकाकर।

पीठ दिखादी पादरियों ने
काँप उठे मौलाना,
अब न चलेगा हरे भरे,
उपवन में आग लगाना।
'डार्विन' के पोतों से कहदो
आज उठालें डेरा,
रवि के विकट कोप के आगे
टिकता नहीं अँधेरा।

त्यागवाद का भोगवाद से
होता मेल नहीं है,
परमेश्वर का धरती से
मिट जाना खेल नहीं है।

ऋषियों के सपने पलते थे
उसकी उन आँखों में,
उठा ओ३म् का झंडा कर में
कूद पड़ा—लाखों में।
वेदों की दुन्दुभी गुंजादी
फिर उसने जनमन में,
स्वाहा-स्वाहा की ध्वनि निकली
भारत के कण कण में।
तुहिना च्छादित शैल शिखर पर
वह चढ़ गया अकेला
विपदाओं के खर प्रहार को
उसने हंस कर झेला।
नग्न खड्ग विद्युत् सा चमका
पर वह बना अटल था
अमर आत्मा कहकर वह तो
कृष्ण सदृश निश्चल था।

वह कणाद खोगया अचानक
पीकर विष का प्याला,
शीश चढ़ाकर पूरी कर दी
बलिदानों की माला।
ऋषिवर ने भटके मानव को
नया मार्ग दिखलाया
कर्मयोग का अमृतमय
वैदिक संदेश सुनाया।
वैदिक संस्कृति की रक्षा में
जो बन गया प्रवासी,
कहाँ कहां पर छिपा हुआ है
वह विराट संन्यासी॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

एकांकी

गुरु-दक्षिणा

[श्री शर्मनलाल एम० ए०]

(गुरू विरजानन्द की पाठशाला गुरु विरजानन्द तथा दो शिष्य बैठे है ।)

विरजानन्द—नैन सुख । दंडी दयानन्द कहाँ है ?

नैन सुख—अभी आते ही होंगे महाराज ! वे आपको गुरु दक्षिणा भेट करने के लिए चिन्तित थे संभवतः उसी के प्रयत्न में लगे होंगे ।

विरजा—दयादन्द, गुरु दक्षिणा और मेरे लिए तुम लोग कुछ समझे ही नहीं ।

(दयानन्द का प्रवेश हाथों में लौंग का थाल है । थाल आगे रखकर चरणों में प्रणाम करते हैं)

विरजा—कौन दयानंद ! (सिर पर हाथ फेरने लगते हैं)

दया—हाँ गुरुदेव मैं ही हूँ (धीरे से थाल आगे सरकाते हैं)

विरजा—यह क्या है बेटा ।

दया—कुछ लज्जित से होते हुए) कुछ नहीं गुरुदेव कुछ नहीं । ऐसे ही कुछ लवङ्ग.....

विरजा—अच्छा समझा तुम गुरु-दक्षिणा में लवङ्ग लाये हो । तुम जानते थे कि लवङ्ग मुझे बहुत प्रिय हैं तथा मैं अपने अन्य शिष्यों से इसकी भेट लिया करता हूँ । पर क्या तुम्हें विश्वास है बेटा कि यही मेरी सर्वप्रिय वस्तु है । मैं तुमसे यही चाहता था ?

दया—(चरणों को छूते हुए) गुरुदेव मैं संन्यासी हूँ, एक दीन हीन असहाय व्यक्ति के समान मेरी जीवन नौका जल की लहरों में बहने वाले बेग के समान बिना पतवार के डगमगा रही थी । किसी भी क्षण डूब सकती थी । आपके रूप में मैंने भव्य प्रकाशित तट के दर्शन किये जो कुछ दिया आपने ही दिया मैं तो याचक ही बना रहा । मेरे तो निवास और भोजन की व्यवस्था भी आपकी कृपा से हुई । मैं आपको क्या दे सकता हूँ ।

विरजा—बेटा ! अगर दे सकता है तो तू ही दे सकता है । अगर तू ही न देगा तो और कौन देगा

दया—गुरुदेव ! अगर मेरे पास कोई ऐसी वस्तु है या मुझे प्राप्त हो सकती है तो इस तुच्छ जीवन का दान देकर भी मैं उसे आपके चरणों में भेट करने का प्रयत्न करूँगा ।

विरजा—बस बस यही तो बेटा ! अच्छा यह बताओ मैंने तुम्हें क्या पढ़ाया है ।

दया—गुरुदेव ! आपने मुझे क्या नहीं पढ़ाया । यहाँ आने से पूर्व मेरे पास था ही क्या ? एक अतृप्त अभिलाषा, सत्य के शोध की एक ऐसी उत्कट प्यास जो कहीं न बुझ सकी । गिरिराज की सर्वोच्च बर्फीली चोटियाँ जाह्नवी की शीतल लहरें भी जिसे शांत न कर सकीं, मेरी वह पिपासा तो आपके मुख से प्रवाहित होने वाली ज्ञान-निर्झरिणी से शान्त हुई । और मैं क्या बताऊँ ?

बिरजा—फिर भी ।

दया—महाराज मैंने आपके चरणों में बैठकर पाणिनि सूत्रों का अध्ययन किया । अष्टाध्यायी के पश्चात महाभाष्य पढ़ा । दर्शन शास्त्र, निघंटु

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

निरुक्त, आदि का भी अध्ययन किया।

विरजा—बस यही कुछ या कुछ और भी।

दया—महाराज। आपने मुझे क्या नहीं पढ़ाया पाठशाला के समय के अतिरिक्त भी मुझे आपके चरणों में बैठकर वार्तालाप करने का सौभाग्य मिलता था उस समय मुझे आपने इतिहास और भारतीय संस्कृति का ज्ञान कराया।

विरजा—बेटा। पाँच वर्ष की अवस्था में ही मैं अंधा हो गया था। किसी वस्तु का मैंने प्रत्यक्षरूप नहीं देखा रूप और रंग की दुनिया मुझ से बहुत दूर है। एक अंधे के लिए जीवन में क्या आकर्षण हो सकता है? द्वार द्वार पर ठोकरें खाना एक एक धक्के से गिरना उसके जीवन की कहानी होती है फिर भी एक अभिलाषा-केवल एक अभिलाषा को लेकर मैं देश भर में घूमा और इसीलिए योगिराज कृष्ण की नगरी मथुरा में पाठशाला लगा कर बैठा हूँ। मुझे आशा थी कि एक दिन कोई..... पर खैर.....

दया—(चरण पकड़ते हुए) बोलिये गुरुदेव बोलिये रुक क्यों गए?

विरजा—क्या कहूँ बेटा? तुम जानते हो कि मेरे कोई पुत्र नहीं। लेकिन शिष्य का स्थान पुत्र से बढ़कर होता है। गुरू अपनी अभिलाषाओं के बीज को शिष्य में पल्लवित और पुष्पित होते देखता है। घोर तमिस्रा में जब सारे प्राणी सोते हैं तब मैं घूमते-घूमते ही रात्रि बिता देता हूँ। जब संसार के प्राणी हँसते हैं मेरी आखें आँसुओं की धारा बहाती हैं। इस अस्थि-पंजर में भी जब आवेश आता है तो इन सूखी मुट्ठियों से दीवाल कूटने लगता है।

दया—क्यों गुरुदेव?

विरजा—इसलिए बेटा कि तुमने मेरे अन्तर के पंडित रूप को तो देखा है लेकिन इस देश और समाज की दशा पर बिलखने वाले निराश हृदय को नहीं देखा। उठो एक बार मेरे साथ इस विश्व गुरु भारत-समाज के कुछ चित्र देखो दयानन्द क्या तुमने इस देश में बसने वाले उन लाखों करोड़ों मानवों की दशा पर विचार किया है जिन्हें हमने जीवन के सारे सुखों से बंचित कर रखा है देखो?

(प्रकाश का बुझना, पर्दा फटना। मंदिर के आंगन में कथा हो रही है। पंडितजी चौकीपार विराजमान हैं नीचे भक्त समूह बैठा है।)

हरे राम! हरे राम! हरे राम! हरे राम!

(कीर्तन का भक्तों द्वारा दुहराना)

पं०—तो महात्मा तुलसी दास ने कहा है।

छं० स्वपच शबर खर यवन जड़, पामर कोल किरात
राम कहत पावन परम होत भुवन विलखात॥

उल्टा नाम जपत जग जाना,
बाल्मीकि भए ब्रह्म समाना।

तो राम नाम की ऐसी महिमा है कि इसके प्रताप से गनिका गीध अजामिल भी तर गए।

(एक अछूत का प्रवेश)

अछूत—महाराज! हम भगवान् का दर्शन करने हमें भी कथा सुनने देउ।

पं०—अरे कौन! तू नीच कैसे घुस आया मन्दिर में किसने घुसने दिया? क्या अन्धेर है? कोई देखता नहीं? मार मार कर बाहर निकालो भगवान् का मंदिर अपवित्र कर दिया निकालो इस नीचको (अछूत की तरफ देखकर) नीच कहीं का।

अछूत—(हाथ जोड़ते हुए) महाराजा सुनोतो।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पं०—बस सुन लिया। इसे निकालो बाहर।

(कुछ लोग भीड़ में से खड़े हो जाते हैं, उसे पीटना आरम्भ कर देते हैं रोने पुकारने की चीख सुनाई पड़ती है (पर्दा गिर जाता है)

विरजा—दयानन्द! अपने ही भाइयों के साथ ऐसा व्यवहार करके क्या हमारा समाज सुरक्षित रह सकेगा? और देखो? जहाँ इस देश में २५ वर्ष की अवस्था तक ब्रह्मचर्य का विधान था वहाँ इसी मथुरा नगरी में ही

(प्रकाश का बुझना पर्दे का फटना एक छोटा बालक और बालिका बर बधू के वेश में देवी पूजन के हेतु जारहे हैं। पीछे स्त्रियों का समूह गाता जारहा है।)

विरजा—दयानन्द बेटा! यह समाज कुछ विचित्र है। इन्हीं की वेदना में मैं दिन रात तड़पता रहता हूँ।

दया—(चरण पकड़ते हुए) गुरुदेव! बताओ मैं क्या करूँ।

विरजा—दयानन्द तुम सब कुछ कर सकते हो। मैंने जिस अग्नि ज्वाला को तुम्हारे अन्दर प्रविष्ट किया है कल वह महा अग्नि बनकर भारत भूमि के भ्रान्त मत और भ्रान्त विश्वास के जंजाल को भस्मी भूत कर डालेगी। तुम मेरी चिर आशाओं के प्रतीक हो दयानन्द तुम ये जानते हो मैं तुमसे क्या चाहता हूँ।

दया—आज्ञा गुरुदेव?

विरजा—सौम्य! मैं तुमसे किसी प्रकार के धन को दक्षिणा नहीं चाहता। मैं तुमसे तुम्हारे जीवन की दक्षिणा चाहता हूँ। तुम प्रतिज्ञा करो कि जितने दिन जीवित रहोगे उतने दिन आर्यावर्त में आर्ष ग्रन्थों की महिमा स्थापित करोगे। अनार्ष ग्रन्थों का नाश करोगे और भारत भूमि में वैदिक धर्म स्थापना के लिए अपने प्राण तक अर्पण कर दोगे।

दयानन्द—गुरुदेव! मैं आपके चरण छूकर प्रतिज्ञा करता हूँ कि आपकी आज्ञा पलने में मैं अपना जीवन लगा दूँगा। वैदिक धर्म का प्रचार ही मेरे जीवन का ध्येय होगा सत्य की खोज ही मेरी साधना होगी। पाखंड और अन्याय का विरोध ही मेरे जीवन का महान धर्म होगा चाहे इसके लिए मुझे प्राणों की बलि देनी पड़े मैं अपने संकल्प से नहीं हटूँगा। मुझे आशीर्वाद दीजिये गुरुदेव? मैं आपका सच्चा सेवक बन सकूँ?

विरजा—बेटा (आँखों से आंसू निकल आते हैं) तुम्हारा मार्ग मंगल मय हो। ईश्वर तुम्हें शक्ति दे।

(दयानन्द को उठाकर हृदय से लगा लेते हैं शिष्यगण दोनों पर पुष्प वर्षा करते हैं, मंच पर प्रकाश केन्द्री भूत होता है)

(पर्दा गिरता है)

(नेपथ्य से)

आज चल पड़ा पथ पर राही,
लेकर गुरु तर भार।
चला अकेला, चला अकेला,
ईश्वर का आधार॥
अंधकार से पूर्ण जगत में,
उसकी ज्योति जगाने।
युग युग तक इतिहास कहेगा,
जिसकी अमर कहानी॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

संस्कृति और शिक्षा

[श्री ईश्वरदयालु आर्य,]

शिक्षा मानव जीवन की अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। मनुष्य संसार में अपनी स्वाभाविक तथा प्राकृतिक विशेषताओं सहित उत्पन्न होता है। बहुत अंशों तक मनुष्य की अनुभूतियों का प्राकृतिक रूप पशु प्रवृतियों से अभिन्न है किन्तु मानव समाज अपने विकसित रूप में पशु समाज से सर्वथा भिन्न दिखाई पड़ता है। इस भिन्नता का बहुत कुछ श्रेय शिक्षा को है। शिक्षा मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्तियों का छनोय तथा समाज में स्वीकृत दिशाओं में मार्गान्तरीकरण करती है। इस दृष्टिसे शिक्षा मनुष्य की पाशविक वृत्तियों को अधिक सुसंस्कृत रूप प्रदान करती है।

लेखक

शिक्षा का एक निश्चित लक्ष्य होना आवश्यक है। हमारे पास स्वाभाविक वृतियों से युक्त बालक है हम उसकी वृत्तियों का उन्नयन करना चाहते हैं। यह उन्नयन किसी आदर्श तक पहुँचने की प्रक्रिया है। अतः जब हम शिक्षा द्वारा पाशविक वृत्तियो के मानवी करण अथवा समाजी करण की बात करते हैं तो हमारे सम्मुख एक निश्चित आदर्श होता है। इसी आदर्श की दिशा में हमारा प्रयाण शिक्षा की प्रक्रिया कहलाता है। जो जिस सीमा तक इस आदर्श को प्राप्त करने में सफल हो जाता है वह उसी सीमा तक शिक्षित कहलाता है अथवा कहलाने का अधिकारी है।

यह आदर्श प्रगति के मार्ग में एक बिन्दु है। शिक्षक और उससे भी पहले सम्पूर्ण समाज इसबिन्दु को निर्धारित करता है। हमारे सम्मुख प्रश्न यह है कि इस आदर्श को निर्धारण किस आधार पर होता है। यह विवेचन इस लिये भी आवश्यक हो जाता है कि मानव की प्रगति का सम्पूर्ण इतिहास इसी आदर्श इसी आदर्श की दिशा में प्रयाण का इतिहास है। यह आदर्श हमें विभिन्न युगों की प्रगति को नापने के लिये एक माप दंड प्रदान करता है। यह समाज को गति प्रदान करता है क्योंकि प्रगति के लक्ष्य को जब तक समाज का प्रत्येक सदस्य स्पष्ट रूप से नहीं देखता तब तक व्यक्ति और समाज में क्रिया की प्रेरणा उत्पन्न नहीं हो सकती। इस विस्तृत दृष्टिकोण से देखने पर शिक्षा सम्पूर्ण सामाजिक गति-विधियों का एक समन्वित नाम है और शिक्षा का आदर्श समाज की गति का स्रोत है।

यहां संस्कृति का भाग आता है। शिक्षा के इस आदर्श का निर्धारण सांस्कृतिक पृष्ठ भूमि पर होता है "संस्कृति शब्द" अत्यन्त व्यापक है। सामान्य अर्थ में संस्कृति समाज का संचित ज्ञान, क्रियाएँ तथा भावनायें हैं। मानव मन ज्ञान, अनुभूति क्रिया तथा प्रातिक्रिया व सामाजिक वातावरण से क्रिया तथा प्रातिक्रिया करता रहता है। यदि समाज से मनुष्य का कोई सम्बन्ध न रह जाय तो यह क्रिया प्रतिक्रिया मानव मन तथा नैसर्गिक वातावरण के बीच में होगी तथा मनुष्य का विकास पशुओं के विकास से कुछ अधिक भिन्न नहीं होगा। यहां पर आहार, निद्रा, भय, मैथुन, मे मनुष्य व पशु की

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

समानता की बात पूर्ण रूप से चरितार्थ होगी। जिसे हम "धर्मो हि तेषां अधिको विशेषः" कह कर मनुष्य और पशु व्यवहार के बीच में एक रेखा खींचने का प्रयत्न करते हैं। वह "धर्म" संस्कृति अथवा समाज की युग युग से संचित ज्ञान, अनुभूति और क्रिया की निधि है। मनुष्य की जो गतिविधियां समाज के संघटन संचालन तथा स्थायित्व में सहायक होती है वे समाज द्वारा स्वीकृत तथा प्रशंसित होती हैं उन्हें उदात्त कहा जाता है। वही समाज की संचित निधि होती है। इसी का नाम संस्कृति है। समाज का प्रत्येक सदस्य इस निधि को अपने पूर्वजों से शिक्षा की प्रक्रिया द्वारा प्राप्त करता है और इस प्रक्रिया द्वारा अपने उत्तराधिकारियों तक पहुँचाता है। इस दृष्टि से शिक्षा संस्कृति की वाहक है। वैदिक धर्म में उपनयन संस्कार के अवसर पर तीन ऋणों को स्मरण कराने का विधान किया गया है। उपनयन संस्कार से शिक्षा-दीक्षा का आरम्भ होता है। इस अवसर पर गुरु छात्र को भावी शिक्षा के लिये स्वीकार करता है। यज्ञोपवीत के तीन सूत्र तीन ऋणों का सदैव स्मरण कराने का महत्वपूर्ण कार्य भी करते हैं। ये सूत्र ब्रह्मचारी को सदैव इस बात की प्रेरणा देते हैं कि उसकी संस्कृति आस्तिक है। ईश्वर के अस्तित्व में उसका विश्वास होना चाहिए तथा इस विश्वास को जीवन में चरितार्थ करके उसे देव ऋण, ऋषि ऋण और पितृ ऋण से उऋण होने का प्रयत्न करना चाहिये।

ये इन तीन ऋणों में वैदिक संस्कृति सन्निहित है। आस्तिकता, वैदिक साहित्य तथा गृहस्थ जीवन वैदिक धर्म के मूल स्तम्भ हैं। इनमें युग युग से संचित उदात्त विचारों का समन्वय है। ये समाज की संचित निधि हैं। शिक्षा के द्वारा इस संचित निधि को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचाना है। शिक्षा की सफलता इसी बात से देखी जा सकती है कि संस्कृति की यह निधि कितने अक्षुण्ण तथा शुद्ध रूप में समाज के व्यवहारों में परिलक्षित हो रही है।

वैदिक शिक्षा का यह लक्ष्य स्पष्ट हो जाने पर उसका स्वरूप निश्चित करना सरल होजाता है। आस्तिकता में दृढ़ विश्वास उत्पन्न किये बिना शिक्षा को सफल नहीं माना जा सकता है। यह स्मरण रखना चाहिये कि आस्तिकता का शाब्दिक प्रदर्शन उसमें विश्वास नहीं माना जासकता। मनुष्य के सम्पूर्ण कार्यों से यह प्रकट होना चाहिये कि वह संसार के उत्पादक एवं नियन्ता को जानता है तथा अन्य मनुष्यों से उसका व्यवहार उसी प्रकार से है जैसे एक पिता के साथ उसके पुत्रों का। इसी में कर्म फल में विश्वास भी सम्मिलित है। कर्म की स्वतन्त्रता तथा फल प्राप्ति की परतन्त्रता का वैदिक सिद्धान्त आस्तिकता के अन्तर्गत आजाता है। मनुष्यों के कर्म यह स्पष्ट भास कराते हैं कि वे कर्मफल में विश्वास करते हैं या नहीं। द्वितीयतः वैदिक शिक्षा का वैदिक साहित्य से घनिष्ट सम्बन्ध है। प्रत्येक छात्र का वैदिक साहित्य से ऐसा परिचय शिक्षा काल में अवश्य हो जाय जिससे उसे अपनी रुचि के अनुसार साहित्य के किसी एक क्षेत्र में विशेष अध्ययन का अवसर प्राप्त हो। तृतीयतः लौकिक जीवन को सुखी व समृद्ध बनाना भी शिक्षा का महत्वपूर्ण कार्य है। शिक्षित व्यक्ति में समाज के सम्बन्धों का विधिवत पालन करने की क्षमता होनी चाहिये। सफल वर्णाश्रम व्यवस्था इस प्रकार की सफल शिक्षा पर ही निर्भर है। इस प्रकार हमने देखा कि शिक्षा का लक्ष्य तथा आधार भूमि संस्कृति निर्धारित करती है। अपनी संस्कृति के स्वरूप के सम्बन्ध में हमें अत्यन्त स्पष्ट हो जाना चाहिये। संस्कृति के इस स्वरूप निर्धारण के पश्चात् हम शिक्षा के संघटन तथा कार्यविधि में आवश्यक परिवर्तन कर सकते हैं जिससे इन लक्ष्यों को प्राप्त करना सम्भव हो जाय।

इस कार्य को करना केवल शिक्षक का उत्तरदायित्व नहीं है सम्पूर्ण समाज पर शिक्षा का दायित्व है। समाज को जीवित रखने के लिये संस्कृति के हस्तान्तरी करण के लिये शिक्षा की प्रक्रिया आवश्यक है। समाज के प्रत्येक सदस्य को संस्कृति के स्वरूप, शिक्षा के स्वरूप तथा उनके पारस्परिक सम्बन्ध पर सदैव विचार करते रहना चाहिये।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आराम हराम है

[श्री विनायक राव विद्यालंकार संसद सदस्य

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेत् शतं समाः
एवं त्वयि नान्यथेऽतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे:

उपर्युक्त वेद मन्त्र का अर्थ पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने तीन शब्दों में इतनी भली प्रकार से रखा है जैसा कि बड़े से बड़े भाष्यकारों ने भी नहीं रखा, वह जितना सुन्दर जितना मार्मिक और जितना सचाई से भरा है उतना ही वैदिक है।

नवयुवकों को उपदेश देते हुए उन्होंने एक स्थान पर कहा था कि भारत के लिए इस समय का सबसे बड़ा नारा "आराम हराम है" का होना चाहिए। तीन ही शब्द हैं, किन्तु ईशावास्योपनिषद् के दूसरे मन्त्र का सार इन तीन शब्दों में भरा पड़ा है, यह मन्त्र भी अपने पहिले चार शब्दों में यही उपदेश देता है कि "कुर्वन्नेवेह कर्माणि" अर्थात् हे मनुष्य तू इस जगत् में कुछ न कुछ करता रह, बेकार और निठल्ला मत बैठ। आज भारत को निठल्लेपन का बड़ा भारी रोग लगा हुआ है। वेद भगवान् उन्हें इस अंधियारी रात से निकाल कर कर्म क्षेत्र के मैदान में आने का आदेश देते हैं। वेद कहता है काम करो, निरन्तर काम करो और आराम को छोड़ दो।

उपर्युक्त वेद मन्त्र का शब्दार्थ यह है कि हे मनुष्य ? 'इह' अर्थात् इस जगत् में "कर्माणि कुर्वन् एव" कर्मों को करते हुए ही 'जिजीविषेः' जीता रह 'एवं त्वयि नान्यथेनोऽस्ति' इसके अतिरिक्त तेरे लिए दूसरा मार्ग नहीं है यदि तू इस प्रकार कर्मों को करते हुए अपना जीवन बिताए तो "न कर्म लिप्यते नरे" अर्थात् तुझपर तेरे कर्मों का लेप नहीं होगा।

यह तो हुआ शब्दार्थ भावार्थ लगाते समय इस मन्त्र के दो प्रकार से अर्थ लगाए जाते हैं, एक शांकर भाष्य के अनुसार और दूसरा उनके अनुयायी जो वेदान्ती नहीं हैं, जो मायावाद को नहीं मानते और जो ज्ञान मार्ग तथा कर्म मार्ग को एक दूसरे से विभिन्न नहीं मानते।

ईशावास्योपनिषद् के प्रथम मन्त्र की व्याख्या करते हुए श्री शंकराचार्य ने इसे केवल ज्ञानमार्ग का प्रतिपादन करने वाला मन्त्र बताया है उन्होंने कहा है कि यह मन्त्र संसार की असारता को सामने रखता है और मनुष्य को उपदेश करता है कि उसका उद्देश्य इस असारता को समझने और उसे आत्मसात् करने में है, अन्त में उनका कहना है कि इस असारता को समझकर संसार को त्याग देना चाहिए तथा संन्यासमार्ग अर्थात् कर्मत्याग का अवलम्बन करना चाहिए, उनका यह अर्थ क्यों युक्ति युक्त नहीं और क्यों मानने के योग्य नहीं यह दूसरा विषय है। अपने पूर्व आशय को सम्मुख रखते हुए श्री शंकराचार्य ने इस मन्त्र के बारे में भी कहा है कि यह मन्त्र केवल कर्मकोण्डियों के लिए है, ज्ञानमार्ग का तरीका बड़ा कठिन है, संन्यासाश्रम दुर्गम है, अल्पमति आदमियों से इस बात की आशा करना कि वे संसार की असारता को समझकर आत्मरत रह सकेंगे, असम्भव है अतः श्री शंकराचार्य के अनुसार वेद भगवान् उन संसारी लोगों के लिए जो ज्ञानमार्ग की उत्तुंग ऊँचाई चढ़ने में असमर्थ हैं स्वर्ग का दूसरा मार्ग बताते हैं कि वे प्रतिदिन यज्ञयागादि कर्म करता रह वर्णाश्रम धर्म का पालन कर जप तप संध्या आदि में अपने मन

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्य समाज के संन्यासी, विद्वान् तथा नेता गण !

श्री स्वामी सर्वदानंद जी

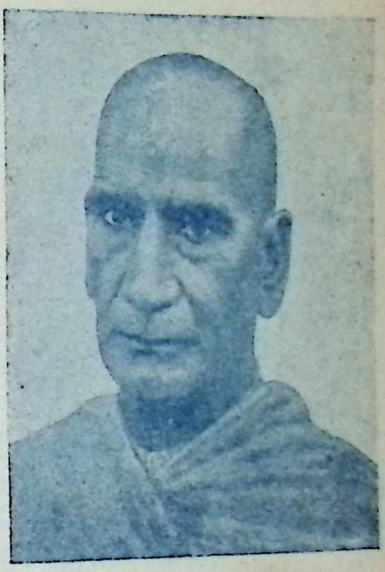

श्री श्रद्धानंद जी

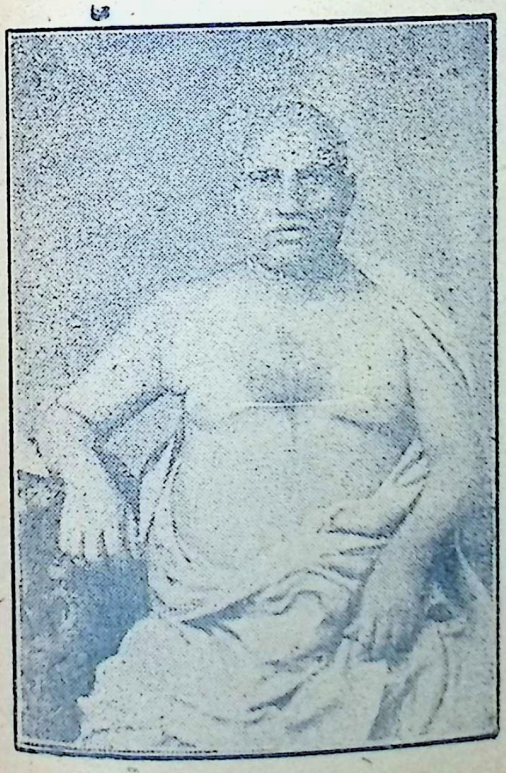

श्री दर्शनानंद जी

श्री विश्वेश्वरानंद जी

श्री शुद्धबोध तीर्थ
(गंगादत्तजी)

श्री नित्यानंदजी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

श्री स्वामी आत्मानन्दजी
महाराज

श्री आनन्द स्वामी जी

श्री स्वामी ध्रुवानन्दजी

श्री स्वामी अभेदानन्दजी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

को लगा दे ऐसी सूरत में भी कर्म का तेरे साथ लेप नहीं लगेगा और तू सीधा मोक्ष को प्राप्त करेगा" अर्थात् उनकी सम्मति में मोक्ष प्राप्ति के लिए ज्ञान-मार्ग और कर्म-मार्ग भिन्न २ व्यक्तियों के लिए दो भिन्न २ मार्ग हैं।

बात बड़ी ही अकल की सुन्दर तथा भली प्रतीत होती है, यों भी हम देखते हैं कि बड़े २ शहरों में मोटर तथा गाड़ियों से जाने वालों के लिए एक-मार्ग रहता है और पैदल चलने वालों के लिए दूसरा। इसी प्रकार उनकी राय में मोक्षप्राप्ति के अर्थ ज्ञानियों के लिए ज्ञानकाण्ड का रायलरोड प्रतिवादित है और इतरों के लिए कर्मकाण्ड का फुटपाथ है।

उदाहरण कितना भी भला दीखता हो और आकर्षक जान पड़ता हो तब भी शंकराचार्य के मतलब को पूरा नहीं करता, शहर में रोयलरोड और फुटपाथ दोनों की दिशा एक ही होती है, दोनों समानान्तर दौड़ते हैं, दोनों वास्तव में भिन्न २ मार्ग न होकर वास्तव में एक ही मार्ग के दो भाग होते हैं, एक एक तरफ और दूसरा दूसरी तरफ नहीं जाता, इसी प्रकार यदि हमें सिमले के पहाड़ पर चढ़ना हो तो विमान का मार्ग अलग रेल का अलग और घोड़े का अलग होता है, परन्तु सबके सब एक ही दिशा में अर्थात् ऊपर की ओर दौड़ते हैं, अतः वे एक दूसरे के पूरक हुआ करते हैं, एक मार्ग समुद्र की तरफ और दूसरा मार्ग पहाड़ की तरफ जाते हुए एक ही स्थान पर नहीं पहुँचा सकते, इसी प्रकार वैदिक सिद्धान्त के अनुसार ज्ञानमार्ग और कर्ममार्ग भिन्न २ मार्ग नहीं हैं किन्तु एक दूसरे के पूरक हैं वैदिक सिद्धान्त के अनुसार यह दोनों मन्त्र मिलकर इस बात को प्रतिपादित करते है कि मनुष्य का प्रत्येक कर्म ज्ञानपूर्व होना चाहिये बिना सोचे समझे किसी को करना उसके लिये अनर्थकारी होता है

हाल में अन्वेक्षकों के सम्मुख एक नई बात आई है जो इस बात की द्योतक है कि श्री शंकराचार्य ने अपने मतलब को साधने के लिए कहाँ तक अनर्थ कर दिया है अन्वेक्षकों को ज्ञात हुआ है कि आचार्य उव्वट के भाष्य में और श्री शंकराचार्य के भाष्य में इस वेद मन्त्र के पाठ में कुछ अन्तर है आचार्य उव्वट क्यों कि शंकराचार्य से पहले हुए हैं अतः हमने उन्हीं के पाठ को सही माना है और श्री शंकराचार्य ने 'जिजीविषेः' के स्थान पर जिजीविशेत्' कर दिया है इसी प्रकार आगे चल कर 'एवं त्वं नान्यथेतो ऽसि' कर डाला है अर्थात श्री शंकराचार्य जी ने विधि वाक्य के स्थान पर प्रेरणा वाक्य को स्थापितकर भगवान वेद जिस बात पर जोर देना चाहते हैं उसी को बहुत कमजोर और नरम बना दिया है वेद का आदेश है कि यह तो मनुष्य का कर्तव्य है कि काम करते हुये वह सौ वर्ष तक जीता रहे इसको प्रेरणा वाक्य में बदलकर शंकराचार्य ने बतलाने का प्रयत्न किया है कि भाई जिन्दगी का गुजारने का सही तरीका तो संसार को छोड़ कर कर्म त्याग करना ही है ताहम यदि तुझ से इस मार्ग का अवलम्बन नहीं होता है और तू संसार में लिप्त रह कर उसका उपभोग करना ही चाहता है तो तुझे चाहिये कि यज्ञयागादि कर्मों का पालन कर"

बाद में वेदान्त के असामान्य प्रभाव के कारण शंकराचार्य का ही पाठ प्रचलित होगया और आम तौर पर उन्हीं अर्थों और उन्हीं भावों को माना जाने लगा जिनको श्री शंकराचार्य जी ने प्रगति दी थी तथापि सही बात यह है कि वैदिक सिद्धान्त के अनुसार यह मन्त्र ज्ञान-मार्ग के अतिरिक्त किसी दूसरे मार्ग की ओर निर्देश करने वाला नहीं है पहिले मन्त्र में बताया गया है कि संसार का निर्माण मनुष्यों के उपभोग के लिये हुआ है किन्तु मनुष्य को चाहिये कि वह त्याग भाव के साथ संसार का उप-

Dr. Vivek Arya Vedic Library

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भोग करें दूसरे मन्त्र में उसी बात को आगे बढ़ाते हुये यह उपदेश दिया गया है कि कर्म करते हुये ही अर्थात् परिश्रम करके पदार्थों की कमाई करके ही संसार का उपभोग किया जाना चाहिये अर्थात् हराम की खाना पाप है और पापी को मोक्ष की सिद्धि किसी सूरत में हो नहीं सकती।

उपर्युक्त बात को एक उदाहरण द्वारा बहुत भली प्रकार समझाया जा सकता है, संसार की वस्तुओं को अपने उपभोग के लिए प्राप्त करने के तीन प्रकार हुआ करते हैं, एक यह कि उस वस्तु को चोरी के जरिये प्राप्त किया जाय दूसरे यह कि वह पदार्थ किसी से याचना करके लिया जाय और तीसरे यह कि उस चीज को स्वयं परिश्रम करके कमाया जाय जब कोई व्यक्ति किसी वस्तु को दूसरे से याचना करके प्राप्त करता है तो प्राप्त करने वाला देने वाले का खुद व खुद ऋणी हो जाता है, उसका ऋण प्रथम व्यक्ति को चुकाना ही पड़ता है, अर्थात् उस पर याचना रूपी कर्म का लेप हो जाता है और इस ऋण से यदि वह इसी जन्म में उऋण नहीं हुआ तो कर्म सिद्धान्त के अनुसार उऋण होने के लिए उसे दूसरा जन्म लेना पड़ता है, यही बात चोरी और चोर बाजारी की है, चोरी या चोर बाजारी द्वारा जो वस्तुएँ प्राप्त की जाती है वह या तो लूट द्वारा ली जाती है अथवा धोखा देकर हासिल की जाती है, उसे कमाई नहीं कहा जा सकता, अतः प्राप्त करने वाला एक प्रकार से अप्रत्यक्ष रूप में (indirectly) दूसरे का देनदार हो ही जाता है, यही बात रिश्वत तथा अन्य प्रकार के भ्रष्टाचार, दगा व धोखा देही से प्राप्त की गई कमाई के बारे में कही जा सकती है, धर्म तथा नीतिशास्त्र के अनुसार इस प्रकार का ऋण भी चुकाना ही होगा, इस के विरुद्ध जब कोई मनुष्य सचाई के साथ अपने परिश्रम द्वारा कमा कर खाता है तो वह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष तौर पर किसी का ऋणी नहीं होता अर्थात् उस पर कर्म का लेप नहीं होता और उ अपने कर्म के कारण बार बार दूसरा जन्म लेन नहीं पड़ता, वह सीधा मोक्ष को प्राप्त करता है "न कर्म लिप्यते नरे" का यही अर्थ है।

सारांश यह कि ईशावस्योपनिषद् का यह मन्त्र मनुष्यों में से उदासीनता आलस्य और प्रमाद जड़ से उखाड़ देने का उपदेश करता है, यह तीन दुर्गुण मनुष्य समाज के सबसे बड़े दुश्मन हैं, और राष्ट्र को रसातल पर पहुँचाने के कारण बन हैं, पहिले पहल बौद्ध धर्म ने और उसके उपरान्त श्री शंकराचार्य के सन्यासमार्ग ने भारत की जनता में संसार के प्रति आत्यन्तिक उदासीनता को बढ़ाव था, इसमें सन्देह नहीं कि श्री शंकराचार्य ने बौ धर्म को भारत से बाहर निकाल दिया परन्तु शोक इस बात का है कि उस का आमूल विरोध करके नहीं अपितु उन्हीं के मूलभूत सिद्धान्तों को अप कर उस पर विजय प्राप्त की थी, इसीलिये अने वैदिक आचार्यों की राय में श्री शंकराचार्य एक प्रच्छन्न बौद्ध कहलाए जाते थे, श्री शंकराच ने श्री विरक्ति की उन्हीं भावनाओं को संसार सामने रखा जिनका भगवान् बुद्ध उपदेश दि करते थे, परिणाम यह हुआ कि बौद्धधर्म के प्रधान तो भारत से बाहर चले गए परन्तु उनक आत्मा भारतीयों में लटकती ही रह गई, मायावा वेदान्त के प्रचार से बौद्ध धर्म का प्रभाव दूर नहीं हुआ भिक्षुओं का स्थान संन्यासियों ने ले लि परन्तु संसार को हेय और त्याज्य समझने के विचा पूर्ववत् बने रहे।

आखिर कई सौ वर्षों के उपरान्त ऋषि दय नन्द ने आचार्य शंकर के सिद्धान्तों के खोखलेपन खुले तौर पर भारत की जनता के सामने र भारत के प्राचीन राजाओं के वैभवशाली इतिह की तरफ़ इशारा करते हुये उन्होंने बताया प्राचीन आर्य महत्वाकांक्षी थे साहसी थे और

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

शील थे। देश देशान्तरों में जाकर उन्होंने अपने मठों व अपने मतों की स्थापना की थी, उन्होंने संसार को हेय और त्याज्य कभी नहीं समझा था, अपितु सांसारिक वस्तुओं का उपभोग करना उन्होंने अपना अधिकार समझा था, बात इतनी है कि यह उपभोग त्याग भाव के साथ होना चाहिये, हमें भी अपने पुरखाओं की न्याई महत्वाकाँक्षी उत्साही और साहसी होना चाहिये और इस बात को समझना चाहिए कि संसार का उपभोग त्याग भाव से किस प्रकार किया जाता है।

त्यागभाव से कर्म करने के सही अर्थ क्या होते हैं यहाँ केवल एक उदाहरण देकर संक्षेप से कुछ

लेखक

स्पष्ट करेंगे। समझिये एक राही आकाश की तरफ आँखे लगाए अपनी गुंगी में चला जा रहा है, रास्ते में एक बड़ा पत्थर पड़ा है जो उसे नजर नहीं आता परिणाम यह होता है वह पत्थर से ठोकर खाकर दुःखी होता है, वह अज्ञानी होने के कारण दुःख का भागी होता है, उसी रास्ते से एक दूसरा राही भी आता है वह जब पत्थर को देखता है तो खुद बाजू हो जाता है और बिना ठोकर खाये आगे निकल जाता है, वह ज्ञानी है परन्तु कायर है, दुनियाँ की कठिनाइयों से मुकाबला करने की शक्ति उसमें नहीं है, वह कठिनाइयों से घबराता हुआ अपना मार्ग निकालता है, तीसरा व्यक्ति अपने मार्ग को नहीं छोड़ता वह एक पैर उस चट्टान पर रख कर फलाँगते हुए उस पार हो जाता है, वह शूर है परन्तु कर्मवीर नहीं, समाज में ऐसे व्यक्ति जो बंधनों की परवाह नहीं करते और कठिनाइयों को कुचलते हुए आगे बढ़ते हैं उनहें सुधारक अथवा क्रान्तिकारी कहा जा सकता है परन्तु वे भी समाज में उत्क्रान्ति लाने वाले नहीं समझे जाते, एक चौथा राही आता है और मार्ग में पत्थर को देख कर सोचता है कि संभव है इधर से कोई अंधा ही गुजर पड़े अथवा कोई व्यक्ति गड़बड़ी में आजाय या रात्रि के समय इधर से किसी को गुजरना पड़े और इनमें से किसी न किसी को पत्थर से ठोकर लग जाय, वह उस पत्थर को वहाँ से उठाकर बाजू फेंक देता है, वह शान्तिमय उत्क्रान्ति का अग्र दूत कर्मयोगी है, वह भी बाजू से जा सकता था अथवा पत्थर को फलाँग कर जा सकता था किन्तु ऐसा न करते हुए उसने अन्य आने जाने वालों के लिए जिनके नाम या धाम भी उसे मालूम नहीं उस मार्ग को साफ करा दिया, त्याग भाव से कर्म करने का सर्वोत्तम उदाहरण इस चौथे राही का है यही वैदिक सभ्यता का मूल मंत्र है।

वैदिक वर्णाश्रम धर्म की प्रथा इसी मूल मन्त्र पर आधारित है, वर्ण और आश्रम मनुष्य समाज की लम्बाई और चौड़ाई कहे जा सकते हैं, किसी को भी लम्बाई और किसी को भी चौड़ाई कहा जा सकता है क्योंकि समचनुष्कोण न कोई लकीर बड़ी होती है और न छोटी, इसमें प्रत्येक मनुष्य का जीवन एक रेखा है और उनकी संख्या दूसरी रेखा है इन दोनों रेखाओं को कर्मों के अनुसार वैदिक धर्म ने चार विभागों में विभक्त किया है, मनुष्य संख्या को उन्होंने ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र इन चार विभागों में विभक्त किया है और इनके कर्तव्य तथा कर्मों को विस्तार के तौर पर स्मृति ग्रंथों में बताया गया है, इसी प्रकार की मनुष्य की आयु को

Dr. Vivek Arya Vedic Libr

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भी चार विभागों में विश्राम किया है, वे हैं ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रत्थ और संन्यास, इस में भी हर एक के कर्म अलग अलग बताये गये है अर्थात् समाज के किसी व्यक्ति को किसी क्षण के लिए भी निठल्ला बैठकर दूसरों की कमाई खाने का मौका बाकी नहीं रखा है, उदाहरणार्थ ब्रह्मचर्य काल में ब्रह्मचारी अपनी कमाई खुद नहीं करता है, परन्तु चूँ कि वह संसार का भोग करता है अतः उसे भी प्रतिकार के रूप में कुछ न कुछ करना ही चाहिए इसीलिये उस के भी कर्तव्य कर्म दर्शाये गये हैं, उसे इस काल में विद्यार्जन करके भविष्य में मनुष्य मात्र की सेवा के लिये भण्डार तैयार करना होता है।

वर्णाश्रम धर्म में एक बड़ी खूबी है कि इस में पेंशनर को कोई स्थान नहीं है, वर्णाश्रम पर आधित भारत की प्राचीन सभ्यता और वर्णाश्रम विहीन वर्तमान सभ्यता में यह एक बड़ा भारी फरक है जिसकी ओर ध्यान दिया जाना अत्यन्त आवश्यक है उस समय पेंशन उसकी पहली सेवाओं का बदला नहीं समझा जाता था किन्तु वानप्रस्थाश्रम में प्रतिष्ठित होकर उसे जो नई सेवायें करनी पड़ती थीं उसका बदला समझा जाता था, इस समय बड़े २ राजनीतिज्ञ, विज्ञान वेत्ता, दार्शनिक तथा न्यायाधिकारी पेंशन लेकर घर में चैन से बैठ जाते हैं बहुत ही कम होते हैं जो कि स्वतः को सामाजिक सेवा के काम में लगा देते हैं, प्राचीन वर्णव्यवस्था में शिक्षा विभाग इस प्रकार का बनाया गया था कि अनिवार्य रूप से प्रत्येक पेंशनर को शिक्षण संस्थाओं में जाकर विद्यार्थियों के चारित्रिक तथा बौद्धिक विकास में भाग लेना पड़ता था, अर्थात् वहाँ पेशनर को कोई स्थान नहीं था। आजकल पेंशनर को बड़ा महत्व दिया जाता है कि वह घर बैठे खा सकता है, उन दिनों उन्हें यह महत्व नहीं था जिन्दगी के अन्तिम क्षण तक प्रत्येक व्यक्ति के लिये यदि उसकी इन्द्रियाँ सबल तथा कार्यक्षम हों तो किसी न किसी काम में लगे रहना आवश्यक था।

कर्मों की गणना तो अनेक आचार्यों ने की परन्तु कर्म व्याख्या किसी आचार्य ने नहीं की ब्राह्मणों के कर्म क्षत्रियों के कर्म इसी प्रकार ब्रह्मचारी के कर्म तथा गृहस्थ के कर्म इत्यादि अनेक प्रकार के कर्म आचार्यों ने बताये हैं। परन्तु इन के अन्तर्भूत सूत्र को किसी ने भी खोल कर हमारे सामने नहीं रखा है। मैं कर्म की व्याख्या इस प्रकार करता हूं कि इस समय के सही उपयोग का नाम कर्म है।

समय एक अनौखी पूँजी है सब को लगभग बराबर मिली है। किसी को कम नहीं और किसी के पास अधिक नहीं इसको पाने के लिये कोई कीमत देनी नहीं पड़ती हवा और पानी की तरह प्रत्येक व्यक्ति के जन्म के साथ ही उसकी सब गणनाओं के रूप में परमेश्वर की तरफ से समय की प्राप्ति हो जाती है, इसको न तो बढ़ाया जा सकता है न इसकी कोई चोरी कर सकता है। पर हर व्यक्ति इसे गँवा सकता है। इसे खो सकता है इसका उपभोग न करना ही इसको गँवाना है। एक बार समय हाथ से गया तो वह वापिस नहीं आता यह एक अनौखी पूँजी है, इस को अपने भंडार में सुरक्षित नहीं रखा जा सकता, पूँजियों के दूसरे प्रकार सुरक्षित रखे जा सकते हैं, उनके गुम हो जाने या चोरी जाने पर उनके वापिस मिल जाने की सम्भावना बनी रहती है, परन्तु समय एक ऐसा साधन है जो एक बार हाथ से निकल गया तो फिर आता नहीं। इसी में इसका महत्त्व है हमें चाहिए कि हम इसके महत्त्व को जानें इसके महत्त्व को समझ कर जो काम में लगे रहते हैं वे निरन्तर कार्यरत रहते हैं। एक क्षण भी निठल्ले नहीं रहते पश्चिमी देशों में समय की बड़ी कीमत है। वहाँ के निवासियों ने इसके महत्व को जाना और पहचाना है। वे एक क्षण को भी व्यर्थ जाने नहीं देते उनके देश में हर काम के लिये समय निश्चित होता है और उस समय वह काम अवश्य हो जाता है

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

श्री लाला लाजपतरायजी

श्री म० भगवानदीन जी

श्री भाई परमानन्द जी

श्री आचार्य रामदेव जी

श्री महाकवि शंकर जी

श्री पं० पद्मसिंह जी

श्री आर्यमुनि जी

श्री पं० घासीराम जी

श्री पं० भीमसेन जी
(भास्करानंद जी)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, D

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

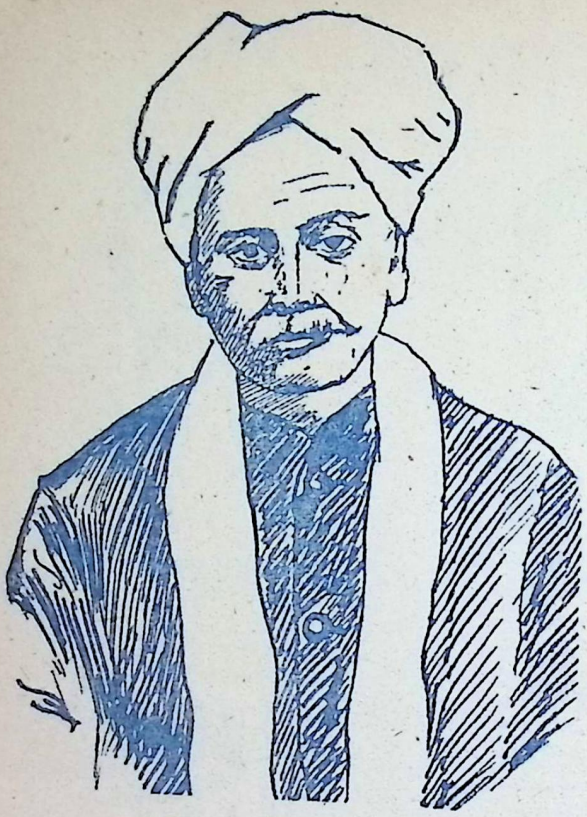

श्री लाला देवराज जी

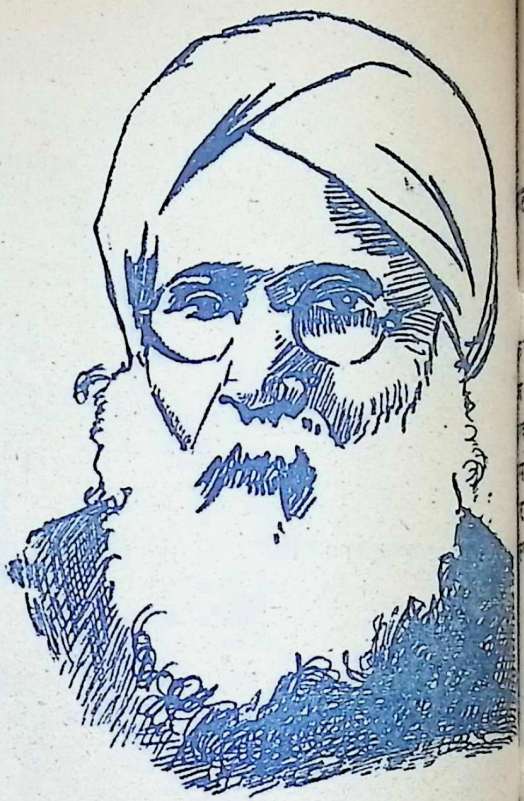

श्री महात्मा हंसराज जी

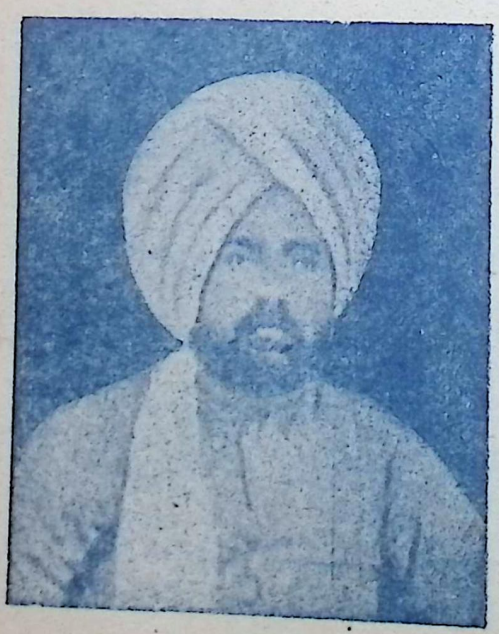

श्री अमर शहीद पं० लेखराम जी

श्री गुरुदत्त जी विद्यार्थी एम. ए.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

व० श्री जयानंद जी भारतीय

[श्री शान्ति प्रकाश प्रेम]

सत्यार्थ प्रकाश' और 'आर्य मित्र' से प्रेरणा
र तथा अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द जी महा-
का आशीर्वाद प्राप्त करके, गढ़वाल, के गिरि-
र और कन्दराओं में आपने अनेक संकटों का
ना करते हुए आर्य समाज का सन्देश पहुँचाया
युग-युग से पीड़ित गढ़वाल के एक लाख
पकार (दलित) भाइयों में अपूर्व क्रान्ति उत्पन्न

के उनको आर्यसमाज का भक्त बनकर सामा-
क गुलामी से मुक्त किया । टिहरी गढ़वाल में
प्रचार करते हुए आप पर विरोधियों ने लाठियां
ाई किन्तु आपने महर्षि दयानन्द के पथ पर
ते हुए उन्हें मुक्त कर दिया था। शिल्पकार
ों के जनेऊ, डोला पालकी आदि धार्मिक, सामा-
जिक, नागरिक अधिकारों की प्राप्ति के लिए शान्ति-
मय लड़ाई लड़कर विजय प्राप्त की और हजारों
शिल्पकार भाइयों को ईसाई होने से बचाया । देश
के स्वातन्त्र्य युद्ध में छःबार जेल यात्रा की। अंग्रेजों
के नौकरशाही भक्तों ने यह घोषित कर दिया था
कि गढ़वाल स्वातंत्र्य युद्ध में सम्मिलित नहीं है, यह
गढ़वाल का भारी अपमान था। आपने १९३२में यू०
पी० के अंगरेज गवर्नर सरमालकम हेली के पौढी
दरबार में प्राणों की चिन्ता न करते हुए तिरंगे
झंडे और राष्ट्रीय नारों का प्रदर्शन करके यह सिद्ध
कर दिया था कि गढ़वाल पूर्ण रूप से कांग्रेस के
साथ है। आपकी इस अटूट भक्ति से ही गढ़वाल के
नागरिकों ने आपको गढ़वाल का 'गांधी' कह कर
पुकारा था। आप की ही तपस्या का फल है कि
आज गढ़वाल में सौ के लगभग आर्यसमाजें स्थापित
हैं। आज आपके इस त्याग और तपस्या के फल-
स्वरूप 'श्री जयानन्द भारतीय स्मारक निधि
दिल्ली' गढ़वाल के मुख्य द्वार कोटद्वार में स्मारक
के रूप में आपकी विशाल प्रस्तर मूर्ति स्थापित करने
जा रही है। आपका जन्म १७ अक्टूबर सन् १८८१
में गढ़वाल के अरकंडई नामक एक ग्राम में हुआ
और निधन ९ सितम्बर सन् १९५२ में हुआ था।
आर्यसमाज सावली आदि गढ़वाल का मुख्य केन्द्र
पंचपुरी आज भी आपके अधूरे कार्यों को पूर्ण करने
में सेवा केन्द्र बना हुआ है। और पंचपुरी में स्मारक
के रूप में एक कन्या पाठशाला संचालित हो
रही। है

लिए वर्तमान कांल में वे लोग उन्नति के मार्ग
अग्रसर हैं हमने समय के महत्व को भुला दिया
वेद भगवान् "कुर्वन्नै वेह कर्माणि" का उप-
ते हुए हमें सचेत कर रहे हैं कि आलस्य और
प्रमाद को छोड़ो काहिली और बेकारी को दूर
भगाओ। समय के हर क्षण का उपयोग करते हुए
निरन्तर कार्य रत रहो तभी तुम्हारी उन्नति होगी
और देश का कल्याण होगा।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पंचकोष

[श्री मदनमोहन विद्यासागर वैदिक मिशनरीटांगानिका, पूर्वी अफ्रीका]

'पुरुष' शब्द से आर्यवाङ्मय में परमात्मा और जीवात्मा दोनों का ग्रहण होता है। पुरुष पद का अर्थ है, पुरी में शयन करने वाला। परमात्मा के सम्बन्ध में 'पुरी' से ब्रह्माण्ड का और जीवात्मा के सम्बन्ध में पिण्ड शरीर का बोध होता है।

ब्रह्माण्ड का ही अपर नाम 'ब्रह्मचक्र' और शरीर का 'पिण्डचक्र' है। ब्रह्मचक्र के नियमानुसार घूमने के लिये कोई आधार होना चाहिये। स्वयम्भू परमात्मा स्वयं चेतन सर्वाधार और सर्वव्यापक सर्वशक्तिमान है, अतएव वही इसको स्वतन्त्र भ्रमण कराने और इसे स्वाधीन रखने वाला 'पुरुष' है। इस ब्रह्माण्ड में जो देह ब्रह्माण्ड की प्रकृति पिण्डचक्र है, उसका भी निर्माणकर्त्ता यही 'परम पुरुष' है। परन्तु जैसे ब्रह्मचन्द्र परमात्मा के अधीन चलता है, वैसे ही यह पिण्डचक्र जीवात्मा के आधीन है। यह 'जीव पुरुष' पंचभूतों से बने देहरूप चक्र को चलाने ठहराने, चिरस्थायी रखने और अन्य अनेक कर्मों में उपयुक्त करने वाला है। अर्थात् परमपुरुष के आश्रय में कर्मानुसार घूमता हुआ जीव पुरुष, इस पिण्डचक्र को आप ही घुमाता है और इस निज देह-रूप चक्र से स्वेच्छानुसार काम लेता है। इष्टानिष्ट (शुभा-शुभ) कर्म में प्रवृत्त रहता है और इसी में निवासकर नानाविधि भोग भोगता है।

देहचक्र को चलाने वाला 'पुरुष' क्या है ? क्या' सामने विशिष्ट आकृतियुक्त जीवित देह ही यह 'पुरुष है ? या कुछ और है ? सामने 'सर्वदमन' नामक व्यक्ति खड़ा है, उसका शरीर दीखता है, इन्द्रियां दीखती है, उसमें श्वास-प्रश्वास की क्रिया भी ज्ञात होती है। क्या यही दृश्य भौतिक व्यक्ति 'सर्वदमन' नामक पुरुष है ? वर्तमान वैज्ञानिकों की दृष्टि में पुरुष अर्थात् मैन, इतना ही है। परन्तु प्राचीन भारतीय आर्य ऋषियों ने इस के अन्दर बहुत दूर तक जाकर इसके सत्यस्वरूप को जाना है। इस 'व्यक्त दृश्यमान भौतिक' मूर्ति के अन्दर एक 'अव्यक्त अदृश्य भौतिक' कारण प्रकृति निर्मित कारणमूर्ति है और उसके भी भीतर एक 'अप्रत्यक्ष अभौतिक' चेतन आत्मा तत्व है। इन सबके समुदाय का नाम 'पुरुष' है। लोक में नाना पुरुष हैं। हम एक पुरुषविशेष को 'सर्वदमन' नाम से पुकारते हैं। व्यक्त-अव्यक्त भौतिक मूर्ति की शास्त्रों में 'पुरी' संज्ञा है। यह पुरी, पांच परकोटों या दीवारों में घिरी है, उसके अन्दर 'आत्मा' विराजमान है। इन पांच तहों का नाम 'पंचकोष' है अर्थात् यह देह पंचकोषों से बनी है, आत्मा एक २ में कार्य करता है। वह ज्यों २ एक २ को छोड़ अन्दर २ जाता है, त्यों २ सूक्ष्मता से अपना ज्ञान (स्वरूप ज्ञान) उसे होने लगता है। एक वार जब उसे स्वरूप स्थिति उपलब्ध हो जाती है, तब वह परमपुरुष का साक्षात्कार करता है, क्योंकि उस समय उस का सम्बन्ध इस पुरी से अर्थात् शरीरेन्द्रिय, प्राण, मन एवं बुद्धि से तथा महत्तत्व-अव्यक्त से छूट जाता है। (कठोप.३, ४, ५, ६, वल्ली)

ये पंचकोष क्या हैं ? कोष के दो अर्थ प्रसिद्ध हैं। कोष कहते हैं भण्डार या खजाने को, अर्थात् जिन पांच प्रकार के समुदायों (भिन्न २ तत्वों के संघात रूप) से वह बना है, वे कोष कहाते हैं। अथवा कोष का अर्थ होता, म्यान या खोल आत्मा को यह पुरी पांच खोलों की बनी है अर्थात् जब आत्मा पांच आवरणों के अन्दर बद्ध होता है, तब उसकी पुरुष संज्ञा होती है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रथम सबसे स्थूल—अन्नमय कोष है। द्वितीय
ते सूक्ष्म—प्राणमय कोष है। ततीय उससे
क्ष्म—मनोमय कोष है। चतुर्थ उससे सूक्ष्म—
ज्ञानमय कोष है। पंचम सबसे सूक्ष्म—आनन्द-
य कोष है।

श्री स्वामी ओमानन्दजी ने 'अपने योग प्रदीप
त्व में तथा श्री स्वामी लक्ष्मणानन्द जी ने अपने
ानयोगप्रकाश में इस सम्बन्ध में विशेष लिखा है।
व के विशेषतः आधार एवं सामान्यतः अन्य पुस्तकों
आधार पर आगे की पंक्तियाँ लिखता हूँ।

इन पाँच कोषों को पाँच रंग वाली चिमनियाँ
मझना चाहिये और चेतन (आत्मा तत्व) को एक
काश की ज्योति; जिसका प्रकाश इन भिन्न भिन्न
गरूपों वाली चिमनियों में से आता हुआ तदाकार
ा भासता है

आत्मा का प्रकाश (अर्थात् गुण, कर्म, स्वभाव
ा निदर्शन) इनके माध्यम से होरहा है। ये एक के
न्दर एक है संगत लहू यदि निर्दोश निष्कल्मष होते
ैं, तो आत्मा शुद्ध होता है, उसके गुण कर्म स्वभाव
ैव्य होते हैं, वह वैदिक परिभाषा का "दैव्यजन"
ा 'वैश्वानर' कहाता है। किसी भी चिमनी के
दोष होने से आत्मा का स्वरूप विकृत सा हो जाता
ै। अन्नमयकोष के बाहर सृष्टि का वातावरण है
ौर अन्दर प्राणमनबुद्धि महत्तत्व की ड्योढ़ियाँ हैं,
नके बाद आत्मा है। प्रकृति के विषयों से यदि 'अन्न
यकोश' धुँधला, खुर्दरा या मैला हो जाता है, तो
त्तरोत्तर अन्तर के कोष भी मलयुक्त होने लगते
ैं। परिणामतः आत्मा के शुद्ध रूप का भान नहीं हो
कता। पुरुष के कर्म आत्मानुरूप (subjective)
ो कर प्रकृतिनिष्ठ (objective) होने लगते
ैं। सामान्य भाषा में उसके कर्म और उनका प्रभाव
ीरत-मुर्दा-वेसन-निर्बुद्धि-दुःखद' होता है। पाठकों
यह बात ध्यान में रखनी चाहिये! आत्मशुद्धि
करनी हो, तो इन कोषों को अर्थात् चिमनियों पर
लगी संसारधूलि को उत्तरोत्तर अष्टांगयोग के मार्ग
से साफ करना पड़ेगा। इनको मलरहित किए बिना
'आत्मशुद्धि' नहीं होसकती और आत्मशुद्धि किए
बिना 'ईश्वर प्रत्यक्ष' नहीं हो सकता चाहे कोई
जीवात्मा-परमात्मा' को पृथक् मानने वाला वेदान्त-
चित् हो और 'जीव ब्रह्म' को एक मानने वाला
नवीन वेदान्ती हो 'आत्मदर्शन' का मार्ग यही है।

आनन्दमयकोष

यह आत्मतत्व पर महत्तत्व तथा कारणप्रकृति
की पहली चिमनी 'आवरण खोल है अर्थात् इसका
आधार कारणरूप प्रकृति है कि जिसके आधार पर
जीवात्मा रहता है। इसको ही जीवात्मा का कारण-
शरीर भी कहते हैं और इस कारणशरीर सहित
आत्मा की 'प्राज्ञ' संज्ञा है (दृष्टमाण्डूक्योपनिषद्)
इसमें प्रीति, प्रसन्नता, आनन्द, न्यूनआनन्द,
अधिकआनन्द, आनन्दातिरेक है। इसका यह अभि-
प्राय है कि यह कोष आत्मस्वरूप को आच्छादित करके
प्रिय, मोद, प्रमोद, प्रसादरहित आत्मा को प्रमुदित
प्रसन्न तथाअपरिच्छिन्नसुखरहित आत्मा को परि-
च्छिन्न ज्ञानपूर्वक -सुख विशिष्ट रूप में प्रकट करता
है। यह होता है। उत्तमकर्म अर्थात् यज्ञाचरण
से पुष्ट होता है।

जब जीव-आत्मा अपने स्वरूप में संयम करता
है, तब उसको आनन्दमय कोष के सम्पूर्ण पदार्थों
सकलप्रभावों तथा गुणकर्मों का पृथक् पृथक् रूप में
यथावत् ज्ञान होता है।

विज्ञानमयकोष

आनन्दमय कोष रूपी चिमनी के ऊपर यह
अहंकार और बुद्धि की दूसरी चिमनी है। अर्थात्
इसमें बुद्धि, चित्त, अहंकार तथा श्रोत्र-त्वचा-नेत्र-
जिह्वा,-नासिका ये पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं, जिनसे जीव
ज्ञानादि के व्यवहार करता है।

यह विज्ञानमयकोष आत्मस्वरूप को आच्छादित

Dr. Vivek Arya Vedic Library

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

करके अकर्त्ता (निष्चेष्ट) आत्मा को कर्त्ता (सचेष्ट), अविज्ञानवान् आत्मा को विज्ञानी, निश्चयरहित संशयात्मा आत्मा को सुचेता और जाति-अभिमान-शून्य आत्मा को जाति-अभिमान-युक्त (मैं पुरुष अर्थात् मानवयोनिविशिष्ट हूँ) ऐसा जैसा प्रकट करता है। इस प्रकार कर्तृत्व-भोक्तृत्व-सुखित्व आदि का भान इस विज्ञानमय कोष का गुण है। यह व्यवसायात्मिका बुद्धि के विकास से पुष्ट होता है। (द्रष्टव्य गीता)।

बुद्धि में संयम करने से विज्ञानमय कोश अर्थात् उसके आधारभूत चित्त-बुद्धि-अहंकार तथा समस्त-ज्ञानेन्द्रियों और उनकी दिव्यशक्तियों का पृथक् पृथक् यथावत् ज्ञान होता है।

मनोमयकोश

विज्ञानमयकोशरूपी चिमनी पर वह मन (संकल्प विकल्पात्मक शक्ति) की तीसरी चिमनी है अर्थात् इसका आधार 'मन' है, जिससे जीव संकल्पविकल्प करता है।

यह मनोमय कोष आत्मस्वरूप को आच्छादित करके संकल्परहित आत्मा को संकल्पवान्, संशय-रहित को संशयात्मा, निर्द्वन्द्व अर्थात् शोकमोहादि-रहित आत्मा को शोकमोहादियुक्त, रागद्वेष भय क्रोध के भावों से रहित को रागद्वेष भय क्रोधयुक्त और दर्शनरहित आत्मा को दर्शन आदि की योग्यता वाला कर्त्तारूप प्रकट करता है। इस मनोमय कोश में इच्छाशक्ति वर्त्तमान है। यह उत्तम विषयों पर संकल्प विकल्पात्मक विवेक प्रक्रिया द्वारा पुष्ट होता है।

मन में संयम करने से मन और उसकी शक्तियों का यथावत् ज्ञान होता है। मन कर्मेन्द्रियों तथा ज्ञानेन्द्रियों के बीच की शृंखला है, दोनों का सम्बन्ध कराता, इसलिये दोनों प्रकार की इन्द्रियों के गुणकर्मों का यथावत् ज्ञान भी होने लगता है।

प्राणमयकोश

मनोमयकोश रूपी चिमनी पर यह प्राण (प्राण-अपान-व्यान-समान-उदानात्मक पंचप्राण) तथा वाक्-पाद-पाणि-पायु-उपस्थ इन पांच कर्मेन्द्रियों की चौथी चिमनी चढ़ी है अर्थात् इसका आधार पंच-प्राण तथा पंच कर्मेन्द्रियाँ हैं, जिनसे जीव श्वास प्रश्वास तथा अन्य चेष्टायें करता है।

जो शरीर में प्राण है, वह पांचरूपों में शरीर में होनेवाली सब क्रियाओं का निमित्त होकर खाना-पीना, पचाना, ग्रहणकरना, त्यागना आदि चेष्टाओं से कर्म को कराने वाला तथा शरीर में रुधिर आदि सप्त धातुओं के विभागों को शरीर में सर्वत्र यथावत् यथास्थान पहुँचाने वाला है। यह प्राण ही शरीर आदि की पुष्टि-वृद्धि-क्षय का हेतु है। कर्मेन्द्रियाँ शरीर की अन्य नाना चेष्टाओं का कारण हैं। श्वास-प्रश्वास के समुचित प्रयत्न अर्थात् प्राणायाम द्वारा पुष्ट होता है।

यह प्राणमय कोष आत्मस्वरूप को अच्छादित करके वक्तृत्वरहित आत्मा को वक्ता, गतिरहित (चलने फिरने वाला), दातृत्वरहित को दाता, क्षुधा पिपासा रहित को क्षुत्पिपासाकुल और जननशक्ति-रहितको जनक आदि नाना रूपों से युक्त जैसा प्रकट करता है। इस प्राणमय कोश में क्रियाशक्ति वर्त्तमान है, इसलिये यह कार्यरूप है।

प्राणमय कोष में अर्थात् जिस २ स्थान में जो २ प्राण रहता है, उस उस में पृथक् पृथक् संयम करने से प्रत्येक के भिन्नस्वरूप तथा उस २ की चेष्टाओं का यथावत् ज्ञान होता है।

ये तीनों 'विज्ञानमय-मनोमय-प्राणमय कोश' मिलकर सूक्ष्मशरीर कहलाते हैं। इस सूक्ष्मशरीर सहित आत्मा का नाम 'तैजस' है।

अन्नमयकोश

प्राणमयकोश रूपी चिमनी पर यह पांचवीं

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

सम्पादकाचार्य श्री पं० रुद्रदत्तजी

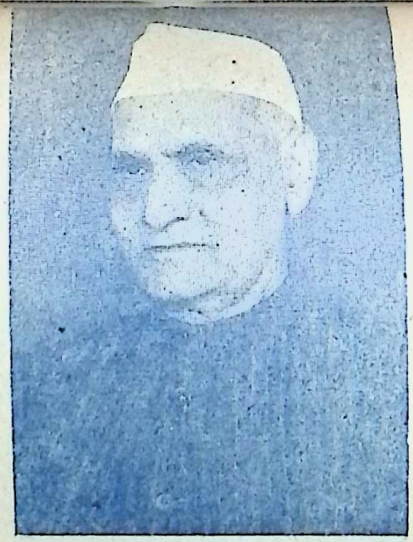

[२] श्री हरिशंकरजी शर्माजी

[३] श्री धर्मेन्द्रनाथजी शास्त्री

[४] श्री बनारसीदासजी चतुर्वेदी
संसद-सदस्य

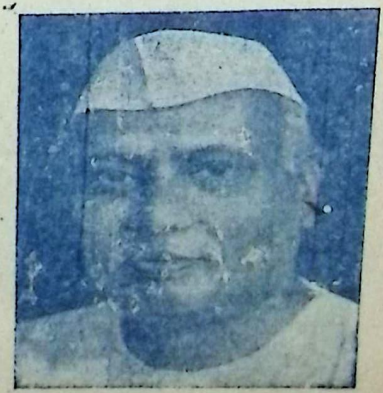

[५] श्री धर्मपालजी विद्यालंकार

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

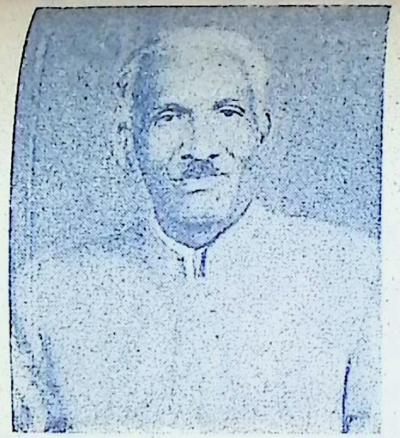

[६] श्री भगवानप्रसादजी एम० ए०

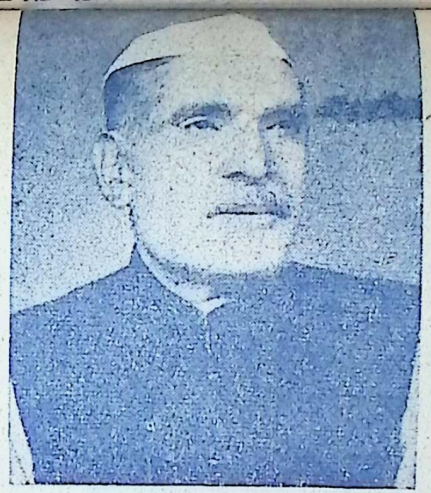

[७] श्री पं० शिवदयालुजी

[८] श्री रामस्वरूपजी शास्त्री काव्यतीर्थ

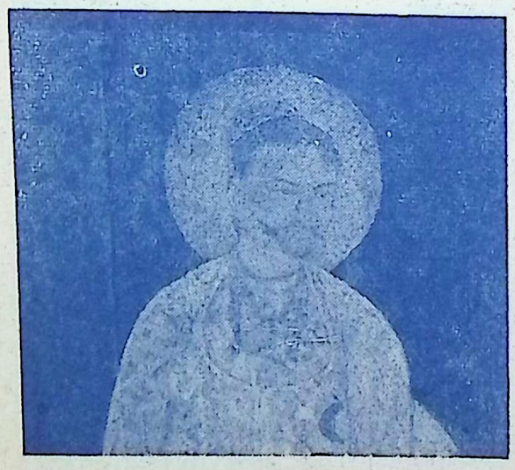

श्री अमरलालजी
–मथुरा में महर्षि के विशेष-सहायक

श्री रघुनाथसिंहजी बैंकाक
(थाइलैंड)
आर्यमित्र के प्रवासी हितैषी

श्री शिवचरणलालजी शर्मा
–प्रचार-मन्त्री समारोह

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

विमनी है। यह अन्न से बने हुए रजवीर्य से उत्पन्न होता है और अन्न से ही बढ़ता है। इसलिए इसको अन्नमय कहते हैं। इस अन्नमय कोश को ही जीव का स्थूल शरीर कहते हैं,। और स्थूल शरीर सरहित आत्मा को 'विश्व'।

पांच कोशों में यह कोश सबसे स्थूल है, और प्रत्यक्ष है जो त्वचा से लेकर अस्थिपर्यन्त का समुदाय पृथिवीमय है। यह सात्विक आहार द्वारा पुष्ट होता है।

यह अन्नमय कोश आत्मस्वरूप को आच्छादित करके अपरिच्छिन्न तथा अविभक्त आत्मा को परिछिन्न तथा विभक्त अणु को विभुसा, तापरहित अथवा निर्विकार आत्मा को जरा-मृत्यु-जन्म वाला, अवध्य देही को वध्य और निस्संग आत्मा को विषयासक्त रूप में प्रकट करता है।

इसमें संयम करने से समस्तदेह के रोम रोम तक का यथायत् ज्ञान प्राप्त होता है। संयम करने की विधि यह है कि समग्र शरीर में सिर से लेकर नखपर्यन्त सम्पूर्ण त्वचा, मास, रुधिर, अस्थि, मेदा आदि से बने शरीर की सब भिन्न भिन्न नाड़ियों पृथक पृथक विभाग से एक साथ ही विस्तृत (फैला हुआ) ध्यान ठहरावे (दृष्टव्व य० १२/६७ तथा ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका)।

कोश सम्बन्धी चित्र

जब हम 'पुरुष' को देखते हैं, तो उसकी समग्रता निम्न प्रकार से जाननी चाहिये। उसमें कुछ 'प्रत्यक्ष' है और बहुत कुछ 'अप्रत्यक्ष' है। उसकी अपनी पंचज्ञानेन्द्रियाँ अपनी देह में स्थित पंचविषयों का ही प्रत्यक्ष करती हैं, परन्तु 'मन' और 'बुद्धि' इसके अतिरिक्त किसी वस्तु का विचार और साक्षात्कार करती हैं। वही आत्मा है, जो इन पांचों पेटियो के अन्दर सुरक्षित है।

१. अन्नमयकोश—पांचों भूतों से बना हुआ स्थूलशरीर, इन्द्रियगोलकात्मक। पुरुष वीर्य द्वारा स्त्रीरज में जीव के प्रविष्ट हो जाने पर इसका विकास।

२. प्राणमयकोश—पंचप्राण तथा पंच कर्मेन्द्रिय निर्मित।

३. मनोमयकोश—मन इसका आधार है।

४. विज्ञानमयकोष—अहंकार बुद्धि चित्त तथा पंचज्ञानेन्द्रिय निमित।

इन तीनों के मिलने से सूक्ष्मशरीर, शबलस्वरूप आत्मा की संज्ञा तैजस।

५. आनन्दमय कोष—कारण प्रकृति व महत्तत्व यह कारणशरीर है है। कारणशरीर के सम्बन्ध से शबलस्वरूप आत्मा की संज्ञा प्राज्ञ।

ये पांचों कोष आत्मा के अपने शुद्ध स्वरूप नहीं है. ये प्रकृति के गुणों से मिश्रित हैं। इनके द्वारा जीव सृष्टि में नानाविध चेष्टायें करता है और वे उसके आधीन होने से उसका अपर-स्वरूप हैं। इनका यथावत् ज्ञान ही 'अपराविद्या' है इनसे परे आत्मा अपने निज केवल शुद्ध भाव में अवस्थित है, यह उसका परस्वरूप है। इसका यथावत् ज्ञान ही 'पराविद्या' है।

'अमृतत्व' प्राप्ति के साधक के लिये दोनों का ज्ञान आवश्यक है। अपरविद्या के यथावत् ज्ञान से वह 'प्राकृतिक-पिण्डचक्र' के बन्धन से 'पराविद्या द्वारा' आत्मा को पृथक कर 'स्वरूप में अधिष्ठित होता या आत्मस्थिति को प्राप्त करता है। इस प्रकार आत्मज्ञान प्राप्त कर ही कोई धीर पुरुष' 'आत्मस्थ' अविनाशी परमतत्व का साक्षात्कार करता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

श्री दयानन्द जी का धातु-पाठ

[श्री युधिष्ठिरजी मीमांसक, टंकारा]

★

महामुनि विरजानन्द के हृदय में आर्ष-ज्योति के प्रादुर्भाव से कई दशतियाँ पूर्व उनकी विद्वत्ता की यशोगाथा सुनकर उनके जन्मभूमि अथवा उनके आसपास का हरिवंश नामक छात्र उनके चरणों में उपस्थित हुआ। उसने महामुनि विरजानन्द के समीप अध्ययन करते हुए अपने अभ्यास के लिए धातुपाठ की अपने हाथ से प्रतिलिपि की। सौभाग्य वश वह हस्तलेख किसी प्रकार दयानन्द एङ्ग्लो वैदिक कालेज लाहौर के लालचन्द पुस्तकालय में पहुँच गया। इस कारण वह चिरकाल के लिए सुरक्षित हो गया। अब वह साधु आश्रम होशियारपुर में सुरक्षित है।

मैं "संस्कृत व्याकरण-शास्त्र का इतिहास" लिखने सामग्री संकलित करने के लिए डी० ए० वी० कालेज के लालचन्द पुस्तकालय में प्रायः जाता रहता था। एक दिन धातु-पाठ के हस्तलेख निकलवाकर देख रहा था। उसी अवसर यह महत्वपूर्ण ग्रन्थ मेरे दृष्टि गोचर हुआ। यह सम्भवतः सन् १९४० की बात है। मैंने इस हस्तलेख की महत्ता को जानकर इसका अन्तिम पाठ अपनी संग्रह पुस्तिका मे लिख लिया। लालचंद पुस्तकालय के पुस्तकाध्यक्ष श्री पं० हंसराज जी से पता चला कि यह हस्तलेख करतारपुर से प्राप्त हुआ है। देश विभाजन के पश्चात् मैंने सन् १९५० में इसकी प्रतिलिपि मँगवाई। वह मेरे पास यहाँ सुरक्षित है।

धातु-पाठ की अनेक शाखाएँ हैं। इस धातु-पाठ के अंत में इति भीमसेन धातुपाठः समाप्तः ऐसा लिखा है। तत्पश्चात् कुछ श्लोक है अंतिम दो श्लोक जिनमें हस्तलेख की प्रतिलिपि का [illegible] अपना और अपने गुरू का नाम लिखा है। [illegible] प्रकार हैं—

वेदशैल वसु चन्द्रें तपस्ये बुध वासरे।
पञ्चम्यां कृष्ण पक्षस्य धातु ज्ञानस्य सिद्धये॥
लिखितोऽयं धातुपाठो हरिवंशेन धीमता।
ब्रजानन्दस्य शिष्येण पर ब्रह्मार्थ दर्शिना॥

अर्थात् संवत् १८७४ के फाल्गुन मास के [illegible] पक्ष की पञ्चमी बुधवार के दिन धातु ज्ञान [illegible] सिद्धि के लिए परब्रह्म के द्रष्टा ब्रजानंद के [illegible] बुद्धिमान् हरिवंश ने यह धातु पाठ लिखा।

यतः यह हस्तलेख महा मुनि विरजानंद [illegible] जंम भूमि से प्राप्त हुआ है। अतः इस श्लोक [illegible] स्मृत परब्रह्म दर्शी ब्रजानंद महा मुनि विरजानंद [illegible] हैं इसमें संदेह का अवकाश ही नहीं।

इस हस्तलेख की विशेषता

यह हस्तलेख कई दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। यथा

१—इसके अंत में लेखक ने अपना अपने [illegible] का नाम और लेखन काल लिख कर एक महत्व [illegible] अज्ञानावृत ऐतिह्य को सुरक्षित कर दिया।

२—इसमें उल्लिखित लेखन काल से स्पष्ट है [illegible] महामुनि विरजानंद की लगभग २५ वर्ष की [illegible] स्था म ही यश-पताका दूर दूर तक फहराने [illegible] गई थी।

३—यह धातु पाठ भीमसेन प्रोक्त है यह [illegible] लेख इति भीमसेन धातुपाठः समाप्तः से स्पष्ट है

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

४—यह धातुपाठ धातु और उसके अर्थ और क्रम निर्देश में पाणिनीय धातुपाठ से प्रायः मिलता है, परन्तु प्रतिगण की समाप्ति में जो विकरण निर्देश किया है वह काशकृत्स्न और कातन्त्र धातुपाट से आत्यधिक सादृश्य रखता है। हम नीचे दोनों के विकरण निर्देशों की तुलनात्मक सूची उपस्थित करते हैं—

गण	भीमसेनीय विकरण	काशकृत्स्नकातन्त्रीय
भ्वादि	अब्विकरण	अन्विकरण
अदादि	लुग्विकरण	लुग्विकरण
जुहोत्यादि	,, ,,	,,
दिवादि	,,	यन्विकरण
स्वादि	नुविकरण	नुविकरण
तुदादि	अविकरण	अ अथवा अनविकरण
रुधादि	नम्विकरण	न विकरण
तनादि	उविकरण	उविकरण
क्र्यादि	नाविकरण	नाविकरण
चुरादि	,,	इनविकरण

विशेष—इस सूची में स्वादि रुधादि के विकरणों में स्वल्पभेद है। काश वृत्स्न और कातंत्र धातुपाठ में जुहोत्यादि अदादि के अन्तर्गत माना गया है। भीमसेनीयधातु पाठ में अदादि और जुहोत्यादि दोनों को लुग्विकरण लिखा है। अतः संभव है यहां लेखक प्रमाद से पाणिनीय धातुपाठ के सादृश्य से जुहोत्यादि कां पृथक् लेखन होगया हो। पाणिनीय वैयाकरणों से आश्रित लुग्विकरणायोर-लुग्विकरणस्यैव ग्रहणाम्—इस प्राचीन परिभाषा म भी लुग्विकरण का ही निर्देश है, श्लुविकरण का नहीं। पाणिनीय वैयाकरण इस परिभाषा का आश्रयण करते समय जुहोत्यादि श्लुविकरणात्मक धातु को भी लुग्विकरण मानकर कार्य चलाते हैं। अतः किसी प्राचीन सम्प्रदाय में ९ गण ही थे, यह स्पष्ट है।

धातु का क्रम निर्देश में काशकृत्स्न और कातन्त्र का सर्व या भिन्न है। अतः प्रतीत होता है कि यह धातुपाठ सम्प्रति उपलब्ध पाणिनीय, काशकृत्स्न, कातन्त्र, चान्द्र जैनेन्द्र. जैन शाकटायन, हैम, जौमर आदि सभी व्याकरणों से भिन्न किसी प्राचीन व्याकरण के साथ सबंध रखता है और वह व्याकरण काशकृत्स्न और पाणिनीय दोनों के साथ उसी प्रकार सादृश्य रखता होगा जैसे चान्द्र व्याकरण सूत्र पाठ में पाणिनिका और धातुपाठ के धातुक्रम में काशकृत्स्न कातन्त्र का अनुकरण करता है।

मैंने अभी तक इस धातुपाठ पर विशेष कार्य नहीं किया है। सम्भव है इस पर अनुसंधान कार्य करने पर अनेक महत्वपूर्ण बातों का ज्ञान हो।

हस्तलिखित ग्रन्थ कभी कभी कितने महत्वपूर्ण तथ्यों की ओर संकेत करते हैं यह इससे स्पष्ट है।

आर्यों से विनम्र प्रार्थना है कि वे महर्षि के गुरु धाम में जिस स्मारक की स्थापना कर रहे हैं वह महामुनि विरजानन्द के अनुरूप होनी चाहिए। हम लोगों ने जैसे महर्षि दयानन्द के स्मारक रूप में उनकी भावना से विपरीत स्कूल कालेजों की स्थापना की ऐसा यहाँ नहीं करना चाहिये।

महामुनि विरजानन्द महाराज ने आर्षज्ञान की ज्योति जो लुप्त होगई थी पुनः प्राप्त करके प्रसरित की। उनके योग्य शिष्य दयानन्द ने भी आजन्म आर्षग्रन्थों के प्रचार के लिए प्रयत्न शील रहे। इस लिए दोनों गुरुशिष्यों की भावना का आदर करते हुए गुरुधाम में आर्ष विद्यालय की ही स्थापना होनी चाहिए। उसमें आर्ष ग्रथों का ही पठन पाठन हो।

Dr. Vivek Arya Vedic Library

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्यों का सांस्कृतिक दिग्विजय [श्री विश्व बन्धु जी वेदालंकार एम. ए.

एक फ्रैंच विद्वान् ने लिखा है कि—पूर्वी ईरान के ऊँचे पठारों में, मध्य एशिया के विस्तृत भूखन्ड में, तिब्बत, मंगोलिया तथा मंचूरिया के निर्जन मैदानों में, चीन. जापान के प्राचीन सभ्य देशों में, हिन्द चीन प्रायद्वीप की मोनखमेर तथा अन्य जातियों में मलायु-पोलिनिशियनों के प्रदेशों में तथा हिन्देशिया और मलाया में भारतीय आर्यों ने अपनी उच्च संस्कृति की छाप न केवल धर्म पर किन्तु कला और संस्कृति पर तथा आत्मा सम्बंधी ऊंची वस्तुओं पर भी छोड़ी है। वस्तुतः सूर्य जैसे प्रतिदिन पूर्व में ही निकलता है, उसी प्रकर प्राचीन काल में ज्ञान रवि की रश्मियों ने सर्व प्रथम पूर्व दिशा को ही आलोकित किया था। आज यद्यपि यह सूर्य अपनी प्रखर रश्मियों से पश्चिम में चमक रहा है किन्तु संसार की सबसे प्रथम ज्ञानदायिनी संस्कृति और सभ्यता की जन्म भूमि यह भारत देश ही है। चिरस्थायिता तथा दिग्दिगन्त व्यापी प्रभाव में कोई अन्य संस्कृति भारतीय संस्कृति की समता नहीं कर सकती। ह्वांगहो और यांगटिसी क्यांग घाटियों में विकसित हुई चीनी संस्कृति, दजला और फरात की गोद में पली बाबुली संस्कृति तथा नील नदी के क्रोड़ में उत्पन्न हुई मिश्री आदि संस्कृतियाँ अब केवल अपने विशाल भव्य और विस्मयावह खण्डहरों के रूप में ही बची है, परंतु गंगा, जमुना और सिंधु सरस्वती के तीरों पर फली फूली भारतीय संस्कृति आज भी अपनी वेगवती धारा के रूप में प्रवाहित है।

भारतीय संस्कृति की गोकल्याणमयी धारा ने प्रादुर्भूत होते ही उसने शनैः शनैः समस्त मध्य एशिया तथा दक्षिण पूर्वी एशिया को अपने पुण्य प्रवाह से आप्लावित कर दिया। प्राचीन आर्यों ने अपने मूल स्थान से निकलकर चारों ओर के देशों में बस्तियाँ बसाईं। दूर दूर तक राज्य स्थापित किये तथा उन देशों के निवासियों को सभ्यता और संस्कृति का पाठ पढ़ाया। साइबेरिया से सिंहल तक और ईरान व अफगानिस्तान से प्रशांत महासागर के बोर्निओ तथा बाली द्वीपों तक के विशाल भूखण्ड ने भारत को अपना गुरू स्वीकार करके मनु के इस वचन को चरितार्थ किया—एतद्देश प्रसूतस्च सकाशादग्रजन्मनः स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्या सर्व मानवाः।

पुराने जमाने में भारतीय राजा लोग अपनी विश्वविजयिनी सेनाओं द्वारा दिग्विजय अवश्य किया करते थे किन्तु भारतीय संस्कृति ने रक्त की एक बूंद भी बहाये बिना भारत के साहसी आवासकों, भिक्षुओं. धर्मदूतों और व्यापारियों द्वारा एक विलक्षण प्रकार की साँस्कृतिक दिग्विजय की। पूर्वी दिशा में वर्मा श्याम, चम्पा, कम्बोडिया, मलाया, जावा, सुमात्रा. बाली, बोर्नियो तक के भूखण्ड भारतीयों ने आबाद किये। प्राचीन काल में दक्षिण पूर्वी एशिया का यह भूभाग भारत का अङ्ग समझा जाता था। उस समय यूनानी इसे गंगा पार का हिन्द कहते थे। दक्षिण दिशा में लंका या सिंहल आर्यों का ही आबाद किया हुआ है। उत्तर दिशा में सम्पूर्ण मध्य एशिया और अफगानिस्तान में जहाँ आजकल इस्लाम का डंका बज रहा है आर्यों की ही एक अफगान नामक शाखा ने बसाया था। यहाँ से भारतीय सभ्यता के इतने अवशेश मिले हैं कि आधुनिक पुरा-तत्ववेत्ता इसे उत्तर में बसा दूसरा भारत कहते हैं। पश्चिम में ईरान जो आर्य नाम का अपभ्रंश है आर्यों ने ही आबाद किया था। इस प्रकार पश्चिमी देशों से धार्मिक व्यापारिक तथा राजनैतिक सम्बन्ध होने

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

रण बाबुली, मिश्रा, यूनानी ईसाई और अरब संस्कृतियों पर भारत ने गहरा प्रभाव छोड़ा है।

भारत की यह सांस्कृतिक दिग्विजय सहसा नहीं हुई कई शताब्दियों तक भारत के महाप्राण, वीर्यवान्, साहसी आर्यों द्वारा नये प्रदेश बसाने तथा धर्म प्रचार के भागीरथ प्रयत्नों का परिणाम था। साहसी आर्यों ने पहले भारत को सुखी और समृद्ध बनाया, उसके बाद दूसरे द्वीपों में फैल गये। उनके प्रसार और प्रचार के मार्गों में हिमाच्छादि गिरिशृंङ्गों, बीहड़, तथा वीरान रेगिस्तानों, अपार अथाह समुद्रों की उर्मिमालायें दुर्लंघ्य बाधाएं थीं। सांचवीं शताब्दी में प्रसिद्ध चीनी यात्री फाहयान जो हजारों मीलों की पैदल यात्रा करके भारत आया था अपने यात्रा वृत्तान्त में पामीर पर्वतमाला के विषय में लिखता है—यह ग्रीष्म से हेमन्त तक वर्फ से ढकी रहती है। उसपर विषधर नाग हैं जो विषयुक्त वायु छोड़ते और फुंकारते हैं। यहाँ इन आपत्तियों में से बचकर हजारों में से विरला ही निकल सकता है। उपर्युक्त यात्री गोभी मरुस्थल का वर्णन इस प्रकार करता है—इस मरुस्थल में राक्षस फिरा करते हैं। शरीर को झुलसा देने वाली गर्म हवाएं चलती हैं। न ऊपर कोई पक्षी उड़ता है न नीचे कोई जन्तु दिखाई देता है। बहुत ध्यान देने पर भी मार्ग का स्थान नहीं मिलता। हाँ मुर्दों की सूखी हड्डियों के चिह्न अवश्य देख पड़ते हैं। इसी प्रकार समुद्र का वर्णन करते हुए लिखता है—समुद्र में अनेक डाकू फिरा करते हैं। यदि वे मिलजायँ तो यात्री नहीं जा सकते। इस समुद्र का कहीं ओर छोर नहीं पूर्व पश्चिम का ज्ञान नहीं। निश्चित मार्ग नहीं। रात्रि के अंधेरे में केवल ऊंची लहरें थपेड़ें खाती दिखाई पड़ती हैं।

परन्तु "कृण्वन्तोविश्वमार्यम्" की धुन में मस्त और "चरैवेति-चरैवेति" (आगे बढ़े चलो, आगे बढ़े चलो,) के वैदिक संदेश को मानने वाले आर्यवीर, इस चीनी यात्री की बताई हुई भीषण बाधाओं को उसी प्रकार लांघ गये जैसे बच्चे नालियों ओर छोटे छोटे टीलों को लांघ जाते हैं। समूचा भारतीय वाङ्मय आर्यों की उग्र कर्मण्यता, पौरुष, शौर्य, पराक्रम, ओजस्विता तथा आशावाद से भरा पड़ा है। उस समय का आर्यवीर किसी भी भौतिक बाधा से हार मानने को तैयार न था। उसकी महत्वाकांक्षा समस्त विश्व को आर्य बनाते हुए निरन्तर आगे बढ़ने और फैलने की थी। उनके यौवन में वह ओजस्वी और प्राणवान् भावना थी जो किसी भी संकट के आगे झुकने को तैयार नहीं होती। जिसे मुसीबतों के साथ जूझने और उन पर विजय पाने में ही आनन्द आता है। यही कारण है कि आर्य पर्वतों, नदियों, समुद्रों, तथा रेगिस्तानों की परवाह न करते हुए चारों ओर के देशों में शताब्दियों तक अपनी अमर संस्कृति का संदेश सुनाते रहे। हमारे रामायण, महाभारत तथा पुराणों में इस आवागमन के अनेक वर्णन मिलते हैं जो यह प्रदर्शित करते हैं कि भारतीय आर्यजनता के सभी वर्ग क्षत्रिय, वैश्य व्यापारी, तपस्वी, ऋषिमुनि सभी मिलकर इस कार्य में सहयोग प्रदान कर रहे थे।

प्राचीन भारत के आर्यों को इस दिग्विजय तथा उनकी ओजस्विता, शौर्य और पराक्रम की वास्तविक झलक आज से लगभग सौ वर्ष पूर्व गुजरात के एक तरुण तपस्वी स्वामी दयानन्द जी को दिखाई दी थी। वह आर्यों की इसी प्राणवान् भावना को देख विह्वल हो उठा था और इसीलिये उसे पुनः प्रसारित करने के लिये हिमालय से अपने समाधि सुख को तिलांजलि दे, मथुरा नगरी में गुरु विरजानन्द जी दण्डी से दीक्षा लेकर पुनः इस धरती पर उतर आया। ऋषि ने तो दीक्षा लेकर अपना सर्वस्व गुरु की आज्ञा पालन में न्यौछावर कर दिया तब क्या ऋषि के लाखों अनुयायियों में से कुछ हजार भी ऐसे नहीं निकल सकते जो अपनी विद्या, बल, धन और सेवा को गुरु की आज्ञा में अर्पण करने का व्रत ले सकें तथा सन्यासी गण दिग्दिगंत में प्रचारार्थ निकल पड़ें। इसी दीक्षाव्रत को पुनः स्मरण कराने के लिये मथुरा में यह आर्यों की दीक्षा शताब्दी रूपी महान् संगीति लग रही है जहाँ एकत्र होकर हमें ऋषि के सपनों को पूरा करने की दीक्षा लेनी है। आर्यमित्र उस व्रत की साधना में निरन्तर साठ वर्षों से संलग्न है और हम सबको भी साधना की प्रेरणा देरहा है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्य समाज का सेवा कार्य

[श्री विश्वनाथ सिंह वर्मा]

१—१८४७ ई० में महर्षिदयानन्द सरस्वती ने संन्यास लिया।

२—१८७५ ई० के चैत्र शु० १ शनिवार को महर्षि दयानन्द ने बम्बई में आर्यसमाज की स्थापना की और "स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है" का बिगुल बजाया।

३—भारत में ४५२८ चार हजार पांच सौ अट्ठाईस आर्य समाजें हैं इनमें आर्य महिला समाज भी सम्मिलित हैं।

४—भारत के बाहर, पूर्वी अफ्रीका, दक्षिणी अफ्रीका, मौरीशस और फिजीद्वीप, अमेरिका आदि देशों में ३१७ आर्य समाजें हैं।

५—८५२५५१७ पिचासी लाख, पच्चीस हजार, पांच सौ सत्तरह कट्टर कर्मठ आर्य सभासद् हैं।

६—५६८६०९८८ पांच करोड़, अड़सठ लाख, नब्बे हजार, नौ सौ अट्ठासी, आर्य समाज के सहायक सदस्य हैं जो आर्य समाज के प्रचार कार्यों में हर प्रकार से सहायता दिया करते हैं।

७—भारत में आर्य वीर दल की ३१५ शाखायें चल रही हैं।

८—भारत के बाहर आर्य वीरदल की १९८ शाखायें हैं।

९—भारत में आर्य कुमार सभा की ४८९ शाखायें चालू हैं।

१०—भारत में ७८९७ गुरुकुल, गुरुकुल विश्वविद्यालय, कालेज, कन्या गुरुकुल, महाविद्यालय, संस्कृत विद्यालय, हाईस्कूल आर्य कन्यापाठशाला, आर्य युवक पाठशाला, माध्यमिक आर्य विद्यालय तथा आर्य प्रारम्भिक पाठशालायें हैं।

११—४०५ अछूतों के लिये पाठशालायें हैं।

१२—२२५ प्रोफेसर १९००० अध्यापक तथा अध्यापिकायें हैं।

१३—२९८०७०९१८ उन्तीस करोड़ अस्सी लाख सत्तर हजार, नौ सौ अठारह रुपया, गुरुकुल विद्यालय कालेज, आर्य कन्या पाठशाला, अनाथालय आदि संस्थाओं में लगा है।

१४—२९८ प्रेस पत्र पत्रिकायें पुस्तकालय तथा वाचनालय हैं।

१५—१८९७१० एक लाख नवासी हजार सात सौ, दस आर्य समाजी लेखक लेखिकायें हैं जो अपने लेख और कवितायें भिन्न-भिन्न पत्र पत्रिकाओं में भेजकर महर्षि दयानन्द सरस्वती के विचारों का प्रसार करते हैं।

१६—१२१५ आर्य समाज मन्दिर और वैदिक पुस्तकालय हैं।

१७—६८८४७८५४ छः करोड़, अठासी लाख सैंतालीस हजार, आठ सौ चौवन रुपया आर्य समाज के मन्दिरों की लागत है।

१८—३२८ अनाथालय, विधवा आश्रम और गोशालायें हैं।

१९—११७ धर्मार्थ निःशुल्क औषधालय हैं।

२०—५११ वेद अनुसन्धान शाला, अतिथि भवन, व्यायामशाला, और परोपकारिणी सभायें हैं यथा श्रद्धानन्द स्मारक ट्रस्ट, दयानन्द सार्वदेशिक मिशन, वानप्रस्थाश्रम, रामलाल कपूर ट्रस्ट, विश्वेश्वरानन्द वैदिक संस्थान, दयानन्द रक्षामण्डल, महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक टंकारा ट्रस्ट श्री गुरुदत्त गुप्त चैरिटी ट्रस्ट तथा संन्यास आश्रम आदि।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

२१—एक आर्यन कोओपरेटिव बैंक लखनऊ में है।

२२—एक महर्षि दयानन्द सरस्वती घण्टा घर टंकारा (सौराष्ट्र) में है।

२३—११० शुद्धि सभा की संस्थायें हैं।

२४—१७०६८६८ सत्रह लाख, नौ हजार आठ सौ अठानवे शुद्धियाँ श्री स्वामी श्रद्धानन्दजी के हाथ से १९२६ ई० के २३ दिसम्बर तक हुई हैं।

२५—६०५ आर्यसमाज के संन्यासी संन्यासिनी और वानप्रस्थी हैं।

२६—१११४ आर्य महापदेशक, उपदेशिकाएँ तथा भजनोपदेशक हैं, (अवैतनिक वैतनिक) जो बराबर भारत और भारत के बाहर के देशों में यथा इङ्गलैंड, जर्मनी, असीरिया, अमेरिका, डचगायना. अफगानिस्तान, अरब, फारस, सिंगापुर, वर्मा, श्याम अनाम, बगदाद, कम्बोडिया, हांगकांग, आदि में भी वैदिक धर्म एवं आर्य समाज का प्रचार कार्य कर रहे हैं।

२७—भारत में प्रान्तीय प्रतिनिधि सभायें १० हैं, उत्तर प्रदेश, पंजाब, राजस्थान, मध्य भारत, मध्य प्रदेश, बिहार बंगाल, बम्बई, हैदराबाद मध्यदक्षिण सिन्ध।

२८—विदेशों में आर्य प्रतिनिधि सभायें ५ पाँच हैं, दक्षिण अफ्रीका, पूर्वी अफ्रीका, मौरीशस, पोर्ट लुइस, फीजी, दक्षिण अमेरिका, डचगायना।

२९—सार्व देशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली में है जिससे समस्त देश व विदेश की आर्य प्रतिनिधि सभायें सम्बन्धित हैं।

३०—सत्यार्थ प्रकाश कई भाषाओं में छपा है जैसे आर्य भाषा (हिन्दी) १, संस्कृत २, उर्दू ३, पंजाबी ४, बङ्गला ५, मराठी ६, गुजराती ७ कन्नड ८, तामिल ९, तैलगू १०, उड़िया ११, सिन्धी १२, नैपाली १३, अँग्रेजी १४, फ्रेन्च १५, जर्मनी १६, वर्मा १७, चीनी १८, रूसी १९, फारसी २०, अरबी २१, और ताम्रपत्र में तैयार हो रहा है।

३१—१२५ एक सौ पच्चीस आर्य वीरों का बलिदान आर्य समाज के प्रचार कार्य में हुआ जिनमें श्री १०८ स्वामी श्रद्धानन्द जी श्री पं० लेखराम जी म० राजपाल जी श्री श्यामजी कृष्ण वर्मा, म० राम चन्द्र श्री शुक्लराजजी शास्त्री (नेपाल में फांसी) श्री सुमेरसिंह आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय है।

श्री पं० रघुनाथ प्रसाद जी पाठक सम्पादक सार्वदेशिक देहली आर्यमित्र ५ अप्रैल १९५६ के लेख में लिखते हैं कि आर्य समाज ने सेवा के क्षेत्र को परिष्कृत और अलंकृत करने का रिकार्ड कायम किया है। आर्य समाज के सेवकों ने अपनी सेवा से लोगों को अमित प्रेरणा दी और वे प्रकाश स्तम्भ बनकर चमकते रहे हैं। इसका रहस्य था अपने व्यक्तित्व को अपने स्वार्थों को, पीछे रखकर समाज को आगे रखना और उसके लिए बड़े से बड़े त्याग को भी तुच्छ समझना यही भावना इस सब में जाग्रत् रहनी चाहिये। हमें इस विरासत में वृद्धि करनी होगी और इसे चमका देना होगा। इसी में हमारा और समाज का कल्याण है।

नोट—लेखक महोदय ने जो आँकड़े दिये हैं उनके विषय में जिन महानुभावों को सन्देह हो वह लेखक से ही निम्नलिखित पते से पूछ कर अपना सन्देह निवारण कर सकते हैं। हमारा अपना विचार है कि आर्य मन्दिरों और संस्थाओं में इससे कहीं अधिक रुपया व्यय हो चुका है। C/o आर्य समाज भमुआ —सम्पादक
इलाहाबाद, बिहार।

Dr. Vivek Arya Vedic Library

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पावन वैदिक ज्ञान चाहिये । [श्री जोरावर सिंह आर्य]

आज शान्ति के लिये विश्व को, पावन वैदिक ज्ञान चाहिये ।
आदि सृष्टि में परमेश्वर ने आर्य जाति को जिसे दिया है ॥
लाखों वर्षों मानवता ने जिस अमृत का पान किया है ।
ऋग् यजु साम अथर्व रूप में जग को वह वरदान चाहिये ॥
आज शान्ति के लिये विश्व को० १

बना प्रकृति का स्वामी मानव वैज्ञानिक निर्माणों द्वारा ।
बाल चन्द्र अणु शक्ति रेडियो, मोटर रेल विमानों द्वारा ॥
इन सब निर्माणों से पहले मानव का निर्माण चाहिये ।
आज शान्ति के लिये विश्व को० २

जो मानव जीवन में बनना मानव और महान् चाहता ।
लोक और परलोक सब जगह जो अपना कल्याण चाहता ॥
तो उसको करना जीवन भर औरों का कल्याण चाहिये ।
आज शान्ति के लिये विश्व को० ३

नीचे गिरे हुओं को झुककर जो छाती के साथ लगाले ।
जो औरों के लिये सदा ही अपने को संकट में डाले ॥
देख दुखी को तड़प उठे, वह दर्द भरा इन्सान चाहिये ।
आज शान्ति के लिये विश्व को० ४

विदेशियों को विधर्मियों को शत्रु समझ मत रक्त बहाओ ।
घृणा करो मत कभी किसी से प्रेम सहित सबको अपनाओ ॥
जग को आर्य बनाने का उद्देश्य और अरमान चाहिये ।
आज शान्ति के लिये विश्व को० ५

जियो स्वयं भी औरों को भी जीने दो स्वाभाविक जीवन ।
छीनो नहीं किसी का जीवन, सुख,स्वतन्त्रता या वैभव धन ॥
सह अस्तित्व सिखाने वाला पंचशील का गान चाहिये ।
आज शान्ति के लिये विश्व को० ६

जाति भेद से धर्म भेद से रङ्ग भेद से हो जो ऊपर ।
छोटे और बड़े सब को ही मिले जहाँ पर न्याय बराबर ॥
राम राज्य भूतल पर लाये ऐसा राज्य विधान चाहिये ।
आज शान्ति के लिये विश्व को० ७

ईर्षा द्वेष वैर हिंसा की ज्वालाओं में जगत् जल रहा ।
स्वार्थ दंभ धोखे प्रपंच से जीवन का व्यापार चल रहा ॥
इसे मिटाने सत्य अहिंसा त्याग और बलिदान चाहिये ।
आज शान्ति के लिये विश्व को० ८

अमृत पुत्र है परमेश्वर का जग में श्रेष्ठ सभी से मानव ।
वह चाहे तो कर सकता है आज असम्भव को भी सम्भव ॥
नाश नहीं उसको करना, इस जगती का उत्थान चाहिये ।
आज शान्ति के लिये विश्व को पावन वैदिक ज्ञान चाहिये ॥ ९

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अभिनन्दनीय आर्य विद्वान्

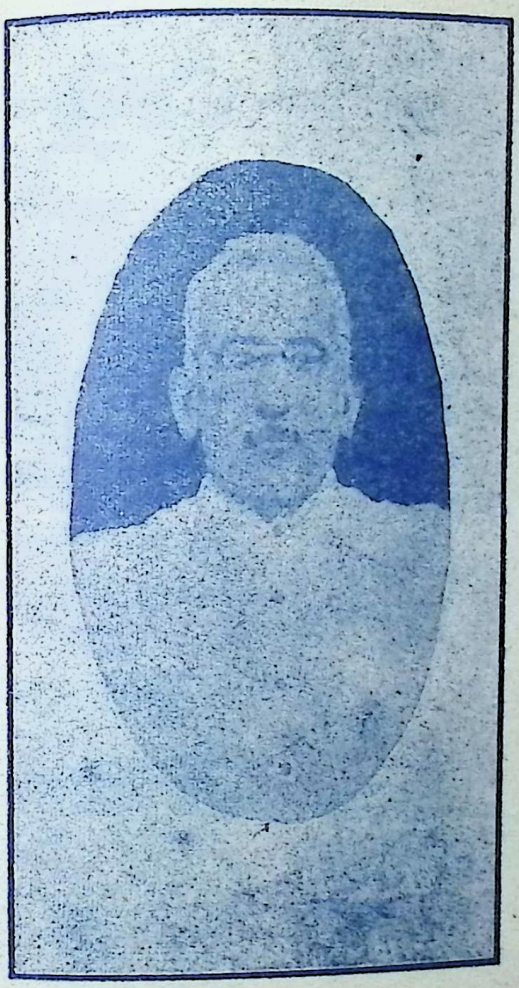

श्री पं० गंगाप्रसादजीएम. ए. रि० ची० जज

श्री पं० गंगाप्रसाद उपाध्यायजी एम. ए.

दयानन्द दीक्षा शताब्दी के सुअवसर पर दोनों विद्वानों की सेवाओं के उपलक्ष में आर्य जनता की ओर से राष्ट्रपति के करकमलों द्वारा अभिनन्दन-ग्रन्थ भेंट किया गया।

मित्र-परिवार उनके चिरायुष्य की कामना करता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

❀ दयानन्द दीक्षा शताब्दी के कुछ कार्यकर्ता ❀

श्री उमेशचन्द्र स्नातक एम. ए.
—समारोह मन्त्री

श्री नरेन्द्रजी (हैदराबाद)
—स्वागताध्यक्ष

श्री रमेशचन्द्रजी वकील
—स्वागत-मन्त्री

श्री कर्णसिंहजी छोंकर —संयोजक
विरजानन्द स्मारक शिलान्यास समारोह

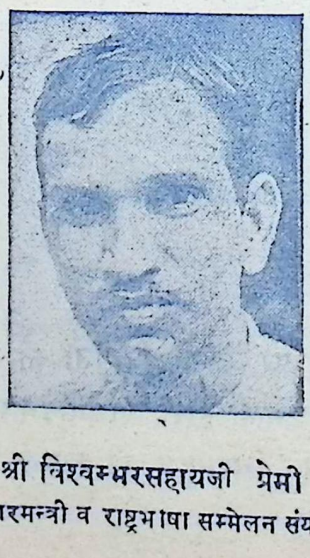

श्री विश्वम्भरसहायजी प्रेमी
—प्रचारमन्त्री व राष्ट्रभाषा सम्मेलन संयोजक

श्री ओमप्रकाशजी पुरुषार्थी
—प्रबन्ध व्यवस्थापक व जलूस नायक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

विज्ञान और अध्यात्म

[श्री रामधारी सिंह दिनकर संसद् सदस्य]

वास्तविकता केवल दृश्य जगत् तक ही सीमित नहीं है। आदमी केवल सनसनाहटों का पुंज नहीं होता, उसमें ध्येय और दायित्व भी होते हैं, वह त्यागी, तपस्वी और रहस्यवादी सन्त भी होता है। जगत् एक नहीं, दो हैं, भौतिक के साथ साथ एक आध्यात्मिक विश्व भी है। मनुष्य के अनुभव का अर्थ वह अनुभव भी है जो उसे वाह्य विश्व से प्राप्त होता है। और वह अनुभव भी जो उसे आत्मा से उपलब्ध होता है। और विज्ञान तो वही सम्पूर्ण होगा जो मनुष्यों के इन दोनों प्रकार के अनुभवों को स्वीकार करे। किन्तु दुर्भाग्यवश, भौतिकी इन दोनों विश्वों को अभी अपने आलिंगन में बांधने में असमर्थ है।

और भौतिकी को अबतक की परेशानी भी कम नहीं रही है। जब भौतिकी का आरम्भ हुआ उसके हाथ की चीजें ठोस थीं। पानी हवा की चोट के नीचे बहता था और वह गुरुत्वाकर्षण तथा हाइड्रोडायनिमिक्स के नियमों के अधीन था। किन्तु वस्तुओं का यह ठोसपन माया के समान निस्सार निकला। तरल में से हमने ठोस तत्व परमाणु निकाला, फिर उसे इलेक्ट्रोनों में विभक्त कर दिया। किन्तु इलेक्ट्रोन बनते ही ठोस चीज हमारे हाथों से गायब हो गयी। सन्तोष इतना ही है कि इलेक्ट्रोन और प्रोटीन के रूप से चीजों का सूक्ष्मतम रूप अब भी वर्तमान है। किन्तु क्वांटम का सिद्धान्त इन्हें भी बहुत स्थूल समझता है अतएव इनसे आगे वह हमें एक ऐसी जगह लिये जा रहा है जहाँ गणित के प्रतीकों के सिवा और कुछ भी नहीं है। जो ठोस था वह गलकर शून्य हो गया और हम आकार का हिसाब निराकार के श्यामपट पर लिख रहे हैं।

आदमी जब तक शाह में रहता है तब तक उसकी अकड़ शेष रहती है. किन्तु अथाह में पहुँचने पर वह ईश्वर को पुकारे या नहीं, अकड़ तो वह छोड़ ही देता है। विज्ञान का भी यही हाल हुआ है। जब तक वह अथाह में नहीं पहुँचा था, न्यूटनीय सिद्धान्तों के भरोसे वह निश्चिन्त था। किन्तु अथाह में पहुँचते ही वह यह मान गया है कि अब पहले की सी निश्चिन्तता और आत्म विश्वास के साथ कोई भी बात जोर से नहीं कही जा सकती। यह विनम्रता की निशानी है और इसमें कोई सन्देह नहीं कि आज का विज्ञान अबसे तीन वर्ष पहले की अपेक्षा कहीं विनम्र है। विज्ञान के जिस मंच से पहले यह आवाज सुनायी पड़ती थी कि वस्तुओं का अतीत यदि हम ज्ञात है तो हमारे लिये यह बताना तनिक भी असम्भव नहीं कि उनका भविष्य क्या होगा, अब उसी मंच पर से यह बात सुनाई पड़ रही है। कि विज्ञान का तो अभी आरम्भ मात्र है और उसकी सीमाएँ भी अनेक हैं। आज बड़े बड़े विज्ञानाचार्य एक विचित्र उत्साह से यह घोषणा करने लगे हैं कि विज्ञान से हमें जो ज्ञान प्राप्त होता है वह वास्तविकता के केवल एक अंश का ज्ञान है और अब हम पर यह बाध्यता नहीं है कि विज्ञान जिन विषयों की उपेक्षा करता है उन्हें हम भी उपेक्षणीय मानकर छोड़ देवें।

विज्ञान की इस नयी प्रवृत्ति से उन लोगों के भीतर आशा सुगबुगाने लगी है जो आधिभौतिक दर्शन में विश्वास करना नहीं चाहते थे, किन्तु तब भी जिन्हें आधिभौतिक विश्वासों से बाहर निकलने की राह अलभ्य थी। विज्ञान ने जिस विश्व की कल्पना की थी उसे अन्तिम सत्य मान लेने का स्वाभाविक परिणाम यह था कि उस विश्व में मनुष्य का स्थान तिनके के समान तुच्छ हो जाता था।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, P...

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

विज्ञान का विश्व विवेक-शक्ति और ध्येयों से सर्वथा विहीन एक ऐसा परम विशाल यंत्र था जिसका संचालन गणित करता था और आदमी इस यन्त्र से निकला हुआ कोई अप्रासंगिक जीव था जिसके सामने कोई ध्येय नहीं, जिसके जीवन का कोई अर्थ नहीं और जो अपने आप का भी स्वामी नहीं, प्रत्युत कारण कार्य नियम के उतना ही अधीन था जितना कोई भी पशु पेड़ या पौधा हो सकता है।

विवेकशील मनुष्य प्राणिशास्त्र के नियमों के उतना अधीन नहीं होता जितना विज्ञानवादी लोग समझते हैं। प्राणिशास्त्र के नियमों का पालन पशु करते हैं। जिनका सारा उद्देश्य अपने जीवन की रक्षा करना है। किन्तु मनुष्य तो बहुत बार दूसरों का दुःख दूर करने के लिए अपनी जान गँवा बैठता है। वास्तव में विज्ञान के नियम जड़ पर पूर्ण रूप से चेतन पर उससे कम और मनुष्य पर आकर सबसे कम चरितार्थ होते हैं।

चेतना केवल इन्द्रिय ग्राह्य बिम्बों का समुच्चय नहीं है। भावना उद्देश्य, मूल्य और विवेक भी चेतना के ही अंग हैं। किन्तु विज्ञान चेतना के उन्हीं रूपों की व्याख्या करता है जो इन्द्रियग्राह्य बिम्बों से सम्बद्ध है। एडिंगटन मानते हैं कि यह वास्तविकता की आंशिक व्याख्या मात्र है। पूरी वास्तविकता तो तभी व्याख्येय होगी जब हम यह मानकर चलें कि मनुष्य केवल भौतिक इकाई ही नहीं अध्यात्म भी है। इन्द्रिय ग्राह्य बिम्बों का स्रोत खोजते हम निश्चित रूप से बाह्य विश्व में पहुँच जाते हैं। जो विज्ञान का क्षेत्र है। किन्तु चेतना कितना की ही ऐसी विधियां भी हैं जिनका उद्गम खोजते खोजते हम कहीं और चले जाते हैं। इस अपरिचित देश का संधान पाये बिना सम्पूर्ण वास्तविकता के ज्ञान का दावा बिलकुल बेकार है।

विज्ञानाचार्यों का यह स्वीकार करना कि अब तक का विज्ञान सृष्टि के स्थूल यन्त्रों और उसके ढांचों के ज्ञान का पर्याय है, बड़ी ही आशा की घोषणा है क्योंकि इससे यह संकेत मिलता है कि स्थूल यन्त्रों और ढांचों के परे सृष्टि का जो अदृश्य रूप है उसके सम्बन्ध में विज्ञान ने कोई पूर्वग्रह पैदा नहीं किया है। इस पूर्वग्रह के अभाव से हम यह मानने को स्वतन्त्र है कि सौन्दर्य के प्रति हमारी रागात्मक वृत्ति और ईश्वर के साथ एकीभूत होने की हमारी रहस्यात्मक कल्पना बिलकुल निस्सार नहीं है। सम्भव है, इन वृत्तियों का भी कोई स्पष्ट लक्ष्य सृष्टि के भीतर प्रच्छन्न हो। अभिनव विज्ञान ने सृष्टिविषयक जिस नवीन कल्पना को जन्म दिया है उसमें केवल गणितज्ञ ही नहीं, रहस्यवादी संत और कलाकार भी रह सकते हैं।

१४—आर्य समाज वर्त्तमान हिन्दू विचारधारा का अत्यन्त महत्वपूर्ण और मनोरंजक अध्याय है।

—सर हैनरी काटन (न्यू इण्डिया)

१५—आर्य समाज सामाजिक और शैक्षणिक उन्नति की ऐसी योजना प्रस्तुत करता है जिनके बिना वास्तविक उन्नति सम्भव नहीं है।

—सर हरबर्ट रिसले

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

शान्ति और क्रान्ति का अग्रदूत 'आर्य मित्र'

[श्री हरिप्रसाद आर्य रामपुर]

प्रभु की रचना में संसार में न जाने कितने परिवर्तन हुये। एक समय था जब कि सार्वभौमिक वैदिक धर्म एकेश्वर उपासना सर्वतन्त्र सिद्धान्त रहा। वैदिक धर्म के अनन्य भक्त राजा महाराजाओं का राज्य था। मनुष्य क्या पशु पक्षी भी सुख और शान्ति का जीवन व्यतीत करते थे। भारत की वैदिक सभ्यता और संस्कृति शिक्षा और दीक्षा का मान सारे संसार में था। वेदों के कला कौशल ज्ञान विज्ञान ने संसार को नाना प्रकार की विद्याओंसे सुशोभित कर वैदिक सभ्यता का संदेश दिया। संसार के कौन से वैज्ञानिक ने भारत की मुक्त कंठ से प्रशंसा नहीं की। परन्तु परिवर्तन रूप संसार में प्रकाश के पश्चात् अन्धकार दिन के पश्चात् रात्रि का आना स्वाभाविक ही है। समय ने पलटा खाया वैदिक काल के पश्चात् पौराणिक काल आया तब पुराणों के दूषित प्रभाव से उस समय के बड़े २ पण्डित साधु सन्यासी कोई न बच सके और बुद्धि वाद से शून्य हो आँख मींच कर पुराणों के प्रवाह में बहने लगे परिणाम यह हुआ कि पुराणों की एक शाखा वाममार्ग ने सभ्य समाज को धोखा दिया अर्थात् समाज के देवस्थानों को मद्य, मांस, और मादक द्रव्यों के लाइसेन्स के औफिसों का दर्जा दिया। धर्म जो मानव समाज को जीवित और स्वस्थ रहने के नियम सिखाता है उसका स्थान अन्धविश्वास और मन माने मतों ने घेर लिया। मद्य मांस सेवन और व्यभिचार भी धर्म माना जाने लगा। फलतः संसार के सभ्य शिक्षित समाज को इस धर्म से अथवा धर्म के नाम से घृणा होने लगी। कुरीतियों से समाज बेचैन हो उठा। समाज का भविष्य घोर अन्धकार मय बन गया। ऐसे विकराल काल में भविष्यज्ञाता युग निर्माता महर्षि दयानन्द सरस्वती का प्रादुर्भाव हुआ। महर्षि देश की दुर्दशा को देख कर रोने लगे। और वैदिक धर्म के पुनरुद्धारार्थ दृढ़ प्रतिज्ञा की उन्होंने बड़े धैर्य और साहस के साथ घोर अपमान और आपत्तियों का समयानुसार स्वागत करते हुये वैदिक धर्म की पुनः स्थापना की छल, दम्भ, नास्तिकवाद, गुरुडम, आदि नाना प्रकार की कुरीतियों का निवारण करके समाज का मुख पौराणिकता की ओर से हटा कर वैदिक धर्म की ओर फेर दिया। इतना ही नहीं वरन् मनुष्य समाज को वैदिक धर्म की दीक्षा से सुव्यवस्थित और संगठन कर गुण कर्म स्वभाव की योग्यता से वर्णाश्रम की वैदिक मर्यादा का पुनरुद्धार कर वैदिक आदर्श स्थापित किया। ऐसे महान् नेता दूरदर्शी महर्षि दयानन्द ने राष्ट्र धर्म द्वारा राष्ट्रोन्नति के लिये भारत का अनोखी सूझ अपने ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश पंचम समुल्लास के स्वर्णाङ्कित निम्न शब्दों में दी वह लिखते हैं कि 'जो स्वदेशीय राज्य होता है वही सर्वोपरि होता है अथवा मतमतान्तर का आग्रह और अपने पराये का पक्षपात रहित प्रजा पर माता पिता के समान कृपा दया और न्याय के साथ भी विदेशियों का राज्य पूर्ण सुखदायी नहीं हो सकता। इसीलिये उन्होंने राजस्थान में घूम कर कई राजाओं को मानव धर्मशास्त्र द्वारा राजा और प्रजा के धर्म का उपदेश दिया। राजाओं ने भी महर्षि की आज्ञाओं को बड़ी श्रद्धा भक्ति के साथ स्वीकार किया। और महर्षि का उचित मान किया। स्वामी जी राजाओं का एकीकरण करके राष्ट्र का ऊँचा उठाकर देश में महान् क्रान्तिकारी युग लाना चाहते थे यह उनका महान् लक्ष्य था। इसी लिये राष्ट्रहित ही में उनका अमर बलिदान भी हुआ

Dr. Vivek Arya Vedic Library

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उन्होंने बुद्धिवाद का प्रचार करके अन्धविश्वास और साम्प्रदायिक दासता छुड़ाई मानसिक स्वतन्त्रता दी सत्य और अहिंसा का पाठ ही नहीं पढ़ाया वरन् अपने जीवन में चरितार्थ करके वैदिक आदर्श स्थापित किया। उनका लक्ष्य किसी देश विशेष के लिये संकीर्ण नहीं था वरन् 'वसुधैव कुटुम्बकम्' विश्ववन्धुत्व विश्व शान्ति उनका महान् लक्ष्य था। उन्होंने किसी देश व जाति के मनुष्य को अछूत नहीं समझा। उनकी शिक्षा दीक्षा का द्वार मनुष्य मात्र के लिये खुला था। स्त्री जाति को अनुचित बन्धनों से मुक्त करके सुशिक्षित और निर्भीक बना कर मातृ शक्ति का मस्तिष्क ऊँचा किया। सारे देश में तप और त्याग की भावना को जाग्रत किया और भारत की गौरव शून्य निर्जीव जाति को पुनः पूर्व गौरव का स्मरण दिलाकर शौर्य वीर्य की भावना को भर कर देश तथा धर्म पर बलिदान होने का पात्र बनाया। महर्षि के बनाये क्षेत्र में महर्षि की शिक्षा दीक्षा से ही सत्य और अहिंसा को लेकर महात्मा गांधी ने देश को स्वतन्त्र कराया। अतः यह कहना अनुचित नहीं है कि आज हम भारतवासी महर्षि की कृपा से ही नवनिर्माण के उच्च मञ्च पर खड़े हैं संसार के राष्ट्रों में हमारा समानाधिकार ही नहीं वरन् मस्तिष्क ऊँचा है। महर्षि ने ही प्रजातन्त्र का भी मार्ग प्रदर्शन कराया, उन्होंने सामाजिक अधिकारों को जनतन्त्र के ही द्वारा देने का नियम बनाया। परन्तु उनका जनतन्त्र शास्त्र और नीति से बांधा हुआ था अर्थात् उनके राज्य शासन का नियम केवल गणतन्त्र ही नहीं वरन् गणतन्त्र के साथ गुणतन्त्र का है। अतः उनके गणतन्त्र में सदाचारी योग्य गुणवान् व्यक्ति ही निर्वाचित होने के लिये खड़ा हो सकता है, और मत देने का अधिकार भी सबको होते हुये मत का मूल्य आचार की दृष्टि से न्यूनाधिक है। उनके शास्त्रोक्त विधान में श्रेष्ठ सदाचारी न्याय प्रिय विद्वान की सम्मति सैकड़ों मूर्खों से अधिक मूल्यवान् है। महर्षि को इस नीति और सिद्धान्त का ठोस प्रचार लगभग साठ वर्ष से शान्ति और क्रान्ति का अग्रदूत 'आर्य मित्र' कर रहा है। 'मित्र' का प्रादुर्भाव भी एक महान् त्यागी तपस्वी सभ्य संसार की विमिल विभूति (महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज) के द्वारा हुआ। उस महान् आत्मा के तप से लगाया हुआ यह कल्प वृक्ष वैदिक धर्म की कल्पनाओं को संसार के कोने २ में पहुँचाने में पूर्ण सफल हुआ है। इसने वैदिक सिद्धान्त के प्रचार के लिये बड़ी २ आपत्तियों का स्वागत किया। आज गौरव के साथ यह कहा जा सकता है कि सभ्य संसार में 'आर्य मित्र' सब समाचार पत्रों से अधिक लोक प्रिय सिद्ध हो चुका है। इतने अल्प मूल्य में इतनी सामग्री देने वाला और कोई पत्र नहीं। देश के महान् नेताओं का आशीर्वाद भी इस के साथ पूर्ण रूप से है। अतः हमें आज संकल्प करना है कि हम अपने प्यारे मित्र को देश के कोने २ और घर में पहुँचाने का प्रयत्न करेंगे।

१६—आर्य समाज ने हिन्दू समाज में रूढ़वाद को नष्ट करके उदारता लाने का जो प्रयोग किया वह राष्ट्रीय उत्थान में एक बहुमूल्य देन है।

—डा० राजवली पाण्डेय (एम. ए. डी, लिट)
अध्यक्ष इतिहास और संस्कृति विभाग,
काशी विश्वविद्यालय

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

श्री नरदेवस्नातक जी संसद सदस्य
गुरुकुल विश्व विद्यालय वृन्दावन
के मुख्याधिष्ठाता

श्री पं० इन्द्र जी
गु० कु० वि० वि० कांगड़ी
के कुलपति

श्री अमनसिंह जी
गुरुकुल विश्व विद्यालय
कांगडी के भूमिदाता

श्री मती माता लक्ष्मीदेवी जी
कन्या गुरुकुल सासनी (हाथरस)
की संस्थापिका व अधिष्ठात्री

श्री राजा महेन्द्रप्रतापजी
संसद सदस्य गुरुकुल विश्व
विद्यालय वृन्दावन के
भूमिदाता

Dr. Vivek Arya Vedic Library, D

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

गुरुकुल आन्दोलन के कुछ समर्थक व हितैषी

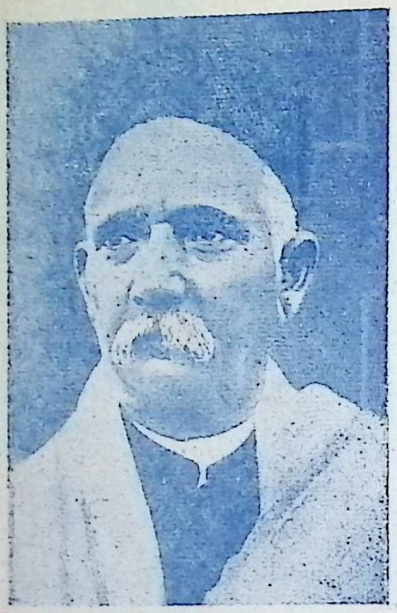

श्री मुरारीलाल जी
(भारत के प्रथम गुरुकुल सिकन्दराबाद
बुलन्द शहर) के संस्थापक

शास्त्रार्थ महारथी
श्री देवेन्द्रनाथजी शास्त्री

श्री आचार्य बृहस्पति जी
गुरुकुल विश्वविद्यालय
वृन्दावन के उपकुलपति

श्री आचार्य नरदेव जी शास्त्री
गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के कुलपति

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ऋषि दयानन्द की राजनैतिक विचारधारा

[श्री पं० बिहारीलालजी शास्त्री काव्यतीर्थ]

संसार में इस समय तीन विचारधारायें राजनीति में संघर्ष कर रही हैं। मार्क्सवादी विचारधारा, प्रजातन्त्र मय पूँजीवादी विचारधारा, और तीसरी गांधीवादी विचारधारा।

पहली विचार धारा तो व्यवहार में आती है। रूस, चीन, रूमानिया, यूगोस्लावाकि, पोलेंड, पूर्वी जर्मन आदि अनेक देशों के राज्य पहली विचारधारा से ही संचालित हो रहे हैं।

दूसरी विचारधारा का प्रमुख व्यवहारी है अमेरिका, इंगलेंड, भारत, फ्रांस आदि कई देश प्रजातन्त्रवाद को मानते हैं। भारत यद्यपि समाजवाद की व्यवस्था चलाने का घोषणा करता है पर चल रहा है पूँजीवादी अमेरिका के ही ढंग पर।

गांधीवादी विचार केवल जुबानी जमा खर्च है। सरकार पर गाँधीवाद का कोई रंग नहीं है।

अन्य अनेक साधु सन्तों की तरह श्री विनोबा जी भी अपनी बीन बजाते फिरते हैं पर जन जीवन पर इनके सिद्धान्तों का कोई प्रभाव नहीं।

मार्क्सवाद और गांधीवाद एवं विनोबा जी का लक्ष्य तो एक ही है एक श्रेणी वाले समाज का निर्माण। आर अन्त में ऐसा समाज बना देना जिसे राज व्यवस्था या सरकार की जरूरत ही न रहे। राजहीन समाज।

प्रिंस क्रोपाटकिन भी यही चाहता था। अनारकी या अराजकता ही उसके प्रयत्नों का ध्येय था।

महात्मा गांधी का भी ध्येय श्रेणी विहीन और राजरहित समाज का ही निर्माण था।

इनका पुस्तक "हिन्दस्वराज" देखने योग्य है।

पर ये स्वर्गीय स्वप्न या कल्पना के मोदक कभी वास्तविक रूप धारण कर सकते हैं।

विनोबाजी अथवा उनके कुछ साथी एक छोटी सीमायें कह कर चाहे बिना सरकारी प्रबन्ध के गुजारा करलें पर देश में घूमने पर वैद्यनाथ धाम में पंडों से मार खाने पर उन्हें भी पुलिस और सरकार की जरूरत पड़ी। हाँ, एक समय ऐसा था कि जब वर्ग हीन समाज था और राजरहित राष्ट्र।

नैव राज्यं न राजासीन्नदंडो न च दांडिकः
धर्मणैव प्रजाः सर्वा रक्षन्तिस्म परस्परम्
महाभारत राजपर्व

न राज्य था न राजा न दंडविधान (Penal code) न दंडाधिकारी धर्म से ही सब प्रजा आपस में परस्पर रक्षा करती थी।

पर यह वर्णन उस समय का है जब कि मनुष्य सृष्टि की आदिम दशा थी। थोड़े से लोग थे। न देश थे न प्रान्त। पर आजकल एक देश दूसरे को निगलने के लिये तैयार खड़ा है। मानव रूप में हिंसा पशुत्व जाग रहा है। इस समय श्रेणी विहीन समाज और राज्यहीन राष्ट्र की रागनी अलापना आसमानी स्वप्नों के अफसाने सुनाना ही है। लोग कहते हैं कि विज्ञान के चमत्कारों, रेडियो और विमानों ने संसार को एक कर दिया है और अब राकिटों का आविष्कार और संचालन विश्व एक बनाकर दम लेगा पर राजनीतियो की चालों से संसार की यह दशा है कि हमारी उनकी राहो रस्म का हासिल नहीं मिलता। घरों से घर मिले हैं पर दिलों से दिल नहीं मिलता, ऋषि दयानन्द परिस्थिति से आंख मीच कर कल्पना के परों पर उड़ने वालों में नहीं थे। उन्होंने राजा, राज्यदंड, दंडाधिकारी, अर्थ और उसका

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वितरण, समाज और व्यक्ति के अधिकार नर और नारी के कर्त्तव्य, पूँजीवाद की सीमा और कर्त्तव्य, समाज की श्रेणी व्यवस्था और उसकी अधिकार सीमायें, सब पर प्रकाश डाला है। सेनायें और संग्राम, हिंसा और अहिंसा सबके क्षेत्र और परिस्थितियों का उन्होंने विवेचन किया है।

समाज, व्यक्ति, राजा, सेना, युद्ध, शान्ति, वर्ग (वर्ण) धन जीवन सबके नियम लिखे हैं जो सहस्रों वर्ष तक प्रयोग में लाये जा चुके हैं, सफल रहते हैं। और जिन पर चल कर समाज ने वह उन्नत दशा प्राप्त की थी कि आज इतिहास और साहित्य के दर्पण में उस समाज का प्रतिविम्ब देख कर इस काल के लोगों को ईर्षा होती है। वैसा बनने को हृदय उमंगें लेता है। रामायण महाभारत और काव्यों में ही उस समाज का वर्णन हो इतना ही नहीं। उस समाज का भव्य चित्र मैगास्थनीज, फाहियान, ह्वेन-सांग जैसे विदेशी यात्रियों ने भी अङ्कित किया है।

भारतीय समाज के वैभव का चित्रांकन तो अरब यात्रियों तक ने प्रशंसा रूप में ही किया है।

उक्त यात्रियों के समय में तो समाज का यह चित्र बहुत कुछ धूलिधूसरित हो चुका था। समाज पर अविद्या का धूलधक्कड़ पर्याप्त मात्रा में पहुँच चुका था। यदि उस समय का समाज विदेशियों को इतना भव्य प्रतीत हुआ तो त्रेता का समाज वस्तुतः वैसा ही रहा होगा जैसा कि आदिकवि बालमीकि जी ने लिखा है।

अयोध्या वासी सब प्रसन्न और धर्मात्मा और बहुत पढ़े लिखे न थे। अपने अपने धन से सन्तुष्ट, लोभ रहित तथा सत्यवादी थे। कामी, कृपण कापर हत्यारा क्रूर मूर्ख नास्तिक कोई व्यक्ति अयोध्या में नहीं देखा जा सकता था।

सब नरनारी धर्मशील संयमी शील और सदाचार से उन्नत महर्षियों के समान निर्मल थे।

ऋषि दयानन्द ने कोरी कल्पनाओं को आधा न बना कर वेद शास्त्र और मनु का अनुसरण किया है। उनका राजतन्त्र, प्रजातन्त्र, सब शास्त्राधीन है।

शास्त्र हैं सहस्रों वर्षों के अनुभूत प्रयोगों का संग्रह। तदधीन राज्यावस्था रहने से व्यवस्था स्थायी होती है। समाज में स्थिरता आती है। बार बार विधान परिवर्त्तन और बार बार समाज के ढंग बदलने से समाज और विधान दोनों निर्बल होकर चकनाचूर हो जाते हैं। आर्य जाति जो इतने तूफानों से बचकर भी आज जीवित जाग्रत है उसका कारण है उसका स्थिर और पूर्ण सामाजिक विधान मनुस्मृति वेद शास्त्र।

स्वामीजी महाराज एकतन्त्र वा तानाशाही (Dictator-ship) के पक्ष में नहीं हैं। और न उच्छृंखल प्रजातन्त्र के पक्ष में। देखिये उनके वाक्य :—

क—"एक को स्वतन्त्र राज्य का अधिकार न देना चाहिये किन्तु राजा जो सभापति तदधीन सभा सभाधीन राजा, राजा और सभा प्रजा के आधीन और प्रजा राजसभा के पराधीन रहे"।

ख—"राजा और राजसभासद् तब हो सकते हैं कि जब चारों वेदों की कर्मोपासना ज्ञान विद्याओं के जानने वालों से तीनों विद्या-सनातन दंडनीति न्यायविद्या आत्मविद्या अर्थात् परमात्मा के गुणकर्म स्वभावरूप को यथावत् जानने रूप ब्रह्मविद्या और लोक से वार्ताओं का आरम्भ सीख कर सभासद् व सभापति हो सके।

सब सभासद् और सभापति इन्द्रियों को जीतने अर्थात् अपने वश में रखके सदा धर्म में वर्तें और अधर्म से हटेहटाये रहें इस लिये रात दिन निश्चित समय में योगाभ्यास भी करते रहें। क्योंकि जो जितेन्द्रिय अपनी इन्द्रियों (जो मन प्राण शरीर प्रजा हैं) इस को जीते विना बाहर की प्रजा को अपने वश

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

में स्थापन करने को समर्थ कभी नहीं हो सकता"।

आन्वीक्षिकीं चात्म विद्यां वार्तारम्भा श्चलोकतः

स्वामीजी भी प्रजातन्त्र के पक्ष में हैं। चुने हुए राजा का ही अधिकार चाहते हैं। पर और राजसभासद् कितने योग्य होने चाहिये यह ऊपर लेख से आंका जा सकता है। पर आज तो दलबन्दी की दलदल में योग्यता को धक्का देकर दूर कर दिया जाता है। मजहब, बिरादरी और मुसंड पने के बल पर या पैसे के सहारे जो "वोट" बटोर सके चाहे अँगूठा टेक हो, महाधूर्त भी हो, उसे टिकट देने को

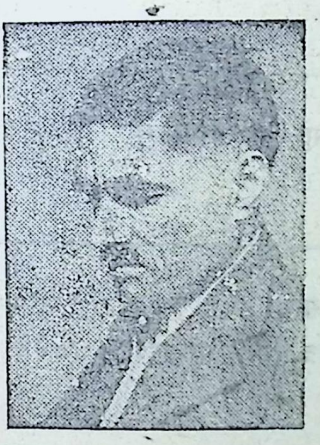

लेखक

प्रत्येक पार्टी तैयार है। दोष है जनता का जो योग्य अयोग्य की परीक्षा किये बिना 'वोट' देती है। पंचायतों में तो और भी गड़बड़ होती है। एकम्यु० बोर्ड में १६ सदस्य हैं। जिन में एक मैट्रिक पास है अन्य सब कोरे। सभापति जी भी हिन्दी उर्दू साधारण जानते हैं और कुछ नहीं। रुपये के बल पर चुनाव जीतने वाले अनुचित रूप से धन पैदा करते हैं। ऐसा प्रजातन्त्र न स्वामीजी को प्रिय है न गांधी जी अभीष्ट पाकिस्तान में भी प्रजातन्त्र था पर वहां के स्वार्थी और आचार भ्रष्ट नेताओं ने सब कुछ समाप्त कर दिया आज वहां डंडे का शासन है। और डंडे से जो शासित होता है वह पशु है मनुष्य नहीं। पर यह दशा कब होती है?

आता है ना खुदाओं के ईमाँ में जब खलल
उठते हैं साहिलों से वह तूफान पूछिये।

भारत के कुछ निर्मल चरित्र नेताओं के कारण अभी प्रजातन्त्र पनप रहा है। ईश्वर कृपा रक्खे।

स्वामी जी का तात्पर्य उस धार्मिक शासन से है जो तकसंगत, सहिष्णु और नैतिक आचार को आधार मानने वाला हो।

अहिंसा को भी स्वामीजी परम धर्म मानते हैं। संस्कार विधि में स्वामीजी ने अहिंसा को धर्म के लक्षण में गिना है। पर मनु के अनुसार वैधानिक हिंसा अर्थात् दुष्टों को दंड देने की हिंसा को अनुचित नहीं माना। स्वामीजी दंडविधान में पूरी कठोरता के पक्ष में हैं। पर निष्पक्षपात दंड हो। जिसमें राजा तक की रियायत नहीं की जाय। पूरा छठा समुल्लास पढ़ने से पता लगता है कि शास्त्रोद्धृत राजनीति ऋषि दयानन्द की कितनी विशद और उपयोगी है।

१७—आर्य समाज हिन्दू धर्म के अतीत गौरव की पुनः स्थापना के लिये प्रयत्नशील आन्दोलन है और राष्ट्रीय जागरण का दैवालिक है।

—श्री के० आर वन्थास,
राजनीति विभाग, नैनीताल, डिग्री कालेज।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वैदिक एवं आर्ष साहित्य

वेद

(१) ऋग्वेद	(२) यजुर्वेद	(३) सामवेद	(४) अथर्ववेद
वेदद्रष्टा—(अग्नि ऋषि)	(वायु ऋषि)	(आदित्यऋषि)	(अंगिरा ऋषि)
विषय— (ज्ञान)	(कर्म)	(उपासना)	(विज्ञान)

आर्ष साहित्य

उपवेद

आयुर्वेद	धनुर्वेद	गान्धर्ववेद	अर्थवेद
विषय (चिकित्सा)	(शासन व शस्त्र प्रबन्ध करना)	(संगीत)	(शिल्प कला)

वेदांग

शिक्षा | कल्प | निरुक्त | व्याकरण | ज्योतिष | छन्द

ब्राह्मण ग्रन्थ

ऐतरेय	शतपथ	साम	गोपथ
विषय-(ऋग्वेद संबंधी साहित्य)	यर्जुवेद संबंधी साहित्य	(सामवेद संबंधी साहित्य)	(अथर्ववेद संबंधी सा.)

उपांग

(वैशेषिक दर्शन)	(न्याय)	(सांख्य)	(योग)	(मीमांसा)	वेदान्त
विषय-सृष्टि	उपादान	परिगणन	पुरुषार्थ	कर्म	निमित्त

ये छन्द सृष्टिकारणों की पृथक पृथक व्याख्या करते हैं, इधके कर्त्ता हैं--

कणाद | गौतम | कपिल | पातंजलि | जैमिनि | व्यास

उपनिषद्

वेद तथा उनकी शाखाओं के प्रमुख अध्याय विशेष हैं तथा कुछ आरण्यकों के अंश हैं--

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
ईश	केन	कंठ	प्रश्न	मुण्डक	माण्डुक्य	एतरेय	तैत्तिरीय	छान्दोगय	वृहदा०

इस पृष्ठ के प्रकाशन का व्यय श्री माता लक्ष्मी देवी—चेरिटी ट्रस्ट कलकत्ता की ओर से भेंट किया गया।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

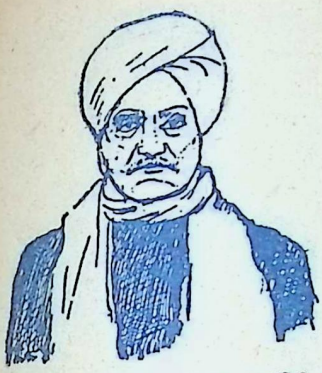

श्री ला० नारायणदत्त जी

श्री डा० केशवदेव जी शास्त्री

शाहपुराधीश
श्री ना.र.सिंह जी

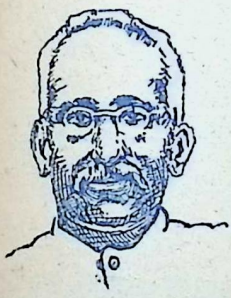

श्री पं० तुलसी रामजी

श्री बा० ज्योतिस्वरूपजी

श्री स्वामी भवानीदयालजी
संन्यासी

श्री चंदनरणजी शारद

श्री शहीद राजपाल जी

श्री ठा० माधवसिंह जी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

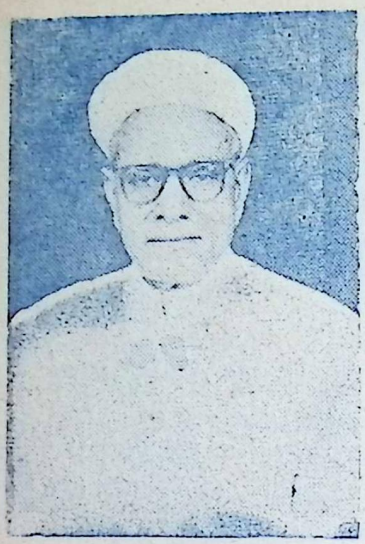

श्री सेठ किशनलालजी पोद्दार
कलकत्ता

श्री रामबहादुर मुख्तार

श्री मोहनलाल जी आर्य

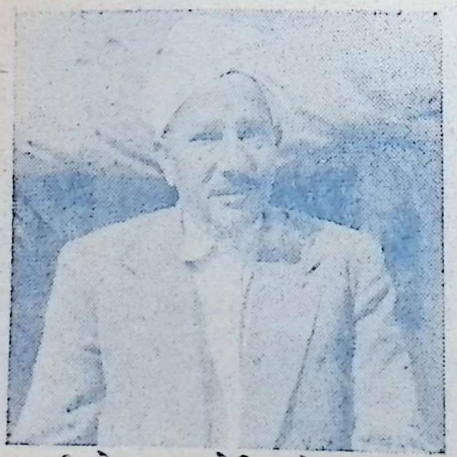

श्री मोहनलाल मोहित भौरीशस

श्री गु दासरामजी हकीम(गढ़ा)

श्री जगनन्दनलालजी एड

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

श्री पंडित पद्मसिंह जी शर्मा

[श्री रामस्वरूप शास्त्री, काव्यतीर्थ ।]

आचार्य प्रवर गुरुवर श्री पं० पद्मसिंह जी शर्मा साहित्याचार्य अपनी प्रखर प्रतिभा से तत्कालीन विद्वन्मण्डल में अग्रगण्य थे जबकि हिन्दी साहित्य के उच्चकोटि के लेखक अपनी लेखनी का चमत्कार दिखा रहे थे। श्री पूज्य पंडित जी का जन्म जिला बिजनौर के चाँदपुर के समीप नायक नगला ग्राम में हुआ था, आपके पूज्य पिताजी का नाम श्री उमराव सिंहजी शर्मा था। बचपन में फारसी और उर्दू में आपने व्युत्पन्नता प्राप्त की बाद में आपने संस्कृत पढ़ी और संस्कृत साहित्य में तो इतना परिश्रम किया कि उसके वे पारङ्गत विद्वान् हो गये। उनके चरणों में बैठ कर पढ़ते हुए यह लेखक उनसे पूछ बैठा कि "पंडितजी! आपने संस्कृत साहित्य के कितने ग्रन्थ पढ़ डाले हैं" उत्तर मिला कि भारत के प्रेसों में जितने भी काव्य, नाटक, कथा, आख्यायिका आदि काव्य ग्रन्थों से सम्बन्ध रखने वाला साहित्य प्रकाशित हुआ है अपनी समझ में मैंने उन सब ग्रन्थों को मनन पूर्वक पढ़ा है। इससे प्रतीत होता है कि उनका कितना व्यापक पांडित्य था यही हाल फारसी के साहित्य का था। संस्कृत और फारसी के उद्भट विद्वान् के लिये हिन्दी और उर्दू में अच्छी योग्यता प्राप्त कर लेना कौन बड़ी बात थी। उन्होंने हिन्दी और उर्दू के साहित्य का भी पूर्ण रूप से अनुशीलन किया। संस्कृत, फारसी तथा उर्दू में तो वे यदा-कदा ही लिखते थे। जो कुछ उन्होंने लिखा है वह सब हिन्दी साहित्य की अपूर्व निधि है। संस्कृत भी वह उच्च कोटि की लिखते थे। उनके उर्दू लेखन प्रकार की प्रशंसा उस समय के महाकवि अकबर लाक ने की है। फारसी और उर्दू के ख्यातनामा साहित्यकार शमशुलउल्महाली आदि से उनका पत्र-व्यवहार भी था। वह लेखनी के धनी थे। उनकी लेखनशैली अपूर्व थी। मामूली सी बात को भी लिखने बैठते थे तो उसमें जान डाल देते थे। सम्पादन कलाके तो वे इतने विशेषज्ञ माने गये थे कि उन्हें प्रायः सभा हिन्दी के बड़े बड़े लेखक उन्हें "सम्पादकाचार्य" के नाम से ही पुकारते थे। अपने लेखों में किसी के द्वारा काट छाँट किया जाना बिल-कुल नापसन्द था। 'सतसई संहार' नामक लेख तब तक सरस्वती में न छप सका जब तक कि श्री पं० महावीर प्रसाद जी द्विवेदी उसका सम्पादन कर रहे थे कि श्री द्विवेदी जी प्रत्येक लेखक के लेख को अपने सांचे में ढाल कर उसे छापते थे। श्री पद्मसिंह जी शर्मा को यह सह्य नहीं था यद्यपि श्री द्विवेदी उनके मित्र थे तथापि अपने लेख उन के द्वारा कुछ भी हेरफेर किया, जाना पसन्द नहीं था. देव-योग से श्री द्विवेदी जी छुट्टी पर चले गये तब वह लेख 'सरस्वती' में अविकल छपा। जिन दिनों में सरस्वती की ख्याति बहुत बढ गयी थी, पाठक चातक की भांति अगले अङ्क की व्याकुलता से प्रतीक्षा करते रहते थे, लेख पहुँचने में विलम्ब हो जाता तो बार बार तकाजा होता था। उस लेख से वह हिन्दी के साहित्यिक जगत् में चमक गये। बड़े बड़े लेखक उनका लोहा मान गये, सैकड़ों ही लेखकों ने उनकी प्रणाली को अपनाने का प्रयत्न किया किन्तु इस मामले में बन्धुवर श्री पं० हरि-शङ्कर जी शर्मा के सिवा और कोई लेखक इतना सफल नहीं हुआ।

अजमेर से 'परोपकारी' मासिक पत्र निकला और पूज्य पंडित जी सम्पादन काल में 'परोपकारी' खूब चमका बाद में ज्वालापुर महाविद्यालय में उनकी आवश्यकता हुई वे वहां चले गये।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सर्वविदित है कि ज्वालापुर महाविद्यालय में आर्य विद्वन्मण्डली के अनर्घ्य रत्न इकट्ठे होकर अध्यापन कार्य करने लगे थे, पूज्य पंडित जी उस समय महाविद्यालय सभा के मन्त्री, आर्य विद्वत्सभा के मन्त्री और 'भारतोदय' मासिक बादमें साप्ताहिक के सम्पादक रहे। महाविद्यालय में आने से पहले वे गुरुकुल काँगड़ी में भी रहे थे और महाविद्यालय छोड़ने के अनन्तर भी उन्होंने गुरुकुल कांगड़ी में कुछ दिन काम किया था। इसके अनन्तर वे अखिल भारतवर्षीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रधान चुने गये। प्रान्तीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन का सभापतित्व तो वे उससे बहुत पहले ही कर चुके थे। प्रयाग की हिन्दुस्तानी अकादमी में भी उनके खोज और विद्वत्ता से पूर्ण निबन्ध पढ़े गये थे। उस समय हिन्दी संसार मे उनके जोड़ का कोई लेखक नहीं था किन्तु महर्षि दयानन्द के अनन्य भक्त थे और आर्य समाज के कर्मठ अध्यापक, लेखक और न जाने क्या क्या थे, इसलिये हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखक उनका उतना समादर नहीं करते जितना सम्मान उन्होंने साधारण से साधारण व्यक्तियों का किया है। आर्य समाज के उस समय हिन्दी संसार में तीन जगमगाते रत्न थे जिनके समकक्ष कोई कवि, लेखक और साहित्यिक न था। वे थे महामहिम पूज्य महाकवि श्री पं० नाथूराम शङ्कर जी शर्मा, सम्पादकाचार्य श्री पं० रुद्रदत्त जी शर्मा और साहित्याचार्य श्री पं० पद्मसिंहजी शर्मा। इनमें श्री पं० रुद्रदत्तजी शर्मा को तो किसीने याद भी नहीं किया। यह है हिन्दी साहित्य का इतिहास लिखने वालों का दिमागी दिवालापन या कलुषित प्रवृत्ति। कुछ भी हो श्री पं० पद्मसिंह जी शर्मा आर्य समाज के धुरन्धर साहित्यिक विद्वान, लेखक, अध्यापक, उपदेष्टा और निःस्वार्थ सेवक थे। आर्य-समाज उनकी सेवाओं का चिरऋणी रहेगा। शोक है कि सन् १९३२ में उनका असमय में ही देहावसान हो गया। आर्य जगत् का एक अनुपम रत्न प्लेग पिशाच का ग्रास बन गया।

ब्रज एवं उसकी भाषा

विश्व के सभी साहित्यकों को सर्व प्रिय है इसलिये दीर्घ चेष्टाओं के पश्चात् एक साथ ४ पुस्तकें प्रकाशित—

ब्रज साहित्य सम्बन्धी

ब्रज संस्कृति पर चार रत्न

सूर का वसंत वर्णन —चुन्नीलाल 'शेष' ४)
ब्रज की कला —कृष्णदत्त वाजपेयी २)
ब्रज की रासलीला —शर्मनलाल अग्रवाल २)
ब्रज वसुन्धरा —कैलाश चन्द्र शर्मा २)

प्राप्ति स्थान—

देशबन्धु पुस्तकालय मथुरा।

प्रदर्शनी में स्टाल नं० ६३ याद रखिये।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दीक्षा-समारोह का संदेश

[श्री पं० भूदेवजी शास्त्री, सिद्धान्त शिरोमणि एम. ए.]

सम्पूर्ण मनुष्य-समाज को आर्य-समाज में परिवर्तित करने के लिये महर्षि दयानन्द ने "आर्य-समाज" को जन्म दिया था संभवतः वे सोचते थे कि एक छोटी-सी संस्था के रूप में उत्पन्न आर्य-समाज धीरे धीरे अपना क्षेत्र-विस्तृत करते हुए सच्चे अर्थों में आर्य समाज बन जायगा। मानवता के दुर्भाग्य से आर्य समाज संस्था बनकर ही रहगया और अपने जीवन के अस्सी वर्षों में समाज न बन पाया।

जब यह संस्था अपने शैशव में थी उस समय इसका प्रत्येक सदस्य एक जलता हुआ दीपक था। वह अपने वातावरण में व्याप्त तमस से संघर्ष करता हुआ अपने चारों ओर प्रकाश और उष्णता का विकिरण करता रहता था इतना ही नहीं वह अपनी अद्भुत तेजस्विता के साथ नये-नये दीपकों को भी प्रज्वलित करता चलता था। परन्तु जैसे-जैसे सदस्य संख्या बढ़ी और कार्यक्षेत्र का विस्तार हुआ, वैसे-वैसे संस्था की तेजस्विता कम होने लगी। आज जब कि मानवता नास्तिकता पर आधारित साम्यवाद तथा पूँजीवादपर आश्रित मिथ्या जनतन्त्र के बीच में पिस रही है और जब कि उसे अपनी रक्षा के लिए इस संस्था की सबसे अधिक आवश्यकता है, वह ऐसी दशा को प्राप्त हो चुकी है कि उससे न तो शत्रु डरते हैं और न मित्र उसका आदर करते हैं।

महर्षि दयानन्द का निर्वाण दीपावली अमावस्या के दिन मनाई जाती है। अमावस्या घोर अन्धकार की निशा होती है, तथापि उस दिन भगवान सूर्य इस समय विदा लेते हैं, जब हजारों दीपक आकाश-दीप को अपनी प्रभा से आलोकित करने लगते हैं। महर्षि दयानन्द रूपी सूर्य भी ऐसे ही समय अस्त हुआ, जबकि आर्य समाज रूपी विशाल महा-दीपक और उसके सदस्यों रूपी असंख्य लघु दीपक सर्वत्र व्याप्त नैराश्य निशा में अज्ञात अन्धकार से लोहा लेने लगे थे। भौतिक एवं सामाजिक दोनों क्षेत्रों में एक साथ पड़ने वाली इन दोनों क्षेत्रों में वलियों का कुछ आध्यात्मिक अर्थ एवं महत्व है। प्रत्येक आर्य को उस पर गम्भीरता के साथ विचार करना चाहिए। उसे सोचना चाहिए जिस संस्था का वह अंग है उसका आरंभ क्यों हुआ था वह उद्देश्य पूरा हुआ अथवा नहीं, यदि वह पूरा नहीं हुआ तो उसके व्यक्तित्व अथवा संस्था की कौन-कौन सी त्रुटियाँ उसके लिए उत्तरदायी हैं और उन्हें दूर करने के लिये उसे क्या-क्या करने का दृढ़ निश्चय कर लेना चाहिए।

दीक्षा-दिवस के पवित्र अवसर पर तो हमारा चिन्तन और अधिक गहरा और वास्तविक हो जाना चाहिए।

जब आर्य-समाज की तेजोहीनता की बात कह-कर भविष्य के लिए निराशा प्रकट की जाती है, तब उसके कुछ शुभचिन्तक कहा करते हैं कि आर्य-समाज आज भी पहले के समान ही तेजस्वी है और उसकी दृश्यमान तेजोविहीनता का कारण उसके कार्य-क्षेत्र का विस्तार है, उसकी बल-हीनता नहीं। अपने कथन के प्रमाण रूप में वे आर्य समाज द्वारा चलाए हुए आन्दोलनों की ओर संकेत किया करते हैं। ऐसे लोगों की सद्भावना में सन्देह नहीं किया जा सकता परन्तु उनसे सहमत होना कठिन है। हमें अपनी तथा अपनी संस्था की तेजस्विता का नाप अपने आन्दोलनों से नहीं अपितु आन्दोलनों द्वारा उत्पन्न उत्साह को अपने लक्ष्यों की प्राप्ति में उपयोग करलेने तथा अपने विरोधियों अर्थात् जातिवाद, वर्गवाद, भाषावाद, सम्प्रदायवाद, भ्रष्टाचार तथा

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अत्याचार इन सब को कुचल डालने की क्षमता से करना चाहिए। इस क्षमता की दृष्टि से हमारी स्थिति कुछ अच्छी नहीं है। हमें अपने चिन्तन से स्वयं ही धोखा खा जाने से बचना चाहिए।

आज आर्य समाज की दो सबसे बड़ी आवश्यकताएँ हैं, पहली यह कि आर्य समाज को संस्था नहीं समाज बन जाना चाहिए और दूसरी यह कि उसका संचालन ब्राह्मणों अर्थात् पूरा समय देकर काम करने वाले चरित्रवान्, विद्वान् सेवाभावी एवं संगठन-कुशल काम करने वाले चरित्रवान्, विद्वान् सेवाभावी कार्यकर्त्ताओं द्वारा किया जाना चाहिए। समाज से मेरा तात्पर्य बिरादरी से नहीं है। बिरादरी अपने स्वरूप में संकुचित एवं प्रगति-शून्य होती है। इसमें कठोर परम्पराएँ पुजती हैं, प्राणिशास्त्र प्रतिपादित जीवन के तेजस्वी सिद्धान्त नहीं। समाज से मेरा तात्पर्य एक ऐसे समूह से है, जो गुण, कर्म और स्वभाव के आधार पर नये-नये व्यक्तियों का ग्रहण एवं आत्मीकरण दोनों कर सके और इस प्रकार सम्पूर्ण मानवता को अपनी परिधि में लाने की जीवित जाग्रत महत्वाकांक्षा लेकर विकास और विस्तार में अनवरत प्रवृत्त रहे। इस रूप में संस्था का पुनर्निर्माण एवं उसका कुशल संचालन ब्राह्मण कर सकता है, प्रस्तावों के बम फेंकने वाले, संघर्ष के अवसर पर दूसरों के कन्धों पर धर कर बन्दूक छोड़ने वाले और रचनात्मक कार्य के स्थान पर बातूनी जमा-खर्च करने वाले बम्मन या बाबू लोग नहीं। ब्राह्मण शब्द को सुनकर किसी को आज की जातिव्यवस्था के तथाकथित "पंडिज्जिओं" का धोखा नहीं होना चाहिए।

प्रश्न यह है कि यह कार्य कैसे हो? इस कार्य के लिए आर्यसमाज के विधान तथाउसकी कार्य-पद्धति आमूल चूल परिवर्तन करना पड़ेगा। ऐसी व्यवस्था करनी पड़ेगी कि जो व्यक्ति नियमित रूप से कार्य न करें, वे आर्य सभासद् न बन सकें और अधिक समय देकर कार्य को आगे बढ़ाने वाला व्यक्ति स्वतः आगे बढ़ जाए। सम्भव है कि कुछ समय के लिए आर्य समाज के वर्तमान विधान को स्थगित करके कुछ समय तक तदर्थ समितियों से काम चलाना पड़े। यह भी संभव है कि पदों से चिपके रहने वाले व्यक्तियों को उनकी इच्छा के विरुद्ध हटाना भी पड़े। यदि हम चाहते हैं कि आर्य समाज अपने लोकोपयोगी, उग्र तथा तेजस्वी रूप में प्रगट हो, तो हमें यह सब करना चाहिए। देहोपजीवी रोगाणु और स्वस्थ शरीर दोनों साथ-साथ नहीं पनप सकते, यह बात सदैव ध्यान में रखनी चाहिए।

दीक्षा-समारोह के पुण्य अवसर, पर जानबूझ कर यह विचार प्रस्तुत किये जारहे हैं। ऐसे पुण्य अवसर होते ही इसलिए हैं कि इन पर हम गम्भीर आत्म चिंतन करें और अपने अतीत की सफलताओं और असफलताओं पर विचार करके भविष्य के लिए योजनाएँ बनाएँ। यह पवित्र अवसर युवकों का आह्वान करता है कि वे आर्य समाज के पुनर्निर्माण के पवित्र व्रत की दीक्षा लें और नये समाज और नये नेतृत्व के निर्माण में जुट पड़ें। क्या आर्य युवक इस आह्वान को कर सकेंगे?

———

कर्ण रोग नाशक तैल रजिस्टर्ड

यह हमारी कान की दवा सन् १९३७ से प्रसिद्ध है। इस दीर्घकाल में हजारों ने इसकी परीक्षा करके हमें प्रशंसा पत्र भेजे हैं। आप भी एक बार अनुभव कर देखिये। दवा का मूल्य १ शीशी १।) पैकिंग पोस्टेज १।) छै शीशियों पर डाक व्यय फ्री। अधिक विवरण मुफ्त मंगाकर देखिये।

पता—कार्यालय, 'कर्ण रोग नाशक तैल'
सन्तोमालन मार्ग नजीबाबाद यू० पी०
NAJIBABAD U. P.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation

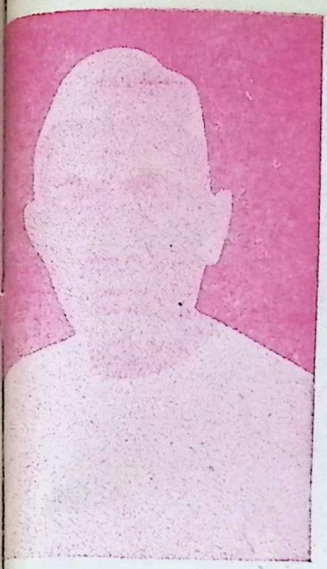

श्री बाबू पूर्णचन्द्र

श्री रामदत्त शुक्ल

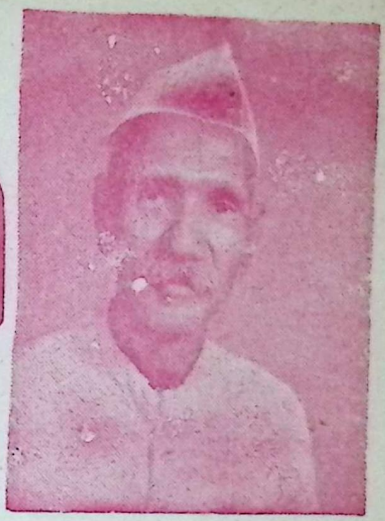

श्री कालीचरण

श्री प्रकाशवीर शास्त्री

श्री सेठ मदनमोहन

श्री प्रेमचन्द्र

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

श्री घनश्यामसिंह गुप्त

श्री देशबन्धु गुप्त

श्री महाशय कृष्ण

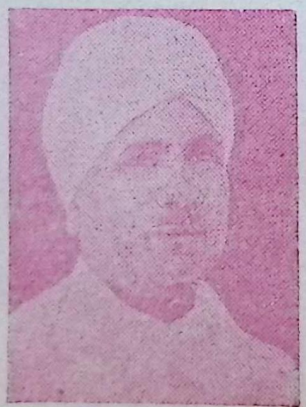

श्री पं० जियालाल

श्री पं० रामचन्द्रदेहलवी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

र्यसमाज एक सार्वभौम संस्था है

[श्री आचार्य विश्वश्रवा:]

कुछ संस्थायें नगर तक सीमित होती हैं, कुछ त तक, और कुछ एक देश तक इन्हें वोर्ड, तीय सरकार या केन्द्रीय सरकार कहते हैं। नीतिक और धार्मिक सस्थायें भी अखिल भार. य होती हैं जैसे काँग्रेस हिन्दूसभा जनसंघ राम-य परिषद्।

जिस संस्था का जितना व्यापक क्षेत्र होता है ा ही उसका दृष्टि कोण होता है। बात करने का

लेखक

ार भी उसी ढंग का होता है। जिस प्रकार आज न जाट सभा ब्राह्मण सभा अग्रवाल सभा में बैठ र लोग जाटों ब्राह्मणो अग्रवाल वैश्यों की उन्नति विचार करते हैं वैसा विचार अखिल भारतीय ंस्थाओं में नहीं हो सकता न वैसा प्रस्ताव भी खिल भारतीय संस्थाओं में रखा जा सकता है ठीक इसी प्रकार आर्य समाज जो अखिल भारतीय संस्था नहीं है उसमें केवल भारत के दृष्टिकोण से बात नहीं कही जा सकती निर्णय नहीं हो सकते। सारे संसार के कल्याण के दृष्टिकोण से बात कही जावेगी उसमें भारत भी होगा तथा अन्य देश भी।

महर्षि स्वा० दयानन्द सरस्वती जी ने सन्ध्या के सम्बन्ध में लिखा है कि मन्त्र का उच्चारण कर के उसके अर्थ पर विचार करो। आर्यावर्त नि० आर्य आर्यभाषा में विचार करेगा और एक अँग्रेज अँग्रेजी भाषा में, जापानी व्यक्ति जापानी भाषा में और चीनी चीनीभाषा में। वेदवाणी भारत की नहीं वह सारे संसार की है उसको सब बोलेगें मन्त्र रूप में।

ऋषि ने आर्य समाज सार्वभौम भी नहीं रखा इस समय हमारा सम्बन्ध भूमि वालों से है पर हो सकता है कि चन्द्र आदि लोकों में यातायात होने पर तब सार्वभौम शब्द भी असंगत हो जाये अतः ऋषि ने कहा—

"सब संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उदेश्य है अर्थात् शारीरिक आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।"

अर्थात् आर्य समाज के जीवन का प्रोग्राम यह है कि सब संसार की शारीरिक उन्नति आत्मिक उन्नति और सामाजिक उन्नति करे केवल भारत की नहीं। भारतवर्ष ही सब संसार की गुलाम बना कर राजा होजाये यह अखिल भारतीय संस्थाओं का प्रोग्राम हो सकता है आर्य समाज का नहीं। आर्य समाज का दृष्टिकोण तो यह है कि अपने अपने देश में सर्वत्र अपना अपना राजा ही चक्रवर्ती साम्राज्य और बात है। उसका तो अर्थ यह है कि जिस प्रकार केन्द्रीय सरकार की स्थापना होने पर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रान्तीय सरकारें परस्पर युद्ध नहीं करती जैसे पहले कोटा बूंदी के राजे आपस में लड़ा करते थे। इसी प्रकार समस्त संसार की एक केन्द्रीय सरकार यदि बना दी जावे तो रूस अमरीका चीन जापान ये एक एक राष्ट्र की सरकारें लड़ न सकेगी। वह चक्रवर्ती सम्राट किसी भी देश का हो सकता है जो राजा सत्य प्रिय धार्मिक अन्याय न करने वाला पक्षपात शून्य होगा जिसके न्याय से सर्वत शांति रहे वह चक्रवर्ती राजा होगा।

अतः आर्यसमाज की वेदि तथा सभाओं द्वारा कोई ऐसा पग नहीं उठाया जाना चाहिए जिसके कारण हमारी सार्वभौम स्थिति में अन्तर पड़े। परस्पर दो राष्ट्रों के झगड़ों में सीमित अथवा किसी देश के घरेलू झगड़े को अपने ऊपर लेना सार्वदेशिक संस्था का काम नहीं है। किसी देश के रहने वाले या इस देश के रहने वाले अपने देश की समस्याओं में उलझे यह आवश्यक है पर यह कार्य सार्वदेशिक संस्था द्वारा नहीं करना चाहिये उसके लिए अपने अपने देश की तत्तपदेशीय संस्थाओं के निर्माण की आवश्यकता है उनके द्वारा उस काम को करें।

महर्षि ने आर्यसमाज के सार्वदेशिक रूप की रक्षा प्रतिक्षण स्मरण रखी है। उसके दो एक उदाहरण देता हूं।

१ देश भर में जो संकल्प प्रचलित है ऋषि भी उसकी प्रशंसा करते हैं और उस संकल्प को महर्षि ने ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में दिया है परंतु ऋषि ने उस संकल्प को इस रूप में लिखा है—

ओं तत्सत् श्री ब्राह्मणो द्वितीयप्रहरार्धे वैवस्वतमन्वन्तरे ऽष्टाविंशतितम् कलियुगे कलि प्रथमचरणे ऽमुकसवत्सर इत्यादि। यहां ऋषि ने संकल्प में "जम्बूद्वीये भरतखण्डे आर्यावर्ते" इत्यादि नहीं रखा है।

आर्यसमाज की ओर से जो विधि बने वह सार्वदेशिक होनी चाहिये एक देशीय नहीं।

२—दूसरा उदाहरण यह है कि यज्ञ की पद्धति में 'अदिते ऽनुमन्यस्व' आदि जलसिंचन के सम्बन्ध में जो स्थिति गोभिल ऋषि ने लिखी है।

आदिते ऽनुमन्यस्वेति दक्षिणतः प्राचीनम्
अनुमते ऽनुमन्यस्वेति पश्चादुदीचीनम्
सरस्वत्यनुमन्यस्वेति उत्तरतः प्राचीनम्

इत्यादि रूप में जो जलसिंचन के विषय में दिशा निर्देश किया है इस को ऋषि ने एक देशी समझकर सार्वदेशिक न होने के कारण छोड़ दिया है इस प्रकार हम समझते हैं कि ऋषि का स्पष्ट मत है कि सब संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है न कि केवल एक देश की समस्याओं में आर्यसमाज को उलझाना। जो इतनी समझ रखता वही आर्य समाज का सच्चा हितेषी है।

सच्चे तीर्थ कौन से हैं?

१. वेदादि सत्य शास्त्रों का पढ़ना पढ़ाना। २. धार्मिक विद्वानों का परोपकार। ३. धर्मानुष्ठान। ४. योगाभ्यास। ५. निर्वैर, निष्कपट सत्य भाषण। ६. माता पिता की सेवा। ७. परमेश्वर की स्तुति जितेन्द्रियता। ८. सुशीलता। ९. धर्म युक्त पुरुषार्थ। १०. ज्ञान-विज्ञान आदि शुभ गुण कर्म।

सभी दुःखों से तारने के कारण तीर्थ हैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Ramkumar Agarwala & Bros.

4, LYONS RANGE, CALCUTTA—1

Telephone : 22-6494 (4 Lines)

Telegrams "MITHAL"

MICA :

CHRESTIEN MICA INDUSTRIES LTD.

Worlds's Premier Mica Company. Largest Producers and Exporters of Indian Ruby Mica.

ASSOCIATED MINING INDUSTRIES LIMITED.

COAL :

NEW CHURULIA COAL CO., LTD.
SONEPUR COHL FIELDS LTD.

MANGANESE.

ESTERN MANCANESE AND MINERALS PRIVATE LTD.
ORISSA MANGANESE AND MINERALS PRIVATE LTD.

FINANCE AND INVESTMENTS :

BENGAL HOLDINGS LTD.
CALCUTTA HOLDINGS LTD.
GANGES HOLDINGS LTD.
INDIAN OLDINGS LTD.

PROPERTIES :

SHREE BHARAT PROPERTIES PRIVATE LTD.

TEXTILES :

BENGAL NAGPUR COTTON MILLS LTD.

Mosquito Netting our speciality.

PRINTING INK :

GANGES PRINTING INK FACTORY PRIVATE LTD.

India's famous Printing Ink manufacturers.

RUBBER :

INDIAN RUBBER MANUFACTURERS LTD.

Premier Rubber Goods Manufacturers. Specialists in 'Slazenger' Brand Tennis Balls.

ENGINEERING AND FOUNDARY ;

INDIAN MALLEABLE CASTINGS LTD.

Pioneer Manufacturers of Malleable Iron Castings to suit all Requirements of Railways, Jute and Cotton Mills and other Industries.

CONTINENTAL TOOLS & DIES MANUFACTURING COMPANY (P) LTD.

Manufacturers of all types of Tools, Dies and Gauges, Power Presses and other Sheet Metal Machineries.

REFRACTORIES :

RELIANCE FIREBRICK AND POTTERY CO., LTD.

Manufacturers of quality Refractories, Fire Bricks of all sizes, Fire Clays and Fire Cements; Acid Resisting Ware, Acid Proof Bricks, Cement Semi-Vitrified Bricks and Cement; Insulating Bricks and Mortar.

MINERALS :

MERCHANTS' SYNDICATE PRIVATE LIMITED.

Mine Owners, Miners, Pulverisers of all Minerals.

ICE AND REFRIGERATION :
HIMALAYA ICE PRIVATE LTD.

PHARMACEUTICALS :

CLEY'S PRODUCTS (INDIA) PRIVATE LTD.

MORGEN AND MORGAN.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

For your Coal

Contact Parasea Collierius Ltd.

☆

Managing Agents :—

M's. Deep Chand Kishen Lall

25, Netaji Subhash Road,

CALCUTTA *1.*

Gram–'PARSEA' Calcutta. Phone–22–5284 (3 Lines)

☆

South Parasea Collieries Private Ltd.,

25, Netaji Subhas Road,

CALCUTTA 1.

Gram–'PARSEA' Calcutta. Phone–22–5284 (3 Lines)

☆

For Export of Manganesed Iron ore

Contact K. L. Poddar & Sons Private Ltd.

25, NETAJI SUBHAS ROAD,

CALCUTTA-1

Gram–'PARSEA' Calcutta. Phone–22–5284 [3 Lines]

☆

Branch–6 Church Street, Bangalore-1

Gram–'MANGANESS' Bangalore. Phone–3808.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation

दयानन्द दीक्षा शताब्दी

एवं

आर्यमित्र हीरक जयन्ती

की

सफलता के लिये

शुभ-कामना

श्री लक्ष्मी आयरन एन्ड स्टील वर्क्स प्रा० लि०

ए १६, कलाकार स्ट्रीट,

कलकत्ता—७.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्य जनता, आर्यसमाजों तथा पुस्तकालयों के लिये

शुभसमाचार

शुभ दयानन्द दीक्षा समारोह के शुभ अवसर के उपलक्ष्य में 'आर्यावर्त' के संचालकों ने यह निश्चय किया है कि कि 'आर्यावर्त' के ३१ जनवरी १९६० तक ग्राहक बनने वाले समाजों तथा पुस्तकालयों को २॥) रु० तथा आर्य जनता को ३)० रु० वार्षिक मूल्य पर प्रचारार्थ दिया जाए। आर्य जनता को मालूम ही है कि प्रतिवर्ष 'आर्यावर्त' के ४ विशालकाय विशेषांक जनवरी, मार्च, अगस्त तथा नवम्बर में प्रकाशित किये जाते हैं। जिनकी सर्वसाधारण द्वारा मुक्त कंठ से प्रशंसा की जाती है। अतः आप शीघ्र ही निम्न पते पर धनराशि भेजकर ग्राहक श्रेणी में अपना नाम लिखवाइये।

व्यवस्थापक—
'आर्यावर्त'
नया बाजार, लश्कर।

❀ आर्य हवन सामग्री ❀

विश्व के समस्त भाई बहिनों से तथा सभी यज्ञ प्रेमियों से निवेदन है कि सर्व रोग नाशक सुगन्धित आर्य हवन सामग्री का ही नित्य प्रयोग करें। नं० १ मेवा युक्त हवन सामग्री का भाव ८०) मन है। नं. २ सुगन्धित हवन सामग्री का भाव ५०) मन है।

निवेदक—
वेदपथिक धर्मवीर आर्य
झंडा धारी उपदेशक
अध्यक्ष आर्य हवन सामग्री
निर्माणशाला
रायरुहेला देहली ५

आर्यमित्र

हीरक जयन्ती के शुभावसर पर

हमारी

हार्दिक शुभ कामनायें

❀ एस० डी० शर्मा एण्ड कं०
❀ बाल बेयरिंग और मिल मशीनरी विक्रेता
❀ २० नेताजी सुभाष रोड,
कलकत्ता १.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्यसंसार की ४० वर्ष से सेवा करने वाली

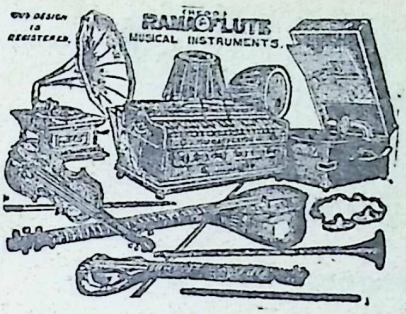

फैक्ट्री !

जिसकी अमेरिका, अफ्रीका, फीजी, बृटिश गायना, आदि देशों में ऐजेन्सियाँ हैं

तथा

भारतवर्ष के नगर, ग्राम, गृहस्थ परिवार, धार्मिक और आर्यसंस्थाओं में नाना प्रकार के

संगीतवाद्य !

मौजूद हैं

आज वैदिक धर्म प्रचारार्थ ! आर्य भाई, बहिनों भजनीकों स्त्री समाजों और शिक्षणालयों तथा आर्यसमाज की समस्त देश, विदेश की संस्थाओं को सूचना दी जाती है कि अगर सुन्दर सुरीले मजबूत विश्वसनीय और गारंटी भरोसे के हर जगह के हर मौसम में ठीक काम देने वाले नापसंदगी पर वापसी की शर्त पर, हारमोनियम आदि संगीतवाद्य, मँगाना हो तो उचित मूल्य में हमको ही सेवा करने का अवसर देवें ।

निवेदक— **रामानन्द ब्रदर्स**

आर्य हारमोनियम फैक्ट्री,

अलीगढ़ यू० पी० (भारत)

ओ३म्

शास्त्रोक्त विधि द्वारा निर्मित-जगत्प्रसिद्ध

शुद्ध सुगन्धित हवन सामग्री

नमूना बिना मूल्य

पत्र भेजकर नमूना, कमीशन की दर व एजेन्सी लेने के नियम आदि बिना मूल्य मंगा लीजिये ।

आर्य संस्थाओं तथा बन्धुओं को बिना वी० पी० पी० भी भेजने का नियम है ।

पता:—सुन्दरलाल रामसेवक शर्मा

शुद्ध सुगन्धित हवन सामिग्री भण्डार

मु. पो. अमौली, जिला फतेहपुर, उत्तर प्रदेश ।

चंद्रिका परफ्यूमरी वर्क्स का रजिस्टर्ड

सी. एल. चन्द्रकिरन आइल

यह अनुपान भेद से सैकड़ों रोगों में अमृत समान गुण कारी है जैसे चेचक सूखा पसली चलना सर्दी जुकाम इन्फ्लोएंजा बुखार सभल वायु का शिर दर्द काला साँप पागल कुत्ता सियार वगैरह के काटे पर शीघ्र गुथा कारी है हर एक शीशी के साथ प्रयोग पत्रिका फ्री रहती है

मूल्य प्रत्येक शीशी २) रु०

कलंत्री स्टोर्स अमीनाबाद, लखनऊ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Phone No. 22-2465-69 (5 Lines)

Gram : BAKATEX

SWADESHI INDUSTRIES LTD.

33, Netaji Subhas Road,

CALCUTTA.

(Established in 1936)

Mills at—*Panihati, 24-Parganas, West Bengal.*

TEXTILE SECTION—

Manufacturers of Cotton Dhoties, Sarees, Art-silk fabrics and VALVET also Flock Printing a speciality.

RE-ROLLING MILLS—

Manufacturers of Mild steel Rods, Flats, Angles, gate channels etc. both rested and untested.

BAKELITE SECTION—

Manufacturers of 221-INDIA Bakelite Electrical Accessories
Brand

such as Switches both Porcelain and Bakelite, Ceiling Roses, Holders, cut outs Plugs etc.

INDIA'S FIREST INDIA'S BEST.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation Chennai

टेलीफोन [आफिस—३५-४८९३.
निवास—५५-५०३९.

★ मेसर्स रामा रोलिंग मिल्स ★

रजिस्टर्ड री-रोलर्स
एण्ड
गवर्नमेन्ट सप्लायर्स

उत्पादनकर्त्ता—एम० एस० राउन्ड्स, फ्लेट्स, स्क्वायर्स
तथा
गेट चैनेल्स इत्यादि।

१५६, मानिकतल्ला मैन रोड, कलकत्ता ११

Phone { Office 35-4893
Resi- 55-5039

M/s. RAMA ROLLING MILLS

REGISTERED RE-ROLLERS
&
GOVERNMENT SUPPLIERS

Manufacturers Of—M. S. ROUNDS FLATS SQUARES
&
GATE CHANELS ETC.

156, MANICK TOLA MAIN ROAD
CALCUTTA-11

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सरल और सुविधाजनक

किश्तों पर

ट्रक, कार, बस, टैक्सी, निजी गाड़ियों

के लिये

डी० एन० पोद्दार एण्ड कम्पनी
१२६।१।१ महात्मा गाँधी रोड, कलकत्ता-७

से

सम्पर्क स्थापित कीजिये

फोन नं० ३४१८६६

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

FOR HIRE PURCHASE

OF

★★ TRUCKS

★★ CARS

★★ BUSES

★★ TAXIS

Please Contact

Calcutta Credit Corpn., Ltd.

36, CHOWRINGHEE RD.

CALCUTTA 16.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

राजा

धान कूटने की अच्छी मशीनें
और उनके पुर्जे

卐 राजा राइस हलर 卐

की विशेषता भारत में सुप्रसिद्ध है।

यह अच्छे इस्पात और हुशियार कारीगरों द्वारा
बनाया जाना है।

राजा बेबी हलर ५ घोड़े के इन्जन से या ३ घोड़े की
मोटर से १ घन्टे में ४ से ५ मन धान का
चावल बना देता है।

★

मशीनें बनाने वाले—

एस० एम० चोपड़ा एन्ड सन्स

७०२, बाबूलाल लेन, कलकत्ता—७

स्थापित-१९२६. } टेलीफोन-३३२३९७ { तार का पता-राजा हलर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रेष्ठतम मार्ग खोजने की प्रतिज्ञा के बजाय जो सही
मार्ग नहीं है, हम उससे बचते रहें और जो
काम हमें बुरा लगे उसकी अपेक्षा, जो
भला हो उसे अपनायें ।

—जवाहरलाल नेहरू

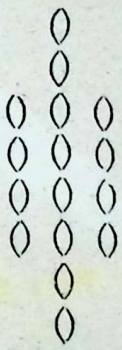

सर्वोत्तम व सन्तोषजनक कोयले की सप्लाई के
लिए सम्पर्क स्थापित कीजिए ।

खास काजोरा कोल कम्पनी लिमिटेड

कोयले की खान:—
खास काजोरा कोलियरी
मु०—काजोरा ग्राम
जिला—(बर्दवान)

हैड आफिस—
५६, नेताजी सुभाष रोड,
कलकत्ता—१.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

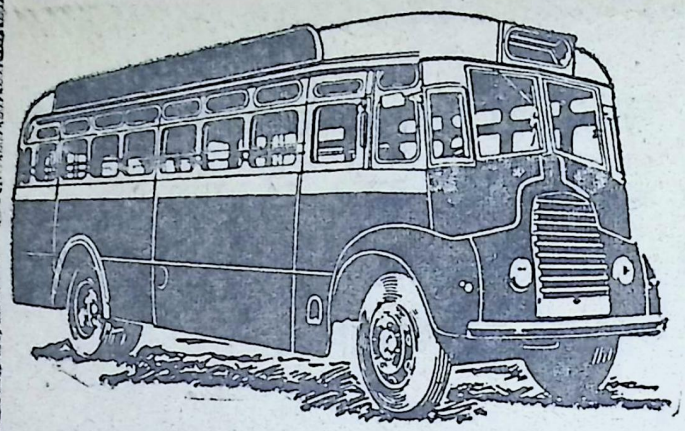

FULL FORWARD CONTROL

With 190" Wheelbase the new Passenger chassis is intended for operation as a BUS or COACH with ample seating capacity. Mechanical refinements ensure good average speed, exceptional fuel economy and "cushioned" ride.

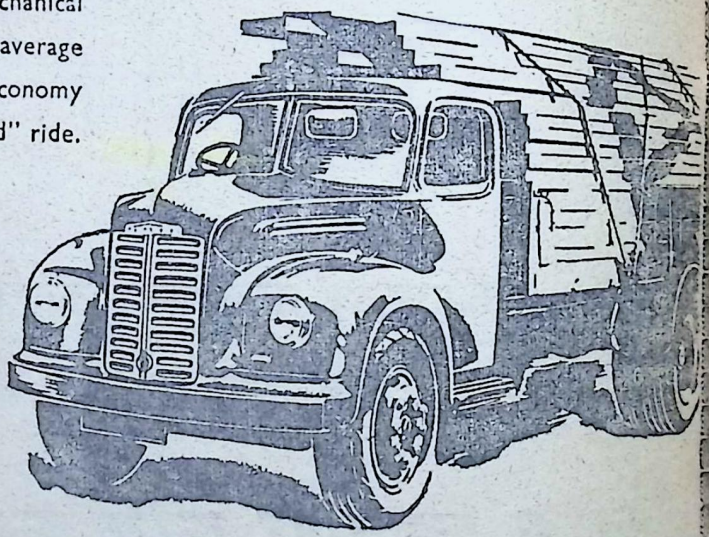

LOW COST POWER

DODGE

DIESEL

The sturdy 165" Wheelbase Diesel chassis with improved engine efficiency guarantees maximum load carrying power with economy throughout the entire speed range.

AUTO DISTRIBUTORS LTD.

36, Chowringhee Road, Calcutta

DF/AD-DD/4.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation Chennai

श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट के महत्वपूर्ण नये प्रकाशन

ऋषिदयानन्दकृत-यजुर्वेदभाष्य-विवरण

प्रथम भाग, संशोधित व परिवर्धित द्वितीय संस्करण

पाठकों को यह जानकर महान् हर्ष होगा कि महर्षि दयानन्द सरस्वतीकृत यजुर्वेदभाष्य के प्रथम भाग १० अध्याय पर्यन्त का संशोधित व परिवर्धित द्वितीय संस्करण छपकर तैयार हो गया है, यह संस्करण महर्षि के हस्तलेखों तथा फोटो से मिलान करके तैयार किया गया है। साथ में ऋषि के अनन्य भक्त, वेदों के विद्वान्, तपोमूर्ति श्री पं० ब्रह्मदत्तजी जिज्ञासु कृत विवरण भी है, जिसमें ऋषि, देवता छन्द, पदपाठ, पदार्थ अन्वय, भावार्थ एवं मूलहस्तलेखों इत्यादि विषयों पर बड़ी ही मार्मिक तथा विद्वत्तापूर्ण टिप्पणियाँ हैं और व्याकरणानुसार स्वरप्रक्रिया तथा त्रिविध प्रक्रिया भी है। आर्षग्रन्थों के प्रमाणों सहित ऋषिभाष्य की पुष्टि की गई है। स्थान स्थान पर महीधर सायणादिकृत भाष्यों की भूलों पर भी प्रकाश डाला गया हैं। ग्रन्थ के आरम्भ में १५० पृष्ठों की भूमिका में पूर्वोक्त विषयों पर गम्भीर और गवेषणात्मक विवेचन है। ग्रन्थ ३२ पौंड के २२×३१=८ आठपेजी स्पैशल रैग पेपर के लगभग ११०० पृष्ठों में तैयार हुआ है। ७ प्रकार के विभिन्न टाइपों में सुंदर व मनोरम मुद्रण तथा पूरे कपड़े की पक्की जिल्द हैं।

११०० पृष्ठों की पुस्तक का मूल्य केवल लागतमात्र १६)रुपये

वैदिक छन्दोमीमांसा

[ले० युधिष्ठिर मीमांसक]

इस पुस्तक में वैदिक छन्दोविषयक जितने भी ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं और विशाल वैदिक वाङ्मय में जहाँ कहीं भी वैदिकछन्दोविषयक कोई सामग्री उपलब्ध हुई उन सबके आधार पर प्रथम बार महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखा गया है। इतनी सामग्री एक स्थान पर किसी भी ग्रन्थ में उपलब्ध न होगी। वैदिकछन्दों के जितने भेद प्रभेद हैं उन सबकी विशद व्याख्या के साथ साथ उनके वैदिक उदाहरण भी दिये हैं। इससे ग्रन्थ की महत्ता और बढ़ गई है।

मू० ४·५०

रामलाल कपूर एण्ड संस लिमिटेड पेपर मर्चेंट

गुरुबाजार, अमृतसर। नई सड़क देहली। बिरहाना रोड, कानपुर। ५१ सुतार चौल, बंबई। वेदवाणी कार्यालय, पो० अजमतगढ़ पैलेस, वाराणसी ६ (बनारस ६)

नोटः—दीक्षा शताब्दी समारोह के अवसर पर ट्रस्ट की दूकान मथुरा जावेगी। अतः ग्राहक महानुभाव वहाँ से भी उपर्युक्त ग्रन्थों को प्राप्त कर सकते हैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जैपुरिया उद्योग प्रतिष्ठान

३३, नेताजी सुभाष रोड, कलकत्ता–१

ग्रामः—जैपुरिया फोनः—२२-२४६५-६९

कपड़ा और सूता

स्वदेशी काटन मिल्स कं० लि० कानपुर (उत्तर प्रदेश)
स्वदेशी काटन मिल्स कं० लि० पोण्डीचेरी (साउथ इण्डिया)
स्वदेशी काटन मिल्स कं० लि०, नैनी, इलाहाबाद (उत्तर प्रदेश)
स्वदेशी काटन मिल्स कं० लि०, उदयपुर (राजस्थान)

कोयला

सामला कोलियरीज लिमिटेड, पाण्डवेश्वर (वेस्ट बंगाल)
जैपुरिया काजोरा कोलियरीज लिमिटेड ओंडाल (वेस्ट बंगाल)

चीनी

गणेश सुगर मिल्स लि०, आनन्दनगर (उत्तर प्रदेश)
श्री आनन्द सुगर मिल्स लिमिटेड खलीलाबाद (उत्तर प्रदेश)

तैल, वनस्पति और साबुन

दि बरार स्वदेशी वनस्पति, शेगांव (बोम्बे स्टेट)
बैकेलाइट, रि–रोलिंग मिल्स, सिल्क,

शाखायें:—

कानपुर, बम्बई, देहली, पोण्डीचेरी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

राष्ट्र का भविष्य
बलिष्ठ नागरिकों पर निर्भर

शिक्षा संस्थाओं में शारीरिक व्यायाम तथा मनोरंजन के साधनों की पर्याप्त व्यवस्था

☆

केन्द्रीय सरकार की महत्त्वपूर्ण योजना का उद्देश्य स्वस्थ सशक्त और चरित्रवान विद्यार्थियों का निर्माण उत्तर प्रदेश की ३२ उच्च शिक्षा संस्थाओं को इस कार्य हेतु अभी तक ५ लाख ५४ हजार रुपये प्रदान, राज्य के विभिन्न माध्यमिक विद्यालओं में २६ मंडपों, एवं क्रीड़ांगन, एक व्यायामशाला तथा एक तैरने के जलाशय का निर्माण कार्य पूर्ण चालू वित्तीय वर्ष में योजना पर ३ लाख ५० हजार रुपये खर्च होंगे व्यय का तीन चौथाई केन्द्रीय सरकार देगी।

शेष २५ प्रतिशत शिक्षा संस्थाएँ वहन करेंगी। अध्यापक और छात्र श्रमदान द्वारा सक्रिय सहयोग प्रदान करेंगे.

आयोजन को सफल बनाकर अपने बच्चों के लिये स्वस्थ वातावरण तैयार करिये।

सं० १३

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दैनिक स्वाध्याय के ग्रन्थ

(१) ऋग्वेद सुबोध भाष्य—मधु छंदा मेधातिथी, शुनः शेप कण्व, परागौतम, हिरण्यगर्भ, नारायण, बृहस्पति, विश्वकर्मा, सप्त ऋषि व्यास आदि, १८ ऋषियों के मन्त्रों के सुबोध का मूल्य १६) डाक व्यय १॥)

ऋग्वेद का सप्तम मण्डल (वशिष्ठ ऋषि)--सुबोध भाष्य। मूल्य ७) डाक-व्यय १)

यजुर्वेद सुबोध भाष्य अध्याय १—मूल्य १॥), अष्टाध्यायी मू० ३) अध्याय ३६, मूल्य ॥) सबका डाक व्यय १)

अथर्ववेद सुबोध भाष्य—(सम्पूर्ण १८ काण्ड) मूल्य २६) डाक-व्यय ५)

उपनिषद् भाष्य--ईश २), केन ॥), कठ १॥), मुण्डक १॥) माण्डूक्य ॥), ऐतरेय ॥) सबका डाक व्यय २)

श्रीमद्भगवतगीता पुरुषार्थ बोधनी टीका--मूल्य १२॥) डाक-व्यय २)

वैदिक व्याख्यान—अग्नि में आदर्श पुरुष, [२] वैदिक अर्थ-व्यवस्था [३] स्वराज्य, [४] सौ वर्ष की आयु, [५] व्यक्तिवाद और समाजवाद, [६] शांतिः शांतिः शांतिः, [७] राष्ट्रीय उन्नति, [८] सप्त व्याहृति, [९] वैदिक राष्ट्रनीति, [१०] वैदिक राष्ट्र शासन, [११[वेद का अध्ययन-अध्यापन [१२] भागवत में वेद दर्शन, [१३] प्रजापति का राज्य शासन, [१४] त्रैत, द्वैत, अद्वैत, [१५] क्या विश्व मिथ्या हैं ?, [१६] वेदों का संरक्षण ऋषियों ने कैसे किया ?, [१७] आप वेद रक्षण कैसा कर रहे हैं ?, [१८] देवत्व प्राप्ति का अनुष्ठान, [१९] जनता का हित करने क कर्त्तव्य, [२०[मानव की सार्थकता, [२१] राष्ट्र निर्माण, [२२] मानव श्रेष्ठ शक्ति, [२३] वेदोक्त विविध प्रकार के शासन। प्रत्येक का मूल्य ।=) डाकव्यय पृथक। आगे व्याख्यान छप रहे हैं।

ये ग्रन्थ सब पुस्तक विक्रेताओं के पास मिलते हैं।

पता—स्वाध्याय मण्डल किल्ला पारडी, जिला सूरत।

मथुरा में हमारे स्टाल पर अवश्य पधारें

महर्षि दीक्षा शताब्दी के उपलक्ष्य में हमारी एक अनुपम भेंट

प्रभु भक्त दयानन्द

तथा उनके आध्यात्मिक उपदेश

ले० आर्य जगत् के प्रसिद्ध विद्वान् श्री आचार्य भद्रसेन

यदि आप ऋषि दयानन्द के एक परमयोगी महान् सन्त तथा भगवद्भक्त के रूप में दर्शन करना चाहते हैं। यदि ऋषि प्रदर्शित भगवद्भक्ति का सच्चा स्वरूप देखना चाहते हैं। और यदि जीवन में सुख, शान्ति तथा आनन्द का संचार करने वाले ऋषि के सैंकड़ों आध्यात्मिक उपदेशों को पढ़कर अपने जीवन को उच्च, महान् तथा सुखमय बनाना चाहते हैं तो आप एक बार इस पुस्तक का अवश्य स्वाध्याय करें।

कुछ प्रसिद्ध महाप्माओं की सम्मितियाँ—

१. आर्य समाज के क्षेत्र में ऋषि के प्रभु भक्ति के भावों मथा उपदेशों का ऐसा उत्तम संग्रह अभी तक नहीं हुआ। —म० प्रभुआश्रित

२. यहपुस्तक सब प्रभु भक्तों के पास पहुँचनी चाहिये। —म० आनन्द स्वामी

३. मैं आपकी इस पुस्तक को पढ़कर अपनी प्रसन्नता का वर्णन नहीं कर सकता। —म० आनंद भिक्षु

आचार्य भद्रसेन कृत अन्य प्रसिद्ध रचनायें—

योग और स्वास्थ्य मू० २॥), प्राणायाम मू० ।॥), योगासन मू० ॥=), योगासन चित्र पट मू० ॥), आदर्श की ओर मू० १।), आर्य सत्संग गुटका मू० ।=)।

वीररत्न आर्य व्यवस्थापक—आदर्श साहित्य निकेतन, अजमेर।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

नैनोल

दुखती आंख, लाली, घाव, आदि अनेक नेत्र रोगों की अत्यन्त लाभप्रद औषध.

लाखों व्यक्ति प्रतिवर्ष लाभ उठाते हैं

नैनोल काजल

आंखों को नीरोग तथा सुन्दर बनाता है।

मैनेजर: देहली केमिकल्स ४ दरियागंज देहली ७

सफेद दाग

यह हमारी दवा सन् १९३६ से प्रसिद्ध है। इस दीर्घ काल में हजारों ने इसकी परीक्षा करके हमें प्रशंसापत्र भेजे हैं। आप भी एकबार अनुभव कर देखिए, दवा का मूल्य ५), डाक व्यय १।) रु०। अधिक विवरण मुफ्त मँगाकर देखिये।

वैद्य के० आर० बोरकर
(आर्य)
मु. पो. मंगरूलपीर
जि. अकोला (विदर्भ)

लक्ष्मणधारा

* * * हमेशा पास रखिये

हैजा, कै, दस्त, पेट का दर्द जी मिचलाना, कफ़, खांसी जुकाम, मंदग्नि, ज्वर आदि रोगों से बचने के लिए

हर जगह मिलता है रूप बिलास कम्पनी कानपुर

इहलोक-परलोक हित

गीता
तुलसीकृत रामायण
मंडल-नियमानुसार
मुफ्त प्राप्त कीजिए

नियम तथा सूचीपत्र मुफ्त मँगाइये परोपकार कीजिये। जीवन क्षणभंगुर है।

पता—व्यवस्थापक
वर्णव्यवस्था मण्डल
(आ०) फुलेरा जिला जयपुर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दयानन्द दीक्षा समारोह के उपलक्ष में हम निम्न प्रकाशन प्रस्तुत करते हैं

गुरु विरजानन्द

(प्राक्कथन लेखक श्री पं० युधिष्ठिर जी मीमांसक। पृष्ठ संख्या ६४ मूल्य ।।) मात्र

महात्मा आनन्द स्वामी कृत नई पुस्तकें

भक्त और भगवान १) मानव जीवन गाथा १)

वैदिक दैनन्दिनी (डायरी १९६०

हर पृष्ठ पर सौर तिथि, चन्द्र तिथि, अंग्रेजी तारीखें तथा शक सम्वत् की तारीखों के साथ नक्षत्र दिये गये हैं। साथ ही हर पृष्ठ पर चारों वेदों से चुनी हुई सूक्तियाँ तथा उनका अर्थ दिया गया है। प्रारम्भ में प्रातःकालीन भजन, गायत्री मन्त्र अर्थ सहित, प्रातःकाल पढ़ने के, रात्रिकाल पढ़ने के मन्त्र, राष्ट्रीय गान संगठन सूक्त, आर्यसमाज के नियम, आर्य पर्वों की सूची केन्द्रीय सरकारी छुट्टियां, प्रार्थना मन्त्र तथा यज्ञ प्रार्थना के साथ-साथ गुरु विरजानन्द, स्वामी दयानन्द, ऋषि भक्त दानवीर सेठ नानजी भाई कालीदास मेहता का चित्र भी प्रकाशित किया गया है। साथ ही महर्षि दयानन्द स्मारक ट्रस्ट टंकारा के भव्य भवन का चित्र भी दिया गया है। मूल्य १।) दर्जन १०।।) डाक खर्च अलग।

महर्षि दयानन्द का गायत्री मंत्र अर्थ सहित १९६० का कैलन्डर

महर्षि का चित्र बढ़िया कागज पर आफसेट मशीन से छपा है गायत्री मंत्र दो रंगों में ।=) दर्जन २।।।) डा० ख० अलग

गोविन्दराम हासानन्द ४४०८ नई सड़क देहली

दयानन्द दीक्षा शताब्दी के सुअवसर पर अपूर्व भेंट—

प्रयोगशाला गुरुकुल बृन्दावन की

❋ चमत्कारी औषधि ❋

शरद् ऋतु का उत्तम उपहार

अमृत भल्लातकी रसायन

☆

यह जिलाजीत मकरध्वज वंग कान्त लौहादि मूल्यवान् वस्तुओं से निर्माण की गई महारसायन, अमृत के समान लाभकारीहै।

यह समस्त वातरोगों को दूरकर शरीर में नवशक्ति का संचार करती है। इसके सेवन से अपने थके हुए एवं निर्बल शरीर को शरद् ऋतु में सेवन करके पूर्ण बलिष्ठ बनाइए और इसके चमत्कार का अनुभव कीजिये।

प्रातः एवं सायं दूध के साथ सेवन कीजिये।

गुरुकुल वृन्दावन आयुर्वेदिक प्रयोगशाला लिमिटेड

बाबूराम भारवी द्वारा भगवानदीन आर्य भास्कर प्रेस, ५ मीराबाई मार्ग लखनऊ से मुद्रित तथा प्रकाशित।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation Chennai

AN ALL ROUND CONTRIBUTION

From our

GROUP OF ORGANISATIONS

TO FRAME INDIA'S FUTURE

WITH

IRON & STEEL

★**National Iron & Steel Co., Ltd.**

For Mild & Special Alloy Steel Sections and Castings and Bolts, Nuts, Rivets etc.

★**Tatanagar Foundry Co., Ltd.**

For C I. Sleepers, Pipes and General Castings.

★**National Screw & Wire Product Ltd.**

For Copper Conductors & Wire & Wire Nails etc.

★**Britannia Building & Iron Co , Ltd.**

For All Kinds of Steel & Civil Engineering Work and Earthmoving Work.

Head Office :

Stephen House,

4, DALHOUSI SQUARE EAST,

CALCUTTA-1.

Gram :

NISCOWORKS, CALCUTTA.

Phone :

23-4311 (8 Lines)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

With Compliments from :

STEEL RE-ROLLING MILLS,
ASSOCIATION
OF
INDIA

20, STRAND ROAD,
CALCUTTA.

PHONE : 22-1101-07.

GAAM : STROLL

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

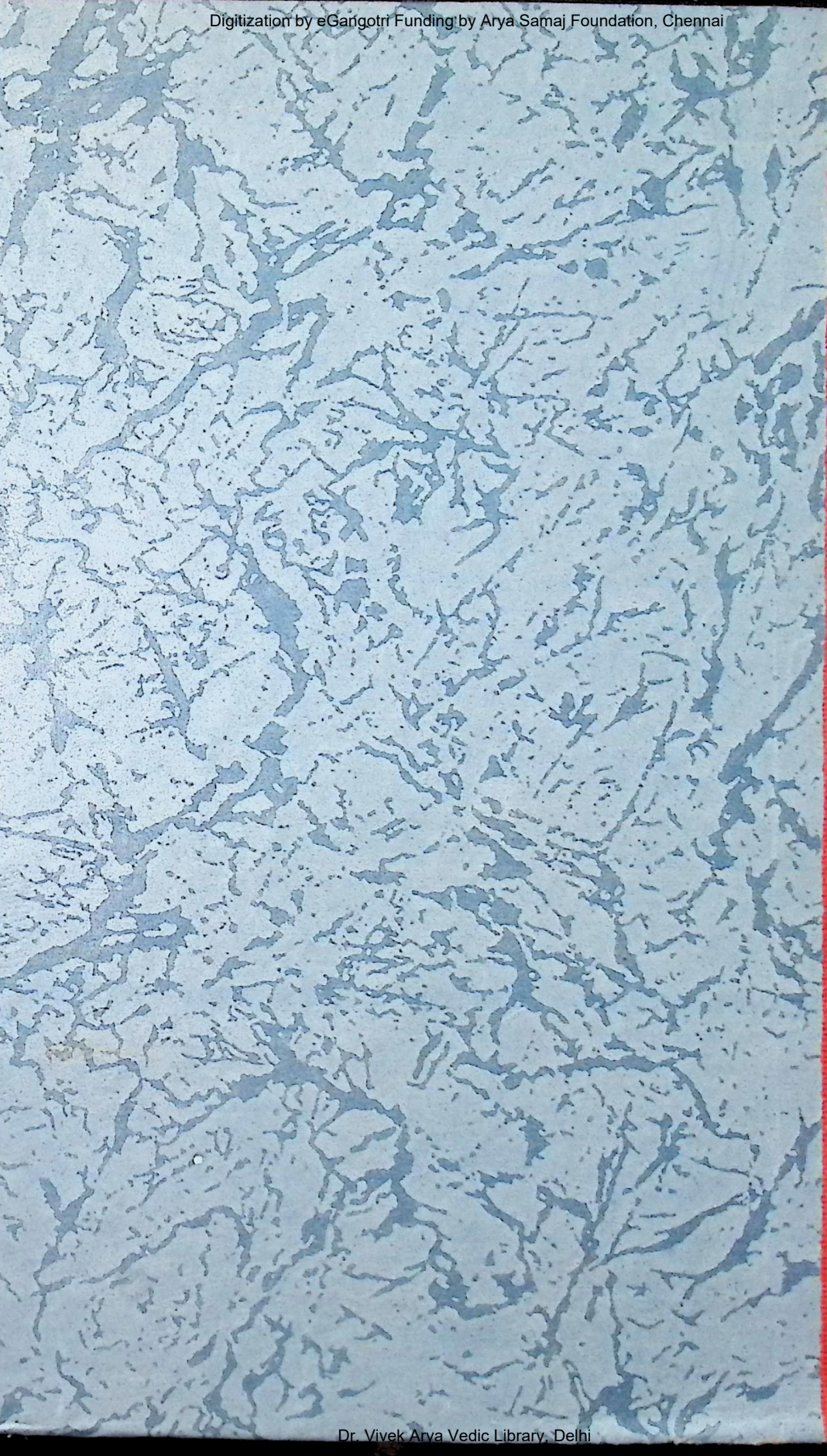

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi